

ठकर वसनजी माधवजी व्याख्यानमाला.

८

पद्यरचनार्ना ऐतिहासिक आलोचना.

व्याख्यानकार

दीवानबहादुर केशवलाल हर्षदराय ध्रुव, बी. ए.,

इ. स १९३१

८



प्रकाशक मुंबई युनिवर्सिटी, मुंबई.

मुद्रायंत्र : वसंतमुद्रणालय मुद्रक : श्रीमन्मल्ल ईश्वरलाल श्रेता,
धीकाटा रोड, अमदावाद्.

प्रस्तावना

वे वरस उपर मुंबई युनिवर्सिटी तरफथी वसनजी माधवजी ठकर व्याख्यानमाळा (Thakkar Vasanji Madhavji Lectures) ने जंगे व्याख्यान आपवानूं आमंत्रण मने मळ्यूं हतूं; ते स्वीकारी गई सालना जुलाइ मासमां में पांच व्याख्यान त्यां आप्यां हर्ता. मुंबईना श्रोतामंडळे सत्कारेलां ए व्याख्यान विरतीर्ण वाचकवर्गने मळी शके एवा उद्देशथी ते मुद्रांकित करवानो टराव थयाथी युनिवर्सिटी तरफथी ते एकत्रित पुरतकरूपे छपावी बहार पाडवामां आल्यां छे.

पद्यरचनानी ऐतिहासिक आलोचना, ए प्रस्तुत व्याख्याननो प्रधान विषय छे. साहित्यना वाहन तरीके पद्य अति प्राचीन कालथी सर्वत्र जाणीतूं छे. एना अनेक मार्ग खेडाया छे. तेमांनो वेएक मार्गना पद्यबंधोना करणग्रंथ (Manuals) पण रचाया छे. एमां व्यावहारिक दृष्टि ए अनेक प्रयुक्तअप्रयुक्त पद्यबंधोनां माप आपेलां मळे छे. पण एमां छंदना बंधारणना संबंधमां शास्त्रिय दृष्टि ए विवेचन पण नथी अते उत्पात्तना संबंधमां ऐतिहासिक दृष्टि ए आलोचना पण नथी. ए ऊणप प्रत्ये मारूं ध्यान गयाथी पचीसेक वरस उपर पद्यरचनाना प्रकार ए नामे एक ग्रंथानो संबंध बीजी गूजराती साहित्य परिपद् माटे मे लरयो हतो; ते टीक आदर पाग्यो हतो. त्यारपछी लगभग पंदर वरसे छठी गूजराती साहित्य परिपद्मां अवद्ध पद्यरचना (blank verse) ना मारा एक नवा प्रयोगना बिशे में बनवेलीना नामथी एक लेख वांग्यो हतो; ते पण टीक चर्चाया हतो. त्यारवाद दशक वरसे मुंबई युनिवर्सिटीनूं पूर्वाक्त आमंत्रण मळतां पद्यरचनानी शाखाप्रशाखा उपर सर्वतोमुख प्रकाश पाटवा मारूं मन उत्तेजित थयूं; अने बार मासनां चिंतन तथा संशोधनना परिणामे प्रस्तुत व्याख्यान विद्यमान स्वरूपमां तैयार थ्यां. एनी योजना दिशे व्याख्यानमां ज वहेदामां आव्यं छे, एटले अहाँ तेनो निर्देश करवानी जरूर रहेती नथी.

आ व्याख्यानोमां स्थले स्थले न्हानामोटां विषयांतरिनी पण समावेश छे. ते घण्टारू प्रधान विषय साथे गौण के पारंपरिक संबंध धगवे छे, साहित्यनू वाहन गधे छे अने पधे छे. परंतु गद्यमां छे नहि एवो एक विशेष पद्यमां छे. पद्यनी रचना मेळसर होवी घटे छे. तेमां यति बगेरेने पण स्थान मळे छे. ते कारणथी पहिला दृष्टिपातना प्रस्ताव २५-२६ अने परिशिष्ट पद्यनी घटनाना खास अभ्यास प्रत्ये लक्ष खंचवा सारूं आपयां पट्यां छे. त्यार-बाद पद्यरचनाना इतिहासना ऊमरे पग मुकिये छिये, ते पळे पद्यनी उत्पत्तिनी मुद्दो खडो थाय छे. तेना खुदासा माटे बीजा दृष्टिपातमां पुरुषसूक्तना विस्तृत विवेचनमां उतरवानो प्रसंग प्राप्त थाय छे. आर्चिक छंदना माप विशे घण्टे उखायूं छे; पण वर्णात्मक पद्यरचनाना उदय अने विकासनी विषय कोइए छेटयो ज नथी. ए अंधकारमरत प्रकरण उपर प्रकाश पाडनारां किरण पुरुषसूक्तमां फूटतां जणायाथी तेने में ऋकालउपरना व्याख्यानना उत्तर भागमां स्थान आप्यूं छे. पूर्व भागना आर्चिक शुद्ध छंदो साथे आवेस्तिक पद्यबंधो बहु निकटनी अन्वयव्यतिरेकी संबंध धरावता जोवामां आव्या; ते कारणथी अवेस्तानी पद्यरचनानो लेख व्याख्यान बीजा साथे परिशिष्टरूपे जोडी दीधो छे. ऋग्वेद आदि साहित्य असल स्वरूपमां सुरक्षित छे, तो ज ऋकालनी लोकभाषा जेवी ने तेवी उत्तरी आवी छे. परंतु रामायण अने महाभारत आख्यानकालनी लोकभाषामां छे के अन्यथा, एनी सप्रमाण निर्णय अद्यापि थयो नथी. एना निराकरण सारूं श्रीजा दृष्टिपातमां, आख्यानकालनी भाषा जे पौराण संस्कृत, तेना अविकृत अने विवृत स्वरूपनी तपास चलावी छे. अविवृत स्वरूपने उदेशीने वज्रपुरमां नटवेपधारी यादवोए भजवेलो आख्यानदर्शननी विशिष्टता तरीके वखाणेला संस्कार गुणना संकेतनूं उद्घाटन करूं छे. ते साथे विवृत स्वरूपनूं जीवतूं जागतूं उदाहरण जतुगृह पर्वमांथी उन्नायूं छे. प्रस्तुत अवतरण भगवान विदुरनी म्लेच्छवाणीमां एटले के विवृत पौराण संस्कृतमां छे. एमां वननी अंदर रातवासानां

जोखमनो तेम ज वारणावतमां ऊतारानां जोखमनो अर्थ रहेलो छे. ए द्विअर्थी उदाहरण समजवूं सरळ थाय एठला माटे परिशिष्टमां तेनी शब्दार्थसूचि पण योजी छे. विदुर भगवानना मुखना उद्धृत व्रण श्लोक आख्यानकालनी अशिष्ट बोलीनी आत विरल शांखी करावनारा होवाथी अवश्य विचारवा योग्य छे. सुत्तकालनी पद्यरचना सविशेष परिश्रम वगर लक्षमां आवे एवी नथी. आचार मूयगड अने सुत्तनिपातनी वाचना वधतीओछी भ्रष्ट होवाने लीधे ए दुर्गमता ऊमी थई छे. ते मटाडवाने वाचनानो समुद्धार करवानी आवश्यकता उपस्थित थाय छे. ए कार्यमां सहायभूत थवा भगवान महावीर अने बुद्धना समयनी लोकभाषाना आदर्श तरीके चोथा व्याख्यानमां शुंगवंशी राजा दर्शकनो लेख विचार्यो छे. ते पछी सौत्त पद्यवंशोनो विशेष परिचय कराववा आचार अने सुत्तनिपातमांथी व्रण सुत्त छंदःस्वरूप ठेकाणे आणी परिशिष्टमां जाप्यां छे, जेथी करीने संवादभंगना कारणथी ऊपजती मूझवणी दूर थाय छे. पांचमा व्याख्यानमां अवांतर चर्चाना विषयो बहु वधी पडे छे. ऐतिहासिक काळमां आख्या छतां राष्ट्रनो अने साहित्यनो इतिहास हजु थाळे पडचो नथी. भाषाना अने साहित्यना इतिहासनी तो रूपरेखा पण दोराई नथी. एवी परिस्थितिमां मात्र प्रासंगिक विषयोनो ज नहि पण केटलाक अप्रासंगिक विषयोनो पण चर्चा आ व्याख्यानमां पेशवा पामी छे. काव्यकालनी पद्यरचनानी आलोचना करतां पद्यनो स्थूल देह जे भाषा, तेनां मागधी शौरसेनी पैशाची महाराष्ट्री अने अपभ्रंश स्वरूप विशे में वे बोल क्हा छे, ते ए आनुपंगिक विषयनी विगत अजाणी होईने जरूरी जणायाथी क्हा छे. भास कालिदास अने अश्वघोषना पौर्वापर्यना प्रश्नमां अने रघुवंश तथा मेघदूतना भिन्नकर्तृत्वनी चर्चामां हूं ऊतर्यो छूं, ते पद्यरचनानी उत्क्रांतिनी स्वरी रेखा दोरवामां तेनी आवश्यकता जोई तेथी ज. भारवि, विशाख-दत्त माघ भट्टि अने अमरुनी परंपरा बांधी छे ते पण पद्यरचनानी सांफळना अंकोडानी मजबूताइ तपासवा माटे बांधी छे. गाहासत्तसई विशे बोलतां

पालित्त अने गुणद्ध के गुणाढ्य विशेषे जे कहूं छे ते, तेम ज प्रथम चंद्रगुप्त समुद्रगुप्त तथा द्वितीय चंद्रगुप्तना संबंधमां जे टिप्पण टिप्पणी आदि ऊमेरेल छे ते, त्यमवळी छेछी बे ऐतिहासिक व्यक्तियोंनी गाथाओंनी उद्धार कर्यो छे ते चोखां विषयांतर छे. परंतु ए जे नवो प्रकाश पाडे छे तेनी खातर, हूं आशा राखूं छूं के, ए नभावी लेवामां आवरो. मारा मर्यादित क्षेत्रनी बहार बीजां क्षेत्रोमां में पगदंडो चलाव्यो छे तेने माटे ते तें क्षेत्रना साहित्य विशेषेनी माहीतीनी अपूर्णता जवाबदार छे. जोईती प्रमाणसिद्ध विगत तैयार मळी होत, तो मारे प्रसंगे प्रसंगे चीलो काफी ते ते दिशामां भटकवूं पडचूं छे, तेना श्रममांथी हूं बची जात अने विषयांतर कर्यानी जवाबदारीथी पण मुक्त रहेत.

मारा काममां जेमनी जेमनी मने सहायता मळी छे, तेमनां नामनी नोंध लेतां मारा आभारी आत्माने आनंद थाय छे. ऋकालना व्याख्याननी उत्तर भाग मारा विद्वान बंधु दीवानबहादुर नर्मदाशंकर देवशंकर महेता जोई गया हता; अने पूर्व भाग बहावदीन कोलेजन संस्कृत अध्यापक Prof. N. B. Purohit वांची गया हता. मुद्रण माटेनी प्रतिकृति तैयार करवामां मने बे नवा ग्रेन्गुएटोनी मदद मळी हती. पहिला बीजा चौथा अने पांचमा व्याख्याननी नकल भाइ मधुसूदन चिमनलाल मोदी एम.ए., एलएल.बी., एओए बहु काळजी पूर्वकर करी आपी हती. एमनो परिचय मने प्रो. बळवंतराय कल्याणराय ठाकोरे कराव्यो हतो. श्रीयुत ठाकोरे तो, हूं बोलतो जाऊं अने पोते ऊतारता जाय, एटला माटे पंदर दिवस अमदावादमां आवीने रहेवानी तत्परता पण बतावी हती; परंतु व्यास भगवाननूं स्थान लेवूं मारी शक्ति बहार हलूं. ते कात्तरथी पेन्सिल्वानिया मुसहरानी मुयाग्य नदर करी आपे एको स्थानिक सहायक मेळवी आपवा में तेमने बीनती करी. ते स्वीकारी तेमणे मने भाइ मोदीनो मैत्राप करावी आप्यो. व्याख्यान बीजानी नकल बी.ए. अने एम.ए. ना मारा भूतपूर्व विद्यार्थी भाइ चतुरभाइ शंकरभाइ परंछे करी

हती. ए व्याख्याननूं परिशिष्ट तैयार करवामां हें. एरच जहांगीर तारापोर-
वालाए श्रम लेई जोईतां साधन पूरां पाटचां हतां. विशेषमां मुंबइयुनिवर्सिटी-
ना रेजिस्ट्रार श्रीयुत S. R. Dongerkery, एओए मारी मागणी स्वीकारी
व्याख्यान आपवानी मुदत द्रण मास लंबावी आपी हती. आ अनेकविध सहा-
यता माटे हूं सर्वनो आभारी छूं. विशेषमां काची छाप लांबा वखत सूधी
फरी फरी तपासी तपासी आंख खराव करी छे अने पाछळथी शोधी काढेली
पाकी छापनी मुख्य मुख्य भूलोनों शुद्धिपत्रक में आप्युं छे; तथापि दृष्टिनी
निर्वळताने लीधे महत्त्वनी कोइ भूल नांघावी रही गई होय, तो ते सूधारी
लेई सुज्ञ वाचकवर्ग मने आभारी करशे.

आ व्याख्यान ज्यारे मुंबइयुनिवर्सिटीमां पूर्वे आपवामां आव्यां हतां,
त्यारे मुंबइना अग्रेसर साप्ताहिक गुजरातीए मारो अवाज व्याख्यानशाळानी
चार दीवाल बहार दूर दूर फोचाडचो हतो. ते माटे ए पत्रना उत्साही
संचालकनो आभार लगभग दोढ वरसे व्याख्यानना प्रकाशनना अवसरे हूं
जाहेर करूं छूं.

अमदावाद, डीसेम्बर, १९३२.

केशवलाल हर्षदराय ध्रुव.

१९ आर्चिक छंदना चरणना कडका पडता नथी.	८६
२० मिश्रछंद.	८६
२१ प्रगाथ.	८८
२२ आर्चिक छंदोना प्रचारनूं तारतम्य.	८९
२३-२५ छंदोना नामनी समजूती.	९१
२६ छंदोविधानी उत्पत्ति आपतूं पुरुषसूक्त-मूळ अने अनुवाद.	९४
२७ यज्ञविधान परत्वे ऋचा वार विवेचन.	९९
२८-२९ सृष्टिप्रतिपादनात्मक विवेचननो अस्वीकार.	१०४
३० पुरुषसूक्तनी प्राचीनता.	१०८
३१ सूक्तनी पद्यरचना.	१०९
३२-३४ सिंहावलोकन.	१०९
३५ समाप्ति.	१११
परिशिष्ट (अवेस्तानी पद्यरचना)	११२

दृष्टिपात ३, आख्यानकाल, पृष्ठ ११६-१४९.

१ आगळ वधेला आख्यानकालनो पद्यबंध.	११६
२-३ महाख्यानोनी विपुलताने मुकाबले छंद कमी. तेना वे वर्ग, व्यापक अने एकदेशी.	११६
४-६ रामायणना व्यापक छंद: अनुष्टुभ्, त्रैष्टुभ् उपजाति अने चंशस्थ. तेमनां लक्षण अने उदाहरण.	११७
७-८ रामायणना संभाव्य कोटिना एकदेशी छंद उपेन्द्रवज्रा, इन्द्रवज्रा, त्रैष्टुभजागत उपजाति, जागत उपजाति अने त्रिष्टुभ्. तेमनां लक्षण अने उदाहरण.	१२०
९-१० रामायणना अर्धभास्य कोटिना एकदेशी छंद वैतालीय कुट्टवना अपरवक्र, पुष्पिताग्रा, त्रिभोगिनी, माल्यभारिणी, वैतालीय उपजाति, अपूर्व तथा मृगेन्द्रमुख; पछी चौद चौद रूपना वसन्त-	

- તિલકા તથા ઋષિગણ; તેના પછી યતિવાળા વૈશ્વદેવી, રુચિરા, પ્રહર્ષણી તથા શાલિની; અને તે પછી આવૃત્ત સંધિનો રૂપવંધ ધુજંગપ્રયાત. ૧૨૨
- ૧૧ રામાયણના ઉક્ત છેન્દોની વર્ણરચના અને રૂપરચનાને આધારે તારવણી. ૧૧૪
- ૧૨-૧૩ મહાભારતના સંશોધિત વિરાટપર્વના વ્યાપક અને એકદેશી. સ્થાલીપુલક ન્યાય. ૧૨૪
૧૪. આલ્પ્યાનિક અનુષ્ટુભમાં અધવધરી અને ત્રૈષ્ટુભ ઉપજાતિ, જાગત ઉપજાતિ, ઉપેન્દ્રવજ્રા, ઇન્દ્રવજ્રા, તથા વંશસ્થમાં પૂરી રૂપરચનાની જમાવટ. આર્ષ ત્રિષ્ટુભ અને ત્રૈષ્ટુભજાગત ઉપજાતિની અછત. રામાયણનો એકદેશી જાગત ઉપજાતિ છેન્દ મહાભારતના વિરાટપર્વનો વ્યાપક. છ ચરણના અનુષ્ટુભ અને ત્રિષ્ટુભ. ૧૨૬
- ૧૫-૧૬ આદિકવિ વાલ્મીકિ; અને રામાયણ આદિમહાલ્યાન. મહાભારત તેનાથી એ અધિક વિસ્તીર્ણ સંવિધાનવાઠું મહાલ્યાન સ્વરૂં, પણ તેમાં વહેતો પદ્યપ્રવાહ તો રામાયણનો—વાલ્મીકિનો જ. ૧૨૬
- ૧૭-૧૮ આલ્પ્યાનિક છેન્દોના નામોની સમજૂતી. ૧૨૯
- ૧૯ મહાલ્યાનોના કર્તા કથાપુરુષોના સમયના નહિ. વ્યાસ અને વાલ્મીકિ કથાપુરુષોનાં છૂટાં આલ્પ્યાનોના આધારે મહાલ્યાનોના સર્જક કર્તા. વંને ઘણું કરીને ઉપનામ. ૧૩૧
- ૨૦ રામાયણ અને મહાભારતનાં પ્રકાશન યજ્ઞવાટમાં. ૧૩૩
- ૨૧-૨૬ મહાલ્યાનો પૌરાણ સંસ્કૃતમાં. તેનાં અવિકૃત અને વિકૃત એવાં બે સ્વરૂપ; ઉદાહરણ વિદુરનીતિના અને લાક્ષાગૃહ સંબંધી ચેતવણીના શ્લોક. પૌરાણ તે સંસ્કૃત રાષ્ટ્રભાષા એટલે લોકભાષા. ૧૩૫
- ૨૭ સિંહાવલોક્તન. ૧૪૬
- પરિશિષ્ટ, (વિદુરની મ્લેચ્છવાચ્ની શબ્દાર્થસૂચિ) ૧૪૮

પ્રસ્તાવસૂચિ

દૃષ્ટિપાત ૧, પદ્યની ઘટના, પૃષ્ઠ ૧-૭૧

- ૧ ગદ્ય અને પદ્યની ભિન્નતા. એ ભિન્નતાને લીધે એકદેશ ઉપરથી આસ્વા પદ્યનું સ્વરૂપ સ્વરૂપ સહૃદ્ય થવું. ૧
- ૨ ગદ્યમાંથી પદ્યની ઉત્પત્તિનું તત્વ. ઈંગ્રેજી ભાષાનો શબ્દભાર. એ તત્વને અવલંબીને પ્રગટેલી ઈંગ્રેજી પદ્યરચના. ૩
- ✓ ૩ આપણી વાણીના ઉચ્ચારનાં તત્વ-વર્ણ, રૂપ, માત્રા અને લય. ૫
- ૪ ગદ્યનો અળમેઝ; પદ્યનો ચતુર્વિંધ મેઝ. ૬
- ૫ ગૂજરાતીમાં ઈંગ્રેજીના જૈવો અચઝ શબ્દભાર વાદપ્રસ્ત. ગૂજરાતી ભારતી ચંચઝતા. ગદ્યભાર અને પદ્યભાર. ગદ્યભારનું ભારતત્વ પદ્યસર્જક થઈ શકે ? ઉદાહરણ અને ચર્ચા. ૯
- ૬ પદ્યરચનાના બે પ્રકાર, નિવદ્ધ અને અવદ્ધ. એ બે રચનાઓનાં સર-જાયઝં અને સરજાતું પદ્યસાહિત્ય. ૧૫
- ૭ નિવદ્ધ પદ્યરચના. વર્ણવંધઃ કવિત, અભંગ, પયાર. ૧૬
- ૮-૯ નિવદ્ધ પદ્યરચના ચાહ. અનાટ્ટ સંધિના સમચતુષ્પદ રૂપ-વંધ. રોપદર્શિકા સત્યભામા આલ્યાનનો નવનીત. ૨૦
- ૧૦-૧૧ નિવદ્ધ પદ્યરચના ચાહ. આટ્ટ સંધિના સમચતુષ્પદ રૂપ-વંધ. જૂના હ ચામર (સમાનિકા), સ્થિર (પ્રમાણિકા), દોષક, શુજંગમપાત, તોટક ને સ્ત્રિવર્ણી. નવા બેઃ મૌક્તિકદામ અને સર્વગામી. ઢંઢક. ૨૬
- ૧૨ નિવદ્ધ પદ્યરચના ચાહ. અનાટ્ટ સંધિના અર્ધસમચતુષ્પદ રૂપ-વંધ. ૨૮
- ૧૩ નિવદ્ધ પદ્યરચના ચાહ. અનાટ્ટ સંધિના વિપમ ચતુષ્પદ રૂપ-વંધ. ૨૮
- ૧૪ નિવદ્ધ પદ્યરચના ચાહ. માત્રાવંધઃ પ્રાચીન પદ્યવંધ. ૨૯
- ૧૫-૧૬ નિવદ્ધ પદ્યરચના ચાહ. પ્રસ્તમાન આટ્ટસંધિના સમચતુષ્પદ માત્રાવંધ. તેમાં મન્યયતિનો પ્રશ્ન અને આંતરપ્રાસનો પ્રશ્ન. ૨૯

- १७ निबद्ध पद्यरचना चाल. अनावृत्त संधिना मात्राबंध. मन्व्य यति आवश्यक. ३३
- १८ निबद्ध पद्यरचना चाल. असमचतुष्पद मात्राबंध उपप्लवंगम अने उपकाव्य. ३७
- १९ निबद्ध पद्यरचना चाल. मिश्र मात्राबंध छप्पय, कुण्डलियो, चन्द्रावली, तलहारु, सरस्वतिधउल अने धउल. ३८
- २० निबद्ध पद्यरचना चाल. लयबंध. मार्गीय लय; रूपलय अने मात्रालयना पद्यबंध. देशीय लय; रूपलयनो प्रबंध अने वर्णलयनं पद. ४२
- २१-२२ अबद्ध पद्यरचना. रामछंद; वनवेली. ४६
- २३ संवाद अने छंदोगणित. ५१
- २४ संवाद अने पद्यभार. ५२
- २५-२६ जूना पद्यात्मक साहित्यना संशोधनर्मा पद्यरचनाना ऊंडा ज्ञाननो उपयोग. ५३
- २७ समाप्ति. ५९
- परिशिष्ट (अनुभवांवदु) ६०

दृष्टिपात २, ऋक्काल, पृष्ठ ७२-११५

- १ ऋक्साहित्य. ७२
- २ ऋग्वेद; ऋक्काल. ७३
- ३ आर्चिक छंद: वर्णसंख्यात्मक. ७३
- ४ केवल अने विद्यार्थित वर्ण. चर अने स्थिर वर्ण. ७४
- ५ मुख्य आर्चिक छंद-शुद्ध, मिश्र, अने प्रगाथ. ७४
- ६-१३. शुद्ध छंद विराज्, गायत्री-अनुष्टुभ्, त्रिष्टुभ्-जगती. ७५
- १४-१७ पदांत. ८१
- १८ गृजरातीमां पदांतनां उदाहरण. ८४

दृष्टिपात ४, सुत्तकाल, पृष्ठ १५०-१९६.

- १-३ आलोचनानो विषय सुत्तसाहित्य. १५०
- ४-५ प्राचीन जैन सुत्त. तेना विलक्षण पद्यबंध. १५१
- ६-७ आचार अने मयगटनं आनुष्टुभ कुटुंब, अने आर्चिक अनुष्टुभ् आख्यानिक अनुष्टुभ् तथा सौत्त अनुष्टुभ्. विक्रिया. १५२
- ८-१० त्रैष्टुभ कुटुंब, एटले आर्चिक त्रिष्टुभ्, त्रैःशुभी उपजाति, इन्द्र-वज्रा अने सौत्त त्रिष्टुभ्. १५४
- ११-१२, वैतालीय; अने वैतालीयकी उपजाति. १५६
- १३ गाथानुष्टुभी संसृष्टि. १५८
- १४ सुत्तनिपातनी त्रैष्टुभानुष्टुभी संसृष्टि. १६०
- १५-१६ आनुष्टुभवैतालीयकी संसृष्टि अने त्रैष्टुभवैतालीयकी संसृष्टि. १६१
- १७-१८ इन्द्रवज्रा अने वृद्धवैतालीय. १६३
- १९-२२ कौकालिय कुटुंब, एटले कौकालियकी उपजाति, कौकालिय, आनुष्टुभकौकालियकी संसृष्टि अने आनुष्टुभवैतालीयकौकालियकी संसृष्टि. १६४
- २३ सुत्तकालना चौद छंदनो विकासक्रम १६५
- २४ वैतालीय संज्ञानी समजूती. १६८
- २५ आचार मयगड अने सुत्तनिपातना निर्माण अने संग्रहणना पूर्वोत्तर अयधि. १७०
२६. लोकभाषा अग्रिम प्राकृत. वर्णगत उत्क्रांति मोटाव्हंला संग्रहणने लीधे. विनयननी भाषा अंतःपाती संस्कृत. १७४
२७. सौत्त पद्यस्वचनामा अने पद्यवधर्मां प्रगति. सर्गशक्ति अने कला. १७८
- परिशिष्ट (कौकालिय सुत्त, तुषट्टकमुत्त अने उपधानस्मृत) १८०

દૃષ્ટિપાત ૬, કાવ્યકાલ, ષ્ટ ૧૯૭-૨૯૯

- ૧-૨ સુત્તકાલ અને કાવ્યકાલને જોડનારો અંકોડો. ૧૯૭
- ૩ કાવ્યકાલની માપાવિમાપા. દ્વૈમાપિક અને ત્રૈમાપિક કાલ. ૨૦૧
- ૪-૭ દ્વૈમાપિક કાલનું સંસ્કૃત સાહિત્ય કથાકાવ્ય અને નાટક; માસ કાલિદાસ અને અશ્વઘોષ (૪), તેમની પદ્યરચના અને તેમના પૌંવાપર્યની ચર્ચા (૫-૬). અશ્વઘોષે નવા રચેલા સમચતુષ્પદ, અર્ધસમચતુષ્પદ અને વિષમચતુષ્પદ રૂપબંધ (૭). ૨૦૪
- ૮-૯ દ્વૈમાપિક કાલનું નાટ્યપ્રસ્થાન (૮) અને તેની વિમાપા (૯). ૨૧૨
- ૧૦-૧૪ ત્રૈમાપિક કાલનું સંસ્કૃત સાહિત્ય. પ્રસ્તાવકાવ્ય કિરાતા-જુનીય અને શિશુપાલવધ (૧૦); તેના કર્તા ભારવિ અને માઘ (૧૧-૧૨). તેમણે રચેલાં નવાં વૃત્ત (૧૪). ૨૧૫
- ૧૫-૧૬ ત્રૈમાપિક કાલનું સંસ્કૃત સાહિત્ય ચાલુ. પ્રસ્તાવકાવ્ય મેઘદૂત; મેઘઠ્ઠાર કાલિદાસ અને રઘુકાર કાલિદાસ (૧૫). મેઘકારનો પદ્યબંધ (૧૬). ૨૨૩
- ૧૭-૨૨ ત્રૈમાપિક કાલનું સંસ્કૃત સાહિત્ય ચાલુ. મુક્તક કાવ્ય અમરુ-શતક (૧૭); તેનો કર્તા અમરુ (૧૮-૨૦). તેનો પદ્યબંધ (૨૧-૨૨). ૨૩૬
- ૨૩-૨૫ ત્રૈમાપિક કાલનું સંસ્કૃત સાહિત્ય ચાલુ. મુદ્રારાક્ષસ નાટક; તેના કર્તા વિશાલદત્તના દેશકાલ (૨૩-૨૪). તે નાટકના સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત પદ્યબંધ (૨૫). ૨૪૦
- ૨૬ ત્રૈમાપિક કાલનું સંસ્કૃત સાહિત્ય ચાલુ. પ્રિયદર્શના નાટિકા, નાગાનન્દ નાટક અને રત્નાવલી નાટિકા; કર્તા ચક્રવર્તિકવિ હર્ષ. મિશ્ર માત્રાબંધ ઢિપદીસ્વળ્ડ. ૨૪૯
- ૨૭-૨૯ ત્રૈમાપિક કાલનું સંસ્કૃત સાહિત્ય ચાલુ. માલતામાધવ પ્રકરણ અને મહાવીરચરિત તથા ઉત્તરરામચરિત નાટક; કર્તા ભવમૂતિ.

તેના પદ્યરચના. ઉક્ત ત્રણ પ્રયોગબંધનો રચનાક્રમ. માલતી-
માધવના નર્દટક અને ચણ્ડવૃષ્ટિપપાત છંદ. ૨૪૯

૨૯-૩૭ ત્રૈભાષિક કાઠ્ઠનું સંસ્કૃત સાહિત્ય ચાલુ. પ્રવંધકાવ્ય ગીતગો-
વિન્દ (૨૮). તેની દૃશ્યશ્રવ્ય રચના અને પ્રસન્નમધુર શૈલી (૩૦).
તેના છંદ અને પ્રવંધ (૩૧). સુત્તકાલના પ્રાકૃત લયાત્મક છંદ
(૩૨). કાવ્યકાલના સંસ્કૃત લયાત્મક પ્રવંધ (૩૩-૩૫);
ધ્રુવપદની વ્યવસ્થા (૩૬). પદ્યરચનાના વિકાસમાં પ્રવંધનું મહત્ત્વ
(૩૬). ૨૫૩

૩૮ દ્વૈભાષિક કાઠ્ઠનું પ્રાકૃત સાહિત્ય. માસ અને કાલિદાસ તથા
ગર્મિષ્ઠાના પદ્યવંધ. ૨૬૪.

૩૯-૪૦ દ્વૈભાષિક કાઠ્ઠનું પ્રાકૃત સાહિત્ય ચાલુ. ગાદાસત્તસર્ગ. તેમાંની
સમુદ્રગુપ્ત, પાલિત ગુણદ્વ આદિની ગાથાઓ. ૨૬૬

૪૧ દ્વૈભાષિક કાઠ્ઠનું પ્રાકૃત સાહિત્ય ચાલુ. ગાદાસત્તસર્ગનો સંપ્રાહક. ૨૬૮

૪૨ ત્રૈભાષિક કાઠ્ઠનું પ્રાકૃત સાહિત્ય ચાલુ. સેતુ કાવ્ય. તેના આર્યાગીતિ
અને વિવિધ ગલિતક છંદ. સેતુકાવ્યનો નિર્માણકાઠ્ઠ. ૨૭૦

૪૩ ત્રૈભાષિક કાઠ્ઠનું પ્રાકૃત સાહિત્ય ચાલુ. સેતુ કાવ્યના ગલિતકનું
કર્તૃત્વ. ૨૭૧

૪૪ ત્રૈભાષિક કાઠ્ઠનું પ્રાકૃત સાહિત્ય ચાલુ. સેતુ કાવ્ય અને કાલિદાસ. ૨૭૩

૪૫-૪૬ ત્રૈભાષિક કાઠ્ઠનું પ્રાકૃત સાહિત્ય ચાલુ. અનાદૃત સંધિના
માત્રાવંધનું સર્જન. અંત્યયમકનો કલામય પ્રયોગ. ૨૭૫

૪૭ ત્રૈભાષિક કાઠ્ઠનું પ્રાકૃત સાહિત્ય ચાલુ. ગડડવહો. તેમાંનો સમગલિ-
તક માત્રાવંધ. ૨૭૬

૪૮ ત્રૈભાષિક કાઠ્ઠનું પ્રાકૃત સાહિત્ય ચાલુ. કૃષ્ણપૂરમંજરી સદ્ગ. આર્યા-
કુટુંબનો વંશાનુક્રમ. ૨૭૬

- ४९ त्रैभाषिक काळनू प्राकृत साहित्य चालु. पञ्चमचरिय. चंदनी विविधता,
पण प्रगतिनो अभाव. २७८
- ५० त्रैभाषिक काळनू अपभ्रंश साहित्य चालु. भरतनाट्यशास्त्रा बरीसमा
अध्यायनां अपभ्रंश लेखाथलां पांच पद्य. २८०
- ५१ त्रैभाषिक काळनू अपभ्रंश साहित्य चालु. दिगंबर अपभ्रंशकवि
धनपाल. २८२
- ४२-५३ त्रैभाषिककाळनू अपभ्रंश साहित्य चालु: तेनी भविसयत्तकहाना
चतुष्पद तथा द्विदल मात्राबंध अने चतुष्पद रूपबंध. भारमुक्त
द्विकल संधिनो खंडना आरंभे प्रयोग २८६
- ५४-५५ सिंहावलोकन अने समाप्ति. २९०
- परिशिष्ट १ (गुप्तवंशी समुद्रगुप्त पराक्रमदित्य, रामगुप्त तथा
द्वितीय चंद्रगुप्त विक्रमादित्य, अने वाकाटकवंशी द्वितीय प्रवरसेननी
वरसवारी) २९४
- परिशिष्ट २ (मेघकार कालिदासनी वरसवारी) २९६
- परिशिष्ट ३ (सेतु काव्यना गलितक)
- परिशिष्ट ४ (भविसयत्तकहाना द्विदल मात्राबंध) २९८

शुद्धिसूचि.

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८	९	आर्धैयाना	अर्धियाना	७५	११	एभिर्नो	एभिनेर्
९	२६	अर्थमां	अर्थमां	७६	११	गभश्च	गर्भश्च
१०	१०	स्थालसिद्ध	स्थानसिद्ध	७७	२१	अवेस्ताक्री	अवेस्तानी
१२	२३	दृष्टा	द्रष्टा	७८	३	सुजाततां	सुजाततां
	२५	गंधीर	गंधीर	८०	१८	जगतिनो	जगतीनो
१६	६	Verse	Verse	८१	३	गीमि	गीभिं
१८	४	माठा	मीठा	८१	५	वस्वा	वस्यो
१९	२	अनुवादमे	अनुवादने	८६	८	नथी.	नथी अपाती.
	१४	कवयित्री	कवयित्री	२१		शकरी	शकरी
२१	१७	जाणवागां	जाणवामां	८७	१६	शचावसू	शचीवसू
२९	१४	जने	जने	१७		दिवा	दिवा
३६	१४	नाभ...मधी	नाम...नथी	२५		वाजेपु	वाजेपु
३९	१८	रागदोसह	राभआइअहं	८८	१०	सामां	सोमां
	१९	निम्मयत्तु	निम्ममत्तु	९०	१२	सांहतामां	संहितामां
४९	१२	मारे	मारो	९३	३	त्रैष्टुभ्	त्रैष्टुभ
५२	१०	हतो.	हतोः—	५		पुरोष्णिह्	परोष्णिह्
	१२	त्रण	वे	९५	१४	पश्चाद्	पश्चाद्
५४	६	लरव्या	लरव्या	९६	९	मूर्यो	मूर्यो
५९	५	कुंडळिया	छंद	१३		स्पासन्	स्पांसन्
६१	२७	ते ईशने	य ईश ते	१०८	१०	थई...दे छे.	थाय छे.
६३	१०	जीयिका	सेयक	१०९	२२	पूर्वे	प्राक्तन
६७	१७	नारीकुंजर	नारीकुंजर-			प्राक्तन	०
		चीरि	चीरि	११२	८	भावनी	भागनी
६८	३	छी कुंजर	छीकुंजर	११४	२५	इशावास्य	ईशावास्य
६९	८	हंस; अंश	हंस अंशः				
७२	१३	उत्तार्तो छे	उत्तार्यो छे				

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११७	२६	अप्यम	अप्याय	१६०	१४	आनुप्टुभ	आनुप्टुभ
१२०	३	ललगाल	ललगाल	१६१	१४	मुत्ताचत्तं	मुत्तचित्तं
		गागा	गालगा	१६२	२६	मूयनड	स्यगड
१२१	१७	" "	" "			पयबंधोमां	पयबंधोमां
१२९	२७	विप्वंमरु	विप्वंमरु	१६३	२२	पली	पली
१३७-	१	४	३		२३	लक्षण	लक्षण
४२					१६७	१५	घटनामां
१३७	२	उच्चार शुद्धिने	उच्चारशुद्धिने		२५	घडतरमां	घडतरमां
	२५	पुराणी	पुराणो	१६८	९	गाथाप्टुभी	गाथानु- प्टुभी
१४१	५	पीडयन्	पीडयन्	१६९	११	घैतालीभ	घैतालीभ
	१०	शाखना	शाखना	१७२	६	अक्कोस	अक्कोस
	२७	Resoaiho Re-	search		१८	सूक्त	सुक्त
१४३	१	२	३	१८२	२८	चतुष्काल	चतुष्काल
	१३	नलोरजम्	नलोहजम्	१८५	३१	उपधाव	उपधान
	१४	साद्य	शाद्य	१९६	२१	अंगना अ.चार	आचार अंगना
	१६	पञ्चायपीडन्	पञ्चापी- डयन्	१९९	१५	मुचरितानि	मुचरितानि
	२५	त्वयाच	त्वया च	२०२	६	पैजाची	पैशाची
१४४	१	४	३	२०८	३	उद्गता	उद्गता
	४	विलोकसः	विलोकसः	२१०	५	विमोर्वशीय	विक्रमोर्व- शीय
	८	चरन्मार्ग	चरन्मार्ग	२१२	१३	नाट्टय	नाट्टय
	९	पञ्चया	पञ्चा	२१३	१०	नाटय	नाटय
		पीडयते	पीडयते		१४	भरताटय	भरतनाटय
	२४	नाम निर्देश	नामनिर्देश	२१३	२७	सुगुप्तन् चन	गुप्तन्, सूचन
		ईष्ट	इष्ट	२१६	१२	व्यापक	छ व्यापक
१४५	२५	रुटी	रुटि	२१७	२३	प्रस्थान	प्रस्थान
१५७	२७	सामाहिय	सामाहय				

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२२३	९	शाहानशाहि	शाहानुशाह	२५५	१८	प्रसन्ना-	प्रसन्ना-
२२४	२१	टिप्पर्णा ५२	टिप्पणी ५५			रु १न	ख्यान
२२८	११	परम	परम	२५६	१७	हरिणा	हरिणी
	१६	सुभापिता-	सुभापिता-	२५९	८	वनमाला	वनमाली
		वली	वलि		९	संकत	संकेत
२२९	२	महेंद्रादित्य	महेंद्रादित्य	२६१	२४	सग्रह	सग्रह
	६	संगीतना	संगीतना	२६४	६	उद्गम	उद्गम
२३४	१७	निवासनु	निवासनु	२७४	४	तिष्ठन्ता	तिष्ठन्ती
	१८	भोगपवानो	भोगपवानो		१०	यमक कवि	यमककवि
	२५	रपायू	रचायू	२७५	११	सहकार	सहकार
	२६	यवति	अवति	२७६	८	मात्राबंध	मात्राबंध
२३६	४	न्हाणपणे	न्हानपणे	२७८	७	कपूरमञ्जरी	कपूरमञ्जरी
२३८	४	तानका	तनिका	२८३	२०	नधा	नधा
२३९	९	सिंहवर्गा	सिंहवर्मा		२२	तथाविबक्षिता	तथा विबक्षित
	२२	डल्का	डल्क	२८४	४	सुवसन्त	सुवसन्त
	२५	महिली	पहिली		६	पवाहो	पवाही
२४२	११	अणघटतो	अणघटतो		११	ओकार	ओस्वर
२४४	२०	घसाई	घसाई	२८६	७	(वसंतनो)	(वसंतनो)
२४६	५	कहेला	कहेला		२६	प्रवाही	पवाही
	२४	—उ—	—उत्—	२८९	२०	वधारवाथी	वधाराथी
२४८	१०	उत्तम	उत्तर	२९२	१०	निरानराळा	नरनिराळा
२४९	२२	Tahlo	Table	२९४	१४	उद्योगथी	उद्योगथी
२५२	६	घटे छे	घटे छे	२९५	१०	ध्रुवदेवी	वदेवी
२५३	२५	वाव्य	लघुवाव्य		११	ध्रुवस्वामिनी	वस्वामिनी

विशेषमा पृष्ठ ८१, पंक्ति १२ मां ' एमां ' तथा ' अष्टवर्ण ' वच्चे ' पंचवर्ण पदनी ' ए वे बोल तेम ज पृष्ठ २७६, पंक्ति २० मां ' खंड ' तथा ' अंत्य ' वच्चे ' अंत्य अनुप्रासथी अने बीजो तथा चोथो ' ए छ बोल ऊमेखाना छे. बीजी केटलीरु छेजे सूर्ये एवो अशुद्धिओ पण सूर्यारी छेवा बीनती छे.

पद्यरचनानी ऐतिहासिक आलोचना

दृष्टिपात १

पद्यनी घटना.

१ साहित्यनी वाणीनां वे स्वरूप, गद्य अने पद्य. काव्य गयमां पण होय अने पद्यमां पण होय. हर्षचारत, फादम्वरी, दशकुमारचरित वगैरे गद्यात्मक छे. प्राचीनतम उपनिषद्मां पण गद्यनू दर्शन थाय छे. नाटक नाटिका वगैरेमां, तेम ज शुनःशेष गचिरेता वगैरेनां आल्यानमां गद्य-पद्यनो सुघटित संयोग छे. रघुवंश, अने सेतुबन्ध, रामायण अने महा-भारत, ऋचा अने साम, ए सौ पद्यमां छे. गद्य अने पद्य वच्चे भाषा-विभाषानो भेद नथी, पद्यप्रयोगनो भेद नथी, जोडणीनो भेद नथी, उच्चारनो भेद नथी, अर्थनो भेद नथी, व्याकरणनो ए भेद नथी. ते छतां गद्यना स्वरूपमां वंचातो फकरो पद्यना स्वरूपे वांचतां जुदो ज पटी जाय छे. पराक्रमनी प्रसादीना पहेला अने बीजा अंक वच्चेना विष्कंभकनी आरंभनी उक्ति नीचे प्रमाणे गद्यमां छे.

माणवक प्रवेश करिने-

हूं तो थाक्यो. मारी बहाली राजाजीनी छपी वात 'फूहूं, फूहूं' करे छे; ने वंदानो स्वभाव भरभडियो छे. एटले हूं कोइने ए जोऊं छूं, के सळवळ सळवळ धती भूंडी जीभडी आ सख-नी ज रे'ती नथी. चाल, राम. प्रिय मित्र परवारे त्यां लगी हूं, ओछी आवजाववाळो म्हेल जे महीचिमान, तेमां घडीएक वेसूं.

आ उक्तिमां प्रच्छन्न पद्यनूं तत्व रहेळं छे. ए कवितनी ढवे नीचे

१ कवित एटले चार अक्षरना सधियाळा चरणनो समचतुष्पद वर्णबध उपरनो दृष्टांत चार अक्षरना सधिनो घनेलो होई कवितनी ढवे वंचाय छे, परतु एमां सधिनी अने चरणनी संख्या सुकरर नथी; तेम ज प्राप्त वंधन पण नथी.

પ્રમાણે મેઝ પુરઃસર વંચાય છે, અને વાંચતાની સાથે જ અકવિને પણ કોઈ પ્રકારના પદ્મનો માસ થાય લે.

માણવક પ્રવેશ કરીને—

હં તો થાવ્યો.

મારી બહાલી રાજાજીની છૂપી વાત

‘ફૂદું, ફૂદું’ કરે છે; ને

બંદાનો સ્વભાવ ભરખડિયો છે.

પટલે હું કોઈને એ જોડું છું, કે

સલ્લવલ સલ્લવલ થતી મૂંઢી જીમડી આ

સલ્લવની જ રેતી નથી.

ચાલ, રામ.

પ્રિય મિત્ર પરવારે ત્યાં લગી હું,

ઓછી આવજાવવાઠો મ્હેલ જે મ્હીચિમાન,

તેમાં ઘડીએક વેસું.

આમાં શબ્દો તો તેના તે જ છે. પરંતુ તે ન્હાનીમોટી પંક્તિમાં મેઝબદ્ધ વાંચતાં અને એક પ્રકારની સરસી ગતિ મઝે છે અને એનું અપ્રકટ પદ્ય પ્રકટ થાય છે. મેઝ મૂલ્યે વિકૃત વનેલા કોઈ પ્રકારને સ્વરા સ્વરૂપે ઓલ્લ-સવાને લાંબા ઉત્તારાની જરૂર રહેતી નથી. વદલાયા છતાં અસલ પદ્મનો અંત્ય ઘટકાવયવ જડી આવતાં તે ઉપરથી પણ ક્વચિત્ આલા એ પદ્મનો ચિતાર સ્વહો થાય છે. અંગૂઠાના રાવણની લોકકથા તો સારી રીતે જાણીતી છે. સાહિત્યમાં પણ રાવણના અંગૂઠા સરસો પદ્યવંધનો એકદેશ જોઈ પ્રતિભા, આલો પદ્યવંધ ઉપજાવી કાઢે છે. ઉર્વશીની શોધમાં મમતો પુરુરવા સુરભિકંદર પવંતને પૂઠે છે કે તે કોઈ સુંદર સ્ત્રી જોઈ ? તે ક્ષણે સામેથી શબ્દ સંમઝાય છે— ‘જોઈ’. ત્યારે રાજા ફરી પૂઠે છે કે તે ક્યાં છે ? વઝી સામેથી શબ્દ સંમઝાય છે— ‘ક્યાં છે ?’ એ વીજી વારના પ્દનિથી રાજાના સમજવામાં આવે છે કે આ તો મારા વોલ્ના પટલા જ પડે છે. પ્રસ્તુત પ્રસંગમાં પડવાના રૂપે

संभ्रान्तो बोल उक्तिनो छेलो शब्द होवो जोइये ए अनुभवसिद्ध सय पकडी लेई, सामेयी आपेलो 'जोई' बोल राजानी पर्वत प्रत्येनी पयामरु उक्तिना छेडे ज होवो संभने छे, एवो निर्णय बांधीने पहली आवृत्तिनो

सर्व भूधरना नाथ ! दीठी तँ विखूँटी पडी
अरण्ये रम्य रामा ए अंगे अंगे रूँचे रूँडी ?

ए अनुष्टुभ् रदबातल गणीने में तेने ठेकाणे नाटकनी बीजी आवृत्तमां

भू परना भूभृत्ना भूपति ! भूली भमंत अच कोइ
सर्वे अंगे सुंदर स्त्री में खोयेल तँ जोई ?

ए आर्या गोठवी छे^२. पद्यसृष्टिमां रावणना अंगूठानूं दर्शन फचित् फोइरु व्यक्तिने ज थाय छे. परंतु पद्य मटी गद्य बनी गयेला फकराना असल रूपमां रही गयेला भाग उपर लक्ष खेचातां आसो ए पद्यबंध उद्धारवाना प्रसंग तो प्राचीन साहित्यमां वारंवार मळी आपे छे. मुद्राराक्षस नाटकना पहला अंकमां चाणक्य अने चंदनदासने नीचे प्रमाणे वातचीत थाय छे^३.

चाणक्यः । म खलु चन्द्रगुप्तदोषा अतिक्रान्तपार्थि-
वगुणान् स्मारयन्ति प्रकृतीः ।

चन्दनधासः कर्णा पिधाय । सन्तं पावं । सारअणि-
सासमुग्गएण विअ पुण्णिमाचन्देण
देवेण चन्दसिरिणा अहिअं णन्दन्ति
पकिदीओ ।

आ वंने उक्तिओ गद्यात्मक जोशामां आवे छे. तेथी वेताळीस दरस उपर पहली वारे छपावैला अनुवादमा मे ए गद्यरूपे ज आपी हती. त्पारवाद

२ संस्कृत मूळमा सर्वशक्तिभृतां, नाथ द्रुष्टा सर्वाङ्गसुन्दरी । रामा रम्ये बनोद्देशे मया विरहिता त्वया ॥, एवो श्लोक छे. ते बदल, सर्वाङ्ग-सुन्दरी सा सर्वेषां क्षितिभृतां श्रितौ नाथ । रामा रम्येऽरण्ये मया विरहिता त्वया द्रुष्टा ॥, एवी आर्या गोठनीने मे अनुवाद कयों छे. जुओ पराक्रमनी प्रसादी (आ. ६) उपोद्द० पृ ३९

३ जुओ मारू संस्कृत मुद्राराक्षस (आ. ३), पृ १४-१५. -

। श्रीजी आवृत्ति तैयार करतां देवेण चन्दसिरिणा अहिअं णन्दन्ति पकि-
दीओ ए भाग उपर माळं लक्ष गयूं, में जोयूं के ए चोक्खूं आर्यानुं उत्तर
दल छे. ते उपरथी पूर्व दलनो उद्धार करी सन्तं पावं । पछी आखी आर्यां में
नीचे प्रमाणे गोठवी.

णं सरअपुण्णमासीसमुग्गएण चिअ पुण्णचन्देण ।

देवेण चन्दसिरिणा अहिअं णन्दन्ति पकिदीओ ॥

दूकामां पद्यनूं स्वरूप ज एवूं कोइ अपूर्व छे, के ते दृष्टिए पडतां के
जीभे चडतां पद्य तरीके ओळखाई ज आवे छे. त्यारे हवे विचारवानूं रहे छे,
के गद्यमांथी पद्यरचना केवी रीते प्रगटी ?

२ पद्यरचनाना प्रकार अनेक छे. अमुक भाषामां फलाणी ज पद्यरचना
कैम रूढ थई, ते ए भाषानूं बंधारण तपासी जोयाथी समजाय छे. इंग्रेजी
भाषानो दृष्टांत लेइये. एनूं विशेष लक्षण Accent एटले शब्दभार छे.
एमां एक वरडीना ए शब्द छे अने अनेक वरडीना ए छे. वीजा वर्गना
शब्दनी अनेक वरडी पैकी एक वरडी उपर खास भार आवे छे, एटल के ते
भार दर्हने बोलाय छे; अने भारयुक्त सिवायनी वरडी के वरडीओ भारमुक्त
रहे छे. पहेला वर्गना शब्दमां केटलाक भारमुक्त अने वीजा भारयुक्त होय
छे. शब्द एक वरडीनो हो के अनेक वरडीनो, तेनो उच्चार करतां भारयुक्त
वरटी भार मूकीने अने, भारमुक्त भार मूवया वगर ज बोलाय छे. सिद्ध के
साधित, हरेक बोलमां शब्दभारनी व्यवस्था मुस्थापित जोवामां आवे छे.
Conduct' क्रियापद छे, तेमां वीजी वरडी उपर भार छे. ए क्रियापद उप-
रथी Con'duct नाम बने छे, तेमां पहेली वरडी उपर भार आवे छे. तेवीज
रीते Conductiv'ity बोलमां वीजी वरडी उपर अने Conductibil'ity
बोलमां चोधी उपर भार मूकाय छे. आ Accent एटले शब्दभारना विशेष
लक्षणना मजवूत पाया पर इंग्रेजी पद्यरचनानो हवाई महेल चणायो छे.
भारयुक्त अने भारमुक्त वरडीनी विविध मेळवद्ध गोठवणधी, Iambic,

Trochee, Anapest વગેરે સંધિ નીપજે છે. Iambic અને Trochee સંધિમાં વે વે વરડી હોય છે. પહેલી ભારમુક્ત તથા ત્રીજી ભારમુક્ત વરડીનો Iambic અને પહેલી ભારમુક્ત તથા ત્રીજી ભારમુક્તનો Trochee સંધિ ધાય છે. Anapest સંધિની પહેલી વે વરડી ભારમુક્ત અને ત્રીજી ભારમુક્ત હોય છે. નિરનિરાઝા સંધિના આવર્તનથી નિરનિરાઝા પદ્યવંધ રચાય છે.

૩. ઇંગ્રેજી પદ્યરચના એ ભાષામાં પ્રવર્તતા શબ્દભારના તત્ત્વને અવલંબીને ઝમી થઈ છે, તેવી જ રીતે આપણી ભાષાના ઉચ્ચારનાં વિવિધ તત્ત્વોને આધારે આપણી પદ્યરચના પણ પ્રકટી છે. વ્યાકરણમાં જેને મૂળાક્ષર કહે છે, તેના વડે શબ્દો બને છે; અને શબ્દો વડે વાક્યો રચાય છે, જેનાથી આપણો વ્યવહાર ચાલે છે. વાણી મૂળાક્ષરોનો વિસ્તાર છે. ઉચ્ચારનાં એ ઘોંઝોનો મોટો ભાગ વ્યંજન છે. વે કે વધારે વ્યંજન એકઠા મઝી સંયુક્ત વ્યંજન બને છે. મૂળાક્ષરોનો ઘોંઝો ભાગ જે સ્વર, તે સંખ્યામાં થોડા છે. માત્ર તેમનો જ સ્વતંત્ર ઉચ્ચાર થાય છે. વ્યંજન સંયુક્ત હો કે અસંયુક્ત હો, તેનો સ્વરની સહાયતા વગર પૂરો ઉચ્ચાર થતો નથી. શબ્દના પ્રત્યેક પૂર્ણ ઉચ્ચારાયલા અવયવને વર્ણ અક્ષર કે વરડી કહે છે. વરડીનો સ્વર હ્રસ્વ કે દીર્ઘ હોય છે. તે અણથડકાતા હ્રસ્વ સ્વરના રૂપમાં ઇંદની પરિભાષા પ્રમાણે લઘુ લેખાય છે અને દીર્ઘ સ્વરના તેમ જ થડકાતા હ્રસ્વ સ્વરના રૂપમાં તે ગુરુ ગણાય છે. આ રીતે વર્ણનાં વે રૂપ ઠરે છે, લઘુ અને ગુરુ. સ્વરનું વજન તે માત્રા. અણથડકાતા હ્રસ્વ સ્વરની એક માત્રા, અને દીર્ઘ સ્વરની તેમ જ થડકાતા હ્રસ્વ સ્વરની બે માત્રા ગણાય છે. ત્વરિત અને વિલંબિત ઉચ્ચાર કર્યાથી ઘર્ણ રૂપ અને માત્રાનો વિષેક લય(એટલે કાલમાન)ના ધોરણને અનુસરે છે. આ ચતુર્વિધ તત્ત્વના લેખાનો એક દૃષ્ટાંત લેઈયે. સદ્રૂપ વ્રહ્મનો પક્ષ સ્વીકારનારા મુમુક્ષુનો પરામભવ કરવાને પડ્દરિપુનું લક્ષકર ચડી આવે છે. તેમનાં ઝઘાડાં ટાંડાં સામે ધપવાના અને પત્તેહ કરવાના ઝસાહમાં મુમુક્ષુ જીવ મનને પડકાર કરીને કહે છે કે ' સ્વરદાર મનસૂવાજી ! ટાંડાની ધારે ચડવું છે.

હિંમતે હથિયાર વાંધી, જી, સત લડાઈએ લડવું છે.' આ ઉક્તિના વર્ણ ગણિયે તો ઓગળાચાઝીસ છે. એમાં લઘુ રૂપ અઢાર અને ગુરુ રૂપ એકવીસ છે. એની માત્રાનો સરવાળો સાઠ આવે છે. એ ઉક્તિ લયમદ્ધ વાંચતાં એના લયના એક-મનો અર્થાત્ ^૪લગનો આંકડો ઝુંવાઝીસ થાય છે. લગનું લેખું કરવાની પદ્ધતિ સાધારણ રીતે વહુ જાણીતી નથી. સંગીતનો પરિચય ધરાવનારને તે સહેલ છે. પ્રસ્તુત દૃષ્ટાન્તના લગનું લેખું મારી સમજમાં નીચે પ્રમાણે છે. -

ખવરદાર મનસૂવાજી ! ઠાંડાની ધારે ચઢવું છે.

૧ ૧ ૦|| ૧ ૦|| ૦'૧|| ૨ ૨ ૨ - ૧ ૧ ૧ ૧ ૧ ૧ ૧ ૧ ૨

હિંમતે હથિયાર વાંધી, જી, સતલડાઈએ લડવું છે^૫.

૧ ૧ ૦|| ૧ ૦|| ૦|| ૦|| ૨ ૨ ૨ ૧ ૦|| ૦|| ૧ ૧ ૧ ૧ ૨ ૨

અહાં મેં લગનો અંક પ્રત્યેક વર્ણ તલ્લે આપ્યો છે. પ્રસ્તુત દૃષ્ટાન્તથી આપણી વાણીમાં ચાર તત્ત્વ પ્રવર્તતાં જડે છે, વર્ણ, રૂપ, માત્રા અને લય. પહેલાં ત્રણ તત્ત્વ વાસ્તવિક જોડણીમાં રહ્યાં છે. ચોથું તત્ત્વ ઉચ્ચારણમાં સમાયું છે. આ તત્ત્વોનો મેઠ્ઠ ગઘમાં હોતો નથી અને અપેક્ષિત્ પળ નથી. ગઘની રચના શીઘ્રવોધપરાયણ છે. એનું ધ્યેય અર્થવોધ છે. મેઠ્ઠ એ ધ્યેયની સિદ્ધિનું એકાત્મિક સાધન નથી. પરંતુ પદ્યની રચના તો મેઠ્ઠ વગર શક્ય જ નથી. પદ્યનો આત્મા મેઠ્ઠ છે. મેઠ્ઠરૂપી જીવ વિના પદ્યનો જન્મ સંભવતો નથી. પદ્યની રોચક રચનામા કોઈ પળ પ્રકારના મેઠ્ઠનો આશ્રય આવશ્યક છે. ઉક્ત તત્ત્વો પૈકી કોઈનો એ મેઠ્ઠ ગૂજરાતી પદ્યરચનાનું વ્યાવર્તક લક્ષણ છે. મેઠ્ઠ વિનાની ધર્ણ રૂપ માત્રા અને લયની ઘટનાથી કોઈ પળ પદ્યરચના સાધ્ય નથી.

૪ મેઠ્ઠ અને સંપાદ એ બે એક જ અર્થના શબ્દ છે. વર્ણ, રૂપ, માત્રા

૪ લવ ઘોલ કાલવાચક છે. એક માત્રાનો વર્ણ ઘોલતાં જે સમય રોકાય તે લવ.

૫ આ ધીંગ ભગતના એક પદના ટેકનો ભાગ છે. એની પહેલી પક્તિમાં ચાત્રુ તાનપૂરક 'રે' વદલ માનવાચક 'જી' હોવાથી યીંગી પક્તિમા અને તપછીની કઠીઓમાં પણ મેં 'જી' પાઠ લીધો છે

अने लयनो मेळ ते शूं, ए वधारे स्पष्ट थवानी जरूर छे. पद्य गद्यथी जुद्धं, ते मेळ अने अणमेळना मुदाथी ओळखाय छे. गद्यात्मक रचनामां, अन्वयने अनुसरीने वाक्यना विविध भाग पडे छे. प्रत्येक भागमां आद्य अक्षर भार मूकीने बोलाय छे. ए भारने आपणे गद्यभार संज्ञा आपीशूं. एने लीधे वाक्यना भाग जुदा जुदा परखाय छे. आ गद्यभारवाळा भाग बहुधा वर्ण, रूप, मात्रा के लयनी चोकस व्यवस्था वगरना होय छे. 'पद्यात्मक रचनामां चोकस उच्चारणना जूथनो एक एक भाग वने छे. तेनी घटना वर्ण रूप मात्रा के लयनी चोकस व्यवस्था सर होय छे; अने घणूं करीने तेना आद्य अक्षर उपर भार पडे छे, जेने पद्यभार नामथी ओळखावीशूं. जे चोकस व्यवस्थाने लीधे पद्यमां पद्यत्व आवे छे ते मेळ के संवाद. गद्यनो अणमेळ अने पद्यनो मेळ उदाहरणथी समजाय एवो छे. ' (१) भूतळना लोके (२) एकसमे (३) इन्द्रभुवनमां जैने (४) जुदी जुदी भेट (५) भावथी (६) घरावी हती.' ए गद्यना आकारमां अणमेळनो दृष्टांत छे. एना अन्वयानुसारी छ भाग वर्णसंख्यामां न्हानामोटा होई मेळ विनाना छे. ए ज फकरानां चार चार वर्णनां जूथ पाडीने आद्य अक्षर उपर भार मूकीने वांचतां ए कवित नामे वर्णमेळनूं चरण वनी रहे छे. पद्यभारवाळी रचना नीचे प्रमाणे. (१) भूतळना (२) लोके एक (३) समे इन्द्र (४) भुवनमां (५) जैने जुदी (६) जुदी भेट (७) भावथी ध (८) रावी हती'. प्रस्तुत दृष्टांतमां प्रत्येक पद्यभागनी चतुर्वर्णात्मक व्यवस्थित घटना ए वर्णसंवादनुं तत्व छे. हवे रूपरचनाने अनुलक्षीने पद्यगद्यनो मेळअण-मेळ तपासिये. ' (१) जे (२) निराश न थई (३) मच्यो रहे, (४) ते ज (५) इष्ट सुखनी घडी (६) जुए ' ए वाक्यना गद्यानुसारी छ भाग छे; ए भागोमां लघुगुर्वात्मक रूपरचनानी व्यवस्थित घटना नजरे पडती नथी.

६ फार्बस विलासमांना एक कवितनूं आ पहेलूं चरण छे. असलमां दरेक चरणना अंते 'छे' बोल राख्यो छे ते बदल में 'हती' बोल घापयो छे.

૫ ગઘના આકારમાં અળમેઢનૂં ઉદાહરણ વને છે. ૫નો ૫ જ વાક્યને ઢુભા-
ગીને પ્રત્યેક ભાગના નીચે પ્રમાણે નવેસર પેટાભાગ પાડિયે, તો અપ્રકટ
મેઢ પ્રકટ થાય છે.

(૧) જે નિરાશ (૨) ન થઈ (૩) મચ્યો રહે,
(૪) તે જ ઇષ્ટ (૫) સુખની (૬) ઘડી જુએ^૭.

૫નો પહેલી પંક્તિના ત્રણ ભાગ રૂપરંચનામાં વીજી પંક્તિના ત્રણ ભાગ
સાથે અનુક્રમે મેઢતા આવે છે. નવેસર ગોઠવણીમાં ગઘભાર જતો રહી પઘ-
ભાર પ્રગટી પ્રસ્તુત વાક્ય રથોદ્ધતા નામે રૂપબંધના આધેયાના આકારે મેઢનૂં
ઉદાહરણ થાય છે. ગઘમાં અર્થસાધક વિરામ આવે છે. પઘમાં કહીંક કહીંક
મેઢસાધક વિરામ લેવો પડે છે, જેને યતિ કહે છે. યતિવાઢા રૂપાત્મક
પઘનો મેઢ અને ગઘનો અળમેઢ પણ લક્ષમાં લેઈ જોડયે. ‘(૧) મોતે
ચાહ્યૂં (૨) કેમ (૩) રાહ્યૂં રલાય ?’—૫ ત્રિધા મક્ત ગઘ મેઢરહિત છે.
તેના પઘાનુસારી પાંચ ભાગ પાડી વીજા ભાગ પઢી યતિકૃત વિરામ લીધાથી
નીચે મુજબ મેઢવાઢી પંક્તિ નીપજે છે.

(૧) મોતે (૨) ચાહ્યૂં (૩) કેમ (૪) રાહ્યૂં (૫) રલાય ?^૮

શાલિની નામે સયતિક રૂપબંધનૂં આ ંક ચરણ છે. માત્રાત્મક પઘનો
મેઢ અને ગઘનો અળમેઢ પણ પઘભાર અને ગઘભારનાં સ્થાન વર્વલાતાં
હોવાને લીધે તરત જ દેલાઈ આવે છે. પઘ તરીકે જેના

(૧) અવદશા અપ (૨) માન સ્વમવા (૩) ને જ છે^૯

૫ના સાત સાત માત્રાના અંતરે ત્રણ ભાગ પડી મેઢમાં આવી રહે છે,

૭ આ વાક્ય પરાક્રમની પ્રસાધી(આ.૬)ના ચોથા અંકમાંથી લીધું છે.

૮ આ વાક્ય સ્વપ્નની સુંદરી(આ.૨)ના છઠ્ઠા અંકમાંથી યોજીક
કેરપર કરી ડ્તાયું છે.

તે જ ઘચનનો ગ્રથ તરીકે અળમેઢ ન્યૂનાધક માપના ૪ (૧) અવદશા (૨) અપમાન સ્થમવાને જ (૩) છે ' એવા ભાગમાં તરી આવે છે. તેવી જ રીતે લયાત્મક પઘરચનામાં મેઢાપી પઘભારથી મેઢ સિદ્ધ થાય છે, અને ગઘમાં અળમેઢાપી ગઘભારને લીધે અળમેઢ દઢ થાય છે. લયાત્મક પઘરચનાની મૂઢપ્રકૃતિ વર્ણાત્મક રૂપાત્મક કે માત્રાત્મક હોય છે, આથી કરીને વર્ણલય રૂપલય અને માત્રાલય એ ત્રિધા વિકૃતિના દષ્ટાંતમાં ડ્કતરવાની અગત્ય જણાતી નથી. આપણી વાણીમાં વર્ણ રૂપ માત્રા અને લયનાં જે તત્ત્વ કહ્યાં, તે- માંથી વર્ણમેઢ, રૂપમેઢ, માત્રામેઢ અને લયમેઢ, એ ચાર મેઢ પ્રગટચા છે. તે ગૂજરાતી પઘરચનાના ચાર અળસ્કૂટ અળતૂટ સજીવન શરા છે. મુસ્થાપિત મુવ્યવસ્થિત રોચક રચના તે પઘનો મેઢ. ડંપ્રેજી કવિતામાં અમુક પ્રકારનો મેઢ છે, ગૂજરાતીમાં તેનાથી જુદા પ્રકારના મેઢ છે; એટલે કે ડમયમાં મેઢ તો છે છે ને છે. 'મેઢ વગરનું પઘ' એ ડમયમાં વદતો વ્યાઘાત છે.

૫ કેટલાક વિદેશીય તેમ જ સ્વદેશીય વિદ્વાનનું માનવું છે કે ગૂજરાતી શબ્દોન્ચારમાં શબ્દભારનું તત્ત્વ રહેઢું છે^{૧૦}. તે તત્ત્વ ડંગ્રેજી Accent (શબ્દમાર)ના જેવું છે. શબ્દની અમુક વરડી માર દેઈને અને ડતર માર ડીધા વગર ડોલાય છે. અર્થાત્ એઓના કહેવા મુજબ ગૂજરાતી માપાના ઢોલ શબ્દમારવાઢી અને શબ્દમાર વિનાની વરડીના વનેલા છે. આ શબ્દમાર સ્થાપિત થાય, તો ડંગ્રેજી જેવી શબ્દમારમૂલક પઘરચનાની શક્યતા ગૂજરાતીમાં વિચારવી રહે. અત્યારે તો એ સંબંધમાં કંઢ પળ નિર્ણયાત્મક નિરૂપણ કરાય એમ નથી. ઋશ્વદની વાણીમાં આરોહાવરોહાત્મક શબ્દમાર વિચમાન છતાં તન્મૂલક પઘરચના પ્રગટી નહિ; અને ગૂજરાતીમાં દવાળના સ્વરૂપને શબ્દમાર હોય તે છતાં તન્મૂલક પઘરચના ન પળ પ્રગટે; અથવા પ્રગટીને પળ સફઢ ન નીવઢે. મારના સંબંધમાં અહીં એક વાવતની નેધ લેવાની જરૂર જણાય છે. ડંગ્રેજીમાં માર અચઢ છે. ગઘમાં જે વરડી ડપર

भार/मूकोय छे, ते ज वरडी उपर ए भापामां पद्यमां पण भार पडे छे; शब्दनी बीजी कोइ वरडी उपर ते आघोपाछो ठेली शक्यतो नथी. गूज-रातीमा वाक्यना वधा ए शब्द उपर भार पडतो जणातो नथी; प्रत्येक अन्व-यसिद्ध खंडनो जाय शब्द खास भार मूर्काने बोलाय छे. म्होवडना स्थानथी चलित थई बीजू कोइ अन्वयसिद्ध स्थान ते पामे छे, त्यारे भार दीधा वगर उच्चाराय छे. कोइ पण खंडना भार मूर्की बोलाता आघ बोल सिवायना बीजा बोल भार देईने बोलाता जोवामां आवता नथी. एटले के गूजरातीमां भार इंग्रैजीनी पेठे शब्दसिद्ध नथी पण स्थानसिद्ध छे. गद्यरचनाना अन्वय-वळे स्थानसिद्ध भारने में गद्यभार अने पद्यरचनाना संवादवळे स्थानसिद्ध भारने में पद्यभार संज्ञा आपी छे. गद्यभार अने पद्यभार सर्वना जाणीता छे. इंग्रैजी शब्दभारमूलक पद्यरचना जेवी तो नहि, पण वर्ण, रूप, मात्रा अने लय तत्पथी कोइ भिन्न तत्वनी पद्यरचना गद्यभारनी रोचक व्यग्रस्थाथी उप-जाववी होय, तो कदाच ऊपजे खरी. प्रयोग करी जोवा जोग छे. ए दिशामां अजमायझा द्वाखल नीचेनो फररो हं रजू करू छू. मेळना प्रदेशमां गद्यभारनी शक्यता विचारवा पूरती ज ए उदाहरणनी योग्यता लेखवानी छे. पचीसेक वरस उपर रचेई ए उदाहरण^{११} नीचे प्रमाणे छे. ' (१) साहित्यनूं सर्वस्व (२) रस (३) छे. (४) काव्य (५) दृश्य होय (६) के श्रय, (७) लेख (८) गद्य होय (९) के पद्य, (१०) बंध (११) प्रौढ होय (१२) के प्रसन्न, (१३) शैली (१४) व्यस्त होय (१५) के संक्षिप्त, (१६) पात्रथी ने वस्तुथी (१७) पाठ्यथी ने गेयथी (१८) दृष्ट छे (१९) एक ज, (२०) रसनी जमावट. (२१) आर्द्रता (२२) अवती पर (२३) टलवाय (२४) के हिमालये (२५) हिमालय (२६) वंधाय, (२७) उष्णता (२८) दावानळ

११ जुआ बुद्धिप्रकाश पु ५५. पृ. ९९-१००. तेमा वापरला अनुपंगी

अवच्छपणाना अर्थना 'प्रयत्न' बोल बदल उपर में चपळपणाना भाववालो 'भार' बोल कपयों छे

(२९) सळगावे (३०) के फूलवाडी (३१) फूलावे, (३२) वायुनी लहरी
(३३) रोमे रोम (३४) कंपावे (३५) के रोमे रोम (३६) नतवि. (३७)
एक के बीजी रीते (३८) नवनवो रंग ज (३९) जामे छे'. आ ऊता-
राना ओगणचाळीस गद्यभारकृत खंड छे. ते पद्यनी रीतनी पंक्तिओमां नीचे
मुजब गोठवाय छे.

(१) साहित्यनूं सर्वस्व (२) रस (३) छे.

(४) काव्य' (५) दृश्य होय (६) के श्रव्य,

(७) लेख' (८) गंध होय (९) के पद्य,

(१०) बंध' (११) प्रौढ होय (१२) के प्रसन्न,

(१३) शैली' (१४) व्यस्त होय (१५) के संक्षिप्त,

(१६) पात्रथी ने वस्तुथी

(१७) पाठ्यथी ने गेयथी

(१८) इष्ट छे (१९) एक ज,

(२०) रसनी जमावट.

(२१) आर्द्रता (२२) अबनी पर (२३) ठलवाय

(२४) के हिमालये (२५) हिथालय (२६) बंधाय,

(२७) उष्णता (२८) दावानळ (२९) सळगावे

(३०) के फूलवाडी (३१) फूलावे,

(३२) वायुनी लहरी

(३३) रोमे रोम (३४) कंपावे

(३५) के रोमे रोम (३६) नतवि.

(३७) एक के बीजी रीते

(३८) नवनवो रंग ज (३९) जामे छे.

पहेली नकलना गद्यभारकृत भाग ज बीजी नकलना पद्यभारकृत भाग
छे. बीजी चारना ऊनारानी बीजी त्रीजी चौथी अने पांचमी पंक्तिमां पहेला

अने बीजा भाग वच्चे यति छे, ते वचगाळामां टूकी ऊभी लौटी दोरीने वंतावी छे. प्रस्तुत उदाहरणमां मेळ सधातो होय, तो ते साधनाखूं तत्व वर्ण, रूप, मात्रा अने लयथी व्यतिरिक्त होवूं घटे छे. शाथी जे वर्णमेळ, रूपमेळ, मात्रामेळ अने लयमेळमां पद्यभार गद्यभारथी भिन्न होय छे, अने अहाँ ते अभिन्न छे. ए मेळ ते चाक्यभारात्मक मेळ भासे छे. इंग्रजीमां जेने **Rhythmic Prose** (मेळवद्ध गद्य) कहे छे, तेमां अने आमां भेद छे. पहेला प्रकारमां जे संधि जोवामां आवे छे, ते शब्दभार(Accent)-कृत छे; बीजा प्रकारमां ते गद्यभारकृत छे. शब्दभारकृत संधि आवृत्त होय छे; गद्यभारकृत संधि तो अनावृत्त छे. एकमां आवर्तनने लीधे मेळ आपोआप जळवातो होवाथी यतिने स्थान ज नथी; अन्यमां ए साहजिक अनुकूलता न होवाथी प्रसंगे इष्ट मेळ मळी रहेवा माटे मध्य यति आवश्यक वने छे. छेछी कहेली विशिष्टता बीजा प्रकारने गद्यमां गणवा ना पाडे छे. पद्यनी जरूरियातनो विराम जे यति, ते गद्यने नाकवूल छे, अज्ञात छे. ए यतिनो श्लोक पद्य तरफ छे; मकमपणे कहीशूं के गद्यना विरुद्ध छे. आगळ जणावचामां आवशे तेम पद्यनी यति गद्यना विरामथी तदन भिन्न छे. ए यतिने लीधे उदाहृत नवतर रचना एक तरफ जेम इंग्रजी **Rhythmic Prose**(मेळवद्ध गद्य)थी जुदी पडे छे, तेम अनावृत्त संधिने लीधे बीजा तरफ आपणी लयात्मक पद्यरचना, जे हवे पछी वर्णवचामां आवशे, तेनाथी पण ए जुदी पडे छे. आपेला उदाहरणमां पद्यसर्जनना चतुर्विध मेळ सिवायनो मेळ छे के नहि, तेनो निर्णय कवि अने विवेचक करशे. दिविसुने प्रस्तुत प्रश्न स्वयं विचारवो सरळ थाय एवा उदेशथी बीजा एक दृष्टान्त हूं अहाँ ऊमेखूं छूं. शिष्ट गद्यना आव दृष्टा कवि नर्मदना नर्मगद्यमांथी में ए दृष्टांत लीधो छे. कविए रचेलो राज्यरंगनी ए उत्थानिका छे. ए प्रसन्न-गंधीर गद्यसंदर्भना विविध खंडमां प्रवर्तल एक प्रकारनूं समतोलपणूं वाचकरनूं लक्ष खेचे छे. ए समतोलपणामां सरकार थती गद्यभार अने पद्यभारनी एकताने लीधे भारकृत संपादनी जमावट थाय छे; अने गद्यात्मक

स्थूल शरीरमां रहेला पदात्मक सूक्ष्म शरीरनी झांखी थाय छे. एनी रूपरेखा नीचे आपेला ऊताराथी स्पष्ट थरी.

एक छे' अनेक छे.

निवर्ते छे, प्रवर्ते छे, आनंदे छे.

एकने' अनेक अर्थ छे.

एकने' अनेक काम राजे छे.

एकने' अनेक धर्म प्रतापे छे.

प्रेम पोषे छे, शौर्य प्रकाशे छे ने जय विलासे छे.

सर्व काळ श्रीरंग. ?

बीज, वृक्ष ने फळ !

लय, उत्पत्ति ने स्थिति !

स्वभाव, ज्ञान ने योग !

सदुद्देशे ने सत्कर्म !

अकळ लीला, अकळ शक्ति ने अगाध ज्ञान !

प्रेमभक्त हुं वंदुं छुं.

विजय विजय, श्रीरंग ! २

पृथ्वी उपर जनसमूह शुं ?

राज्य शुं ?

राज्यना रंग शुं ?

नर्मद शुं ?

ए संधुं

रससिंधुना कांठा परनी कणिका पण नथी.

तो पण ते कांइ छे ने रंग छे.

ए रंग

हुं मारी तोतळी वाणीए वर्णववा इच्छुं छुं.

दे प्रसाद रंगाडं.
उदय उदय श्रीरंग ! ३

सूर्यमाळानो एक ग्रह आ पृथ्वी
पाणी वायु तेज आकाशथी वेष्टित छे;
उद्भिज्ज प्राणी इत्यादि समृद्धिथी भरपूर छे;
पोतानो ने पोतानी उपरनानो संसारव्यवहार
नियमपूर्वक सदैव वर्तमान विराजित
राखे छे.

ए महारंगमांना अंशमां एक जनरंग छे;
ने ए वंशमां एक कुळ राज्यरंग छे.

ए प्रतापी छे,

जननां सुखदुःखनुं महाकारण छे. ४

X X X X X

सर्वकाळे अनेक राज्यो धपायां अने लय पाभ्यां,
केवी रीते मंडायां,
केवां शोभ्यां,

ने केम क्षय पाभ्यां,
पाछां नवां धयां, दीप्यां अने गयां ?
ए रूपांतरोनां जे विधविध दर्शन,
ते राज्यरंग छे.

ए रंगनो कांइक भाग नित्य स्मरणमां रहे,

माटे आ एनो चित्रपट छे;

ने एने पण हूं राज्यरंग कहूं हूं. ५

सुरतना कविनी गद्यकृतिमांथी लीधेला प्रस्तुत अग्रतरणमां कविव, गहन
कविव छे, ते तो सर्वकोद् स्वीकारशे. ए कविता छे तेनी साथे ए पद्य छे

एम पण ठरे, तो कविण अजाणतां गूजरातीमां पद्यरचनानो एक नवो मार्ग उघाडचो कहेवाय.

६ मेळना झराथी छूटतो पद्यरचनानो प्रवाह निवद्ध होय; अथवा तो अवद्ध होय. अमुक मापनी पंक्तिओना जूथमां के जूथोमां पसरतो प्रवाह ते निवद्ध. मापसर रचायली पंक्तिने चरण, पद के दल कहे छे; अने चरण के दलना जूथने छंद नाम आपे छे. चरणोनी संख्याना बंधन वगर छूटथी पसरती पद्यरचना ते अवद्ध. इंग्रजीमां स्पेन्सरकृत Faerie Queene तथा पोपकृत Iliad ए काव्यो निवद्ध पद्यरचनामां छे; अने मिल्टनकृत Paradise Lost तथा Tennysonकृत Princess अवद्ध रचनामां छे. पारसी कोभनू अवेस्ता नामे जे प्राचीन धर्मपुस्तक छे, तेना पद्यात्मक भागमां पण अवद्ध रचनानो उपयोग छे. हिंदइरानी प्रजानां एकत्रयासी यज्ञयाजक अने आतसपरस्त जूथ छूटां पड्यां ते पहेलां ए संयुक्त प्रजामां निवद्ध पद्यरचना प्रवर्तती हनी. आतसपरस्त जूथे वर्णगत मेळने वळगी रही चरणोनी संख्याना बंधननो त्याग करी अवद्ध रचना खेडी. अवेस्ताना गाथा विभागमां ते उपलभ्य छे. इरानी अवद्ध रचना बहु व्हेली प्रगटी अने तेदली ज व्हेली लुप्त थई. आपणी भापानू जे पद्यात्मक साहित्य छे, ते बधूं ए निवद्ध रचनामां छे. अवद्ध पद्यरचना आपणामां छे; पण ते वर्तमानकाळनी प्रसूति छे. हजु तो ते अंकुरावस्थामां छे. एनो जेमने परिचय न होय तेवा जिज्ञासु समक्ष ए ऊठरता छोडनी एक हूंख हूं धरूं छूं:-

अहा ! दारूनो गराडी आब्यो खरो.

एणे शो गजब दारू ठांस्यो छे !

ल्हेरमां ने ल्हेरमां ए केवो डोलतो हींडे छे !

अने ए पीघेलनी वे आंखो तो,

जाणे जासुनां ज फूल होय, तेवीं

ઘેરી લાલઘૂમ છે^{૧૨}.

સાધારણ રીતે હંદનાં ચાર કે ઘે ચરણ હોય છે. તે જાણનારને તરત જ જણાઈ આવશે કે આપેલો ઝતારો હંદોવદ્ધ નથી. ઇમાં છ પંક્તિ છે; અને તે હંદરચનાના રૂઢ ધોરણના વિરૂદ્ધ છે, અવદ્ધ પઘરચના ઘણે ઢરજ્જે ઇંગ્રેજી Blank Verseને મઢતી છે.

૭ નિવદ્ધ પઘરચનાના ચાર પ્રકાર છે, ઘર્ણાત્મક, રૂપાત્મક, માત્રાત્મક અને લયાત્મક, ઘર્ણાત્મક નિવદ્ધ પઘને ઘર્ણવંધ કહિયે ઢિયે. પ્રવર્તમાન ઘર્ણવંધમાં ઘે કે ઘાર ચરણ હોય છે. પ્રત્યેક ચરણ મેઢમાં ગોઢવાતા ઘર્ણાનું ઘને છે. ઘર્ણવંધના ઘે ઘર્ણ પઢે છે, પ્રાચીન અને અઘર્ણાચીન. ગાયત્રાં, ત્રિષ્ટુમ્, કક્કુમ્, પ્રગાથ આદિ ઘર્ણવંધ છે, તે ઘેદમાં ઘપરાયા હોઈ ઘેદિક હંદ કહેઘાય છે. ઇ ઘર્ણવંધના ચરણમાં ઓછામાં ઓછા પાંચ અને ઘધોરેમાં ઘધોરે ઘાર ઘર્ણ આવે છે. પ્રાચીન ઘર્ણવંધની ઘિશિષ્ટતા ઇ છે, કે ઇના ચરણના સંધિ પઢતા નથી, ચરણ ઢૂંકાં હોવાને લીઘે કકઢા પઢઘા ઘગર ઘોલાય છે. ઘીજા દષ્ટિપાતમાં ઇ પ્રાચીન ઘર્ણવંધ ઘિશે ઘિસ્તારઘી કહેઘામાં આવશે. ઘધોરે આકર્ષક રૂપવંધનો ઉદય અને ઘિકાસ ઘતાં આ ઢૂંકાં ચરણના ઘર્ણવંધ લોપ પામ્યા છે. ઇ રીતે અંતઘર્ણાન પામેલી ઘર્ણવદ્ધ પઘરચના ઘાઢીસેક શતક ઘીઘ્યા ઘાદ ઘરી ઢર્શન ઢે છે; તેના ઘઢતરમાં પરિરિઘતિ અનુસાર ઘેર પઢે છે. સંધિવાઢા રૂપવંધ અને માત્રાવંધના સહઘારમાં નઘા ઘર્ણવંધ પળ સંધિવાઢૂં ઘંઘારણ સ્ઘીકોરે છે. અઘર્ણાચીન ઘર્ણવંધના સંધિ પ્રળ છે, ઇક ઘાર અક્ષરનો, ઘીજો ઘેનો અને ઘીજો ઇકનો. પહેલા સંધિનાં આઢ આવર્તનથી ગૂજરાતી પિંગઢનો ઘનાક્ષરી હંદ ઘને છે. ઇનો પ્રઘાર ઢિંદી, મરાઢી અને ઘેંગાઢીમાં પળ છે. ઘાર્ઘસવિરઘમાંથી ઘીઘે આપેલો ઝતારો ઘનાક્ષરી હંદમાં છે.

પાઈ પાઈ પ્રેમપાન પ્રથમ તં પુષ્ટ કયોં;
પછી પીઢા પમાઢી ઘિજોગપાન પાઈ પાઈ.

૧૨ પ્રઘાનની પ્રતિષ્ઠા(ણ, ૨)માંથી આ ઝતારો લીપો છે, શુઢો ૫.

धाई धाई भेटवाने आवतो हुं तारे धाम;
 धीरे रही सामो जठी आवतो तुं धाई धाई.
 गाई गाई गीत तने रीझवतो रुढी रीते;
 गुजारुं छुं दिवस हुं हवे दुःख गाई गाई.
 'भाइ, भाइ' कहिने बोलावतो तूं भाव धरी;
 भलो मित्रतानो भाव भजव्यो तें, भाइ, भाइ !

घनाक्षरीना चारे चरणनो छेल्लो संधि एक अक्षरे अधुरो राख्याधी मनहर बनी आवे छे. उपर ऊतारेला घनाक्षरीमां ए रीतनो घटारो कर्याधी नीपजतो मनहर नीचे प्रमाणे.

पाई पाई प्रेमपान प्रथम तें पुष्ट कर्यो;
 पछी पीडा पमाडी विजोगपान पाईने.
 धाई धाई भेटवाने आवतो हुं तारे धाम;
 धीरे रही सामो जठी आवतो तुं धाईने.
 गाई गाई गीत तने रीझवतो रुढी रीते;
 गुजारुं छुं दिवस हुं हवे दुःख गाईने.
 'भाइ भाइ' कहिने बोलावतो तुं भाव धरी;
 भलो मित्रतानो भाव भजव्यो ते, भाइ तें !

घनाक्षरी अने मनहर ए वे वर्णबंध कवित नामथी पण ओळखाय छे. वांस्तविक रीते कवित ए वर्णवाचक संज्ञा छे. ए वर्णनूं विशेष लक्षण चतुर-क्षर संधि छे. एक के अनेक पूरा चतुरक्षर संधिना चरणवाळो तेम ज चतुर-क्षर संधिने अंते अधुरा संधिना चरणवाळो जे कोइ छंद बने, तेनो समावेश कवित्तवर्गमां थवो घटे छे. आ धोरणे नीचेनां बे उदाहरण पण कवित छे.

(१) याग बगीचानी सेल जेने व्हाली लागे छे ते
 जन वने भमसे ?

અત્તરની લપટમાં લટપટ. રે' છે 'તેને

વનફૂલ ગમશે ?

માંઠા રાગે મોઠે છે તે કાન પાઠ્યપદ ભળી

એકતાન નમશે ?

ચમક ને હમકે જે રીણે છે તે નેત્ર નરી

! , , સાદાઈમાં રમશે ?

(૨) ગગનસમુદ્ર લેહનાર શકુનીશ રૂપી

નાવકેરા કર્ણધાર,

દ્રોણ મેઘના સમાન ભીને વાન ભગવાન,

ભીમ તાપ હરનાર,

કાર્તવીર્ય અર્જુન સરીસા ભીષ્મ યુધિષ્ઠિર,

દુર્યોધન, વિષ્ટિકાર.

રક્ષો સર્વને, વિરાટ, અભિમન્યુ, આપનારા

ઉત્તર ઝઠાવનાર !

વેમાંનું પહેલું કવિત અબદ્ધ પદ્યરચનાના સાદાપણા વિશે છે. એના પ્રત્યેક ચરણમાં ત્રેવીસ અક્ષર છે. વીજૂં પશ્ચરાત્ર નામે સંસ્કૃત નાટકના આદિમગલનો અનુવાદ છે. તેના ચરણમાં ચૌવીસ અક્ષર છે. કવિતર્ગમાં આવનારા વિવિધ ઇંદને જુદાં જુદાં નામ આપવાની જરૂર નથી. માત્રાત્મક પદ્યરચનાની 'સવૈયો' સજ્ઞા વર્ગવાચક છે. તેમાં વત્રીસ તેમ જ એકત્રીસ માત્રાના પદ્ય-વધનો સમાસ થાય છે, અને અનુક્રમે "સવૈયો વત્રીસો" તથા 'સવૈયો એકત્રીસો' એવાં નામથી વ્યવહાર થાય છે^{૧૩}. એના જ ધોરણે વિવિધ કવિતને પ્રત્યેકના ચરણમાં આવતા અક્ષરના અંકથી ઓઢલાવિયે, તો વસ છે. ફાર્વસવિરહમાના ધનાક્ષરીને કવિત વત્રીસું, તેના ઉપરથી ઉપજાવેલા મનહરને કવિત એકત્રીસું, અબદ્ધ પદ્યરચનાના સાદાપણા વિશેના પદ્યને કવિત ત્રેવીસું

अने पञ्चरात्रना आदिमंगलना अनुवादमे कवित चोवीसूं कडेवामां लायव रहेल्लं छे. कवितवर्गनो उक्त दिशामां विकास थवाथी ज्यां जेवूं योजवूं घटे तेवूं न्हानूंमोटूं कवित योजवानी सुगमता सधाशे अने चतुरक्षर संधिनो संपूर्ण लाभ लई शकाशे. वे अक्षरना अने एक अक्षरना संधि पचासेक वरस उपर मराठीमांथी लीवेल्ला अभंग छंदमां मळी आवे छे ए छंदनूं उदाहरण नीचे प्रमाणे:-

१४ "पापवासनाओ" धाय ज्यारे क्षय"
पामडो उदय" पुण्य वृत्ति."

आ दृष्टांतमां पहेलां ऋण चरण द्वचक्षर संधिनी ऋण ऋण आवृत्तनां वनेलां छे; अने चोथा चरणमां एकाक्षर संधिनां चार आवर्तन छे. चरणनी व्यवस्था टूंक्री वेवडी ऊभी लोंटीथी सूचवी छे. उक्त चतुरक्षरना ऋण आवर्तन पळी एक द्वचक्षर संधिनी योजनाथी वे चरणनो बंगाळी पयार छंद नीपजे छे. कवयित्री रसमयीदासीए रसमयदास नामथी बंगाळीमां गीतगोविन्द रच्यूं छे, तेना चोथा सर्गना वारंभे नीचे मुजव पयार छंद छे:-

प्रेमभरे उद्भ्रान्त माधव देखि सखी
अति मन्द स्वरे कहे प्रेमभरे आँखि^{१५}.

एकाक्षर अने द्वचक्षर संधि अभंगमां अने पयारमां वपराया छे. एमनो वेलो वधवा पाग्यो नथी. उक्त वर्णबंध टूंका होवाथी मोटो अर्थपिंड एक छंदमां समावी शकातो नथी. चतुरक्षर संधिनो कवितवर्ग दिकासशील छे. ए वर्गना विविध वर्णबंधमां न्हानामोटा अर्थनो सारी रीते समास शाय एम छे.

१४ स्व. भोजलनाथ साराभाइना दिंडी अने अभंगना संग्रहमांथी आ ऊतारो लीयो छे.

१५ गीतगोविन्दना चोथा सर्गना पहेला श्लोकना प्राह प्रेमभरोद्भ्रान्त माधव राधिकासखी । ए उतारधनो आ विस्तारपूर्वक अनुवाद छे.

८ निबद्ध पद्यात्मक रूपरचनां ते रूपबंधं. वर्णनां वे रूप छे, लघु अने गुरु. मेळमां गोठवायलां ए रूपना रूपबंध छंद वने छे. एके एक रूपबंध-मां चार ज चरण होय छे. अभिन्न मापनां चारे चरणवाळा छंदने समचतुष्पद, समपद के सम कहे छे. जेमां पहिला चरण सायं त्रीजूं अने वीजा साथे चोथू अभिन्न मापनू होय छे, ते अर्धसमचतुष्पद, अर्धसमपद के अर्धसम कहेवाय छे. भिन्न भिन्न मापनां चरणानो छंद ते विपमचतुष्पद, विपमपद के विपम संजाथी ओळखाय छे. प्रत्येक चरणनी समाप्ति यतिवृत्त विरामथी जणावाय छे. चरणनी अंदर यति आवीने तेना जे भाग पडे छे, तेने में खंड नाम आप्यूं छे. सरंड तेम ज अखंड चरणनो घटकाग्रयव सधि छे. संधिमां एकथी वधारे अभिन्न के भिन्न रूप आवे छे. आ रीते आखी ए छंद मेळवद्र रूपोनो वने छे ते कारणथी में तेनू रूपबंध नाम कल्पूं छे. चरणनी घटनामां आवता संधिना त्रण प्रकार छे, एकल अभ्यस्त अने आवृत्त. जे संधि चरणमां लागलागट यतिवृत्त विरामबगर वेथी वधारे वार वपरायो होय, ते आवृत्त; लागट वे वारे वपरायो होय, ते अभ्यस्त; अने अणलागट वपरायो होय, ते एकल. छेल्ला वे संधिनो अन्तावृत्त संजामां अंतर्भाव थाय छे. खंड यतिवृत्त विराम मागी छे छे, ज्यारे संधिने तेवा विरामनी जरूर नथी रहेती. उदाहरणथी उक्त परिभाषा स्पष्ट समजासे.

ज्यां जोऊं त्यां, दिश विदिशभां, व्योममां, भोममां ते.
ज्यां होऊं त्यां, घर नगरमां, वाटमां, घाटमां ते,
मीखूं नेनो पलक भर, के आ रही भीतरे ते.
ते, ते, ते, ते ! कवण प्रगटचूं आज अद्वैत ए ते ?^{११}

आ समचतुष्पद मंदानान्ता छंदना प्रत्येक चरणना चार, छ अने सात अक्षरना जे ककडा पडे छे ते खंड. चार तथा छ अक्षरना संड पछी यति

છે તે મધ્ય યતિ; અને સાત અક્ષરના સ્લંડ પછી છે તે અંત્ય યતિ. પહેલા સ્લંડમાં વે વે રૂપના, વીજામાં ઋણ ઋણના અને ત્રીજામાં વે ઋણ તથા વે રૂપના સંધિ છે; તે પૈકી પહેલા સ્લંડના સંધિ અમ્યસ્ત અને વીજા ત્રીજાના, એકલ છે. અર્થાત્ એ દષ્ટાંત અનાવૃત્ત સંધિનો છે. હવે આવૃત્ત સંધિના ઇંદનું ઉદાહરણ.

તરુવુંદ મહીં કરિણી ન લહી
 ઝુરતો વિરહી ગજરાજ તહીં
 હસતું સુમને નિરહી વનને
 પગલે પગલે લથહી ડગ લે^{૧૭}.

પ્રસ્તુત સમપદ તોટક ઇંદના ચરણમાં વે લઘુ અને એક ગુરુથી બનેલા ચાર સંધિ છે. અર્થાત્ એ રૂપબંધ આવૃત્ત સંધિનો છે. ઉમય સંધિનો પ્રયોગ અતિ ધળો જૂનો છે. પાંચમા દષ્ટિપાતમાં કહેવામાં આવશે તેમ અનાવૃત્ત અને આવૃત્ત સંધિના રૂપબંધ ભગવાન બુદ્ધ અને મહાવીરના જન્મ પહેલાંના છે. એ વેમાંથી અનાવૃત્ત સંધિના ઇંદ સંસ્કૃત સાહિત્યકારોને અધિક પ્રિય છે. આવૃત્ત સંધિનો એક પણ રૂપબંધ આજ સર્ગમાં વપરાયલો, એટલે કે વ્યાપક બનેલો જાણવામાં છે નહિ. અગિયાર અક્ષરના ઉપજાતિથી માંડીને પંદર અક્ષરના માલિની પર્યંત વિવિધ વ્યાપક રૂપબંધ કાવ્યોમાં અનાવૃત્ત સંધિના જ છે. રઘુ, કુમાર, કિરાત અને માધ કાવ્ય શોધી વલ્લિયે ઢિયે, ત્યારે વાર અક્ષરના તોટક અને સગિવળી જેવા વે ઋણ આવૃત્ત સંધિના રૂપબંધ એક-દેશી તરીકે રટચારડચા વપરાયલા જડે છે. તે જ કાલે અનાવૃત્ત સંધિના એકદેશી એકવીસ અક્ષર પર્યંત હોતી ગયેલા જોવામાં આવે છે. ઘડી ધર વિચાર કરિયે, તો અનાવૃત્ત સંધિના રૂપબંધ પ્રત્યે પૂર્વકાલના કવિઓનો પક્ષ-પાત સકારણ જણાય છે. રૂપરચનાના સમપદ ઇંદોમાં ચરણ અભિન્ન માપનાં .

૧૭ આ શ્લોક સુજ ફેરફાર સાથે પરાક્ષમની પ્રસાદીમાંથી લીધો છે; સુબો આરુત્તિ ૫, પૃષ્ઠ ૬૫.

છે, એટલે કે આવૃત્ત છે. તેને લીધે વૈવિધ્ય સ્વાત્તર સંધિ અનાવૃત્ત હોવાની અપેક્ષા રહે છે. આવૃત્ત સંધિમાં અંતર્ગત રૂપ જ્યાં ભિન્ન હોય છે, ત્યાં સંધિની આંતર ઘટનામાં એક પ્રકારની વિવિધતા રહે છે સ્વરી. પણ તે ઉક્ત સંધિના આગળ પડતા આવર્તનથી દર્શાવી જાય છે. જ્યાં આવૃત્ત સંધિમાંનાં રૂપ પણ અભિન્ન હોય છે, ત્યાં તો વૈવિધ્યનો ભાસ સરસો એ રહેતો નથી. આ કારણથી સંસ્કૃત સાહિત્યમાં સર્વલઘુ અને સર્વગુરુ રૂપબંધનો પ્રયોગ બહુ જ વિરલ છે. અનાવૃત્ત સંધિના રૂપબંધ કુશળ કવિ રચી શકે છે. એનું અસાધારણ પદ્યત્વ સંસ્કારી કાન પ્રીટી શકે છે. એને મુકાબલે આવૃત્ત સંધિના રૂપબંધ સુસાધ્ય છે, અને એનું સુપ્રાહ્ય પદ્યત્વ સર્વ કોઈ પ્રીટે છે. પાછળથી ધીર ધીરે રુચિ આવૃત્ત સંધિના ઇંદ તરફ વળતી જાય છે. તેમની સંખ્યામાં ઝમેરો થાય છે અને વપરાટ વધે છે.

૧ અનાવૃત્ત સંધિની રૂપાત્મક પદ્યરચનામાં સંસ્કૃત સાહિત્યકારોએ જે વિજય મેળવ્યો છે, તે આશ્ચર્ય પમાડે અને માન ઝપજાવે એવો છે. તેમાં એકે એક રૂપબંધ બીજા વધાથી જુદા ઓઝસાઈ આવે છે. કોઈ ઇંદમાં માત્ર સંધિની ગૂંથળીથી સુશ્લેષ (Harmony) સધાય છે. કોઈમાં મધ્ય યતિના પ્રયોગથી તેવી જ સિદ્ધિ મેળવાય છે. ટૂંકા ચરણની ઘટનામાં મધ્ય યતિની વહુધા જરૂર પડતી નથી. અગિયારથી ચૌદ અક્ષરના રૂપબંધમોટે ભાગે મધ્ય યતિ રહિત હોય છે^{૧૮}. સત્તર અક્ષરપૂર ચરણ છતાં પણ જેમાં મધ્ય યતિ અપેક્ષિત નથી એવો એક અપવાદમૂત રૂપબંધ છે, પૃથ્વી. યતિનો સિદ્ધાંત મૂળ સ્વરૂપમાં ન સમજાયાથી એમાં આઠમા અક્ષર પછી છાંદસોએ મધ્ય યતિ કલ્પી છે, પણ તે સિદ્ધાંતથી અને દૃષ્ટાંતથી અનાવૃત્ત ઠરે છે. મધ્ય યતિના પ્રયોગથી ચરણના વહુધા વે અને ક્ષિત્ત્રણ સ્વંડ પડે છે. તેમાં જે સ્થલે મધ્ય યતિ આવશ્યક હોય છે, ત્યાં વિરામ લીધા વગર ચરણ ઘોલી

૧૮ ઘાર સ્વરૂપમાં દ્રુતવિલમ્બિત ઇંદમાં ત્રોષા સાતમા અને દસમા અક્ષર પછી યતિનો પ્રવાર પડી ગયો છે, તે મૂલમરેલો છે. એ સ્વરૂપમાં મધ્ય યતિ છે જ નહિ.

शकातूं ज नथी; अने गमे तेम बोलिये छिये, तो सुश्लेषना अभावने लीधे श्रोताना कानने त्रास ऊपजे छे. पृथ्वी छंदनूं चरण वच्चे विराम लीधा वगर भली रीते बोली शकाय छे. एथी एमां मध्य यतिनो संकेत छे नहि, मध्य यति सुश्लेषसाधक छे, त्यारे अंत्य यति चरणांतसूचक छे. पृथ्वी सिवायना छांवा चरणना अनावृत्त संधिना रूपबंधमां मध्य यति आवश्यक छे; जो के टूँका चरणमां मध्य यतिनो प्रयोग नथी थतो एम कंड छे नहि. ऐतिहासिक दृष्टिए मध्य यतिनो प्रचार बहु जूनो छे, एटले टूँका चरणमां पण ते मळी आवे छे. अगियार अक्षरनो शालिनी छंद जूनामां जूनो मध्ययतिक रूपबंध संभवे छे. एना चरणना आरंभे एक गुरु रूपना वधाराथी वैश्वदेवी नामे छंद नीपज्यो छे. शालिनीमां चोथा अक्षर पछी अने वैश्वदेवीमां उक्त वधाराना कारणथी पांचमा पछी मध्य यति आवे छे. प्रस्तुत वे रूपबंधना चरणना वे वे खंड पडे छे. मंदाक्रान्ता अने स्रग्धरानां चरण त्रण त्रण खंडनां छे. संस्कृत साहित्यमां वपरायला आधा अनावृत्त संधिना न्हानामोटा रूपबंध साठेक छे. तेमनी उत्पत्ति इसवी सनना आरंभनी आसपासनां आठसैं आठसैं वरसना गाठामां थई छे. गयां बारसैं वरसना गाठामां एक पण अनावृत्त संधिनो रूपबंध नवो सरजायो नथी. आ वर्गना जे जे छंद आजपर्यंत गूजरातीमां वपराया छे, ते वधा ए संस्कृतमांथी लेवामां आव्या छे. एक ज एनी अपवाद मारा जाणवामां छे. ते हूं नीचे आपूं छूं.

नवनीत नवलकिशोरे चोर्युं चोर्युं चपाचप, हो रे.

नवरीत नवल निचोरे. कार्ये कार्ये हृदं रूप कोरे.

नवभीत नवल चिकोरे अंगो अंगे ^{१६}कचेष्टित मोरे.

नवनीत नवल चकोरे धारी धारी युवा-मणि चोरे.

जगावचानी जरूर नथी के आ अवतरण रोपदर्शिका मत्यभामा आख्यान नामे नाटकनी प्रस्तावनामांथी लीधूं छे. घणाए ते धांचूं हरो; पण

१५ मुद्रित पाठ 'कुचेष्टित' छे. श्लेषनी खातर नवो पाठ 'कचेष्टित' रूपको पडयो छे. संस्कृतमां एकाक्षरी क शब्द कामदेव शब्दनो पर्याय छे.

क्षण भर विचार्युं नहि होय के ए कयो छंद हरो अने एनूं बंधारण ध्यानमां लेतां एनो उद्भव कया काळमां थयो हरो ? एनो अर्थ पण पूरो वेठो न होय, तो तेमां कंड नवाई पामवा जेवूं नथी, कर्ताए बीजा चरणमां सं. 'निचोल'(वल)ना अंत्य लकारनो रकार करी नांख्यो छे, 'पण'ना अर्थनो 'ए' अव्यय तेमां भेळवी दीधो छे, तथा पूर्व चरणमांथी 'चोर्या' क्रियापद-नो अन्वार्दश करी लेवानो राख्यो छे; त्रीजा चरणमां सं. 'चिकुर'(वाळ)-ने ठेकाणे 'चिकोर' वापरी तेमां दर्शक सर्वनाम 'ए' मेळ्ळ्युं छे; अने चोथा चरणमां 'चकोर' शब्दमां दर्शक 'ए' फरीने भेळवी लीधो छे. नटीना आ गायनमां गोकुळवासिनीना मुखे गोकुळनी कृष्णलीलानूं अने मधुरा-वासीने मुखे स्यमंतक मणिनी चोरीना कथानकनूं निरूपण छे. गोकुळवासिनी फहे छे के 'किशोर अवस्थामां अरे नवलकिशोरे गोपीओनूं मांखण चपाचप चोरी खाधूं हतूं, हो. वळी एमणे काल्यायनीव्रतनी नवतर प्रक्रियाथी गोपी-ओनां सुंदर वल पण छानांमानां हर्यां हतां. ते ते चरित्रे एमनूं रूप गोपी-ओनां हृदयमां एओ फोरे छे. मोरपिच्छथी अपूर्व शोभता वाळवाळ कृष्णा प्रत्येक अंगमां भय के संकोच वगर प्रेम(क=काम)नी चेष्टा पांगरे छे. ते वडे ए नवनवी युक्ति(नीत)वाळ असाधारण चकोर कृष्ण रत्नरूप युवति-ओने नजरमां राखी हरे छे.' सत्राजित्ना पक्षनो मधुरावासी कहे छे के 'किशोरावस्थामां अरे ए कारमा छोकराए गोपीओनूं मांखण चपचप चोरी खाधूं हतूं, हां. वळी एणे काल्यायनीव्रतनी नवतर प्रक्रियाथी गोपीओनां सुंदर वल पण चोर्या हतां. तेना प्रत्येक चरित्रथी ते पोतानूं खरूं रूप मनुष्यना हृदयमां फोरे छे. फोइनो पण भय न राखनारा ए मोरपिच्छथी शणगोरेला केशवाळी कृष्ण, अंगोपांगे कुकृत्य ज फहेवाय एवा कामनो करनारो छे. तेटल्य भाटे, स्यमंतक मणिने नजरमां घालीने चोर, तो ए नीतिभ्रष्ट मोरे चकोर जघान ज चोरे.' आ छंदनूं नाम संस्कृत हिंदी अने गूजराती पिग-ळमां में शोय्युं पण जडचूं नहि. तेथी जूनी प्रथाने अनुमरी में तेनूं नवनीत नाम कल्प्युं छे. एनूं रूपचित्र (graph) नीचे प्रमाणे छे:—

लल गाल लललल गागा॥ गागा गागा॥ ल गालल गागा॥

नवनीत वृत्तना पहेला अने त्रीजा खंडना आरंभे अनुक्रमे वे अने एक रूप भारमुक्त छे. निर्दिष्ट आरंभक भारमुक्त रूप उभय प्रसंगमां जो एक-धारां वे वे राख्यां होत, तो राखी शकात. परंतु त्रीजा खंडमां कविए आरंभक भारमुक्त रूप एक ज राख्युं छे ते बुद्धिपूर्वक भिन्नता आणवाना उद्देशथी राख्युं जणाय छे. मध्य यति वे स्थाने गोठवी छे, तेना पण भिन्न भिन्न उद्देश छे. गागा संधि चरणमां लागलागट त्रण चार आवी जई आवृत्त वनत, ते प्रसंग दूर करवा तेणे दसमा अक्षर पछी मध्य यति मूकी छे. एनाथी अनावर्तननुं धोरण सचवाय छे. बीजी वारनी मध्य यति जुदा कारण सर छे. त्रीजा खंडनुं आरंभक एकल लघु रूप सुश्लेषनुं विरोधी छे. प्रस्तुत रूपथी उपस्थित थतो विश्लेष टाळ्याने कविए बीजी मध्य यतिनो प्रयोग कर्यो छे. आ अने अन्य गौण बावतमां तेणे जे क्षीणवट वापरी छे, तेथी छंदोविद्यामां एनी असाधारण कुशळता प्रतीत थाय छे. संस्कृत साहित्यना अनावृत्त संधिना रूपबंधनो कविने गाढो परिचय होवो जोईए; अने तेनी साथे पोते ऊंची सर्गशक्ति तथा कलामयता धरावतो होवो जोईए. प्रस्तुत आल्याननाटकनो कर्ता कृष्णसूनु प्रेमानंद भट कहेयाय छे. देशीवद्ध अनेक आल्याननो कर्ता कृष्णसुत प्रेमानंद भट ते ज आ आल्याननाटकनो कर्ता के अन्य कोद, ए प्रश्न बहु वखतथी घोळाय छे. शामळशाहना विवाहने छेडे आल्यानकार प्रेमानंद शामळशाहने म्होडे कहेवरावे छे^{२०} के 'भारा पिताश्री जो के देशीमां लखे छे, तथापि छंद रचवा समर्थ छे; तमे कहो ते छंदमां ए काव्य रचे.' शू आ शब्दोमां नरसिंह महेताने ओठे रही आल्यानकार प्रेमानंद छंदनी दिशामां पोतानी प्रवृत्तिनो निर्देश करवा मागे छे ? लयात्मक देशीवद्ध पद्यरचनामां परम सिद्धि पामनार कवि संस्कृत साहित्यना परिचयथी अने ईश्वरदत्त सर्गशक्ति तथा कळाकुशळताना योगथी निवद्ध पद्यरचनाना बीजा

२० जुओ प्रेमानंदद्वत शामळशानो धियाद, कटवूं ४५, कडी ३०, पूर्वाध, 'इच्छा होय तमाटी, तो व्हो ते दृत्तमां कविता ए व्हो रे.'

માર્ગમા પળ પગદંડો ચલાવે અને નવનીત જેવો અનાવૃત્ત સંધિનો હયામક રૂપવંચ સરજે, એ ન મનાય એવું ત્રાગર્નું નથી. જયદેવે હંદ અને પ્રવંચ બંને પદ્યપ્રકાર સ્વેચ્છા છે^{૨૧} તેમ પ્રેમાનંદ પળ દેશી અને હંદ બંને સ્વેચ્છે, એ અસંભવિત નથી, વલકે સંભવિત છે. આર્યાનાનાટકો અને આર્યાનાકાવ્યોનો ફર્તા તે દેશીવદ્ધ આર્યાનો રચનાર મટ પ્રેમાનંદ કે વીજો કોદ્, જે હોય તે હો; એ વૃત્તિઓનું મૂલ્ય પળ જે અંકાય તે અંકાઓ; પ્રવૃત્ત વ્યાખ્યાનને તો સીધો સંબંધ ડક અનાવૃત્ત સંધિના રૂપવંચની ઘટના સાથે છે. પદ્યરચનાના વિકાસના ઇતિહાસમાં નવનીતનું મહત્વ અપૂર્વ છે અને તે ગૂજરાતને ગૌરવ આપનારું છે.

૧૦ અનાવૃત્ત સંધિની રૂપરચના રંજકતા(Melody)ની પલટાતી વિવિધ છાયાથી મર્મજનાં મન હરે છે, ત્યારે આવૃત્ત સંધિની રૂપરચના રંજકતાની સંતત એકતાને લીધે લોકપ્રિય વને છે. આ પ્રકારના પદ્યવંચનો ઉદય પળ વહુ જૂનો છે; પરંતુ અનાવૃત્ત સંધિની રૂપરચનાથી કંઈક મીઠો છે. તેનો વિકાસ તેના જૂનાપણાને મુકાવલે ધીમો છે; અને ગણતરીમાં ગણવા જેવા હંદોની સંખ્યા તો વહુ જ કમી છે. મારી જાણ પ્રમાણે જૂનામાં જૂનો આવૃત્ત સંધિનો પદ્યવંચ તોટક છે. મહાકવિ કાલિદાસે તે એક જ વાર રઘુવંશમાં વાપર્યો છે^{૨૨}. એમાં લલગા સંધિનાં ચાર આવર્તન આવે છે. તે પછી વૃહત્સંહિતાના અધ્યાય ૧૦૩ નો વિતાન હંદ છે. તેના ચરણમાં લલગા સંધિનાં ત્રણ આવર્તન અને એક ગુરુ અપેક્ષિત છે. એ વીજો હંદ તોટકથી ગતાર્થ હેવાના કારણથી લુપ્ત થાય છે. ત્રીજો નવીન આવૃત્ત સંધિનો રૂપવંચ મગિગુણનિરુ છે. તેના ચરણમાં લલલલ સંધિનાં ત્રણ આવર્તન પછી લલગા આવે છે. એ પળ પ્રચાર ન પામી લુપ્ત થાય છે. પ્રસ્તુત અધ્યાયમાં ગૂંથેલા સ્થિર(પ્રમાણિકા), દોધક અને મુર્જંગપ્રયાત(મુર્જંગી), એ ત્રણ રૂપવંચ દીર્ઘજીવી નીવડ્યા છે. પહેલામાં લગા સંધિનાં,

૨૧ જયદેવની પદ્યરચના માટે જુઓ આગમી દષ્ટિપાત ૫, પ્રસ્તાવ ૩૦, ૩૫, ૩૬.

૨૨ જુઓ રઘુવંશ । ૮ । ૧૧ ।

ત્રીજામાં ગાલલનાં અને ત્રીજામાં લગાગાનાં આવર્તન આવે છે. ગાલ સંધિનો ચામર(સમાનિકા) આ અધ્યાયમાં છે નહિ; પરંતુ અધ્યાય ૪ માં ભ્રાહ્મિહિરે તે વાપર્યો છે. ગાગા સંધિનો ત્રિદુલ્લેખા(વિદ્યુન્માલા) હંદ્ર પળ સંહિતાકારે અધ્યાય ૬૮ માં યોગ્યો છે. પરંતુ તે સર્વગુરુ રૂપવંધ લોકપ્રિય ન નીવડી લોપ પામે છે. એ જ દશા નૈપથ કાવ્યમાં શ્રીહર્ષે યોજેલા અચલવૃત્તિના નામથી જાણીતા સોઠ અક્ષરના સર્વલઘુ રૂપવંધની પળ થઈ છે^{૨૩}. આપણી વાણીમાં ઊતરી આવે છે માત્ર ચામર(સમાનિકા), સ્થિર(પ્રમાણિકા), દોષક, મુર્જંગપ્રયાત(મુર્જંગી) તથા તોટક, એ પાંચ, અને ભરતનાટ્યશાસ્ત્રમાં નેધેલો ગાલગા સંધિનો પલ્લિની(સમ્વિળી) હંદ્ર એ છટ્ટો. આ પ્રાચીન આવૃત્ત સંધિના છ રૂપવંધમાં અર્વાચીન વે હંદ્ર ઊમેરાય છે, મૌક્તિકદામ(મોતીદામ) અને સર્વગામી. એકમાં લગાલ સંધિનાં આવર્તન છે. લલલગા સંધિનાં ત્રણ આવર્તન પછી ગાગા સંધિથી ઘનતો દલપતર્પિગલ્લનો જે પડધમી હંદ્ર, તે અન્યત્ર સંગૃહીત કે પ્રયુક્ત છે નહિ. લલગાલગા સંધિ ૨+૨+૧+૨ માત્રાના સંધિનો રૂપાત્મક અનુવાદ હોવાથી ગીતક કિંવા મુનિશૈલર અને શૂલ્ળા હંદ્ર નવીન રૂપવંધની કોટિમાં આવતા નથી. વઝી નારાચ કિંવા પલ્લચામર, વર્ણવાગીશ્વરી, કેકિનીશારતા, મત્તગજેંદ્ર કિંવા ઇન્દ્રવિજય, દુમિલા, સુરેશ્વર, આદિ રૂપવંધ લગા, લગાગા, ગાલગા, ગાલલ, લલગા, લગાલ આદિ સંધિનાં આવર્તન વધવાથી નીપજે છે. એટલે તે પળ નવા વધારા તરીકે લેલી શકાતા નથી. એ રીતે ગળતરી કરતાં આપણી વાણીમાં છ જૂના અને વે નવા આવૃત્ત સંધિના રૂપવંધ પ્રચારમાં આવેલા છે.

૧૧ છઠ્ઠીસથી વધારે અક્ષરના સમચતુષ્પદ રૂપવંધના વર્ગનું નામ દળ્લક છે. એના ચરણમાં જૂના સંકેત પ્રમાણે વે ન ગળ પછી છ થી વધારે ર ગળ આવે છે. ન્હાનામાં ન્હાનો સત્તાવીસ અક્ષરનો ચળ્લવૃદ્ધિપ્રપાત નામે દળ્લક ભાસ કવિના આલિમારક નામે નાટકમાં પ્રયુક્ત છે. પ્રસ્તુત વર્ગ સાથે

મેઘમાલા અને મહામાલિની એ બે રૂપવંધ સંબંધ ધરાવે છે. તે માસના પ્રતિમાદશરથ નાટકમાં અને કાલિદાસના રઘુવંશમાં અનુક્રમે વપરાયલા છે. મેઘમાલામાં બે ન ગણ પછી છ અને મહામાલિનીમાં ચાર ર ગણ અપેક્ષિત છે. આ રૂપવંધમાં અને દણ્ડકમાં મધ્ય યતિ છે નહિ. મેઘમાલાના થડમાંથી ચણ્ડવૃદ્ધિપ્રપાત ફૂટે છે, તે દણ્ડક સ્વરૂપમાં આગઢ ને આગઢ વધે છે. એ જ થડથી મહામાલિનીની કૂંપઢી ફૂટે છે; તે આગઢ વધતી નથી. દણ્ડક અને એના સંબંધી મેઘમાલા તથા મહામાલિની એ રૂપવંધોની રોચકતા આવૃત્ત અને અનાવૃત્ત સંધિના યોગમાં રહેલી છે. એ હંદો નથી કલાનું દર્શન કરાવતા કે નથી સર્ગશક્તિની જ્ઞાંસી આપતા; એમની ઉપયોગિતા માત્ર ઐતિહાસિક છે. આવૃત્ત અને અનાવૃત્ત સંધિના રૂપવંધને જોડનારો અંકોડો એ પૂરો પાડે છે. એ સડ અનાવૃત્ત અને આવૃત્ત સંધિઓના જોડાણથી વનેલા મિશ્ર રૂપવંધ છે.

૧૨ આપણી માયામાં અર્ધસમચતુષ્પદ રૂપવંધ આંગઢીએ ગણાય એટલા પળ નથી. દલપતર્પિગઢમાં બે જ નામ જણાવ્યાં છે, વૈતાલીય અને પુષ્પિતાપ્રા. સંસ્કૃત ઈગઢમાં વૈતાલીય સંજ્ઞા વર્ગવાચક છે. તેમાં વિયોગિની, અપરવક્ત્ર, માલ્યમારિણી અને પુષ્પિતાપ્રાનો સમાવેશ થાય છે. તેમાંના વિયોગિની હંદનો સદગત કવિએ વૈતાલીય નામથી વ્યવહાર કર્યો છે. ઉક્ત ચાર અર્ધસમ રૂપવંધનાં વિપમ ચરણમાં ૧૦, ૧૧, ૧૨ ને ૧૩ તથા સમમાં ૧૧, ૧૨, ૧૩ ને ૧૪ રૂપ અનુક્રમે આવે છે. અક્ષરની સંલ્યામાં અને સંધિની આંતર ઘટનામાં પહેલું ચરણ ત્રીચા સાથે અને વીજું ચોથા સાથે મઢતું આવે છે, તેથી ઉક્ત હંદ અર્ધસમ કહેવાય છે. વૈતાલીય વર્ગ અનાવૃત્ત સંધિનો વનેલો છે. ચરણ ઢૂંકાં હોઈને એમાં મધ્ય યતિ છે નહિ. એ હંદોની લોકપ્રિયતા ઘટનાના મુશ્લેષને લીધે છે. વૈતાલીય વર્ગની ઉત્પત્તિ અને વિકાસની હકીકત ચોથા અને પાંચમા દષ્ટિપ્રાતમાં આવડે.

૧૩ હંદોવિદ્યાના સંસ્કૃત ગ્રંથોમાં વિપમ ચતુષ્પદ રૂપવંધ જે ગણાવ્યા છે તે પૈકી માત્ર બે જ પ્રયોગસિદ્ધ છે, વર્ધમાન અને ઉદગતા. એ પહેલવહેલા અશ્વપોષના સુદ્ધચરિત અને સૌન્દરનન્દમાં દષ્ટિપ્ર પડે છે.

चारे चरण मापमां भिन्न छतां तेमनी घटना एवी खूबीदार छे के रंजकता ओर खीली नीकळे छे. विपमपद छंदमां मध्य यति छे नहि. गूजरातीमां उक्त बे विपमपद रूपबंधमांथी एके उत्तरी आव्यो नथी. संस्कृत पद्यात्मक साहित्यने अंगे तेमनूं निरूपण पांचमा दृष्टिपातमां आवरो.

१४ निबद्ध पद्यरचनानो त्रीजो प्रकार मात्रात्मक रचना छे. वर्णबंधमां नछरो वर्ण ज, छडो अने बे के चारना जूथमां गोठवायलो छतो, वर्णात्मक पद्यरचनानो घटकावयव बने छे. रूपबंधनी रचना वर्णना लघुगुर्वात्मक रूपनां जूथने लेईने रचाय छे. मात्राबंध मात्रानां जूथथी नीपजे छे. अणथडकाता ह्रस्व स्वरनी एक अने दीर्घ स्वरनी तेमज थडकाता ह्रस्व स्वरनी बे मात्रा गणाय छे. एकमात्र अने द्विमात्र वर्णनां सक्तििक बीज अनुक्रमे ह्र अने वा राख्यां छे. ह्र बीजमां एक लघुरूपनो अने वा मां एक गुरुरूपनो तथा बे लघुरूपनो अंतर्भाव थाय छे; एटले के ह्र = ल, अने वा = गा के लल. गूजरातीमां वर्णबंध जने रूपबंध करतां मात्राबंधनो प्रचार वधारे छे. ए मोटे भागे आवृत्त संधिना बनेला छे; अने थोडाक अनावृत्त संधिना छे. प्राचीनमां प्राचीन मात्राबंध सुचनिपातमां मळे छे. ते आवृत्त संधिनो छे. एनूं में कोकालिय नाम राख्यूं छे. त्यारपछी दसबेयालियमां आर्या अस्तित्वमां आवे छे^{२४}. तेनो वेलो आगळ वधतां केटलेक काले गीति आर्यागीति आदि छंद प्रगटे छे. वर्गस्थापक आर्या पछी अनावृत्त संधिना अंत्यप्राप्त रहित समचतुष्पद मात्राबंधनो वर्ग प्रचारमां आवे छे. विक्रमोर्वशीयमां पुरुरवा उपरनी उर्वशीनी प्रेमपत्रिका उक्त प्रकारनो मात्राबंध छे. ए छंदोमां अंत्यप्राप्त दाखल थई उद्भवेलो गलितक वर्ग सेतुबन्ध नामे प्राकृत काव्यमां मळी आवे छे^{२५}. आ जूना छंदोनो वपराट घटी अपभ्रंशमां नवा मात्राबंध रचाय छे, तेनूं निरूपण पांचमा दृष्टिपातना छेवटना भागमां आवरो.

१५ जे चतुष्पद मात्राबंध गूजरातीमां मळी आवे छे, ते मोटे भागे

२४ जुओ आगामी दृष्टिपात ४.

२५ जुओ आगामी दृष्टिपात ५.

આવૃત્ત સંધિવાળા છે. એના ચરણના ઘટતરમાં (૧) વાહ, (૨) વાવા, (૩) વાહવા, (૪) વાવાહ, (૫) વાહવાવા, (૬) વાવાહવા, (૭) વાવાવાહ અને (૮) વાવાહવાહ, એ આઠ માત્રાસંધિ વપરાય છે. સંધિ ૧, ૨, ૩, તથા ૫ માં આવર્તને આવર્તને પહેલા વીજ ઉપર, સંધિ ૪, ૬ તથા ૮ માં વીજા ઉપર અને સંધિ ૭ માં ત્રીજા ઉપર ભાર આવે છે. ત્રણ માત્રાનો વાહ સંધિ વામ, મહીદીપ અને હીર, એ ત્રણ છંદમાં ઉપયુક્ત છે. ચાર માત્રાના વાવાનો વિસ્તાર મહુ વધારે છે. આમીર, તુરગ, ચોપાઈ, ચરણાકુલ, ચોપાયા, મરહટ્ટા, રુચિરા, સવૈયા, દુમિલા, લીલાવતી, પદ્માવતી, ત્રિભંગી, મદનપ્રહા, આદિ છંદોમાં તેનો પ્રચાર છે. પાંચ માત્રાનો વાહવા સંધિ જલ્લતરણ તથા શૂલણામાં અને વાવાહ દીપકમાં મઝી આવે છે. સાત માત્રાના વાહવાવા, વાવાહવા તથા વાવાવાહ સંધિનો પ્રયોગ અનુક્રમે ગીતિકા^{૨૬}, હરિગીત તથા ઉધોરમાં અને આઠ માત્રાના વાવાહવાહનો પદ્મરી (પ્રા. પદ્માહિવા, હિં. પદ્મડી)માં થાય છે. વાહ અને વાવા ન્વદલ ક્વચિત્ એકાદ વાર ચરણમાં અનુક્રમે હવા અને હવાહ મૂકાય છે. એ વર્ગમાં વામ, જલ્લતરણ, દીપક, આમીર, તુરગ, ઉધોર, પદ્મરી, ચોપાઈ, ચરણાકુલ, આદિ છંદ આવે છે. વીજા છંદો પૈકી કેટલાકમાં એક, કેટલાકમાં બે અને કોઈ કોઈમાં ત્રણ મધ્ય યતિ રાખી છે. ઘઝી અમુક અમુક છંદમાં યતિથી પડતા સ્વંદોને આંતર પ્રાસથી સાંકઝી લેવાનું પણ ઠરાવ્યું છે. પૂર્વના પિંગલકારે મધ્ય યતિના અને આંતર પ્રાસનાં આ જે બંધન વાંધ્યાં છે તે છંદોવિજ્ઞાનની દૃષ્ટિએ જરૂરનાં છે કે કેમ, તે વિચારવા જેવું છે. પ્રથમ મધ્ય યતિનો પ્રશ્ન લેઈએ. મહીદીપ, ચોપાયા, ગીતિકા, હરિગીત, રુચિરા, સવૈયા, દુમિલા, આદિ માત્રાવંધમાં મધ્ય યતિ એક વાર, મરહટ્ટા, લીલાવતી, પદ્માવતી તથા મદનપ્રહામાં બે વાર અને ત્રિભંગી તથા શૂલણામાં ત્રણ વાર આગવાની ફરતી છે. એમાંના મહીદીપનું અને તેને પડછે અર્કશીયા

तथा चामर^{२७} ए वे रूपबंधनूं अकेकूं उदाहरण नीचे आपूं छूं.

- (१) श्याम चरण स्मरण मित्र ! सरस रीत साची,
ते विना त्रिलोक मध्य क्रोड वात काची,
हस्त चरण करण नाक सउ कृपाधि कीधूं,
नेत्र वदन दंत आपि ज्ञान दान दीधूं. (द.पि.)
- (२) रोज रोज राखिने रमो ज राग रंगे
चामरो चलावि चित्त मोहि मोरचंगे
वागमां विराजि साजि अंगराग अंगे,
केदि जेम कोटडी विशेषे वस्यो कुढंगे^{२८}.
- (३) रोज रोज राखिने रमो ज राग रंगमां
चामरो चलावि चित्त मोहि मोरचंगमां
वागमां विराजि साजि अंगराग अंगमां;
केदि जेम कोटडी विशेषे वस्यो कुढंगमां. (द.पि.)

पहेला बंदमां मात्रासंधि बाहनां आवर्तन छे. बीजा वेमां रूपसंधि गाल आवृत्त थाय छे. ए रूपसंधि उक्त मात्रासंधिमां अंतर्भाव पामे छे. तेने लीधे बीजा पद्यबंधनो पहेलामां अंतर्भाव थाय छे. महीदीप अने अर्कशेषाना चरणना संधिनी मात्रामक रचना अभिन्न छे; अर्थात् रूपवद्ध अर्कशेषा मात्रादृष्टि ए महीदीपथी अभिन्न छे. चामर छंद अर्कशेषानो नजीकनो सगो छे. आवी रीते आ त्रण पद्यबंध मांहोमांही संबंध धरावे छे, ते जोतां एम ठरे छे के मध्य यति होय तो ए त्रणमां होगी जोईए. परंतु वे रूपबंधमां यति छे नहि. तेथी अहीं मात्राबंधमां एण मध्य यति

२७. अर्कशेषा अने चामर ए वे रूपवध बावत जुभो रणपिंगळ, वर्ण-
मेळ छंद ९३२ अने १०२४.

२८ अर्कशेषानूं आ उदाहरण दलपत्तपिंगळमांता चामरमा जरुरजोग
फेरफर करी कामचलउ घडी लोथूं छे.

અનપેક્ષિત છે. ઘનાવૃત્ત સંધિના ઉપપ્લગમ^{૨૯} જેવા માત્રાબંધમાં પાસે પાસે આવેલા વે જુદી જુદી રચનાના સંધિને છૂટા રાસવાના હેતુથી વધ્ધે મધ્ય યતિ મૂકવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે સ્વરો; પળ ચાલુ પ્રસ્તાવમાં તો સંધિ આવૃત્ત ઇટલે કે અભિન્ન રચનાવાઝા છે, ઇટલે તેમાં મધ્ય યતિનો સંભવ જ નથી. આવી રીતે સવૈયાનો અને શંભુ, હંસ, તથા મત્તગજેન્દ્ર (ઈન્દ્રવિજય)નો મુકાવલો કરતાં ઉક્ત માત્રાબંધની મધ્ય યતિ ઝડી જાય છે, કેમકે ગળાવેલા ત્રણ રૂપવધમાં દટ્ટિગોચર ધના લલગા, લલલલ અને ગાલલ તેમ જ ગાગા સંધિઓનો વાવા સંધિમાં અંતર્ભાવ થાય છે. વાવા સંધિના સાત આવર્તનથી નીપજતા ચોપાયમાં મધ્ય યતિને સ્થાન નથી; કેમકે ઇ આવૃત્ત સંધિનો વનેલો છે. ત્યમ વઝી રૂપમાલા તથા સીતા^{૩૦} ઇ વે રૂપવંધ સાથે ગીતિકાને અને ગીતક ઈકિંવા મુનિશેલર સાથે હરિગીતને મેઝરી જોડેશું, તો જળાઈ આવશે કે તેમાં પળ મધ્ય યતિની જલ્લર નથી; કેમકે વાહવાઘા અને વાવાહવા માત્રાસંધિમાં ગાલગાગા અને ગાગાલગા ઇ વે રૂપસંધિ અંતર્ભાવ પામે છે. જેરી રીતે મહીદીપ અને અર્કશેષા માત્રાદટ્ટિ ઇ અભિન્ન છે, તેવી રીતે માત્રાવદ્ધ ઢુમિલા અને રૂપવદ્ધ ઢુમિલા પળ અભિન્ન છે. સઢવ તેમાં પળ મધ્ય યતિ અનાવસ્યક છે. વનેનો ઇક જ નામથી વ્યવહાર થાય છે, તે આ અમેદ નિઃશઢ્વ સ્વીકારે છે. મરહદ્ધ ઇંદમાં ચરળને છેઢે ઢુમિલાના કરતાં ત્રણ માત્રા ઓછી છે. વાકો ઇ પળ વાવા સંધિના આવર્તનથી નીપજે છે, અને ઢાઢ પળ ઢુમિલાનો જ છે. ઇ કારળથી ઇમાં પળ મધ્ય યતિનો અવકાશ નથી. પઢાવતી, લીલાવતી અને ત્રિભંગી તો ઢુમિલાનાં જ નવાં સ્વરૂપ છે. ચારે ઇંદનાં ચરળ વઝીસ વઝીસ માત્રાનાં છે; અને ઇનો ઇ જ વાવા સંધિ ચારેમાં આવર્તન પામી રઘો છે. ઇટલે કરીને ઇમાં પળ મધ્ય યતિને સ્થાન નથી.

૨૯. આ નામ વાવત વાઝુ દટ્ટિપાતનો પ્રસ્તાવ ૧૭ જુઓ.

૩૦. રૂપમાલા અને સીતા ઇ વે રૂપવંધ વાવત જુઓ રળપિગલ, વળમેઢ ઇંદ ૧૩૨ અને ૧૦૨૦. દલપતપિગલમા રૂપમાઢી નામ ષાઢ્યુ છે.

मदनग्रहा छंदमां पण परिस्थिति एनी ए छे. तेथी तेमां ए मध्य यतिनी जरूर रहेती नथी. मात्राबद्ध झूलणा छंदमां जो के दसमी वीसमी अने त्रीसमी मात्रा पछी मध्य यति टंरावी छे, तथापि नीचेनां त्रण उदाहरण तपासवाधी स्पष्ट थरो के ए मात्राबंधमां पण मध्य यति छे नहि.

(१) शहर मुंवाइ ज मोटाथि मोटूं,
जहां छापसुं एक नहि छेक छोटूं;
शेठिया सर्व ज्यां मोटमोटा बसे;
कोटि नाणा तणूं थाय कोटूं;
देह मोटा ने दिल मोटूं, दलपत कहे;
खाणुं पण मोटूं, नव खाय खोटूं;
कपण मोटां अने वृषण मोटां,
बळी होय मोटा तणूं सर्व मोटूं. (फा. वि.)

(२) शेर मुंवाइ मोटाथि मोटूं,
जहां छापसुं एक ना छेक छोटूं;
शेठिया सर्व ज्यां मोटमोटा बसे,
कोटि नाणा तणूं थाय कोटूं;
देह मोटा अने सो'य मोटां मने;
खाणुं पण मोटूं, ना खाय खोटूं.
नाम मोटां अने काम मोटां बळी.
होय मोटा तणूं सर्व मोटूं^{३१}.

(३) रे ररा ! रे ररा ! राग ले केकिनो
शुद्ध सारी रिते सांभळी साद.

३१ फार्वंसधिलासर्माथी लीधिला झूलणामां जरूरजोगो फेरफार करी
बंकाणधवाणनू भा कामचलाउ उदाहरण घडयू छे.

કેકિની શારદા સૌથિ શોભે ભલી.
 અંતરે એ જ તું રાખજે યાદ.
 મિષ્ટ વાણી થકી માંનવીઓ રિણે;
 કૂર વાણીથિ સ્ત્રીજે સજ કોય.
 મિષ્ટ વાણીથિ પાઠે ગણી મિત્ર;
 ને હેત તે સાથ સૌને ઘણું હોય. (દ. પિં.)

આ હંદોમાં પહેલો પદ્યબંધ માત્રાત્મક શૂળળા છે, અને વીજો તથા ત્રીજો અનુક્રમે રૂપાત્મક કંકણકાળ^{૩૨} તથા કેકિનીશારદા છે. પહેલા હંદમાં પિંગ્લકારોએ વાહવા સંધિનાં વે વે આવર્તને મધ્ય યતિ ઠરાવી છે, તે પ્રસ્તુત ઉદાહરણનાં શરૂનાં વે આવર્તનને અંતે પઢાઈ નથી. પરંતુ મારી સમજ પ્રમાણે શૂળળામાં મધ્ય યતિ અપેક્ષિત નથી. તેનું સમર્થન, વાહવામાં આવી જતા ગાલગા રૂપસંધિના આવર્તનવાઢા કંકણકાળ અને કેકિનીશારદા એ વે હંદનાં ઉદાહરણ આપ્યાં છે, તેનાથી થાય છે^{૩૩}.

૧૬ ઉપર કહ્યા પ્રમાણે મારા મતમાં આવૃત્ત સંધિના માત્રા-
 બંધમાં મધ્ય યતિ અનાવશ્યક ઠરે છે. ઉક્ત યતિના પ્રશ્ન જેવો આંતર
 પ્રાસનો પ્રશ્ન ગૂંચવારા ભરેલો નથી. એનો ઝકેલ તો પ્રમાણમાં વહુ
 સરલ છે. એમાં આંતર પ્રાસને પદ્યરચના સાથે અંગત સંબંધ છે કે નહિ
 તે જ મુદ્દો તપાસવાનો છે. મધ્ય યતિનો સંબંધ પદ્યરચના સાથે નિર્દિવાદ છે.
 તે મેઢ કિંમત સંયાદનું ઉપયોગી અંગ છે. અનાવૃત્ત સંધિના પદ્યબંધનું ચરણ
 જ્યાં વે ત્રણ કે ચાર સ્વટનું વનેહું હોય છે, ત્યાં એ છૂટા સંહોને એકસૂત્ર
 કરનારૂં તત્ત્વ તે મધ્ય યતિ છે. તે તત્ત્વને આધારે માલિની, મન્દાક્રાન્તા,

૩૨ કંકણવવાળ વાવત જુઓ રણપિંગ્લ, વર્ણમેઢ હંદ ૧૨૮૧

૩૩ ઉક્ત નિર્ણયન પરોક્ષ સમર્થન આ દૃષ્ટિવાતના પ્રસ્તાવ ૨૧ માં વહેલા
 રામદન્દની ઘટના વિચારવાથી પણ થાય છે.

शार्दूलविक्रीडित, उपप्लवंगम, आदि पद्यबंध सरजाया छे, अने टकी रखा छे. परंतु प्रासनूं तेम नथी. ए शब्द व्युत्पत्तिमां सं. अनुप्रास साथे अने अर्थमां सं. यमक साथे संबंध धरावे छे. वर्ण के वरडीनी आवृत्ति ते अनुप्रास, अने वर्णना समूहनी आवृत्ति ते यमक. वन्ने शब्दालंकार छे. प्राचीन यमकमां आधुनिक प्रासनो अंतर्भाव थाय छे. प्रासना वे प्रकार छे. एक चरणना अंत्य भागने ते पछीना चरणना अंत्य भाग साथे जोटनारो यमक ते अंत्य-प्रास. एने साधारण बोलीमां प्रास कहे छे. चरणना खंडोने परस्पर जोडनारो जे यमक, ते आंतर प्रास. पहेला प्रकारनो प्रास गूजराती हिंदी वगैरे भाषाना पद्यात्मक साहित्यमां पदांतनो पर्याय बन्यो छे. चरणोने यमक द्वारा अन्य भागमां सांकळी लेवानी रीति ए भाषाओमां रूढ छे. ज्यां सूधी आपणा दोहरा चोपाईमांथी अंत्यप्रास नीकळी जशे नहि, त्यां सूधी आपणी पद्य-रचनाना एक लक्षणिक अभिमत अंग तरीके ए टकी रहेवा निर्मित छे. परंतु आंतर प्रासनो हकीकत जुदी छे. ए पद्मावती तथा त्रिभंगीमां देखा दे छे, अने लीलावतीमां देखातो ज नथी. जो आंतर प्रासनो एक कुटुंबना छंदोना लक्षणमां समावेश थतो होय, तो आम वने नहि. ए पद्मावती, त्रिभंगी, लीलावती, आदि छंदना कुटुंबनी पद्यरचनानूं विशेष लक्षण नथी. पद्यबंधोमां योजाता बीजा अलंकारोनी पेंठ ए एक शब्दालंकार छे. जो एना जेवा अलंकारना प्रयोगथी छंद जुदा गणाता होय, तो नीचेना वे अवतरणमां वापरला छंदोने नवां नाम आपवां जोईशे.

(१)

वाह रँ वाह ! रसाञ्जि मही ज. जही मळि सार हवा रँ हवा.
वास वसे चित चाहित पीक. कपी तहि चाहि जसे वसवा.
वाद करे हजि ताग नहीं ज, जहीं नग ताजि हरेक दवा.
वाजवितासिर यार ! कहीस. सही कर यार ! मित्ताचि जवा.

(फा. वि.)

(૨)

નરમાં ગુણ જો નહિ હોય વિજા, પણ એક ઉપાય ધરે કરમાં;
કરમાંથિ તજે નહિ કાગળને ઊગતા દિનથી દિન આગ્વરમાં.
ખરમાં ન રહે. કદિ તેહ ખરેખર, તેમ ગણાય ન ગાહરમાં.
હરમાં ન રહે, દલપત્ત કહે; દરરોજ ચઢે ચિત્ત હુંનરમાં.

(પા. વિ.)

આમાંનો પહેલો છંદ માત્રાવદ્ધ ત્રીસો સવૈયો છે. રૂપરચના પ્રમાણે તે મદિરા પળ કહેવાય. એનું પ્રત્યેક ચરણ સવલૂં અને અવલૂં વાંચતાં વર્ણક્રમ એનો એ જ રહે છે, એટલે કે એમાં ગતાગત વન્ધ નામે શબ્દાલંકાર છે. ઘીજો છંદ માત્રાવદ્ધ ત્રીસો સવૈયો છે. રૂપરચના પ્રમાણે તે રૂપવદ્ધ દુમિલા પળ કહેવાય. એમાં સિંહાવલોકન(સં. શંખલાયમક) નામે શબ્દાલંકાર છે. આ કારણથી વેમાંથી એકને આપણે નવતર છંદ લેસી નવું નામ આપતા મથી. ઉદ્ભૂત ઉદાહરણોમાં યોજાયલો અલંકાર માત્ર અલંકાર જ રહે છે, છંદનું અંગ બનતો નથી. તેથી રીતે પદ્માવતી ત્રિભંગી આદિ છંદ-માંનો આંતર પ્રાપ્ત યમક જ લેખાવો ઘટે છે; નહિ કે પદ્યરચનાનું આવશ્યક અંગ. અલંકાર અને છંદ એ બે નિરનિરાઝા પ્રદેશ છે અને તે નિરનિરાઝા રહેવા ઉચિત છે.

૧૭ આવૃત્ત સંધિના સમચતુષ્પદ માત્રવંધ સાથે સરલાવતાં અનાવૃત્ત સંધિના છંદની સંખ્યા છેક કમી છે. માત્ર બે જ માત્રવંધ અનાવૃત્ત સંધિના મઢી આવે છે. એકને આપણે પિંગલમાં પ્લવગમ અને ઘીજાને કાવ્ય કહિયે છિયે. એ નામ ઝપશ્રંશ ભાષામાંથી ગૂજરાતીમા ઉતરી આવ્યાં છે^{૩૪}. અપ-શ્રંશ સાહિત્યના પ્લવંગમ અને કાવ્ય આવૃત્ત સંધિના સમચતુષ્પદ માત્રવંધ છે. પહેલા છંદના ચરણમાં વાવા સંધિનાં ચાર આવર્તન પડી ચાહવા આવે છે.

૩૪ આવૃત્ત સંધિના પ્લવગમ અને કાવ્ય માપત જુઓ આગામી દૃષ્ટાન્ત ૫, પ્રસ્તાવ ૫૨.

बीजानुं चरण उक्त संधिनां छ आवर्तनथी नीपजे छे; तेमां छेला आवर्तनमां वावा संधिनो गागा भेद वपराय छे. चरण आवृत्त संधिनां होवाथी ए वे छंदमां मध्य यति छे नहि. गूजरातीमां प्लवंगम अने काव्यनां जूनां नामथी जे वे मात्राबंध ओळखाय छे, तेमां अनावृत्त संधि आवे छे; अने चरणना वे खंड पडे छे, अर्थात् एमां मध्य यतिनी जरूर छे. आ अंगगत तफावतने लीधे एमने नवां नामथी ओळखाववानी अगत्य जोई एकने हूं उपप्लवंगम अने बीजाने उपकाव्य कहूं छूं. तेमनी ऊठवणी नीचे प्रमाणे छे.

उपप्लवंगम—वावा वावा वाह^१ । हवावा वाहगा^१ ।

उपकाव्य— " " " " वावा वागा^१ ।

पहेला छंदमां पांच अने बीजामां छ मात्रासंधि छे. ते पैकी चोथो जे हवावा संधि, तेमां बीजी मात्रा उपर भार पडे छे, अने बीजा बधामां पहेली मात्रा भारयुक्त छे. एमां पूर्वापर वाह अने हवावानुं स्वतंत्र व्यक्तित्व टकावी राखवाने माटे मध्य यति ऐकान्तिक उपपत्ति धरावे छे, अर्थात् ते आवश्यक छे. मध्य यति दूर थतां संधिनुं अनावृत्तत्व नाश पामी गूजराती भाषाना उपप्लवंगम तथा उपकाव्य अपभ्रंशना अनुक्रमे प्लवंगम अने काव्य वनी जाय छे.

१८ समचतुष्पद मात्राबंध पछी असमचतुष्पद मात्राबंधनुं प्रकरण आवे छे. एमां (१) आर्या, (२) गीति, (३) उपगीति, (४) उद्रीति, (५) आर्यागीति^{३५}, (६) सोरठो अने (७) दुहो, ए छंदोनो समावेश थाय छे. पहेला पांच एक कुटुंबनी व्यक्तिओ छे. ए कुटुंबना उदय अने विकासनी हकीकत पांचमा दृष्टिपातमां आवशे. एना घडतरमां वावा संधिनां आवर्तन आवे छे. उक्त पांच छंदनां चरणनी ऊठवणी नीचे प्रमाणे:—

विषम चरणवावा + वावा के हवाह + वावा (१-५).

मोटां सम चरण....वावा के हवाह + वावा + हवाह+ वावा +
गा (१,२,४) के वागा (५).

નહાનાં સમ ચરણ....વાવા કે હવાહ + વાવા + હ + વાગા (૧,૨,૪).

આમાં નહાનાં સમચરણનો હ સંધિ છે તે ભારરહિત છે. આ સંધિ સિવાયના વીજા વગા આર્યા કુટુંબના સંધિમાં આઘ અક્ષર ઉપર, ભાર પડે છે. ઉક્ત કુટુંબ પછીનો અસમ ચતુષ્પદ માત્રાવંધ હુહો છે. તેનાં ચરણના ઘટતરમાં પળ, વાવા સંધિ અગત્યનો ભાગ છે છે. આ વિપમ ચરણમાં વાવા વાવા વાહવા અને સમમાં વાવા વાવા ગાહ ગોઠવાય છે. આમાં સમ ચરણો જ અંત્ય-પ્રાસથી સંકળાયેલાં, હોય છે. હુહાનાં વિપમ અને સમ ચરણનો ક્રમ કલ્પા-વવાથી સોરઠો નીપજે છે. આનાં નવા ક્રમનાં વિપમ ચરણોને છેડે અંત્યપ્રાસ અળાય છે. આ વે ઇંદમાં વાવા વદલ હવાહ, અને વાવા વાવા વદલ વાહ વાહવા કે હવા વાહવા ક્વચિત્ કામમાં લેવાય છે.

૧૧ અમિશ્ર માત્રાવંધ ઉપરાંત ગૂજરાતીમાં ત્રણેક મિશ્ર માત્રાવંધ પણ યોજાયા છે. મિશ્ર ઇંદની યોજના લગભગ પથરચનાની ઉત્પત્તિ જેટલી જ જૂની છે. ક્ષુદ્રેદમાં પ્રગાથ, કકુભ્ વગેરે વર્ણવંધ વપરાયલા છે, તે મિશ્ર ઇંદ છે. પ્રગાથ વે આસ્તા અમિશ્ર ઇંદનો વને છે. કકુભ્ ઇંદમાં વે અમિશ્ર ઇંદનાં ચરણનું મિશ્રણ હોય છે^{૧૯}. ગૂજરાતીમાં છપ્પય કે છપ્પો છે, તે પ્રગાથની કોટિનો મિશ્ર ઇંદ છે. આ વસ્તુ તથા કર્પૂર નામે ચતુષ્પદ તથા ટિપદ અમિશ્ર માત્રાવંધનો વનેલો છે, અને તે અપભ્રંશ સાહિત્યમાંથી ઉત્તરી આવેલો છે. હેમાચાર્યકૃત કુમારપાલચરિતના આઠમા સર્ગનો યંચોતેરમો શ્લોક પટ્પદ કે છપ્પય છે^{૨૦}. વીજો મિશ્ર માત્રાવંધ કુંડલિયો છે. તે છપ્પયથી અર્વાચીન છે. આ પૂર્વભાગમાં હુહો અને ઉત્તર ભાગમાં ઉપકાન્ય આવે છે. ઉક્ત ભાગો-ને કુંડલિના પ્રયોગથી સાંકડી સીધા છે. કુંડલિ પટલે સંયોજક ચન્દ્રામરુ

૧૯ જુઓ આગામી દૃષ્ટિપાત ૨, પ્રલાપ ૨૧-૨૧.

૨૦ મુદ્દિત પાઠ ઇંદોર્ભગર્થા દ્વિત હોવાના કારણથી સંતોષન કરી ઉક્ત પટ્પદ માંચે આપૂ છે.-

કે ચરણાત્મક અંકોડા. પૂર્વભાગનો આરંભ ઉત્તર ભાગના અંત સાથે જે શબ્દ રૂપી અંકોડાથી જોડાય, તે શબ્દાત્મક કુંડલી; અને પૂર્વ ભાગનો અંત ઉત્તર ભાગના આરંભ સાથે જે ચરણ રૂપી અંકોડાથી સંવાય, તે ચરણાત્મક કુંડલી. આ રીતે વેવડી કુંડલીના પ્રયોગથી બે અમિશ્ર છંદ્ર એક જેવા બને છે; અને તે મિશ્ર છંદ્ર કુંડલિયાના નામે ઓલ્લખાય છે. ત્રીજો મિશ્ર માત્રાવંધ ચન્દ્રાવલી^{૩૮} છે. તેમાં પહેલું તથા ત્રીજું ચરણ પોડગી ચોપાઈનું અને બીજું તથા ચોથું આમીરનું હોય છે; ત્યારવાદ પોડગી ચોપાઈનાં ચાર ચરણ આવે છે. કુંડલિયાની પેઠે આનાં પળ પહેલા તથા છેલ્લા ચરણને જોડવા શબ્દકુંડલી યોજવી જોઈએ છે. બીજા ત્રણ મિશ્ર માત્રાવંધ જૂની ગૂજરાતીમાં દ્રષ્ટિ પડે છે. તે સ્ત્રી સનના પંદરમા શતકના પહેલા ચરણમાં જૈન કવિ જયશેખરે પ્રવોધચિન્તામણિ^{૩૯} નામે કાવ્યમાં વાપર્યા છે. એ ચાલુ ગૂજરાતીમાં ઝનરી આવ્યા નથી અને રણપિંગલમાં છે નહિ. તે કારણથી તેમનું એક એક ઉદાહરણ નીચે આપું છું.

મહત્તણુ જહ મહસિ લહસિ મલ્લપ્પણુ પસમૈણ
જહ કરિપઘ્વઝ પસમુ ધિજઝ તુ કરેઘ્વઝ કરણહૈ
જહ અ કરેઘા કરણધિજઝ મણુ નિચ્છલુ ધરહુ
નિચ્છલુ મણુ પુણુ ધરહુ કરિઝ જઝ રાગદોમહં.

તહ ધિજઝ કરહિ રાગાહઅહં અવિચ્છલુ સામાહઝ કરિવિ
અવિચ્છલુ સામાહઝ પુણુ કરહિ નિમ્મયત્તુ નિમ્મલુ કરધિ ॥

ઉદ્ધૃત પદ્પદમા અત્યપ્રાપ્ત નથી

૩૮ ચંદ્રાવલી નામ રણપિંગલમાથી લીધું છે. હ્રસ્વપત્તિપિંગલમા ચંદ્રાવલ્યા સંજ્ઞા છે. કદાન મૂલ નામ ચન્દ્રકલ્પા હોય ચન્દ્રની વચ્ચા સોલ્લ કહેવાય છે, અને પ્રસ્તુત મિશ્ર માત્રાવંધમા ચન્દ્રની વચ્ચા જેટલી અર્થાત્ સોલ્લ વચ્ચા એટલે માત્રાના ચરણનું પ્રાધાન્ય છે તે ઉપરથી એ નામ રાખવામા આવ્યું હોય.

(१)

प्रवचनपुर जाइवा न तातइ आइसिऊँ
 अघनि जिणऊँ सहुँ, हिय निज धानकि जाइँसिऊँ,
 बिरुद बुलावत बहु परि पाछु कुमरु वलिउ,
 चउपट चालत चोरह चरडह भउ टलिउ,
 भउ टलिउ चउपट चोर चरडह, सेन समुहरि चल्हइ,
 दल अकल दिक्खिय, जे अदेखा, तेह तन मन सल्हइ,
 आविउ अविद्यानयरि निरुपम, किह उच्छव डम्बरइ,
 घरि घरि हि उब्भिय नयरि गूडी, खेह ऊडी अम्बरइ.

(२)

इम संभाली निज परिवार सवि वीर समुहरि आरुहइ ए,
 परदल लगि फिरी वलि असवार, पाखरि घूघरी रुणझुणइ ए,
 रुणझुणइ घूघरी घोर घण परि, घुमघुमन्ति नीसाणया,
 झलकन्त सव्यल सेल्ल पेक्खिय पडइ कायर प्राणया,
 रोमञ्चि राउत, जोड जडकइ, जरदबन्धन तुटइ,
 हणहणइ हंफइ हरखि हयवर, पूर जिम्ब पहटइ.

(३)

विप्रपुरी जरी गई ए, देखइ कौजता जाग,
 'धलवन्त बडुइ थापडा ए वुरकइ बीधल छाग !
 वुरकइ बीधल छाग ! लाग न इहां अम्हारउ,
 मोह तणी धूय मारि, तेह तणु पगवइम्मारउ.'
 जनावली वली ते चाली, भमती देसि विदेसि
 रहण रेसि जोयड जोगेसरदरसिण नवनववेस.

આ ત્રણ મિશ્ર માત્રાબંધનાં અનુક્રમે તલહારુ, સરસ્વતીધડલ અને ઘડલ, એવાં નામ હાથપ્રતમાં આપ્યાં છે. પહેલામાં પ્લવંગમ અને હરિગીતની સંસૃષ્ટિ છે. એ બેને કવિએ ચરણાત્મક મધ્ય કુંડલીથી સાંકડી લીધા છે. શબ્દાત્મક આઘંત કુંડલી એમાં છે નહિ. બીજા મિશ્ર માત્રાબંધમાં પહેલું તથા ત્રીજું ચરણ પંચદશી ચોપાઈનું છે; તેમાં અંચપ્રાસની યોજના છે. દુહાનું પહેલું અને ત્રીજું ચરણ, તે પ્રસ્તુત મિશ્ર છંદનું બીજું અને ચોથું ચરણ બને છે. એ બે તેર તેર માત્રાનાં ચરણ પણ પ્રાસબદ્ધ છે, અને તેમને છેડે તાન પૂરનારો 'એ' અવ્યય મૂક્યો છે. ગીતગોવિંદના બીજા પ્રબંધમાં ઉક્ત અવ્યય એવા જ સંકે-
'તથી વપરાયલો મઠી આવે છે. સરસ્વતીધડલના ઉત્તરાર્ધમાં હરિગીત છંદનો પ્રયોગ છે. પૂર્વોત્તર ભાગ ચરણાત્મક મધ્ય કુંડલીથી સાંકડી લીધા છે. આ છંદમાં પણ શબ્દાત્મક આઘંત કુંડલી છે નહિ. ત્રીજો મિશ્ર માત્રાબંધ ત્રણ જુદાજુદા માત્રાબંધ ચરણોનો બનેલો છે. દુહાનાં ચાર ચરણ તે આ છંદનાં પણ ક્રમવદ્ધ ચાર ચરણ છે. વિશેષમાં પહેલા અને બીજા ચરણને અંતે તાન-પૂરક 'એ' અવ્યય ઝમેરેલો છે. તે પછીનાં બે ચરણ ઉપકાવ્યના ચરણના માપનાં છે, એટલે કે અગિયારમી માત્રા પછી યતિવાલા ચોવીસ ચોવીસ માત્રાનાં છે. ત્યારપછી રણપિંગળમાં જેને હરિપદ^{૪૦} નામ આપેલું છે, તે સત્તાવીસ માત્રાના દલવાળી દ્વિપદી છે. તલહારુ અને સરસ્વતીધડલની પંથ પ્રસ્તુત મિશ્ર માત્રાબંધનું ચોથું ચરણ પાંચમા સાથે ચરણાત્મક મધ્ય કુંડલી-થી સંધાયલું છે^{૪૧}. ડિંગળમાં કુંડલીનો પ્રયોગ ઘણા છંદામાં કરેલો જોવા-
મા આવે છે.

૪૦ જુઓ રણપિંગળ, પ્રથમ ભાગ, પૃ ૭૯

૪૧ માત્રાબંધનો પ્રસંગ ચાલતો હોવાથી ઉપર મિશ્ર માત્રાબંધની જ નોંધ લીધી છે. બાકી વિજાતીય પચરચનાના પદ્યવંધોના મિશ્ર છંદ પણ બને છે. સરા તોટક રૂપબંધ છે અને હુહો માત્રાપદ્ય છે એ બેનો મિશ્ર પદ્યવંધ પ્રવીણસાગરમાં અને દલપતકાવ્યમાં પણ છે. એનું પ્રચલિત નામ તોટકકુર્ડાલ્યો છે એનું 'ડાહરણ સરગત કવિ દલપતરામની યજ્ઞનિવેદ્યવંધનીમાધી નીચે પ્રમાણે

२० पूर्वोक्त त्रण प्रकारनी निबद्ध पद्यरचना साये गाढ संबंध धरावतो छतां तेमनाथी जुदो पडतो एक प्रकार छे, जेने हूं लयात्मक पद्यरचना कहूं छूं. वास्तविक जोडणीनी उपेक्षा करी प्रसंगवशात् द्रुत अने विलंबित के अधुरा उच्चारना प्रयोगथी जे संवाद सधाय, ते लयसंवाद; अने ए संवादवाळी पद्यरचना ते लयात्मक पद्यरचना. एनी वे शाखा छे; मार्गीय अने देशीय. पहेली शाखानी वे प्रशाखा छे, रूपलयात्मक अने मात्रालयात्मक. ते वेनूं घडतर छंदोवद्ध छे, अर्थात् पहेली शाखाना लयात्मक पद्यबंध छंदोविधाना धोरी मार्गने पटखे नवो चीलो पाडी आगळ बधे छे. जूना मार्गना अनुसंधानने अनुलक्षीने आ नवा प्रकारनूं में 'मार्गीय लयात्मक पद्यरचना' एवूं नाम राखेळूं छे. लय साचववा जेमां गुरुनो लघु अने लघुनो गुरु उच्चार करवो पडे, ते रूपलयात्मक पद्यबंध; अने जेमां बृहत्नो ह्रस्व तथा ह्रस्वनो बृहत् उच्चार करवो पडे, ते मात्रालयात्मक पद्यबंध. गूजरातीमां आजपर्यंत छंद रचाया छे, ते बधा ए लयात्मक छे. सामान्य बोलीमां कहिये, तो एमां स्वरने स्वेच्छाए लंवाववा—टंकाववानी प्रणालिका रूढ छे. एटल करीने गूजराती साहित्यमां रूपवद्ध छंदनी अने मात्रावद्ध छंदनी संज्ञाथी ओळखाता पद्यबंध वास्तविक रीते रूपवद्ध अने मात्रावद्ध मटी लयवद्धनी कोटिमां भळे छे. संस्कृत काव्यनाटकना विद्यमान गूजराती अनुवादमां भाषानो ज नहि, पण पद्यरचनानो ए फेरफार थयेलो बहुधा जीवामां आवे छे. शाकुन्तल अने मेघदूतना अनुवाद उपर दृष्टि फेरवशी, तो कहेवाता समझोकी अनुवादमां पण मात्राबंध अने रूपबंधनो लयबंधमां पळटो थयेलो जोशो. एवो पळटो नथी मात्र पूर्वे आपेला अमरुशतकमांता अने पराक्रमनी प्रसादीमांता उतारामां.

कसिने कीमत हेमनी पारख करे प्रमाण;

पद्यतयकी आ विभवमां जननी कीमत जाण.

जननी कर कीमत केणयकी, घळि नेदनि कीमत नेणयकी,

कसिने कर कीमत व्हेमतणी; कसिने कर कीमत हेमतणी

मन्दाक्रान्ता रूपबंध छे, ते एमां शुद्ध रूपबंध ज रहे छे; अने आर्या मात्राबंध छे, ते शुद्ध मात्राबंध ज रहे छे: एके बदलाईने लयबंध नथी बनेल. रूपरचना अने मात्रारचनानूं शुद्ध स्वरूप जाळ्यवा पहेलवहेले प्रयत्न भास कविना प्रतिज्ञायौगन्धरायण अने प्रतिमादशरथ नाटकना अनुवादमां में कर्यो छे, अने ते एवा उद्देशथी के अनुवादमां जूनी पद्यरचनानो साचो ख्याल आवे. बाकी मूळकृतिमां के अनुवादमां कर्ता गमे ते रचना अने गमे ते छंद वापरवा स्वतंत्र छे. उक्त शाखानूं ' मार्गीय लयबद्ध पद्यरचना ' ए नाम तदन अजाण्यूं छे; परंतु ए रचनानो प्रयोग तो बहु लांबा वखतथी चालु छे, अने जाणीतो छे. एटले उदाहरण आपी तेनी ओळखाण कराववानी जरूर नथी. लयात्मक पद्यरचनानी बीजां शाखा जे देशीय, ते साधारण रीते देशीना नामथी ओळखाय छे. देशीओनो माटो भाग मात्रालयात्मक छे. पद, गीत, गरबो, गरबी, भास, तिथि, वार, आरती प्रभातियां वगैरे उक्त मात्रालयनो आश्रय ले छे. न्हानां मोटां आख्यानो ए मात्रालयमां रचायां छे. रामायण, महाभारत, भागवत जेवा अति दीर्घ पदबंध पण ए ज पद्यरचनामां छे. एटले मात्रालयात्मक देशीनो पण दृष्टांत अपेक्षित नथी. परंतु केटलिक देशीओ एवी छे के जे मात्रालयनी लेखी शकाय नहि. प्रचार थोडो होवाना कारणथी ते पूरी प्रकाशमां पण आवचा पामेली नथी. रूपलयनी देशी बहु थोडाना ज सांभळवामां हसे; शाथी जे ए देशीनो प्रयोग एक ज संस्कृत काव्यमां थयेलो मळी आवे छे. गीतगोविन्दना पांचमा सर्गनो पहेलो प्रबंध उक्त देशीमां छे. ए अपूर्व अने विरल देशीनूं स्वरूप मूळ संस्कृतमां विचारी लेवा न बने, तेवानो जिज्ञासा तृप्त करवाने प्रस्तुत प्रबंधनो एना ए ज रूपलयमां करेलो अनुवाद नीचे आपूं छूं.

विरहिहृदय बौंधीने कुल कळीं मलकाय;

अगन त्रिगुण पवने त्रिगुणित तनखवी न्हाय.

तव विह्वंणा उर झुरे विधुरा हरि. श्रृं० १

ધ્રમરરવ સુળી સીડે ઢરથી કરથી કાન,
 કુસુમશરથી ફફડે વઢી વઢી છઢી છઢી પ્રાણ, તવ૦ ૨
 રયણિમય ધરી કંપે શિથિલવિથિલ તન,
 અકઢવિકઢ કલપે સ્વર શશિકર સ્મરી મન, તવ૦ ૩
 વિજન વન વસી હાવે પરહરી નિજ ધામ,
 પ્રીતમ મિલન ચિતવે જીભ જપી જપી તુજ નામ, તવ૦ ૪
 પ્રણયમય જયદેવે રચિત વિરહ ગાન
 રસિકહૃદય મચવે અતિ હરિરતિરસ તાન, તવ૦ ૫

ઉપરના અવતરણની પ્રબંધ સંજ્ઞા અને એનું ધ્રુવપદ કહી આપે છે, કે એ
 છંદ નથી પણ દેશી છે. એની કડીમાં ચરણોની વ્યવસ્થા અંત્ય અનુપ્રાસથી
 અને અંત્ય યમકથી દર્શાવી છે. પ્રત્યેક કડી ચાર ચરણની બનેલી છે. એનાં
 વિષમ ચરણો વચ્ચે અંત્ય અનુપ્રાસની અને સમચરણો વચ્ચે અંત્ય યમકની
 યોજના છે. ચારે ચરણની રૂપરચના એકબીજાથી ભિન્ન છે; એટલે કે કડી વિષમ
 પદની નીપજેલી છે. ચરણ તેમ જ ધ્રુવપદની આંતર ઘટના અનાવૃત્ત સંધિની
 છે. ચરણ નવદશ રૂપનાં જ હોવાથી એમાં મધ્ય યતિ છે નહિ. ધ્રુવપદ જરા
 લાંબું છે; એમાં ચૌદ અક્ષર છે. તેથી એમાં પાંચમા અક્ષર પછી મધ્ય યતિ
 ઇષ્ટ હોય એમ જણાય છે. કડી અને ધ્રુવપદની ઊઠવણી નીચે પ્રમાણે.

કડી (૧) લલલ લલલલ ગાગા (૨) લલલ લલલ ગાલ
 (૩) લલલ લલલ લલગા (૪) લલલલ લલલલ ગાલ.

ધ્રુવપદલલલલ ગા^૧ લલગા ગાલલ ગાલલ.

ગીતગોવિન્દનાં અનેક અનુકરણ સંસ્કૃતમાં થયેલાં છે. પરંતુ એકેમાં
 પ્રસ્તુત રૂપલયાત્મક પ્રબંધ શુદ્ધ સ્વરૂપમાં ઊતારેલો-મઢતો-નથી. આવૃત્ત
 સંધિની પદરચના તરફ લોકરુચિ ઢઢવાથી જયદેવના સમય પછી અનાવૃત્ત
 સંધિના રૂપલયની રચના રચવાનો સંપ્રદાય ઊચ્છિત્ર ધાય છે એટલું જ નહિ,

पण अनावृत्त संधिना रूपलयात्मक पद्यरचनाना स्वरूपनी समज पण लोप पामे छे. लुप्त रूपलय बदल एक नवी लय केटलेक काळे प्रगटे छे. एन् वैजिक तत्व वर्ण होवाथी हूं एने वर्णलय कहुं छूं. नवी वर्णलयात्मक देशी बहु रोचक नीवडे छे. एन् उदाहरण नीचे प्रमाणे.

कान्हुडो कामणगाळो रे, साहेली, आ तो ! ध्रुव०
कान्हुडो कामणगाळो, रसभर्यो ने रूपाळो !

आ शो आंग्वडलीनो चाळो रे ! साहेली० १
रंगरातो, मदमातो, वांसलडीमां गीत गातो

नेणां शूं करे छे वातो रे. साहेली० २

तें कहुं ते में न मान्यूं. आजे मारी जाते नाण्यूं
आवडूं में नो'तूं जाण्यूं रे. साहेली० ३

४२'वे'नी ! तारे पाये लागूं, व्हाला विना वेलूं लाग्यूं,
दयानो प्रीतम मागूं रे.....साहेली० ४

लोकप्रिय दयाराम कविन् आ एक लोकप्रिय पद छे. एनो आंतराना वे भाग पडे छे. पूर्व भागमां चार चार अक्षरनां वे आवर्तन छे. तेना पछी तानपूरक रे आवे छे. ते दिलंबित लयधी बोलातो होवाथी उत्तर भागमां त्रण अक्षरपूर जगा खाली मूकवी पडे छे; जेथी करीने चतुरक्षर संधिनो छेळो अक्षर उत्तर भागनो आव अक्षर बने छे. ते पछी पाछो एक चतुरक्षर संधि आवे छे. पूर्वोत्तर भाग ऊथलावी आंतरो गया क्रमे कडीओने अंते

४२ वीजी अने त्रीजी कडी वच्चे नीचेनी कडी यधारामा मळी आवे छे; ते असगत होवाथी में तजी दीधी छे.

भरवा हूं गई पाणी, प्रेमवीडा भरी आणी,

घेली थई हूं आवी शाणी रे.....साहेली०

पहेली कडीमा 'आ शो आंग्वडलीनो चाळो !' एवी उक्ति छे, ते उपरधी समजाय छे के प्रथम दर्शननी तारामैत्रीनू तें ज समय नायिनाए सखी प्रत्ये करेलं निरूपण छे, नहि के रत काळना कोइ पनघटना समागमनूं.

બોલાય છે. પ્રત્યેક કહીમાં ચતુરક્ષર સંધિનાં વેવે આવર્તનવાઢાં ત્રણ ચરણ આવે છે. તેમાંના છેઢા ચરણના અંતે તાનપૂરક રે ઝમેરાય છે. આ પ્રમાણે પ્રસ્તુત વર્ણલયવદ્ધ દેશીનૂં સ્થાયી સ્વરૂપ છે. પહેલી કહીના ત્રીજા ચરણના પહેલા સંધિમાં અને વીજી કહીના વીજા ચરણના પહેલા સંધિમાં પાંચ પાંચ અક્ષર છે તેમાંનો પાંચમો અક્ષર વર્ણલયની પદ્ધતિએ અધુરો ડચ્ચાર્યાથી સ્થાયી ચારનો મેઢ સ્થાય છે. . . .

૨૧ નિવદ્ધ પંઘરચનાના ચારે પ્રકારનૂં રેલાદર્શન અહીં પૂરૂં થાય છે. વિચારવી રહે છે માત્ર અવદ્ધ પંઘરચના. એ છેક અર્વાચીન છે; એટલે કરીને, કહેવૂં જોઈએ કે, તે પ્રયોગાવસ્થામાં છે. એનો આદર્શ ઇંગ્રેજી પદ્યાત્મક સાહિત્યમાંથી લીધો છે. સંસ્કૃતમાં અવદ્ધ પંઘરચના છે નહિ. આપણે આગઢ જોડશૂં, કે સંસ્કૃત પ્રાકૃત અને અપધંશ માપાનૂં પદ્યાત્મક સાહિત્ય પળ નિવદ્ધ રચનામાં છે. ઇંગ્રેજી Blank Verse ના જેવી કોઈ અવદ્ધ પંઘરચના યોજી કાઢવાના પ્રયત્ન ભારત ભરમાં ચાલી રહ્યા છે. એના સંબંધમાં, અવદ્ધ પંઘરચનાનૂં વ્યાવર્તકા લક્ષણ શ, તે તપાસવૂં ઘટે છે. અવદ્ધ પંઘરચના એટલે નિવદ્ધ પંઘરચનાનાં વિવિધ બંધનથી મુક્ત પંઘરચના. ડક્ત બંધનના ત્યાગને લીધે એમા માવપ્રદર્શનનો માર્ગ મોકઢી રહે છે. શ્લોક કે કહીના ચોકઠામાં બરાવર માઈ રહે એવૂં ન હોય ત્યાં વધઘટ કરીને તે વક્તવ્ય સદર ચોકઠામાં વેસતૂં બનાવવૂં પડે છે, એવો પ્રસંગ અવદ્ધ પંઘરચનામાં ડપસ્થિત થતો નથી. એમાં નિરર્થક કે પાદપૂરક શબ્દનો પળ ડપયોગ પડતો નથી. પ્રસ્તુત રચનાની ડૂવો એ છે કે એમાં ગઘની સ્વામાવિકૃતા ડતરી આવે છે. એની અંદર ઘુધા અન્વયસિદ્ધ ક્રમ જ અનુસરાય છે; તેને લીધે પ્રસાદ સ્હેજે જઢવાય છે. યતિહૃત કૃત્રિમ વિરામથી રચકાતી મટી એ રચના અસ્પલિત આગઢને આગઢ વધે છે; અને આરૂં એ કાવ્ય એક મહાપય ઘની રહે છે. એને પ્રાસ કે શ્લક્ષમકનો શળગાર પળ જોઈતો નથી. વિવિધ બંધન અને શળગારના પરિત્યાગની વાત થાય છે, ત્યારે પ્રશ્ન ડઢે છે

કે અવદ્ધ પઘરચના એના નામ પ્રમાણે શૂં સમસ્ત બંધનથી મુક્ત છે ? એના ઉત્તરમાં જણાવવું જોઈએ કે અવદ્ધ પદ બંધન માત્રના નિપેઘના અર્થમાં લેવાનું નથી. ઉક્ત પઘરચનામાં એક વાચતનું બંધન છે જ; અને એકે બંધન છે, તો જ તેની પઘકોટિમાં ગણના સંભવે છે. એમાં આવૃત્ત સંધિની યોજના વિહિત છે. એકાદ આવૃત્ત સંધિનાં આવર્તનથી એનું ચરણ વને છે; પછી તે આવર્તન સંખ્યામાં ગમે તેટલાં હોય. પ્રસ્તુત સંધિ ચરણને અંતે પૂરો થવો જ જોઈએ એવી પળ મર્યાદા છે નહિ; તે અધુરો પળ મળી રીતે રાહી શકાય છે. વિચારિયે તો અવદ્ધ પઘરચનાનો ઘટકાવયવ થવાને આવૃત્ત સંધિ જ યોગ્ય છે. ચરણાંત યતિનો પરિહાર એના પ્રયોગ દ્વારા અનાયાસે શમ્ય છે. અનાવૃત્ત સંધિનો પ્રયોગ ચરણાંત યતિ માગે છે, એટલે કરીને ત્યાં અટકવું પઘ્યાથી ધારાવાહિતાનો ભંગ થાય છે. અત્યારસૂઘીમાં અવદ્ધ પઘરચનાના જે જે પ્રયોગો થયા છે, તે વધામાં આવૃત્ત સંધિ વપરાયેલ છે. આ દિશામાં પહેલું પગલું કવિ-સંમેલન મેઝવનાર શ્રીયુત મનહરરામ હરિહરરામ મહેતાએ મર્યું છે. વાલ્મીકીય રામાયણના વાલકાળ્ડનો એમણે પંદર વરસ ઉપર છપાવેલો અનુવાદ માત્રા-લયની અવદ્ધ પઘરચનામાં છે. એનો બૈજિક સંધિ વાહવા છે. એ પઘબંધ માત્રાત્મક શૂલ્ળા છંદની ઢવે વોલાય છે. એનું ઉદાહરણ નીચે પ્રમાણે:—

તાટકા ક્રોધથી મૂર્છતી ઘોર વહુ ગર્જતા

વાહુ ઝંચા કરી રામ ઉપર ઘસી.

ઘક્ષીએ સહજ-સંભ્રાંત ક્ષણં મર કર્યાં

ઉમય એ મ્રાતને વહુ રજોમેઘથી

ઘોર રજ ડરાડી. લાગી વર્પાવવા

ઘક્ષી વિસ્તારી માયા પછી

રાઘવ ઉપર શિલા મહત વરસાદ સમ.

महत पापाण वरसादनुं
 सहज वारण करी वाणवरसादथी,
 रोप हृदये धरी घावती आवती
 'यक्षीना राघवे छेदी नाख्या करो'^{४३}
 (सर्ग २५, ताटकावध.)

रामायणा अनुवादमां योजना करेली होवना कारणथी कर्ताए मात्रालयना प्रस्तुत अवद्ध पद्यबंधनूं नाम रामछंद^{४४} राखेणूं होय एम लागे छे. निबद्ध मात्रात्मक पद्यरचनाना जे बीजा आवृत्त सधि पूर्वे कह्या छे, ते सर्वे आ प्रकारनी रचनाने अनुकूल नीरडे एवा छे; जोके तेमनो आवो प्रयोग लांबा काव्यमां थयेलो मारा जाणवामां आव्यो नथी. सर्वे मात्रासंधिनी अवद्ध पद्यरचनाने हूं मात्रालताना सामान्य नामथो ओळखावूं छूं.

२२ रामछंदना प्रयोग पछी अवद्ध पद्यरचनानी दिशामां बीजो प्रयोग आजथी दस वरस उपर छट्टी साहित्य परिपदना अधिवेशनमा थयो हतो. एनो उद्देश कंडक भिन्न हतो. निबद्ध पद्यरचनामां गेयता घर करीवेठी हती. मात्रालयना बाहबा संधिनी अवद्ध पद्यरचनामां पण नादलहरीनो पगरव कानना पदडा उपर अकित थतो हतो. नवा प्रयोगनूं लक्ष्य अगेय किंवा पाठ्य अवद्ध पद्यरचना योजवा तरफ हतु. प्रस्तुत अगेय तत्त्व इमेजी पद्यरचनानी घटनामांथी हाथ लागूं हतु. ए पद्यरचना गद्यभारना वधारणने लीधे गद्यना जेवा पाठ्य छे. नाटक मोटे भागे पाठ्य होय छे. तेमां पाठ्य अवद्ध पद्यरचनाना प्रयोगनूं वहोळूं क्षेत्र हतु. ते क्षेत्रने अनुकूल वनवेली नामे

४३ साधारण रीते चरणबद्ध रचनाने माटे छंद शब्द वपराय छे रामछन्द संज्ञामां छंद सामान्य पद्यरचनाना अर्थमा प्रयुक्त छे

४४ बाहबा संधिना आ पद्यबंधनो दृष्टान घण करीने सरस्वती नामे हिंदी सामयिक पत्रमा अधवा तो कदाच माधुरीमा आव्यो हतो

अबद्ध पधरचना ते वखते अजमायश दाखल परिपदमां रजू कस्वामां आवी हती. ए संबंधना लेखमांथी हूं तेनूं उदाहरण नीचे आपूं छूं^{४५}.

ब्रूटस—अहो रोमना सपूत शे'री बांधवो ने मित्रो!

आ जे मेदनी मळी छे

तेमां कोइ सीझरनो दिलोजान दोस्त होय,
तो हूं तेने कहूं छूं के

एनूं ब्हाल स्वर्गवासी सीझर उपर हशे
तेनाथी लगारे कमी ब्रूटसनूं ब्हाल न्होतूं.
त्यारे केम ब्रूटसे ए सीझर उपर हाथ

ऊठाव्यो ते जो ए दोस्त पूछशे, तो
तेने मारे एटलोज उत्तर छे:-

नहि के हूं सीझरने कांइ ओछो च्हातो हतो,
पण आ भूमि मैयाने अदकेरो च्हातो हतो.
तमारें ते सीझर जीवे ने तमे दास थाओ
ए जोईए ?

सीझर ज के न जीवे ने तमे स्वतंत्र रहो
ए जोईए ?

सीझरनूं मारा पर बहु हेत हतूं, माटे
हूं रडूं छूं.

भाग्यदेवीना ए भारे प्रीतिपात्र हता, माटे
राचूं ए छूं.

पराक्रमी हता, माटे

एजूं ए छूं

ते छतां ए एमने म मं ज हण्या;
केमके ए लोभमां लेवाया हता.

एमना ए ब्हालने हूं रोजूं छूं.

एमना ए महत्वे हूं मोहूं छूं.

४५ परिपदमा बांचिलो बनवेली सर्भथी लेख बधारा साथे 'सत्ययाद' अने पक्षयाद' एका नामथी छटो उपाथो हतो. तेमांथी उपरनूं उदाहरण लीघू छे.

एमना ए शौर्यने हूं चंदूं छूं.
 एमना ए लोभने हूं दंडूं छूं.

कोण ए कंगाल छे, जे रोमन न-धवा इच्छे?

होय कोइ, तो ते बोले.

हा, हूं एना गुन्हामां छूं

कोण एवो नीच छे, जे दासपणूं बहोरी राचे ?

होय कोइ, तो ते बोले.

हा, हूं एना गुन्हामां छूं.

कोण एवो नष्ट छे, जे स्वभूमिनो द्रोही बने

होय कोइ, तो ते बोले.

हा, हूं एना गुन्हामां छूं^{४६}.

४६ चतुरक्षर संधिना अथर्व-पद्यनो हिंदी दृष्टांत अमदावादना साप्ताहिक पत्र प्रजावंशुमां थोडा बरत उपर साहित्यप्रिये आप्यो हतो. विद्यमान हिंदी कवि शंभु दयालना क्षीपनिर्घाण नामे खंडकाव्यमांथी नीचेना बे अतारा छेमां टांक्या हत। प्रस्तुत काव्यना पद्यवंधनू कर्ताए मुक्तप्रवाह नाम राख्यु छे; अने हिंदी Blank Verse तरीके तेने ओळखावेल छे.

(१)	जीवन-मरुस्थल में,	८
	दिम-क्षण-चिन्दु सा	७
	हाय ! यह सचानक अयाचित ही-आ गया था,	१७
	स्वर्ग-सुख ले कर,	७
	धसन्त-पुष्प सा मृदुल,	९
	कोमल ललाम अभिराम शिशु भाग्यवान.	१६
(२)	सरस हुआ या रसहीन जग.	११
	क्षण-क्षण विश्व की कठोरता	११
	ही, कर्मरत जीवन भी,	९
	जीविका के द्रव्य सम	८

उपर आपेला ऊतारामां कोइ कोइ स्थळे जूज फेरफार करी लीवो छे; शाधीजे वनवेलीनो लेख मारा ज हाथनो छे. एमां चतुरक्षर संधिनो प्रयोग छे. उद्यानलताना ठाठमाठ वदल पद्यबंध तरीके एमां वननी वेलीनूं नैसर्गिक सौन्दर्य दृष्टिगोचर थतूं होवाथो एनूं में वनवेलीं नाम राख्यूं छे. ए वर्णसंवादनो पद्यबंध छे, एटले गुरुने लघु अने लघुने गुरु लेखववानो अथवा एकनी अनेक अने अनेकनी एक मात्रा गणवानो प्रसंग एमां प्राप्त थतो नथी. आधी वर्णयोजनानी शुद्धता अनायासे जळवाय छे. इतर वर्णसंधिना प्रयोगथी नवतर अबद्ध पद्यरचनाओ हवेपछी रचाय तेनूं अने वनवेलीनूं सामान्य नाम वर्णलता योजवूं घटे छे. तेवी ज रीते रूपात्मक अबद्ध पद्यरचनाओनूं नाम रूपलता राखी शकाय.

२३ रूढ अने नवी घडाती पद्यरचनानो आत्मा संवाद किंवा मेळ छे, एम पूर्वे कहेवामां आव्यूं हतूं. गद्यथी पद्य जुदूं पडे छे ते संवादने लीधे. गद्यमां संवाद इष्ट नथी, पद्यमां ते आवश्यक छे. आठ वर्णना प्रस्तारनी एके एक वर्णशृंखला अनुष्टुभनी रचनामां वपराती नथी. एमांनी गणीगांठी संवादी शृंखला ज ऋग्वेदनी पद्यरचनामां देखा दे छे. विसंवादी वर्णशृंखला वपराई न वपराई आपोआप तजाय छे. लघु तथा गुरुनी अने ह्रस्व तथा बृहत्नी यादृच्छिक एके एक योजना रूपसंवादने अने मात्रासंवादने अनुकूल होती नथी. एमांनी जे योजनाओ संवादी होय छे, ते पद्यरचनामां वपराय छे; बाकीनी छंदोगणितना कोठारमां पूराई रहे छे. जेमां स्वतः के मध्य यतिना आश्रयथी संवाद शक्य होय छे, एटले के पद्यपंक्तिना संधि परस्पर मेळ खाई रचना मुक्तिष्ट अने रंजक बने छे, ते शृंखला पद्यरचनामां ब्राह्म छे, बीजी वधी नकामी होई त्याग्य छे. सैरुडो वरस पहेलां घडायलो छंदो-

सहनीय हो गये थे. ८

रात्रि के निविड सम ८

शून्य गृह धीच दीप्तिमान हुआ देखा घर १६

उज्ज्वल आलोकपुञ्ज दीप अनुपम एक. १६

गणितनो खरडो साहित्यना प्रजातंत्र शासनमां कायदो थवा नथी पाम्यो ते ए कारणथी, के सदर खरडो तैयार करतां संवादनी वावत लक्ष बहार रही गई हती. ए खरडानी कलमोनी रूप एके एक गद्यघटना वर्ण रूप के मात्राना प्रस्तारनी परंपरामां आवी जई पद्यरचना कहेवाय, जे संवादना अभावे ते छे ज नहि. छंदोगणित बहु चमत्कार ऊपजावे छे. परंतु संवादनी दृष्टिए एनी उपयोगिता अत्यंत मर्यादित छे.

२४ संवादना विषयमां एक गूंचनो ऊकेल करवानी जरूर छे. पूर्वे नीचेनी पंक्तिओने श्लोकार्थ छेरखी तेमां रूपसंवादनो निर्देश करवामां आव्यो हतो. जे निराश न थइ मच्यो रहे, तेज इष्ट सुखनी घडी जुए. उदाहृत जोडकामां वर्णसंवादनो पण भास थाय छे. दृष्टि रूप उपरथी खसेडी वर्ण उपर छेरविचे, तो जोदये छिये के प्रत्येक चरणमां पहेला व्रण संधि छे ते पूरा चार चार वर्णना छे, अने ते पछीनो चतुरक्षर संधि एक वर्ण अधुरो छे. ए गणतरी अनुसार प्रस्तुत श्लोकार्थ अगियार अक्षरना कवितना वर्गमां गौठवाय छे. त्यारे एनी गणना ते रूपबंधमां करवी के वर्णबंधमा ? के पछी संदेहसंकर अलंकार जेवो ए पद्यबंधनो प्रकार छे एम कहेवू ? आ शंकरानू समाधान पद्यभारनी व्यवस्था तपासतां आपोआप र्थई जाय छे. उद्धृत उदाहरणमां रूपबंध तरीके पद्यभार पहेला पांचमा तथा आठमा अक्षर उपर अने वर्णबंध तरीके पहेला, पांचमा तथा नवमा उपर पड़े छे. ए रीते पद्यभारनी धेंचणी भिन्न होवाथी, स्थूल दृष्टिए एक जेवा जणाता पद्यबंध सूक्ष्म दृष्टिए भिन्न ठरे छे. एथी उल्लूंग गीतक किंवा मुनिशेखरनो अने हरिगीतनो पद्यभार अभिन्न छे, एटले पहेलो पद्यबंध हरिगीत कुटुंबनो लेखाय छे.

२५ पद्यरचनानी चर्चाने अहीं जे महत्व आप्युं छे तेनूं कारण ए छे, के आपणूं जूनुं, साहित्य लगभग बंधूं ए पद्यमां छे. एनो साक्षात्कार करवामां पद्यरचना उपर परकम्मावासीए अविचळ दृष्टि राखवानी जरूर छे. गद्यना संशोधननूं कार्य सरळ छे. अनेक उपलब्ध पाठमांथी कयो सारो छे, एटलूं तेमां जोवानूं होय छे. पद्यना संशोधनमां स्वीकृत पाठ पद्यबंधमां बेसतो आवे छे के नहि, ते पण विचारवानूं रहे छे. प्रेमानंदना नळारव्यानमां 'मक्षिका प्रथमे प्राप्ते' जेवूं धन्यूं छे. ए आख्यानना पहेला कडवानी चौथी कडीमां 'पशुपताकाळ पशुपतिए आप्युं' एवो मुद्रित पाठ छे. तेमां बे प्रकारनी अशुद्धि जोवामां आवे छे. एक तो ए के पशुपताकाळ ए नामनूं कोड अख छे नहि. बीजी ए के मुद्रित पाठथी पद्यनूं माप सचवातूं नथी. पद्यात्मक कृतिमां रचना मापसर होबी आवश्यक छे. उपयुक्त देशी अहां छ मात्रा जेटला मापना शब्दनो प्रयोग मागी छे छे. एनी गरज पाशुपत बोल पूरेपूरी रीते सारो छे. पशुपतिना अखनूं नाम पाशुपत छे. अर्थात् ए बोल वापरवो अहां उचित छे. महाभारतनां पानां ऊथलवूं छूं, तो कैरातपर्वमां पाशुपत अखनो ज उल्लेख करेलो जोऊं छूं. तेथी कहां छूं के उपलब्ध पाठ गमे ते होय, पण ग्राह्य पाठ तो निःसंशय 'पाशुपत' ज छे. प्रेमानंद जेवो संस्कृतज देशीकुशळ आख्यानकार 'पशुपताकाळ' पद अहां वापरे ए वने नहि. उक्त उदाहरणमां एक ज शब्द भए छे. कोइ कोड बखत तो भएता पद्यबंधनी रगे रगमां व्यापी भयेली जोवामां आवे छे. बृहत्काव्यदोहन ४, पृष्ठ २५ मां अने नरसिंह महेता कृत काव्य-संग्रह, पृष्ठ ४८४ मां एक पद आप्युं छे, ते आवा प्रकारनूं छे. ए बे मुद्रित वाचना अने पद्यगत संगति विचारीने योजेला कल्पित पाठवाळी कोइ प्रसंगे में ऊपजावेली वाचना अनुक्रम वार नीचे आपूं छूं.

(१) नाम पाम्यो पण, राम तें नच लह्या,
विना विवेक ऋषी जोग जाळे;

पुत्र विना जेम, घर मघे पारणुं,
 वर विना ते जेम जान महाले. नाम० १
 पिंडमां प्रभु पण, प्रगट देणे नहीं,
 फोगट । भमे ते दूर भारे;
 अगणीत भरमने, ना गणी लरूया कर्या,
 दंही भाव करी चोरी मारे. नाम० २
 मने एम जाण्युं जे, हुं हरीजन धयो,
 वैष्णव पद गायने भक्ति भावे;
 करणी तो कागनी, होड करे हंसनी,
 पेटनी चारता कळी न जावे. नाम० ३
 नामे अरध सर्या, कंड जीव ओघर्या,
 वस्तु विना नहीं भूख भागे;
 ब्रेहनी दाझना, भेख घरे ए समे,
 वरसाद विना जेम मेघ गाजे. नाम० ४
 निराकारे एकाकारे, मेरुगरभितनु ए,
 ज्ञान विना अज्ञाने जावे;
 जाणे नरसिंह तेने चरणे नमूं,
 जेने ज्ञान अज्ञाननी जोत जागे. नाम० ५
 (वृ. फा. स. ४, २५)

(२) अल्या नाम पाम्यो, पण रामने नव लह्या,
 वैष्णवपद केरुं विरद झाले;
 पुत्र विना जेम, घर मध्ये पारणुं,
 वर विना ते जेम जान महाले. १
 व्याधिनी वेदन, विश्वनी ना टळे,
 ठालो गगनमां । मेघ गाजे;

हरिने जाण्या विना, हरि केरो जन थयो,
 वात पकवानथी भूख न भागे. २
 तूं एम जाणे जे हरिजन हुं थयो,
 विष्णुपद गाई थयो भक्त भवमां;
 करणी तो कागनी, होड करे हंसनी,
 हंसने तो हसी कहाडे लवमां. ३
 पिंडमां प्रभु पण, प्रगट पेखे नहीं,
 फोकट भमे ते दूर भाळे.
 अगणित ब्रह्मनुं, गणित लेखुं करे,
 दुष्ट भावे करी माळ झाले. ४
 जो निराकारमां जेहनुं मन गळे,
 भिन्न संसारनी भ्रांति भागे;
 दास नरसैयो कहे, तेने चरणे नमुं;
 ज्ञान विज्ञाननी जोत जागे. ५

(न. म. का सं. ४८४)

(३) नाम पामी अल्या ! राम तिं नवि लह्या;
 वैष्णव पद तणूं विरद झालि.
 पुत्र विण जिम रचइ पारणूं घर विचइं,
 घर विना जिम वली जान, माहालि ! १
 इम जि जाणइ, हुजं, हुं हरिनु जन थियु
 विष्णु गाई भयु भक्त भव मांहां;
 करणी तु कागनी, होडि करि हंसनी,
 हूंशि काडइ हसी हंस लव मांहां. २
 पिंड मांहां प्रभु सही प्रगट पेखइ नहीं,
 फोक परलोक मांहां दूर भालि;
 कोटि ब्रह्मांडनुं गणिति लेखूं करइ,

દેહભાવદ્દં ઠરી માલ જ્ઞાલિ. ૩
 નિદાઘની વેદના વિશ્વની ટલદ્દ ના,
 અનિ ઘૃથા ગગન માંદ્દાં મેઘ ગાજિ;
 હરિનિ જાણ્યા વિના હરિતણડ જન થિયુ,
 વાત પકવાન નવિ મૂલ્લ ભાજિ. ૪
 જિ નિરાકાર મહિં એકરસ થઈ રમદ્દ,
 હદ્દદ્દ વિજ્ઞાનની જ્યોત જાગિ,
 દાસ નરસંદ્દ મળદ્દ ચરણિ નમ્મૂં તેહનદ્દ;
 એહની સંસારની ઝાંતિ મ્મોગિ. ૫

પરંપરાએ પાઠ કેટલે દરજ્જે ભ્રષ્ટ થાય છે, તેનો વાચકને બહુધો ર્યાલ નથી હોતો. મને લાગે છે કે તેનો સચોટ ર્યાલ આપવાને સદ્ગત ઇચ્છા-રામભાઈએ પ્રસ્તુત પદની વાચના, જે સમયે જેવી મઝી આવી, તેવી તે સમયે વાચક સમક્ષ રજૂ કરવાનો સંકલ્પ રાલ્યો હશે. એમણે પૂરાં પાઠેલાં સાધ-નનો લાભ લેઈ નરસંદ્દ મહેતાના વક્તવ્યને પ્હોચવાનો ઉદ્દેશ મેં પ્રસ્તુત સંઘોધનમાં રાલ્યો છે. મુદ્રિત ડત્તારામાં પઘવંચને તેમ જ અર્થને મારે હાનિ પ્હોચી છે. આવા સર્વનાશનો પ્રસંગ ધંધાધારી વહિયા લેલકને હાથે નથી નીપજતો. છતાં એ અજાણતાં ફોદ્દ ચલત પઘવંધ રહેજે દૂષિત થઈ જાય છે. એવી મુસ્પષ્ટ હાનિના પ્રસંગમાં સંસ્કર્તાએ ઇંદ્રોગીધાના જ્ઞાનનો ડગરસંકોચે ઉપયોગ કરવો ઘટે છે. મટ્ટિકાવ્યના દસમા સર્ગનો ચૌદમો શ્લોક નીચે પ્રમાણે મુદ્રિત છે.

અથ લુલિતપત્રિમાલં રુગાસનવાણકેશરતમાલમ્ ।

સ વનં ચિવિક્તમાલં સીતાં દ્રુપ્દું જગામાલમ્ ॥

એના પૂર્વાર્ધના વીજા ચતુષ્કલ્પમાં એક મારા વધી પડે છે, તેથી ઇંદો-મંગ થાય છે. એ દોષ દૂર કરવાને અથ લુલિતપત્રિમાલં બદલ અથ. લુલિતપ-ત્રિમાલં વાંચવાની જરૂર છે. પત્રિન્ અને પત્રિન્ પર્યાય શબ્દ છે. સમા-

સમાં એકને વદલે વીજો સરતચૂકથી લખાયો લાગે છે. આવી જ રીતે કારણડ અને કારણડવ પર્યાય હોવાથી ભટ્ટિકાવ્યના તેરમા સર્ગના અદારમા શ્લોકમાં પહેલાને વદલે વીજો વાપર્યો છે, જેથી એક માત્ર વધી પડે છે. અહીં કારણડ પાઠાંતર આપેલ છે, તેના સ્વીકારથી ઉક્ત દોષ તરત દૂર થાય છે. એનો વાસ્તવો લેઈં ભટ્ટિકાવ્ય ૦ । ૧૦ । ૧૪ । માં પતત્રિ વદલ પત્રિ કલ્પવૂં જોઈં છે. વહુ હાથપ્રતોનો પાઠ છતાં એ અને વિદ્વાન ટીકાકારે તે સ્વીકારેલો છતાં એ, ઝપાડી આંખે ઠોકર લાવાનું કોણ પસંદ કરશે ? આવી લહિયાએ કરેલી મૂલો કાયમ રહે, તો પછી સંશોધનમાં હંદોવિદ્યાના જ્ઞાનનો ઉપયોગ ક્યાં કરવાનો રહ્યો ? ભટ્ટિકાવ્યનાં ઘનને ઉદાહરણ ઉપર નજર ફેરવતાં જ આંખમાં રજ લૂંચે છે; તે દૂર કર્યે જ સ્વટક મટે છે. આવા પ્રસંગમાં કોઈક વસ્તુ પદ્યવંધનો અમુક ભાગ વચમાં ગદ્ય આવ્યાથી છૂટો પડી ગયો હોય છે, ત્યારે તે વિદ્વાન સંસ્કૃતને પણ ગોથું સ્વ-રાવી દે છે. આવું સમરાઈચકહામાં એક વાર વન્યું છે. એ પ્રાકૃત કથા પ્રો. જેકોબીએ વહુ કાલ્જીથી સંશોધન કરી છપાવી છે. એનો મોટો ભાગ ગદ્યમાં છે. વસ્તુ વસ્તુ વચમાં હંદોવદ્ધ ભાગ પણ આવે છે. તે પૈકી એક પદ્યવંધે સંસ્કૃતને મૂલ્યવ્યા છે. પ્રો. જેકોબી આપણી હંદોવિદ્યાનું અસાધારણ જ્ઞાન ધરાવે છે. તે છતાં પણ એઓ મૂલ્યવણનો ભોગ થયા છે, તેનું સ્વલ્લ કારણ છે. પદ્યવંધના ભાગ છૂટા પડી ગયા છે; અને વચમાં ગદ્ય આવ્યું છે. એ ગદ્યને લીધે ઉત્તર ભાગ ગદ્ય ભેગો ગદ્ય લેલાયાથી પૂર્વ ભાગમાં પચની સમાપ્તિ થાય છે એવી આત્મિમાં એઓ પડ્યા છે. એનો પરિણામ એ આવે છે, કે પૂર્વ ભાગ ઉત્તર ભાગ સાથે જોડાવો જોઈં તે જોડાતો નથી અને હંદ ઓઝસ્વાતો નથી. એટલે કરીને એમને હંદ મૃગ્ય કહેવો પડે છે. પ્રો. જેકોબીને સમસ્યારૂપ નીવડેલો પદ્યવંધ સમરાઈચકહાના છસેં ચારમે પાને છે. એ પૃષ્ઠની પંક્તિ ૧-૩ માં પ્રસ્તુત હંદનો પૂર્વ ભાગ છે; તે પહેલાં ત્રણ ચરણનો વનેલો છે. તેમાં અનેક સમસ્યાઓ પૂછી છે. ઉત્તર ભાગ પૂર્વ ભાગથી

છૂટો પડી ગયો છે; તે પંક્તિ ૫-૬ માં છે. પૂછેલી સમસ્યાના ખુલાસા આ ઉત્તર ભાગમાં છે. અધુરા પદવંધનું એ ચોથું ચરણ છે. પદવંધના પૂર્વોત્તર ભાગ વચ્ચે ગદ્ય આલ્યું છે તેના મેગો પદાત્મક ઉત્તર ભાગે ગદ્ય ગણાઈ ગયો છે, અને પૂર્વાપર ગદ્યના અનુસંધાનમાં ગદ્યરૂપે છપાયો છે. એ ગદ્યમાં દટાઈ ગયેલા ચોથા ચરણનું અંત્ય પદ ત્રીજા ચરણને છેડે મૂલથી મૂકાયું છે, જેથી મૂલવળમાં ઘાટી હતું તે ઝમેરાયું છે; અને, પૃ. ૬૧૨ ની પંક્તિ ૧-૩ માં જ પદવંધ ત્રિપદાત્મક સ્વરૂપે પૂરો થાય છે, એવો મિથ્યા પ્રહ વંધાયો છે. રચના સમપ્રપણે ધ્યાનમાં લેતાં જણાય છે કે સમસ્યાના પ્રશ્ન અને ઉત્તર મઢીને એક સમચતુષ્પદ માત્રાવંધ થાય છે. તેનું પ્રત્યેક ચરણ અઠાવીસ માત્રાનું છે. છંદમાં કોઈ પણ સ્થલે મવ્ય યતિ છે નહિ. ચર્ચાસ્પદ પદવંધની મુદ્રિત અશુદ્ધ વાચના અને તે ઉપરથી મેં યોજેલી શુદ્ધ વાચના નીચે આપી છે.

(અશુદ્ધ)

- પંક્તિ ૧ કે કઠિણા ? નરિન્દ ! કા કસણા ? તેઓ કામુ સાસઓ ?
 ૨ ઉચ્છૂ કેરિસવ્વ ? કે ય અરહિયા ? કા હયહિગામિણી ?
 ૩ કે ધણુપરમુનહરમાયાવિસ. પ્પહાણયા ? જાણમુ
 ૫-૬ પત્યરામસીહામુરસપ્પવરાહલાવયા

(શુદ્ધ)

- ચરણ ૧ કે કઠિણા ? નરિન્દ ! કા કસણા ? તેઓ કામુ સાસઓ ?
 ૨ ઉચ્છૂ કેરિસવ્વ ? કા વયંસિયા ? કા હયહિગામિણી ? ।
 ૩ કે ધણુપરમુનહરમાયાવિસવિસણચન્નુપહાણયા ?
 ૪ પત્યરામસીહામુરસપ્પવરાહલાવયા જાણમુ ॥

આ મૂલવળ પ્રાચીન જૈન અને બૌદ્ધ મુત્તની પદ્યરચનાની મૂલવળને પડછે કાંઈ લેસ્વામાં નથી.

२६ आपणी पद्यरचना साथे कंड पण संबंध धरावतो होय, तो अंत्य-प्रास घरावे छे. मध्य प्रास तो केवळ शोभारूप छे. परंतु काव्यना समुद्धार-कार्यमां कोइ वखत ते अजव साहाय्य आपे छे. आनो दृष्टांत अस्वाभगतनुं अनुभवविन्दु पूरो पाडे छे. एमां आरंभक कुंडळिया पछीना प्रत्येक छप्पयनां पहेलां चार चरणमां मध्य प्रास शृंखलायमक रूपे योजेलो संभवे छे. परंतु मुद्रित प्रतोमां त्रीजा भागनां चरणोमां मध्य प्रास जोवामां आवतो नथी. ऊडी गयेल प्रास, जरा प्रयास करिये, तो सूझी आवे एवा छे. अनुभवविन्दुनी हाथ-प्रत नथी फार्बिससभाना संप्रहमां के नथी गूजरात घर्नात्रयूलर सोसाइटीना संप्रहमां. एनी त्रुटी दूर करवाना वे रस्ता छे. पाठ के प्रास भ्रष्ट के नष्ट होय, त्यां अर्थनी संगति अने वर्णनी मैत्री विचारवी. ए मार्ग लेंई उक्त काव्यनी संशोधित वाचना चालु व्याख्यानने छेडे परिशिष्टमां आपी छे^{४७}. तेनो एवो उद्देश छे के यमकसांकळीथी जोडायली कडीवाळां काव्यीना संशो-धनमां ए प्रयत्न दोरनार नहि, तो कदाच आंगळी देखाडनारे नीपजे.

२७ उपोद्घात आयी आवी बावतना निरूपणनुं स्थान नथी; एटले हूं अटकूं छूं. मूळ योजनामां में दश व्याख्यान आपवा धायूं हतूं. पहेला व्याख्यानमां फक्त पद्यनी घटना विशे, ते पछीनां चारमां ऋक्काल, आख्या-नकाल, सुत्तकाल अने काव्यकालनी पद्यरचना विशे, छठामां अपभ्रंश साहि-त्यनी अज्ञात पद्यरचना विशे, सातमा आठमां हिंदी मराठी तथा बंगाली पद्यरचना विशे अने नवमा दसमां गूजराती विविध निबद्ध अने अबद्ध पद्यरचना विशे हूं मारा विचार प्रदर्शित करवा इच्छतो हतो. परंतु अपभ्रंश पद्यात्मक साहित्य सारा प्रमाणमां छपायूं न होवानी मुस्कलीना कारणथी

४७ व्याख्यानो अपाई गया पछी प्रसिद्ध गुजराती साप्ताहिकना फेब्रुवारीना अंकमां दीवानवहादुर नर्मदाशेकर देवशेकर महेताना हाथे संस्कार पाभी गूजरात घर्नात्रयूलर सोसाइटी तरफथी प्रकाशित थयेल अस्वाकृत काव्यो, भाग १ उपर आवेला विवेचनमा उक्त साप्ताहिकना संप्रहमां अनुभवविन्दुनी वे हाथप्रत होवानी निर्देश जोई ए हाथप्रतो मेळनी परिशिष्टनी वाचना शोधी सीधी छे.

अने हिंदी मराठी तथा बंगाली साहित्यनो पूरतो अभ्यास करवानो अवकाश न होवना कारणथी ए योजना अमलमां मूकाय एम नथी एधूं मने जणायूं. ए संजोगमां मारा थोडाक विचार पद्यरचनानी घटनां साये जेम तेम जोडी दीघा छे. आ आरंभना व्याख्यानमां निबद्ध अने अवद्ध पद्यरचनानी जे शाखा-प्रशाखानी रेखा दोरी छे, ते सर्वे शाखाप्रशाखाना विकासनी ऐतिहासिक आलोचना करवानो जूनी योजनामां संकल्प हतो. ते तजी देई वारमा शत-कनी समाप्तिप अटकवूं पटचाथी ते अवधि पर्यंत ज आलोचना हवे पठीनां व्याख्यानोमां आवशे.

परिशिष्ट

अनुभवविन्दु

[कुडळियो]

परमधाम परमात्म हरि प्रथम करूं परणाम
 परमज्योती परब्रह्म, जांदां नहीं रूप ने नामः
 अणछतो थई परणमू. धर्णधू धाक्यधिलास
 मन धाणी पोदोचे नहीं; शू कही स्तवे दास ?
 निर्गुणमां गुण अणछता आरोपी अखे ओचयूं.
 ' सत्य सत्य परमात्मा, हू नहि ' पथी स्तुति करूं.

[छप्पय]

निर्गुण, गुणपति नाम, धाम धर १ गुणने आले.
 २ अच्युत, अंधरातीत, इंतनिलिगी निराले.
 आरोप्या ३ गुणे ईश, शीश डले जेने चमर;
 निकट रई अष्ट निधि निधि नव ने बहु अंमर.

सूचना—हवे पठीनी पाठातरनी टिप्पणीओमा क अक्षर साहित्यप्रेमी इच्छा-रामभाइए छपावेला चहूत्कारलयदोहन, ग्रंथ २ माना पाठ आपे छे, अने ख तथा ग, एमना साहित्यरसिक पुत्र नटवरलालभाइए पोताना समहमाथी स १८६६-६८ नो चोपडो तथा तेनाथी अर्वाचीन जणाती साल बगरनी चोपडी उपयोग मा लेवा आपेल, ते बेना पाठ अनुक्रमे नेपे छे उक्त क ख अने गथी जुदा पडता पाठ कल्पित छे. १ गुणनु (राम). २ स्तुति (क) ३ गुण (कराग).

- सुर, घोणाधर ते थके, चिच्छक्ति महा सुरस्वती.
 जमलो जाणी अखो स्तवे सर्वातीत सधनो पति. २
- अनुक्रमे फहूँ पद जेह छे प्रपंच पारि;
 तत्त्वमसि पद जेह, तेह फहूँ घाणी ऊचारी;
 कैवल्य, ईश्वर, जीव भेव फहूँ विविध विचारे,
 अंवरवत मन याय, जाय गुण तत्त्व न धारे.
 ज्ञानभक्तिवैराग्यधर बोले अखो घाणी अमल.
 भाषा ब्रह्मविचार विधि समझे तो नर जलकमल. ३
- जाणी ले जगदोश शीश सदगुरुने नामी.
 अवसर छे आ वार; सार श्रीपति भज स्वामी.
 ४ते ५जाधूँ नथी दूर; उर अंतर अवलोकि.
 टाल असत अहंकार, चार स्थल रह्यो ६इ रोकी.
 चरणकमल गुरुदेवनां सेवतां अखा ! हरि मले;
 अर्कतणा उदघोतथी अंधकार सघ ज टले. ४
- ७महापद तेह महंत संत ज सयाणा जाणे.
 लघुबुद्धिनो न लाग; वाग विचित्र बखाणे.
 मनसा वाचा काय पाय-घण पंथ विचरवो.
 सगुरो जाणे संच. पंचपर अनुभव धरवो.
 लिंगचतुष्टय घण अखा ! चिद्योनि, चिद्रूप, भयो,
 निरालंब, नर-नाग-सुर-अलग-रह्यो, सत् आवयो. ५
- नहीं तेज ने तोय दौय, नहि अघनी वा प,
 ८अंवर-आधूँ जेह, तेह निगम नेति गाये.
 ९त्रिगुण थकी ते शून्य, पुण्य नहि, पाप न धारे.
 रक्त पीत नहि श्वेत १०चित्त नहि नील विचारे.
 गति अयगति, ते तांहां नहीं. ११वाचा कई पेरे वदे !
 अंवरवत ते ईशने ओलख अखा ! सदगुरु रुदे. ६
- देशविदेश, १२दिनरात, जात नहि घण विचारे;
 दश खट अष्ट ने एक १३छेक परपंचनी पारे.

४ ते (क), जो (सग). ५ जोवें (सग). ६ जे (खग). ७ महामत छे (खग).
 ८ आकाशथी आधूँ (क), आकाश आवेकें (सग) ९ त्रिगुण नहीं (कखग). १०
 श्याम (क) ११ विचार (क). १२ न भात (क). १३ नेक (ख), मेक (ग).

भानु भुवन मध्य घास ऊजास अंतरयो आपे,
 एह जगत जंजाल काल माया शिर थापे.
 आप १४ इदु विध अयुषी अलग रसो १५ शलके अघल.
 सहज विलास श्रीहरितणो, समझ अखा ! घरते सकल. ७
 महपदनो प मरम, चरम घण १७ विन्मयदीसे-
 १८ जेमां बहु मुख लोक १९ विलोके विना अरीसे,
 दीपकनो एक देह तेहयो थाय अनंता,
 घस्तुयी विश्व उत्पन्न, अन्य नहि आप नियंता.
 चौद लोक २० चिद विस्तर्य, अवर-आयं प लक्ष्म,
 अखा ! आपविस्तार २१ विच जगत, भेद जाणो, यक्ष. ८
 अवनोनों कहूं अर्थ. २२ व्यर्थं रखे अघसर खोता;
 २३ सीहेलो ते समझाय, काय मन स्थिर कर, धोता !
 मृत, भुवन, वृक्ष, धातु सात २४ रस आदिक रूपे,
 स्थावर जगम जातभात २५ अति सूक्ष्म अणु पे,
 सुर, नर, नाग, वैकुण्ठ लगी दृष्टे दीसे जे सह,
 अथनी एक, तेम प अखा ! आत्मा २७ व्यापी रसो बहु. ९
 धळी कहूं दुष्टांत, शांति मन सुणतां पामे.
 पुरुषे करियं सैन, नेहेन २८ जमी जागृति घामे.
 घड्यो 'स्वप्नसंसार, २९ पार घण प्रौढो राजे.
 हय, हस्ती, ३० धरनार, चाग ३१ प्रिय पुत्र धिराजे.
 लक्ष कोटि रूपे अखा ! जंत एक जेम विस्तर्यो,
 सर्वातीत एक आतमा प पेरे सभरो भयो १०

१४ अदु इदु विधे (कखग) १५ जल्ययी (क) १६ विनोद (ग) १७ चिदना (क),
 चिदमे (खग) १८ अवलोक्ये बहु लोक (क), ज्यम अवलोक्ये बहु लोक (खग) १९ जेम
 मुख विना अरीसे (क), मुख विना माअ अरीसे (ख), मोक्ष वन मोहे
 अरीसे (ग) २० लगी (क) २१ विध (कखग) २२ वृषा (कखग) २३ सहेजे
 ले (क) २४ करी (खग) २५ वास्नादिक (क), वसनादिक (खग) २६ सूक्ष्म
 सूक्ष्म अणु रूपे (ग) २७ व्यापियो (खग) २८ जेम (क), जम (ख), ज्यम (ग)
 २९ पारजे पौढयो (क), पार विना प्रौढो (ख) पार विना पुत्र (ग) ३० नहि
 पार (कखग) ३१ श्री (ख)

वारिधिफेरुं वारि ३२चार दिश मध्ये चाले;
पृथ्वी पर पयराय. ३३वनराय फूले फाले.
ऊगरतुं रडे अंयु, ३४शंभू ढली आये ढाले;
ते नदी नाम धराय; न्हाय सहु, ३५बहु महिमा लेहे.

गर्भभरी गाजे अखा ! शरू न ३६जुप सरिता सही.
जेम सागर, तेम श्रीहरि. वच्चे जीधनदी ३७घदी. ११

जीध यते जंजाल काल माया घश पडियो,
पितृदेव गृहदेव सेघनी ३८दृढ जडे बडियो.
धन दारा सुत मात तात जीविका घश घरते;
अधिकन्यूनता जोय, तोय छूटे नदि मरते.

अणसमजे अहमेवघश मरम न ३९जाणे मंढयी
प्रपंच मांढ पच्यो. अखा ! ४०सर्पयिषे घणसे दधि. १२

अकस्मात् ऊलाल कालनोगे देहकरणी,
तेम आत्मउद्धोत, ज्योत ४१देहमध्य आवरणी.
जाहारे ऊपजे भाष साव ज स्थतंतर थावा,
प्रगटे भक्ति विराग; माग जडे निज घर जाया.

चरणकमल गुरुदेवने शरण ४२जतां सूध ऊपजे.
४३सेवतां सायुज्य तांहां अखा ! पामी ले घर विजे. १३

सान समी केहे संत, जंत हरि देखे जमलो;
४४ऊंजतां जेम ४५जाय काययी काशल कमलो.
४६अहमेव बर्जित अंग. लिंग लय थाये; लेखे.
सगला शमे विकार. पार ४७नर पामे, पेखे,

३२ सकळ दिशामां (क), चार दिसो दिश (खग). ३३ वनराजी (क).
३४ सर्व (क), सग (ख), साग (ग). ३५ महिमा भाले (कखग). ३६ लहे (क).
३७ यई हुं घदी (क), यई वही (खग). ३८ वणजे (क). ३९ समजे (कखग).
४० सर्प परसे (क), सरपीसमे (ख), सरपरसे (ग). ४१ मध्ये (क), ४२ जतां
चिद (क), जयूं (सय). (खग). ४३ सदगुरु परम शुध शोधतां (क), सेवतां
साभोज्य ता (ख), सेवतां सावोज तहां, (ग). ४४ उज्ज्वलता (क). ४५ थाय,
थाय जो (क). ४६ आम्हे वरते (ख), आमे वरतजे (ग). ४७ मन (कग).

आलोचें अंबर विधे, लीन धाय लक्षे करी,
जंत जाय निज आलये ४८ जाल प अखा ! परहरी. १४

जेम ४८ जाय ऋतु जलद, शरद ऋतु रूडी दीसे;
५० दामिनीदमक पलाय; धाय ५१ हलधे मन हीसे;
५२ चाहुदिश चमके चंद; धंद नहु मननूं भागे;
तेम भागे भयघ्रांति ५३ कांति द्वितीयानी आगे.

विमल यपु होये घळी, चतुर लिंग देखे, लहे;
चिदाकार चिन्मय अखा ! ध्याताध्येयसमरस रहे. १५

जेम दीपक ते घट्टि, घट्टि दीपक नदि दोये;
सेवक स्वामी, जाण, याण ५४ कहैधाने हाये;

जेम सूरज ने किरण; चरण शिर मुख जेम देहने;
तेम छे आ व्यषदार, पार छडे, जुप तेहने ५७.

लोषन्मुक्त केहेयाय अखा ! घचन न लागे ते स्थले.

गुरुगमे आलोचतां ५८ सहजपणे सरये कले. १६

कांहांथो कांहां प जाय^१-कांय नदि^२ कशी^३ य वेहेया.

घचन ज जांहां न समाय, जाय को केहेने लेहेया^४
कांहां छे ते वण ठाम धामथी दूर ६० के नेडो^५

कांहां छे केहेया आघ, मध्य कांहां छे, कांहां छेडो^६

कांइ अथकाश न ते विना, अधिक न्यून नदि. शूं करूं^१-

शायी शूं फाडूं^२ अखा ! शामां शूं लागी भरूं^३ ! १७

कोहोने कहुं हूं मरत, तरत जो जीवत देखूं^४

कोहोने कहुं हूं स्थूल; मूल जो सूक्ष्म पेशूं^५

४८ अखा ! जाल सर्वे (क), जाल अखा राख (राग) ४९ वर्षा ऋतु होय (कग), वर्षाकाल होय (ख), ५० दामिनी दोडी (कग), चौनु डोडोल (ख) ५१ मन हलध्या (क), वायु मद हलुवा (खग) ५२ चासन (रा). ५३ कांति जेम द्वितीया (क), कात दुतो जम (ख), कात होय कीती (ग). ५४ कहैवानी (क) ५५ सन्मुख (क) ५६ छेहे (क) ५७ तेहे (क) ५८ सहज पडे (ख), स्वजल पडे (ग) ५९ तहां न (क), ता न (ख), ज तहां (ग), ६० कहुं (राग) ६१ ऊच के नीच क्या छे मध्य के छेजे (कखग)

कोहोने कहूं महाभाग्य, ^{१२}जाग्य, नहि हीणो केहेवा ?
 कोहोने कहूं हूं नीच, ऊंच स्थल को नहि रेहेवा ?
 वेत्ता घण ^{१३}वेजा विना कोण अखा ! कोहोने कहे ?—
 जाहां नहि शब्दोच्चारविधि, चिदाकाश ^{१४}चिद महा लहे. १८
 नहि लेहेनारो कोय. दोय नहि ^{१५}दिलने धरवा.
 एयं अचरज तहीं जे ^{१६}नहीं पंथ विचारवा.
 जाहां नहि शब्दोच्चार, सार छे ताहां ज ^{१७}सहरावा,
 उपाउपांतर तहीं छे नहीं कांइक साहावा.
 आप मरंतां ताहां अखा ! सेहेजे सेहेज ^{१८}सहराइये.
 लेखे लिंग लागे थके ^{१९}अणबोल्यूं शूं गाइये ? १९
 रुदन करे वन मांइ, तांइ कोण ^{२०}तेहने घारे ?
 तेम जाणवां धर्मकर्म. शो अर्थ ते सारे ?
 तिमिर ^{२१}भरी नर पात्रमात्र जेम ^{२२}एह ऊलेचे,
^{२३}जेम कुसुम-आकाश ^{२४}तास को घर घर वेचे,
 तेम अध्यातम ज्ञान घण ^{२५}कृत्य सकल जाणे, अखा !
 मदमति मानी रखा करता दीसे पखपखा. २०
 को ^{२६}कीर्तन ते गानतानने साधन माने,
^{२७}वर्णाश्रम-अभिमान-ध्यान असमंजस कोने,
 को साथे अष्टांग, सांग कायाकृत्य जाणे;
 को करे ^{२८}पूजन देघ, सेव ^{२९}अधिक ते प्रमाणे.
 ए सहू ^{३०}कायाकलेष छे, ^{३१}मनमलीनता ए सही.
 अखा ! तक्रना पानथी ^{३२}अन्नबुद्धि ऊपजे नहीं २१

६२ लाग (क) ६. विज्ञान (क) ६४ चिदमा (कग), चिदम (र) ६५ दिलमा
 (क) ६६ छे (कग) ६७ सरगा (क), गरवा (ग) ६८ सराइये (कग), सराइय (ग)
 ६९ घण बाल (क) ७० करता (गग) ७१ भराने पात्रघनी जन (कगग) ७२ रखा
 (कग) ७३ जेम वा (रग) ७४ लही (क) रखो (रग) ७५ कम (र) ७६ करता
 दीसे गान (कग) ७७ वा वर्णा.. अभिमानपान . माने (रग) ७८ पूर्व (क)
 ७९ अधिकता आग (कग) ८० ए जजाळ (क) ८१ मनमान्यता (र)
 मनमानीता (ग) ८२ अंग ताप (क), अलता (र), अत्प युध्य (ग)

को पड्दर्शन - ज्ञानी, घाणी जिहाने अग्ने,
ईश्वर थई पूजाय; गाय जस नग्ने नग्ने.

८३को काहावे चिरकाय, पाय पृथ्वीपति लागे.

को काहावे दानेश, ईशकर्णादिक - आगे.

८४तहां लगी जाणे अखा ! शमी न सगली घासना.

लिंगतो भंग थया घिना सर्वे, मननी उपासना. २२

भूतभविष्यनी घात शात फोड कही आले.

को ८५केहे त्रिभुवननाथ दाय मुख बीडी घाले.

८६को केहे सुर त्रेत्रोस ईश ने भज देखाडूं ८७.

को करे मीठी काय, ८८जाय अंडकटाह फाडघ.

तोये ते जाणे अखा ! मायाप मर्कट कर्या.

घासनादोरी कठमां. ८९कालनाट सायमां कर्या. २३

ते माटे जन जाण ! वाणी ले ९०विध शूं विचारो.

न्होय प कवित गीत. ९१द्वैत खो मूल संसारो.

जे कापे निज भग, भंग करे चतुर देहनो,

ते छे खांडूं पह. छेह ९२ले जोई तेहनो.

गुह्यतणी दृष्टे अखा ! गेहेन ९३सहु प घामिये,

जेम आख्यनूं पारखूं खांड शूं खातां पामिये. २४

सर्वे माया जाण, आण मन मूलमे ठामे.

आपथी धीजूं जेह, तेह छे विघ्न ज धामे.

राजपुत्रनो न्याय, उपाय तहां तेह करघो.

ज्येष्ठ ९४कनिष्ठक भ्रात तात लगे घांछे मरघो.

ते माटे अभ्यास तूं अखा ! करी ले प विधे,

द्वैत तणो ९५अध्यास छे ते टाळें, ९६जेम कायू धुये. २५

८३ कोय कवीश्वर घाय (क) ८४ तोंहे ते (ग) ८५ कहावे (क) ८६ कोइक सुर (क) ८७ देखाडे (क) ८८ अंडकटाह ज पाडे (क). ८९ कालनाटय साथे (क) ९० विविध (क) ९१ द्वैतनू (क) ९२ जे जुये तु (क), ले जोई (ग), ले जइ (ग) ९३ सर्वे (कगग). ९४ कनिष्ठ होय (गग). ९५ अभ्यास (कग) ९६ लय (कग).

देखे त्रिभुवन-ईश, ९७वसा घीस माने माया.

देखे तूँ सिद्धिघंत, अंत नहि अंमर काया.

जे तूँ देखे स्वर्ग, यगी ९८लेहे एह मायानु.

उत्तम ९९संत महंत, १००सांत प कृत्य कायानुं.

पसयूँ सहु संकेलजे. मने मान्युं मिथ्या यशे.

अग्वा! पम आलोचतां सुरत सथ सतमां हशे. २६

मोटा मंदिर १०३महीं तहीं छे काच ज ढाल्या.

नील पीत बहु १०४रंगरगना भेदो भाल्या.

ऊग्यो १०५ऊगमणो सर दुरथी अंतर झलके;

देखाडे बहु रूप धूप विविध पेर चलके.

अखा ! उपर अथलोकतां तहां तेमनुं तेम छे.

पम त्रिलोकी जाणजे, वस्तु घटे १०७प पम छे. २७

नथ १०८भूले हुं घाटि; नाट सहु जाणे खोहूं.

पिंड तेवूं ब्रह्मांड; छांड १०९सही न्हानुंमोहूं.

सूक्ष्म तेवूं स्थूल; स्थूल सूक्ष्म नहि अंतर.

नारीकुंजर चीरि धीर थई जुप पटंतर.

पूतली जोतां बहुलता ११०पटतलमां हटे पटे.

१११विराट हस्ती ते, अखा ! दीसे बहुलता प घटे. २८

११२पथी भाघो चाल. हाम घाल आप ११३खोवा.

छांड पिंड ब्रह्मांड ११४पंडिता ! नथी को जोघा.

९७ तोय विश्व विश्वा (क). ९८ जाणे (क), सहु एह (र), सर्व ए (ग).

९९ मध्यम वात (कय). १०० शात ए (क), सांत तोहे (खग). १०१ ए ज

(क), ए (रग). १०२ सहज तनमां (क), संग तनमे (ग). १०३ बहार चार दिश

(क) १०४ रंगरंगना (क). १०५ शशी कां (क), शशी के (रग) १०६ अतिशे

(क). १०७ एक (क) १०८ भूजेन (कय). १०९ सहु (कग), सरव (ग). ११०

पूतलिका (कय), पटतल कहां (ग). १११ हस्ती तेम विराट (कय), हस्ती ते

विराट (ग) ११२ एकथी (क). ११३ खावा (क) ११४ धूल...जावा (क).

जोध ने ईश्वर दीय फोय नयी एणे ११५ धामे.
 स्त्रीकुंजर दृष्टांति जंत ईश्वरने ११६ ठामे.
 ११७ कैवल्य तल. तेने अखा। युद्धिवल पोहोचे नहीं.
 प ११८ स्थूलनूं दृष्टांत कायूं फो धीमंत शके ग्रही. २९
 जेम पर्यतनी ११९ मोड, मोट, तेनी ते १२० घाटे,
 होय फोस दसघोस, १२१ दीसि तोय निकट नाटे;
 १२२ तेघटे तेघडी तेहः मह १२३ छे ममं ग्रहणी,
 १२४ लांदां न घोलया लाग, पाग १२५ ना छवे कर्मनी.
 एम, जाणीने रेदे अखा ! लिंगभंग सेहेजे दरो,
 अन्य उपाय जंजाल छे ते टाल्ये प्रौढं थरो. ३०
 साधन १२६ सार यिचार १२७ चार, युद्धि जो शोधी.
 हूं नहि तूं नहि, तेह १२८ एह. १२९ ग्रहमूक विरोधी.
 गुरु था तारो तूं ज. १३० जूजघो फो नथी भजया.
 १३१ यदियुद्धि तूं टाल, याल अंतर १३२ पेश जया.
 जेम छे तेमनूं तेम १३३ छे. थयूं गयूं कांइ नथी,
 १३४ अखा! आप आनंदघन प १३५ स्वरूप जोयूं मथी. ३१
 प अनुभव परमाण १३७ जाण जे राखे हृदये,

११५ ठामे (क). ११६ धामे (क). ११७ कैवल्यतामों को (कग),
 कैवल्यतामे को (ख). ११८ स्थूलसूक्ष्मदृष्टांतने (क). ११९ मोड दीसि (क),
 मोडम दीसि (राग). १२० माटे (कख), मोटो ग. १२१ तोय निकट एय नाटे
 (कखग). १२२ ते वडे दीये (कखग). १२३ परम परिव्रहो (क). १२४
 नहीं (क). १२५ छेरे नहीं कर्म (क). १२६ रायें. (वराग). १२७
 युद्धिधी जोने (क). १२८ तेह नहीं (क). १२९ घर (कखग).
 १३० नथी चीजो फो (कग.) १३१ बाण सूत (क). १३२
 अंतरमां सेवा (क), अंतर पेशवा (खग). १३३ अखा (कखग). १३४
 आपे आप (कख), आपोआप (ग). १३५ स्वरूप (कग). १३६
 जोयूं 'मथी' (क), जोयूं कथी (राग). १३७ जाणी जे (क), जाण जो
 ख, जाणी जो (क).

१३८ समझते समझाय, जाय गेहैन अक उदये. १३९

ए अनुभव कद्यो ईश, शीशि नमो पूछये उमया. १४०

ए भाखियो वसिष्ठ; तुष्ट तांहां रघुपति बनिया. १४१

ए अनुभव शुकदेव शूं जनक विदेहे भाषियो.

ए अनुभव नारदे अखा ! वेदव्यास प्रति दाषियो. ३२

१४५ एह कद्यो परब्रह्म; ब्रह्मानी हूती पूच्छा; १४६

ए अनुभव कद्यो हंस; अंश सनकादिक प्रीछ्या. १४७

ए अनुभव कद्यो वेद, भेद जे चौदमे कांटे.

एह कद्यो शुकदेव; भेव सुणियो ब्रह्मांडे.

ए अनुभव १५०परिपूर्ण छे, ठाम न ठालो हरि विना;

सुर असुर मानव अखा ! ए समझ्या वण निर्धना. ३३

ए अनुभव कद्यो कृष्ण, प्रभ्र जो पूछूं अजुन;

गीता अमृतपान, ज्ञानगंगा १५१मध्य मज्जन.

ए अनुभव कद्यो भीष्म धर्म प्रत्ये पर्व शान्ते.

एह कद्यो अवधूति शिष्य सुत प्रति एकांते.

अखा ! एह अनुभव खरो, जेणे महाजन नीपना.

लिंगभंग १५२ विना साधन कालनी खेपना १५३. ३४

१५४ह्योय अज्ञानं दोष, भोळ्य घृत नाये शतरथा.

१५५फूलीकरो आहार फार दीसे बहु वितर्या.

१३८ समझता (कग) १३९ निश (क). १४० भाख्यो (कखग),
१४१ नामी (ग). १४२ अनुभव कद्यो (कखग) १४३ यई (क),
हवा (खग) १४४ विनया (खग). १४५ ए अनुभव (कखग). १४६ कपिल
(क . १४७ दिल देवहृति इच्छा (क), जेम ब्रह्मा सत प्रीछ्या (खग)
१४८ ब्रह्म (क), अज (खग) १४९ पूछ्या (खग). १५० भरपूर (खग).
१५१ जळ (क), कीय (खग). १५२ थया (कखग) १५३ सेवना
(क), १५४ एक (क), जेम (खग). १५५ जेम फुलीनी (कखग).

१५६ घदरीनो वेपार, सार शूं ऊगरे तेहने ?
 १५७ जे झाकलजल गथे, अर्थ शूं आवे मेहने ?
 अणलिगी अनुभव यिना साधन सगलां जे कथां,
 १५८ तेह अर्कफल १५९ शां असा ! तूल थई ऊढी गयां ! ३५
 पारमनो धनयंत, अंत धनकेरो नाथे.
 वस्तु न को दुप्पाप, १६० आप भावे ते खावे.
 रथिरथ वेसे जेह, तेह तांदां मथे देखे.
 पंखी मले लख झोड, झोड नहि अमलज लेखे.
 महा अनुभव आगल अखा ! पृत्य सकल लेखे नही.
 परग्रहणी झोडता, ते रसना शू शके कही ? ३६
 प छप्पा छरीस ईश अमनूं छे जीवन.
 पह सुधारस १६१ पथ देव-अंशीनूं पोवन.
 पह तथ उपदेश लेश लही जे जन धारे,
 होय हरिनो अथतार; सार १६२ करी तेहज तारे.
 घट मध्ये आकाश घट धरते ते १६३ सत्तार मधे.
 १६४ अप्यारोपे केहे अखी. जाण ते जाणे प थिधे. ३७
 जण्यो नथी को जन, तन शूं कालूं गोरूं ?
 १६५ केहेनां कहिये माततात, जो न मले छोरु ?
 छते अणछती १६६ घात घात आवे तो आवे.
 धांअतणो सुत जेह, तेह जीती रण फावे.
 अखा ! अकथ छे प कथा. समझु नर समझी जशी.
 महा अनुभव आकाश घट, क्षेत्र १६७ सारूं ते ऊगरी. ३८
 जे सुणसे नर नार, नार वस्तु १६८ ह्ये थाशे.
 ब्रह्म दिमाळो जेह, देह १६९ तेहमां गली जाशे.

१५६ जेम घदरीनो (कखग). १५७ जेम झाकलनी वृष्टि (कखग) १५८ अर्कनु
 फल (क), जेम अर्कफल (खग) १५९ शोमे (कखग). १६० राय पेरे ज्यम भावे
 (क), प्राप्त भोग जे जे भावे (ख), (प्राप्त) छे जे भावे (ग) १६१ पान
 (क) १६२ मही (कखग) १६३ रागारी (कखग). १६४ ए आरोपी
 (कखग). १६५ केना कहुं मात तात जनम जो (क). १६६ घाट घाट (क.)
 १६७ सरयो (क) १६८ ते राहरी (क). १६९ जळनी (कखग).

पधने जाय वरास १७० अनायासे, जेम ऊढे;
 तेम ए ब्रह्मविचारसार पाभे १७१ संत गुढे.
 जे जाणो, ते जाणजो, युद्धिमाने ए ओचर्ये.
 निमित्त माघ अखो कहे, जे जाणे तेणे कयूं. ३९
 आद्य अंत ने मध्य युद्धिथो जुए विचारी,
 ते ते कैवल्य ब्रह्म; १७२ चर्म न्होय नर ने नारी.
 छप्पा ए छत्रोस १७३ दीस छे १७४ भ्रमनी निशानो.
 १७५ चार फलस्तुति. १७६ लेश वेश ते ब्रह्मदशानो.
 सर्व मली चालीस अखा ! समझी जे उरमा धरे,
 चिदानंद चिद्रूप ते; १७७ श्रीमुखथो हरि ऊचरे. ४०

१७० आद्य कीधा वण (क), अयस कीधा विना (र).
 १७१ संत गुढे (क), सदगुढे (र), सतगुणे (ग). १७२ भ्रम न ले (क).
 १७३ दीस छे (क), दीस छे (राग). १७४ भ्रमनी शानो (क), भ्रमनी
 शानो (ग). १७५ चार नखा फलस्तुति (क), चार नखा फलस्तुति (ग).
 १७६ लेश ते ब्रह्मदशानो (क), लेश ते ब्रह्म दिशानो (र), लेश से ब्रह्म
 दिशानो (ग). १७७ श्रीहरि मुखथो (क).

पद्यरचनानी ऐतिहासिक आलोचना.

ददं कविभ्यः पूर्वैर्भ्यो नमोवाकं प्रशास्महे ।

विन्देम देवतां वाणीममृतात्मनः कलाम् ॥^१

पायिंये, पूर्व कविने नमी, अमर एमनी

फलारूपे उरे मूर्ति स्फुरो वागीश्वरी तर्णी ।

दृष्टिपात २.

ऋकाल.

१ संस्कृत भाषामां श्रुति जूनामां जूनूं साहित्य छे. मंत्रब्राह्मणामक श्रुतिमां ऋग्वेद अप्रस्थान धरावे छे. चारे मंत्रसंहितामां सौधी प्राचीन ऋग्वेदनी संहिता छे. पद्यरचनाना इतिहासनो अभ्यास करवा इच्छनारने ते ज संहिता परम महत्त्वनी छे; केमके आखी ए संहिता विविध छंदमां रचायली छे. यजुर्वेदनी संहितानां यजुस् अने निगद गयमां छे; एमांनो पयामक भाग ऋग्वेदमांथी उक्ततां छे. सामवेदनी संहिताना आर्चिक अने उत्तरार्चिक ए वे खंडमां जे ऋचाओ संगृहीत छे, ते पण लगभग बधी ए ऋग्वेदनी संहितामांथी लीधेली छे; एदछे पयामक छनां पण ए संहिता पद्यरचनाना संबंधमां कंद नवीन प्रकाश पाडतो नथी. अथर्ववेदनी संहितानो त्रयी विद्यामां समावेश थतो नथी. शांतिकपौष्टिक मंत्रोनो ए संग्रह भाषामां अने पद्यरचनामां बीजी त्रणे संहिताथी अर्वाचीन छे. ऋग्वेदमां निबद्ध नहि, एवो नवीन छंद अथर्ववेदनी संहितामां जोवामां आदतो नथी. आ रीते श्रुतिमाहियना पद्यबंधनी आलोचना ऋग्वेदमां ज पर्याप्ति पामे छे. पद्यरचनानी उपति शी रीते धई, तेगे केवूं न्यल्प धारण कय, तेनो विक्रम

केवोऽने केटलोऽथयो, तेऽविषयमां आपणे ऋग्वेदनी संहिताऽपर ज दृष्टि
ठेरवधी पढे छे.

२ ए तो सुविदित सत्य छे के प्रथम साहित्य उत्पन्न थाय छे अने
पछी तेना संग्रहनो चारो आवे छे. भगवान महावीर अने बुद्धनी धर्मधोष-
णानो काळ इसवी सन पूर्वे पांचमूं शतक छे. परंतु बौद्ध त्रिपिटकनी घटना
ते पछी वसें वर्षे थवा पामे छे. कंठस्थ जैन-आगम तो बहु मोडो, इसवी सनना
पांचमा शतकमां ग्रंथस्थ बने छे. ऋग्वेदसंहिता अने तेमांनी ऋचानी
उत्पत्तिनी वाचतमां पण तेम ज छे. ऋचाओनो रचनाकाळ संग्रहकाळथी
बहु पुराणो छे. एनी प्राचीनता निश्चितपणे आंकवी अत्यारे अशक्य छे.
परंतु तेना पूर्वोत्तर अवधि सूचवी शक्य छे. ऋग्वेदनी पद्यरचना अवेस्ता-
मां ऊतरी आवी छे, तेऽघात ध्यानमां लेतां ऋग्वेदना देवपूजकथी अवेस्ता-
ना आतशपरस्त विखूटा पड्या, ते समय एनो उत्तर अवधि ठरे छे. बळी,
हिंदजर्मनीय कुटुंबनी भाषाओ बोलनाराना पूर्वजो अभिन्न वासमांथी छूटा
पड्या अने केटलांक टोळां युरोपमां जई बस्यां, ते समय उक्त साहित्यनो
पूर्व अवधि अंकाय छे; केमके हिंदइरानीय पद्यरचना तेमना अने तेमना
वंशजोना साहित्यमां दृष्टिए पडती नथी. ए वाचतमां आगळ विवेचन
आवशे. निर्दिष्ट ए वेऽअवधिना गाळाने हूं ऋक्काल नाम आपूं छूं अने ते
गाळामां प्रगटेला साहित्यने ऋक्सहित्य संज्ञाथी ओळखाववा मागूं छूं.

३ ऋचा (सं. ऋच्) एटले अर्चतनो-प्रार्थनानो मंत्र. ऋग्वेदनी
ऋचाओ बधी ए छंदोवद्ध छे. छंद(सं. छन्दस्)मां एक करतां वधारे
पद किंवा चरण आवे छे. पदना मापनूं धोरण एक ज छे, वर्णनी
संख्या. वर्णनो मेळ ए जूनामां जूनो अने सरळमां सरळ मेळ होई ऋग्वेद-
नी पद्यरचनाना मापनूं धोरण थवा योग्य ज-छे. पृथ्वी उपर कोइ पण जूना
के नया साहित्यमां एनो जोटो नथी. ऋक्सहित्यनो वर्णात्मक पद्यबंध एक-
अनोखो ज पद्यप्रवाह छे.

૪ વર્ણમેઢ્ઢનું મંડાણ જે વર્ણ, તે ઇંદોવિધાની પરિભાષામાં માત્ર સ્વરને જ લક્ષિત કરે છે. વ્યંજનનો સ્વરની મદદ વગર પૂરેપૂરો ઉચ્ચાર થતો નથી. સંપૂર્ણ ઉચ્ચાર સ્વરનો જ શક્ય છે. તે કારણથી વ્યવહારમાં વર્ણ વોલ સ્વરનો નિર્દેશ કરે છે, જો કે વ્યાકરણમાં તે સ્વર અને વ્યંજન ઉભયનો વાચક છે. કોઈ પળ શબ્દના કેટલા વર્ણ કે અક્ષર છે તે જાણવું હોય, તો સ્વરનું લેખું થાય છે, વ્યંજનનું નથી થતું. ઇટલે કરીને આ વ્યાખ્યાનમાં વર્ણ શબ્દે કરીને સ્વરનું પ્રહણ અભિપ્રેત છે. વર્ણના હું વે ભેદ પાહું છું, કેવલ અને વિવર્ધિત. અનુસ્વારનો, વિસર્ગનો કે અધુરા વ્યંજનનો વઢ્ઢગાડ વઢ્ઢયા વગર જે હ્રસ્વ સ્વર મૂલ સ્વરૂપે રહે, તે કેવલ વર્ણ. ઢીર્ઘ સ્વરની પ્રકૃતિ હ્રસ્વ સ્વર હોવાથી વિલંબન વિધાનથી સિદ્ધ થયેલા ઇ સ્વરને તેમ જ વઢ્ઢગાડના આકારમાં થયેલા વધારાવાઢ્ઢા હ્રસ્વ સ્વરને વિવર્ધિત નામ મેં આપ્યું છે. વર્ણ અક્ષર અને વરઢી વોલ આ વ્યાખ્યાનમાં પર્યાય છે. વર્ણામઠ્ઠ પદ્યની પંક્તિ સ્થિર અને ચર ભાગની વને છે. પહેલામાં કેવલ કે વિવર્ધિત જે વર્ણ જે સ્થલે ઇટ હોય, તે જ ત્યાં મૂકાય છે. વીજામાં કેવલ અને વિવર્ધિત પૈઢી ગમે તેનો પ્રયોગ થઈ શકે છે, તે કારણથી ઇ ભાગ ચર કહેવાય છે. વર્ણવંધની ઘટનામાં ઉપયોગી વીજ ણ છે. કેવલનો ક, વિવર્ધિતનો વા અને ચરનો ચ. કોઈ પળ વર્ણવંધની ડઢવળી આ ણ વર્ણમાતૃકાના સ્વરૂપમાં સાચ્ય છે.

૫ ઋગ્વેદમાં વર્ણામઠ્ઠ પદ્યવંધના ણ પ્રકાર છે; ઇક તો શુદ્ધ ઇંદનો, વીજો મિશ્ર ઇંદનો, અને ત્રીજો પ્રગાધનો. જેનાં વધાં ઇ ચરણ ઇક જ માપનાં હોય, તેને વિદ્વાનો શુદ્ધ ઇંદ તરીકે ઓઢ્ઢસાવે છે. વીજમૂત ચરણ હું ણ જ ગર્ણુ છું, પાંચ વર્ણનું, આઠ વર્ણનું અને અગિયાર વર્ણનું. શ્રુતિસાહિત્યની પચરચનાની ઇક વિશિષ્ટતા નોંધવાની જરૂર છે. મુકરર કરેલો વર્ણસંત્યા કરતાં ઇકાદ વર્ણ પદમાં ઓઢો હોય અથવા ઇક વે વધો હોય, તો નભાવી લેવાય છે. ઋક્ષાલના ઋષિઓ વીજી પગ કેટલીક ઢૂટ મોગવે છે;

जेवी के अर्धस्वर यकार वकारनू संप्रसारण करी आवश्यक वर्णसंख्या पूरी करवानी, व्याकरणसिद्ध रूपना अंत्य आ बदल अवा उच्चारी पूरती वर्ण-संख्या आणी मेळववानी, पदांत विरामना संकेतथी अंत्य टूँका उच्चारना वर्णने लांबो उच्चारवानी, वगैरे. आर्ष पद्यरचना समजवा माटे आ आर्ष दृष्टि अपेक्षित छे. ए दृष्टिए उक्त बीजभूत पदोमांथी छंदोनी उत्पत्ति विचारिये.

६ उपर गणावेलं पांच आठ अने अगियार वर्णनां चरण किंवा पदने हूं अनुक्रमे वैराज, गायत्र अने त्रैष्टुभ, एवां नाम आपूं छूं. तेमांना पहेला पदथी बनेला छंदनूं उदाहरण संहिताना चोथा मंडळना दसमा सूक्तनी त्रीजी ऋचा पूरूं पाडे छे, जेने हूं केवला विराजू कहुं छूं. ते नीचे प्रमाणे छे.

ए॒भि॒र्नो॑ अ॒कै-
भ॒वा नो॑ अ॒र्वाङ्
स्व॑र्ण॒ज्योतिः॑
अ॒ग्ने॑ वि॒श्वेभिः॑
सु॒मना॑ अ॒नीकैः॑ ॥

ऋचाना त्रीजा पदमां त्व बदल सुअ समजी लेई पांच वर्णनी संख्या पूरी करवानी छे; अने पांचमा पदमां एक वर्ण वधारे छे, ते नभावी लेवानो छे. ए ज सूक्तनी नीचे आपेली पहेली ऋचाना पूर्व भागमां त्रण वैराज अने उत्तर भागमां एक त्रैष्टुभ पद छे.

अ॒ग्ने॑ त॒मया-
श्वं॑ न स्तौ॒मैः
क॒तुं न॑ भ॒द्रम् ।

हृ॒दि॒स्पृ॒शं॑ ऋ॒द्ध्या॑ मा त ओ॒हैः ।

वीजभूत वे, वैराज मदना सळंग पाठधी वननारां वे मदनो द्विपदा विराज
 नामे छंद वने छे. पहेला मंडळनूं छासठमूं सूक्त एनूं उदाहरण छे. संहितानी
 अक्षरतूं लेखूं करवानी पद्धतिने अनुसरी एनी ऋचा दस गणी सायणाचार्य
 मुखपाठनी लेखनपद्धति प्रमाणे पांच ऋचा लखे-छे. तेवी-ज वेवडी आंकणी
 नीचे आपेला संहिताना पहेला मंडळना सित्तेरमा सूक्तनी ऋचाओनी पण
 भाष्यमां पण नोंधवामां आवी छे.

वनेमं पूर्वोरथा मनीषा अग्निः सुशोको विश्वान्यश्याः । (१)

आ देव्यानि व्रता चिकित्वाना मानुषस्य जनस्य जन्मं । (२)

॥१॥

गर्भो यो अपां गर्भो वनानां गर्भश्च स्थानां गर्भश्चरथाम् । (३)

अद्रौ चिदस्मा अन्तर्दुरोणे विशो न विश्वो अमृतः स्वाधीः । (४)

॥२॥

स हि क्षपांवाँ अग्नीरंयीणां दाशद् यो अस्मा अरं सूक्तैः । (५)

एता चिकित्वो भूमानि पाहि देवानां जन्म मतांश्च विद्वान् । (६)

॥३॥

वधीन् यं पूर्वीः क्षपो चिरुपाः स्थातुश्च रथममृतप्रवीतम् । (७)

अराधि होता स्वं? निपंतः कृण्वन् विश्वान्यपांसि सत्या । (८)

॥४॥

गोषु प्रशस्ति वनेषु धिपे भरन्त विश्वं वलिं स्वर्णः । (९)

वि त्वा नरः पुरुत्रा संपर्धन् पितुर्न जिघ्रे वि वेदो भरन्त । (१०)

॥५॥

साधुर्न गृध्नुरस्तेव शूरो धातेव भीमस्त्वेपः समत्सु । (११)

॥६॥

ઋક્ષાલે દર્શાવેલા વિચારતાં નિષ્કર્ષ એ નીકળે છે કે વૈરાજ પદ મૂળે પાંચ વર્ણનું હશે; તે ઉપરથી દ્વિપદા વિરાજનું દસ વર્ણનું પદ ઋક્ષાલમાં જ ઉદ્ભવ્યું હશે, તે મુલપાઠમાં પાઠ્યથી વીસ વર્ણનું અંકાયું હશે. આવેસ્તિક વૈરાજ પદ પાંચ જ વર્ણનું છે, તે મારા તર્કનું સમર્થન કરે છે^૨.

૭ અત્રે સંહિતાના દસમા મંડલના એકસો ચોતેરમા સૂક્તના છંદ વિશે થોડીક સમજુતી આપવાની મને જરૂર જણાય છે. એ સૂક્તમાં ચાર જ ઋચા છે. તે વિશે ભાષ્યકાર લખે છે કે ચારે વીસ વીસ વર્ણની દ્વિપદા વિરાજ છે. એ કથન પ્રાચીન પદ્ધતિને અનુસરીને છે. વાસ્તવિક રીતે જેને-મેં ઉપર વૈરાજ પદ કહ્યું છે તે ચારે ઋચા પૈકી એકમાં છે જ નહિ. પ્રત્યેક ઋચા એક ગાયત્ર પદ અને એક જાગત પદની બનેલી છે; એટલે કે પૂર્વ પદ આઠ વર્ણનું અને ઉત્તર પદ બાર વર્ણનું છે^૩. તે પદ મળી આશ્વા છંદના વીસ વર્ણ થાય, તે લેખે એને જૂની પરિભાષાનું વર્ગબોધક દ્વિપદા વિરાજ નામ ભાષ્યમાં આપ્યું છે. પૂર્વે શુદ્ધ છંદ, મિશ્ર છંદ અને પ્રગાથ એ જો-ત્રણ પ્રકાર હું કહી ગયો, તે પૈકી ચર્ચાસ્પદ સૂક્ત મિશ્ર છંદમાં છે. એને આ નવી પદ્ધતિમાં વૈરાજ પદના દ્વિપદા વિરાજ છંદનું ઉપર જે નિરૂપણ કર્યું છે, તે જાગુ-પડી શકે નહિ. સૂક્ત નીચે આપું છું. તે વિચારવાથી આ વિષયમાં કંઈ પળ ભ્રમ કે ગેરસમજ ઉદય થવા પામશે નહિ.

આ યાંહિ વનસા સહ ગાવઃ સચન્ત વર્તનિ યદૂધમ્ભિઃ ॥૧॥

આ યાંહિ વસ્ત્યાં ધિયા મંહિ ષ્ઠો જારયન્ મંસઃ સુદાનુમ્ભિઃ ॥૨॥

૨ જુઓ ચાલુ વ્યાખ્યાનને છેટે આપેલું અવેસ્તાકની પચરચના વિશેનું પરિશિષ્ટ.

૩ આ સૂક્તની ઋચામા જ્યારે પહેલું ગાયત્ર અને ધીજું જાગત પદ છે, ત્યારે આઠમા મંડલના ઓગણત્રીસમા સૂક્તની ઋચાઓમા પહેલું જાગત અને ધીજૂ-ગાયત્ર પદ જોવામાં આવે છે. અહીં પણ ભાષ્યમાં દ્વિપદા વિરાજ સંજ્ઞાથી છંદનો નિર્દેશ છે.

પિતૃમૃતો ન તન્તુમિત્ સુદાનંવઃ પ્રતિદધ્મો યજામસિ ॥૩॥

૩૫ અપ સ્વસુસ્તમઃ સં વર્તયતિ વર્તનિં સુજાતતાં ॥૪॥

૮ પ્રસંગવશાત્ છેદનોના વર્ગીકરણની પ્રાચીન પદ્ધતિ અને મેં યોજેલી નવીન પદ્ધતિ, એ વેના ભેદ વિશે ખુલાસો કરવો હૃષ્ટ છે. નવીન પદ્ધતિ આજથી પા સદી ઉપર વીજી ગૂજરાતી સાહિત્ય પરિષદ માટે તૈયાર કરેલા મારા 'પદ્ધરચનાના પ્રકાર' નામે લેક્ચર્માં ઝપજાવી હતી^૧; અને સાંપ્રત આલોચનામાં તેને હું અનુસરું છું. પ્રાચીન પદ્ધતિમાં, આર્યો છેદ એકમ તરીકે લેઈ વર્ધા પદોના કુલ વર્ણ ગણતાં જે સરવાળો આવે, તેને અનુસરેને એનું વર્ગીકરણ સધાય છે. એમાં પદનું સ્થાન ગૌણ છે. એ પદ્ધતિ કંઠા ઉત્તર્યા વગર અર્થ સાધનારી યોજના તરીકે ઠીક છે. પરંતુ, અમુક ભાષામાં અમુક પદ્ધરચનાના વીજમાંથી અનેક શાખા પ્રશાલાવાલું મનોહર પુષ્પફલની સમૃદ્ધિવાલું વૃક્ષ શી રીતે વિસ્તાર પામ્યું, તેની પ્રતીતિ એ પદ્ધતિથી થતી નથી. પદ્ધવંચની સંપત્તિ, ભાષામાં કેટલા છેદ પ્રયુક્ત છે અથવા પ્રસ્તારથી શક્ય છે, તેની ગણતરીથી મપાતી નથી. પણ સાહિત્યમાં વપરાયલા છેદો પૈકી કયા કયા છેદમાં સ્વરી સર્ગશક્તિ સ્ફુરે છે અને કયા કયા છેદ અમુક મૌલિક છેદ ઉપરથી જોડો કાઢવામાં આવ્યા છે, તેના વિવેકથી જ એ સંપત્તિ અંકાય છે. છેદોનાં પણ ગોત્રો છે, ગોત્રપુરુષો છે, વંશવિસ્તાર છે, વંશાનુકીર્તન છે. છેદોવિધાના પ્રાદુર્ભાવ અને વિકાસનું દર્શન નવીન પદ્ધતિએ જ સાચ્ય છે. એ કારણથી પદને વાજુ ઉપર રાણી આલા છેદની આંકણી અને વર્ગણી કરવા વદલ મેં છેદને વાજુ ઉપર રાણી પદ કિંવા ચરણ ઉપર દૃષ્ટિ ઠેરવવી યોગ્ય ધારી છે, અને પદને જ છેદના નિરૂપણના એકમ તરીકે સ્વીકાર્યું છે, જો કે છેદનાં મામ તો જૂનાં જ નમાવી લીધાં છે. પ્રકૃતિવિકૃતિનો ભેદ સ્ફુટ થવા ઉપર આપેલા વૈરાજ પદના વિવરણમાં પાંચ વર્ણના પદને વીજમૂત અને દસ વર્ણના દ્વિપદા વિરા-

જૂના પદને તેમ જ વીસ વર્ણના મુખપાઠાત્મક પદને ઉક્ત વીજમાંથી ફૂટેલા ફળગારૂપ ગણેલ છે. પંચવર્ણ વૈરાજ પદ પ્રકૃતિ છે અને દસ તથા વીસ વર્ણનાં પદ તેની વિકૃતિ છે. દસમા મંડળના એક સો બોતેરમા સૂક્તની ચાર ઋચાના છંદનો વૈરાજ ગોત્રમાં અંતર્ભાવિ નથી કર્યો તે પણ છંદોવિદ્યામાં સર્ગ-શક્તિનો આર્વિર્ભાવિ માપવાના અને વાસ્તવિક છંદસમૃદ્ધિ આંકવાના ઉદ્દેશથી 'પદ્યરચનાના પ્રકાર'માં ડપજાવી કાઢેલી પદ્ધતિને અવલંબીને જ.

૯ ઋક્સાહિત્યની પદ્યરચનાનું વીજૂં વીજમૂલ પદ જે ગાયત્ર, તેનો ગાયત્રી છંદ વને છે. એમાં આઠ આઠ વર્ણનાં ત્રણ પદ આવે છે. ઋગ્વેદ-સંહિતાનું આદિસૂક્ત આ છંદમાં છે. તેની પહેલી ઋચા ગાયત્રી છંદના ઉદા-હરણ તરીકે નીચે આપું છું.

અગ્નિમીઢે પુરોહિતં

યજ્ઞસ્થં દેવમૃત્વિજમ્ ।

હોતારં રત્નધાતમમ્ ।

સંવ્યોપાસનામાં સવિતાને અર્ધ આપવાનો વહુ જાણીતો મંત્ર પણ ગાયત્રી છંદમાં છે. એ ઋચાના દેવતા સવિતા ભગવાન છે, તેથી તે સાવિત્રી કહેવાય છે. ગાયત્રી અને સાવિત્રી પર્યાયશબ્દ નથી. એકમાં છંદનો અને અન્યમાં દેવનો સંકેત છે. સંહિતાનો લગભગ ચોથો ભાગ ગાયત્રી છંદમાં છે.

૧૦ ચાર ગાયત્ર પદનો અનુષ્ટુભ્ છંદ વને છે. એનું ઉદાહરણ નીચે પ્રમાણે છે.

યત્ પર્જન્ય કનિઃકદત્

સ્ત્નયન્ હંસિં દુષ્કૃતઃ ।

પ્રતીદં ચિશ્વં મોદતે

યત્ કિં ચં પૃથિન્યામધિં ॥૫। ૮૩। ૯॥

ગાયત્રી અને અનુષ્ટુભ્ છેદની આંતર ઘટના લગભગ સરખી છે. અનુષ્ટુભ્ છેદની ઉત્પત્તિ ગાયત્રી છેદમાંથી થઈ છે. ગાયત્રી પ્રકૃતિ છે અને અનુષ્ટુભ્ તેની વિદ્યુતિ છે. સંહિતાનો વારમો ભાગ અનુષ્ટુભ્માં છે.

૧૧ વર્ણાત્મક પદ્યરચનાનું ત્રીજું પગથિયું ત્રૈષ્ટુભ પદ છે, તેનો ત્રિષ્ટુભ્ છેદ વને છે. અગિયાર અગિયાર વર્ણનાં ચાર પદ, તે ત્રિષ્ટુભ્. દ્વિજનામ-ધારીની પ્રાત સંવ્યાના સૂર્યોપસ્થાનનો મંત્ર જે નીચે આપવામાં આવ્યો છે, તે ત્રિષ્ટુભ્ છેદનું ઉદાહરણ છે.

ચિત્રં દેવાનામુદંગાદનોકં

ચક્ષુર્મિત્રસ્ય વરુણસ્યાગ્નેઃ ।

આપ્રા યાચાશ્ચિવી અન્તરિક્ષં

સૂર્યં આત્મા જગતસ્તસ્થુષ્ઠ્વ ॥૧।૧૧।૫।૧॥

વહ્વૃચોના એતરેય બ્રાહ્મણના વીજા અધ્યાયના ત્રીજા સ્વંડમાં ચાર પુસ્તની ઉપાસના વહી છે, તેમાંના મહાપુરુષની ભાવના જે સૂર્યમાં કરી છે તે ઉપરના મંત્રને અવલંબીને છે. ત્રિષ્ટુભ્ છેદ ઋક્ષાલમાં સૌથી વધારે છોરુ-પ્રિય હોય એમ જણાય છે. સંહિતામાં એનો વપરાટ ગાયત્રી છેદથી લગભગ પોણા બે ગણો છે.

૧૨ ત્રિષ્ટુભ્ છેદમાંથી જગતિનો આધિર્માન થાય છે. વાર વાર વર્ણનાં ચાર પદથી આ છેદ નીપજે છે. અગિયાર વર્ણના ત્રૈષ્ટુભ પદમાં વારમો વર્ણ ઝમેરતાં સવાદ જાઝવવા અગિયારમા લાવા ઉચ્ચારના વર્ણ બદલ ટૂકા-ઉચ્ચારનો વર્ણ ગોઠવવો આવશ્યક છે. અગિયાર વર્ણના પદો મેગૂં વાર વર્ણનું પદ અને વાર વર્ણનાં પદો મેગૂં અગિયાર વર્ણનું પદ મેઢબ્યાના દૃષ્ટાત સૂચવે છે, કે ત્રિષ્ટુભ્ અને જગતાની ઉચ્ચારણા અભિત છે. જેમ અનુષ્ટુભ્ છેદ ગાયત્રીની વિદ્યુતિ છે, તેમ જગતી પણ ત્રિષ્ટુભ્ની વિદ્યુતિ છે. સંહિતાનો લગભગ આઠમો ભાગ જગતી છેદમાં છે. એનું ઉદાહરણ—

યમેરિરે ધૃગવો વિશ્વવેદસં
નામાં પૃથિવ્યા ભુવનસ્ય મજ્મના !

અગ્નિં તં ગીભિર્હિનુહિ સ્વ આ દમે

ય ઇકો વસ્વો વરુણો ન રાજંતિ ॥૧૧૪૩૧૪॥

૧૩ પૂર્વોક્ત ગાયત્રી, અનુષ્ટુભ, ત્રિષ્ટુભ અને જગતી એ ચાર ઋગ્વેદ-સંહિતાના પ્રધાન છંદ છે. લગભગ નવ હજાર ઋચાઓ એ છંદમાં રચાયેલી છે. વીજા છંદમાં ગૂંથાયેલી ઋચાની કુલ સંખ્યા માત્ર દોઢ હજાર જ છે. વૈરાજ, ગાયત્ર અને ત્રૈષ્ટુભ, એ આર્ચિક પદ્યરચનાના મૌલિક પ્રકાર છે. હિંદ-ઇરાનીય ભાષાશાસ્ત્ર પૈકી ઇરાનીય પ્રાચીન વાણીમાં પારસી માઇઓના અવેસ્તા નામે ધર્મપુસ્તકમાં પ્રસ્તુત ત્રણ પ્રકારની પદ્યરચનાને મઝ્તી પદ્યરચના આપણું ધ્યાન રેંચે છે. એમાં અષ્ટવર્ણ પદના, એકાદશવર્ણ પદના અને દ્વાદશવર્ણ પદના મંત્રો મળે છે. એ બધા પદસંખ્યાના વંધન વિનાના શુદ્ધ વર્ણ-વંધ છે. વંધે ધાર્મિક સાહિત્યના પદ્યાત્મક વાહનની આ સમાનતા નિઃસંશય-પણે સૂચવે છે કે પ્રાચીન દેવપૂજક અને આત્મપરસ્ત વંધુઓ અવિભક્ત જનતાના સ્વરૂપે પૂર્વે અભિન્ન નિવાસમાં રહેતા હશે, ત્યારે ઉક્ત ત્રણ મૌલિક પદની પદ્યરચનાનો સંયુક્ત પ્રજામાં પ્રચાર થઈ ચૂક્યો હશે, અને આત્મપરસ્ત ટોચે જુદું પદ્ય ત્યારે ઉક્ત પદ્યરચના પણ તેના સાથમાં રહી હશે.

૧૪ વૈરાજ પદ ગાયત્ર અને ત્રૈષ્ટુભ પદથી વર્ણસંખ્યામાં જેમ ટૂંકું છે, તેમ ઉત્પત્તિના ક્રમમાં જૂનું છે. શ્રુતિની પદ્યરચનાનો સામાન્ય સ્થાપિત સિદ્ધાંત છે કે પદ અને તેનો છેલ્લો શબ્દ—વંધે સાથે પૂરાં થવાં જોઈએ. પદ પૂરું થાય ત્યાં પદનો છેલ્લો શબ્દ પણ પૂરો થવો જ ઘટે. પદની સમાપ્તિ એ અંતિમ શબ્દના કડકા પાટી એક કડકો પૂર્વ પદમાં અને વીજો ઉત્તર પદમાં ભેદ શકાય નહિ. સંધિના લીધે જે સંધાણ થયું હોય તે કાઢી નાંચી, પૂર્વ પદનો છેલ્લો અને ઉત્તર પદનો પહેલો શબ્દ—એ વંધે છૂટા પાટીને જ

તે તે પદના વર્ણની ગણતરી કરવી વૃહુધા વિહિત છે. ઉલ્લિખિત સિદ્ધાંતનું ઉલ્લંઘન દ્વિપદા, વિરાજ્ઞ હંદ્રમાં ત્રણ વાર થયેટું છે. એ ત્રણ પ્રસંગ જાતે નિર્ધારવાની મને 'અનુકૂલતા' મઝી નથી. તેથી યુરોપીય વિદ્વાનના કથનને અનુસરીને તેના આધારે હું 'અટકલ' વાંધું છું કે ઉક્ત વિરાજ્ઞ પદવંધ ડહ્ધવી વપરાતો થયો હશે, ત્યારે, પદાંતે વિરામનો સિદ્ધાંત સ્થાપિત થયા હશે નહિ; કેવલ સંવાદી વર્ણરચના ઉપર જ ધ્યાન અપાતું હશે. ઇતર છૂટના મેગી વિરામના અનાદરની છૂટ પળ તે ફાઝના ઋપિઓ મોગવતા હશે. વીજા કોહ પળ આર્થિક હંદ્રમાં નહિ, ને વિરાજ્ઞમાં આ છૂટ લેયાતી જોવામાં આવે છે; તેથી વૈરાજ પદરચનાની, અર્થાત્ વિરાજ્ઞ હંદ્રની ઉત્પત્તિ વિનઅપવાદે પદાંતે વિરામ સ્વીકારનારા ગાયત્રી આદિ વીજા વધા હંદ્રના પૂર્વે થયેલી હોવી સંભવે છે. આ વ્યાચયનાના ઉત્તરાંગ રૂપે પુરુષમૂક્તનું વિવેચન આવશે, તેમા આદ્ય પદરચનાનો વિષય ફરી ચર્ચાશે.

૧૫ ગાયત્રી આદિ હંદ્રના ચરણની સમાપ્તિએ આવેલો વર્ણ દ્વિસ્વ હોય, તો પળ તે સ્વાભાવિક રીતેજ દીર્ઘ બોલાઈ વિવર્ધિત થતો હતો; તેથી પદાંતે વિરામના સંકેત માટે વિવર્ધિતની યોજના મૂલે થઈ જણાય છે. પટ્ટીથી 'દ્વિર્વદ્ધં સુવદ્ધમ્ ।' એ ન્યાયે એક જ વર્ણમાં નહિ પળ છેલ્લા બે વર્ણમાં અને તેથી આગલ વધી ત્રણ વર્ણમાં એ સંકેત રૂઢ થયો જોવામાં આવે છે. સદર સંકેત સૂચવનાર વર્ણને હું સ્થિર વર્ણ કહું છું. વૈરાજ પદનો સ્થિર વર્ણ એક જ વા છે. ગાયત્ર પદમાં ઋવા તેમ જ વાવા સ્થિર વર્ણ તરીકે લેવાય છે, જેમા વધારે ઉપયોગ કવાનો થાય છે. ગાયત્રી હંદ્રમાં સાઠ સિચેર ટકા અને મિશ્ર હંદ્રના તથા સંમિશ્ર પ્રગાથના ગાયત્ર પદમાં સો એ સો ટકા ઋવા પદાંત નજરે પડે છે. અનુસ્તુભૂ હંદ્ર ગાયત્ર પદનો બનેલો છે. તેના સમ પદમાં વિરલ અપવાદ વાદ કરતાં સર્વત્ર ઋવા પદાંત યોજેલો જોઈયે હિયે, ત્યારે વિપમ પદ ઋવા પદાંત ઉપરથી વાવા પદાંત તરફ ઢલ્લતાં જાય છે. એ યોજનાનું ગૌરવ કેટલેક ફાલે મુગવાન વાલ્મીકિને નૂતન રૂપરચનાના અવતારમાં પ્રતીત

શાય છે; તે આપણે ત્રીજા દૃષ્ટિપાતમાં જોઈશું. ત્રિપ્ડુભ્ ઇંદમાં વહુધા કવાવા અને જગતીમાં વાકવા પદાંત વને છે. પદાંતના આ સાંકેતિક વર્ણ સિવાયના પદગત વર્ણ અસ્થિર છે. સ્થિર વર્ણનો ચર વર્ણથી વિવેક, એકવડી અને વેવડી ઝમી લાંટીની પેઠે, માત્ર પદાંતના સંકેતની વુદ્ધિથી કરવામાં આવ્યો છે, નહિ કે રૂપવુદ્ધિથી. જો મંત્રદ્રષ્ટાઓને રૂપવુદ્ધિ સ્ફુરી હોત, તો ત્રિપ્ડુભ્માંથી ઉપેન્દ્રવજ્રા તથા ઇન્દ્રવજ્રા અને જગતીમાંથી વંશસ્ય રૂપવંધ કચારના એ રચાયા ન હોત ? તેમના જન્મ માટે તો આપણે આલ્યાનકાલ સૂધી તપવું પડે છે.

૧૬ હવે પદાંતના અપવાદ વિચારિયે. વૈરાજ પદનો જે વા પદાંત કહ્યો છે, તેનો અપવાદ સંભવતો જ નથી. ગાયત્ર પદમાં કવા તથા વાવા વંને શક્ય પદાંત સ્વીકારી લીધા છે, એટલે કરીને ગાયત્રી ઇંદનાં ત્રણે પદમાં અને અનુપ્ડુભ્નાં વે વિપમ પદમાં અપવાદનો અવકાશ છે નહિ. પરંતુ અનુપ્ડુભ્ ઇંદનાં ઉભય સમ પદમાં એકલો કવા પદાંત અભિમત છે; તેનો એક અપવાદ છે. પુરુપસૂક્તની અગિયારમી ઋચાના ચોથા પદમાં એ અપવાદ લક્ષ લેવે છે. 'કા ઋઠ પાદાં ઉચ્ચેતે' એ પદને છેડે રૂઢ ધોરણ પ્રમાણે પદાંત કવા જોઈએ, તેને વદલે વાવા છે. ત્રૈપ્ડુભ પદના કવાવા પદાંતનો એક અપવાદ, સંહિતાના ત્રીજા મંડલના પાંતરીસમા સૂક્તની અગિયારમી ઋચાનું ત્રીજું પદ જે '(અં)પીચ્યં વર્ધતે નપ્તુરપામ્' છે, તેમાં મઠી આવે છે. અહીં કકવા પદાંત યોજેલ છે. જાગત પદના વાકવા પદાંતનો અપવાદ મારા ધ્યાનમાં નથી.

૧૭ ઉપર આપેલા અને તેના જેવા ત્રીજા અપવાદનો સંભવ ક્યારે, કે ક્યારે પદાંતમાં વિરામ પૂરતી જ વુદ્ધિ હોય ત્યારે, એટલે કે રૂપવુદ્ધિ સંકેતિત ન હોય ત્યારે જ. રૂપના સંકલ્પપૂર્વક રચાતા કાવ્યકાલના કોઈ પણ રૂપવંધમાં લઘુ રૂપને સ્થાને ગુરુ રૂપ અને ગુરુ રૂપને સ્થાને લઘુ રૂપ કદી પણ વાપરી શકાતું નથી. ભિન્ન રૂપનો પ્રયોગ થાય, કે ઇંદની સંજ્ઞા એની એ ન જ રહે; ભિન્ન સંજ્ઞા પડે જ. આલ્યાનકાલમાં પ્રગટેલા અને આજ પર્યંત વપરાતા ઉપેન્દ્રવજ્રા અને ઇન્દ્રવજ્રા ઇંદ જ વિચારિયે. વંને ઉચ્ચારણામાં

વધી રીતે મલ્લતા છે. ઘટનામાં અગિયાર રૂપ પૈકી દસ ઉભયમાં સમાન છે. પણ એકમાં આઘ રૂપ લઘુ છે અને વીજામાં ગુરુ છે, તે કારણથી એ બે છદ્ધ રૂપબંધ તરીકે વિભિન્ન લેવાય છે. ઋક્ષાલિત્યમાં તો પદના છેડાના બે વળ વર્ણ વદલાય છે, તે છતાં છંદનો તેના તે જ નામે વ્યવહાર થાય છે. તેનું કારણ, મિન્ન મિન્ન પદાંતના વર્ણમાં વર્ણવુદ્ધિ છે—રૂપવુદ્ધિ નથી, એ જ છે. જો પદાંતના સ્થિર વર્ણમાં રૂપવુદ્ધિ ઉદય પામી હોય, તો છંદની એની એ સંજ્ઞા રહે જ નહિ. આવી સમજથી, મંત્રદ્રષ્ટાને રૂપવુદ્ધિ સ્ફુરી ન હતી, એમ હું કહું છું; અને ઋક્ષાલના છંદને નરહાસિલ વર્ણબંધ જ લેવું છું.

૧૮ ઉક્ત કથનની સત્યતા અર્વાચીન પરિચિત પદ્યરચનાના દર્ષાતથી સ્પષ્ટ થશે. પદાંતનો વ્યવહાર આપણા વર્ણબંધમાં અને માત્રાવધમાં પણ ઋક્ષાલિત્ય છે. વર્ણાત્મક પદ્યરચનાના ઉદાહરણ તરીકે કવિ દલપતરામના પિંગલમાંથી નીચેના બે છંદ લેઈ લેઈ.

ઋક્ષાલ કહે, 'આ સમામાં વાંકાં અંગવાળાં મુંડાં
મૂતલમાં પક્ષીઓ ને પશુઓ અપાર છે.
ઘગલાની ડોક વાંકી, પોપટની ચાંચ વાંકી,
કૂતરાની પૂંછડીનો વાંકો વિસતાર છે.
વારણની સૂંઢ વાંકી, વાઘના છે નરહ વાંકા,
મૈંશને તો શીશ વાંકાં શીંગડાંનો માર છે—'
સાંભળી શિયાલ ઘોલ્યો (દાસે દલપતરામ),
'અન્યનું તો એક વાંકું; આપનાં અઢાર છે!'

પ્યારા પિયુજી ! ,પરાઈ પ્રીતની પ્રતીત તજો.
વીસરતાં વીસરતાં વીસારી વીસરી જાય.
ફૂલેલાં દેખીને ફૂલ ફોગટ ફૂલાયુ નહિ;
ફૂલની સફાઈ તો ફર્યે દિવસે ફરી જાય.

पीतळनो, प्रीतनो, पतंगनो, पोथीनो रंग
 नवो नवो नव दिन सुधी हैयुं हरी जाय. ८
 च्हाईने चडाविये, तो चारगणो चडयो जाय;
 उत्तरवा दैये तो उत्तरतां उत्तरी जाय.

आमांनो पहेलो छंद मनहर अने बीजो घनाक्षरी छे. पहेलाना पदना अंतमां
 सद्गत कवि गानूं (अर्थात् आपणा वानूं) अने बीजाना पदना अंतमां
 गानानूं (अर्थात् आपणा वावानूं) विधान करे छे. परतु तेमां वास्तविक
 वर्णवृद्धि छे, रूपवृद्धि नथी. शार्धा जे वने छंदनी गणना वर्णबंध तरीके थाय
 छे, वर्ण अने रूपना मिश्रणथी थयेला मिश्र छंद तरीके थती नथी. हवे मात्रा-
 त्मक पद्यरचनाना दृष्टांत तपासिये. तेने माटे दलपतपिंगळमांथी लीवेल
 नीचेना उतारा बस थशे.

मन ! तुं मूर्ख चाळा मेल.
 खटपट-खेलमां शिद् खेल ?
 धर तुं धरणिधरनुं ध्यान.
 मन ! तुं मारि शिक्षा मान.

पाडोशणने 'आटो आपो', घरनां चाटे घंटी !
 छोकरडां तो छाश पिण ने वावो भागे बंटी !
 स्वारथियां छे एवां सघळे. जीवतणी नहि जाणे,
 पर्वत जेथी परनी पीडा अंतरमां ते आणे.

तुं जीव ! सर्वने मित्र जाण.
 पूरण प्रकारथी प्रेम आण;
 भीतरथी टाळ ज वैरभाव,
 तज द्वेष वलेशकारी वनाव.

ઋક્ષાલે પળ ઇંદ અનુક્રમે ઉદ્ધોર ચોપાયા અને પદ્ધરા કે પદ્ધરીના નામે જાણીતા છે. પહેલામાં પદને અંતે માલ, ત્રીજામાં ગાગા અને ત્રીજામાં લગાલ છે. એના ત્રિપાનમાં પળ રૂપની. પાઠઠ વાટ, બાવા અને હવાહના આકારમાં માત્રાવુદ્ધિ જ ટોકિયાં કરે છે. પદાંતને રૂપાત્મક તરીકે માત્રાની ગણનામાંથી અલગ રાખતા નથી; આવા પદનો માત્રા ગણવામાં આવે છે. ત્રણે ઇંદ માત્રાબંધ જ લેવાય છે. માત્રા અને રૂપના દેહીતા સંમિશ્રણને આગઠ કરીને મિશ્ર ઇંદની સંજ્ઞા મુતેમને નથી. એ જ રૂઢિને અનુસરીને ઋક્ષાલના ઇંદોના પદાંતમાં હું વર્ણવુદ્ધિ જ જોઠું છું, રૂપવુદ્ધિ સ્વીકારી શકતો નથી.

૧૯ યુરોપીય વિદ્વાનો આઠ અને તેથી વધારે વર્ણના પદના ભાગ પાઢે છે. પળ મારી નજરે તેની ઉપપત્તિ જણાતો નથી. ગાયત્રી વગેરે ઇંદોનાં પદ ભાગ પઢ્યા વગર સઠંગ જ વોલાય છે. દક્ષિણી અભંગ વંગાઠી પયાર અને હિંદીગૂજરાતી કવિતમા વર્ણોનાં જૂથ વંચયલાં જોવામાં આવે છે, તેવાં જૂથ વંધાવાનો અસર પળ પદવંધના એ ઉદયકાઠમાં છે નહિ. આવી સમજથી વિદેશી વિદ્વાનોએ ગાયત્ર આદિ પદના પાઢેલા ભાગનું હું અહીં નિરૂપણ કરતો નથી.

૨૦ શુદ્ધ ઇંદનું પદસંલ્યાત્મક વધારણ, પદની વર્ણસંચાત્મક રચના અને પદના અંતભાગની વર્ણવુદ્ધિકૃત વિશિષ્ટ સ્થિતિવર્ણાત્મક ઘટના, એ ત્રણ તત્વના નિરૂપણ પછી મિશ્ર ઇંદની આલોચના વહુ સરઠ ધર્મ પઢે છે. પરોષ્ણિહ, પુરુષ્ણિહ, કકુભૂ, વૃહતી, સતોવૃહતી, અતિશકરી અને અત્યષ્ટિ, એ મુત્ય મિશ્ર ઇંદ છે. એ સાતે અષ્ટવર્ણ ગાયત્ર અને દ્વાદશવર્ણ જાગત પદના મિશ્રગથી બને છે. પરોષ્ણિહમાં પહેલાં વે ગાયત્ર અને તે પછી એક જાગત પદ આવે છે. ઉદાહરણ—

અગ્ને વાજસ્ય; ગોમંત—

ઈશાનઃ સહસો યહો ।

अस्मे धेहि जातवेदो मही श्रवः ॥ १ । ७९ । ४ ॥

पुरउष्णिह प्रथम एक जागत अने पछी बे गायत्र पदधी-धाय ।
उदाहरण-

अप्स्व ? न्तरन्तमप्सु भेषज-

मपासुत प्रशस्तये ।

देवा भवन्त वाजिनः ॥ १ । २३ । १९ ॥

पहेछंद अने त्रीजूं गायत्र पद अने ए वेनी वच्चे जागत पद, ते ककु
छंद. उदाहरण-

अधाहीन्द्र गिर्वण

उप त्वा कामान् महः संसृज्महे ।

उदेव यन्त उदभिः ॥ ८ । ८७ । ७ ॥

परोष्णिह, पुरउष्णिह अने ककुभ् ए त्रणे छंद त्रण त्रण पदना हं
प्यारे वृहती अने सतोवृहतीमां चार चार पद आवे छे. त्रीजूं-पद जागत अ
बाकीनां गायत्र आणवाथी वृहती छंद बने छे. उदाहरण-

शचीभिर्नः शचावसू

दिवा नक्तं दशस्यतम् ।

मा वां रातिरुपदसत् कदां चना-

स्मद्रातिः कदां चन ॥ १ । ३९ । ५ ॥

विपम पद जागत अने सम पद गायत्र राखवाथी सतोवृहती नीपजे ।
उदाहरण-

जनांसो अग्निं दधिरे सहोवृधं

ह्रविष्मन्तो विधेम ते

स त्वं नो अथ सुमना इहाचिता

भवा वाजेषु सन्त्य ॥ १ । २६ । २ ॥

अतिशकरी, अने अत्यष्टिमां पदनी संख्या वर्धने सात थाय छे. छटूं पद जागत अने वाकीनां गायत्र ते अतिशकरी. उदाहरण-

सुपुमा यांतमद्रिभिः-
 गौश्रीता मत्सरा इमे
 सोमांसो मत्सरा इमे।
 आ राजाना दिविस्पृशा-
 स्मना गन्तमुप नः।

इमे वां मित्रावरुणा गवांशिरः

सामाः शुक्रा गवांशिरः ॥ १। १३७। १ ॥

पहेलं बीजूं तथा छटूं जागत अने वाकीनां पद गायत्र, ते अत्यष्टि. उदाहरण-

स नो नेदिष्टं ददृशान् आ भरा-

त्रे देवेभिः सचनाः सुचेतुनां

महो रायः सुचेतुनां

महि शविष्ठ नस्कृधि

संचक्षे भुजो अस्यै।

महि स्तोत्रभ्यो मघवन्त्सुवीर्यं

मथीरुग्रो न शर्वसा ॥ १। १२८। ११ ॥

२१ शुद्ध अने मिश्र छंद पछी, विचारणीय त्रीजो प्रकार प्रगाथने नामे जाणीता संमिश्र छंदनो छे. एमा वे छंद नौधूं छू. काकुभ प्रगाथ अने वार्हत प्रगाथ. पहेलो ककुभ अने सताबृहती ए वे मिश्र छंदनो वने छे, एतले एमां सात पद होय छे. उदाहरण-

आ नो अश्वावदश्विना
वर्तियीसिष्टं मधुपातमा नरा ।
गोमद् दक्षा हिरण्यवत् ॥
सुप्रावर्गं सुवीर्यं सुष्टु वार्य-
मनाधृष्टं रक्षस्विना ।
अस्मिन्नावामायाने' वाजिनीवस्तु
विश्वां चामानि धीमहि ॥८।२२।१७-१८॥

वीजो प्रगाथ वृहती अने सतोवृहती ए वे मिथ्र छंद मळीने नीपजे छे,
एटळे एमां आठ पद होय छे. उदाहरण—

धुम्नी वां स्तोमो' अश्विना
क्रिचिर्न सेक आगतम् ।
मध्यः सुतस्य स दिवि प्रियो नरा
पातं गौराविवेरिणे ॥
पिवंतं धर्मं मधुमन्तमश्विना
वृहिः सीदतं नरा ।
ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ
नि पातं वेदसा वर्यः ॥८।७६।१-२॥

आ बंने प्रगाथना उत्तर भागमां सतोवृहती समान होई तेमनो विवेक पूर्व
भागना ककुभू अने वृहती छंदयी थाय छे, तेने लीधे तेमने अनुक्रमे काकुभू
अने वार्हत उपपद मळ्यां छे.

२२ भाषानो प्रचार पहेलो अने साहित्यनो उदय पळी, ए प्रमाण-

નિરપેક્ષ સિદ્ધાંત છે. ઋગ્વેદની ઋચાઓ પ્રગટી તે મંત્રદ્રષ્ટાના આર્ષ સંસ્કૃતમાં રચાઈ. તેની પદ્યરચનાનો જન્મ તે કાઠ્ઠની ગદ્ય વાણીમાંથી થયો છે. ઋચ્ યજુસ્ અને સામન્ની સત્તા પુરુપસૂક્તમાં સાથે વર્ણવી છે; તે ઉપરથી એમ ઠરતું નથી કે શ્લિષ્ટ દ્વારા પૂર્વકાલીન દેવાર્ચનમાં ઉત્તરકાલીન યજુસ્ જેવાં 'અગ્નયે સ્વાહા' 'ઇદમગ્નયે ન મમ' આદિ વાક્ય આહુતિ અર્પવાના પ્રસંગે બોલાતાં નહિ હોય. એ પ્રયોગોને આપણે ઇતિહાસાતીત યજુસ્ કહીશું. એ ફરી ફરીને વપરાતા રૂઢ પંચવર્ણાદિ પ્રયોગના વર્ણસંખ્યાત્મક સ્વરૂપે વર્ણસંવાદનું પ્રથમ માન ઋષિઓને કરાવ્યું હશે. આવી જ રીતે ઉત્તર કાઠ્ઠના આરંભમાં વર્ણસંવાદના આર્ષ છંદે ભગવાન વાલ્મીકિને રૂપસંવાદનું પ્રથમ દર્શન કરાવ્યાનું ત્રીજા દષ્ટિપાતમાં નિરૂપણ કરવામાં આવશે. વિદ્યમાન યજુર્વેદસંહતામાં પણ કેટલાંક યજુસ્માં પદ્યરચનાનો સુવાસ મ્હેકે છે. તેવી જ રીતે જૈન બંધુઓના આચારાઙ્ગની કેટલીક પંક્તિઓ વૃત્તગદિ માદ્દમ પદ્ધે છે. ઉપર કહેલાં ઇતિહાસાતીત યજુસ્માંથી ઋગ્વેદની પદ્યરચના ઉદય પામી, ગદ્યમાંથી પદ્યનું પ્રથમ દર્શન થયું; અને વર્ણસંખ્યાએ સૂક્ષ્માહેલી પદ્યરચનાએ હોતાને મુખે મોટેથી બોલાતી ઋચા દ્વારા, રહસ્યવુદ્ધિથી ગઢામાં ગુંજાતા અધ્વર્યુનાં સ્વગત યજુસ્ તથા ઋષિઓને આદેશ આપતા પ્રગટ નિગદ દ્વારા અને દેવોની સ્તુતિ અર્થે ગાનના રૂપમાં ગોઠવાતાં ઉદ્ગાતાનાં આર્ચિક દ્વારા યજનકર્મમાં અર્પૂર્વ મનોહરતા તથા મવ્યતા આળી ઋક્ષાલના સુમવ્ય યજ્ઞને જન્મ આપ્યો. આ ઇતિહાસ પુરુપસૂક્તની આલંકારિક વાણીમાં ગૂંથાયલો વિદ્યમાન છે. ભક્તિભાવિત ઋષિઓ યીજી વક્ષીસોની સાથે પદ્યરચનાને પર્ણ 'સહસ્રશીર્ષો પુરુષ'ની પ્રસાદી માને છે. એ પુરુષ વિરાજ્ઞને અવતારો છે. અવતાર પામેલી વિરાજ્ સંજાએ ઓઠસ્વાતી પદ્યરચના યજ્ઞને જન્મ આપે છે. તે યજ્ઞને પુરુપસૂક્તિ કન્યી આપ ઋષિઓ અને તેમને સહકાર આપનારા દેવો તેનું આલંકારિક યજન કરે છે. આ પ્રસ્તાવ વિસ્તારથી આગઢ આવશે. અહીં તો એટલું નોંધવું પ્રાપ્ત થાય છે કે પંચવર્ણ પૈરાજ પદ,

તે પૂર્વે ગણાવેલાં વીજભૂત પદોમાં સૌથી જૂનું છે. તેમાં ઋણ ઋણ વર્ણનો વધારો થઈ ગાયત્ર તથા ત્રૈપ્તુમ પદ ઉદ્ભવે છે, અને ત્રૈપ્તુમમાં એક અક્ષરનો વધારો થઈ જાગત પદ રચાય છે. બ્હેલો ઉદય પામેલો વિરાજ્ છેદ 'ઇન્દ્રાય ત્વા,' 'અગ્રયે ત્વા' આદિ યાજુપ વાકચના જેવો જ લગભગ છે. વઢી તે વહુ જ ઢૂંકો હોઈ તેમાં અર્ધનો જ્ઞાસો સમાસ થવો શક્ય નથી. તેની સાથે આદિકાઢથી વપરાતો આવ્યાથી તેને કંડૂક જૂનાપણાની જ્ઞાંસાશ લાગી હોય એમ જણાય છે. એ વધાં કારણાને લીધે તેની રંજકતા ઓછી થાય છે અને તેનો વપરાટ ઘટે છે. નવા પ્રગટેલા મનોમોહક ગાયત્રી અને ત્રિપ્તુમ્ છેદના બહોલા પ્રચારને લીધે તે અછતાઈ જાય છે. ગૌરવવાઢી વૈરાજ ગાયત્ર અને ત્રૈપ્તુમ પધરચના હિંદુશ્રાનીય માપાશાલાના સાહિત્યનું સામાન્ય મંડાણ છે. તેમાંથી આર્ચિક અનુપ્તુમ્ અને ત્રિપ્તુમ્ છેદ જનમે છે. ઉપિણહ, વૃહતી, આદિ મિશ્ર છેદ પળ ગાયત્ર અને જાગત પદના વિવિધ યોગથી નીપજે છે. સામવેદસંહિતાનું અક્ષરશરીર અત્રોક્ત ગાયત્રી અને પ્રગાથ છેદમાં રચાયલી ઋચાઓનું ઘડાય છે. 'વેદાનાં સામવેદોઽહમ્ ।' એ વચન સામવેદને મહત્તા આપે છે, તે એમાં વપરાયલા ગાનની વિભૂતિવાલા ઉક્ત વે છેદને લીધે જ છે.

૨૩ આ વ્યાખ્યાનમાં વર્ણવેલા છેદોનાં નામ વહુ સૂચક છે. છેદો-વિદ્યાનો વિરાજ્, સાંલ્યદર્શનનો રજસ્ અને સંગીતશાલનો રાગ વોલ, એ ઋણેનું એક જ મૂઢ છે. રાજનીતિનો રાજન્ શબ્દ પળ એ જ સામાન્ય ગોત્રનો છે. રઘુવંશમાં એની વ્યુત્પત્તિ રજ્ ઘાતુ ઉપરથી કાલિદાસ કવિએ કરી છે તેમાં કેવઢ કલ્પનાનો ચમકારો નથી. રજ્ ઘાતુ પળ વિરાજ્ આદિ શબ્દનો સગોત્ર છે. પ્રીતિવાચક મૌલિક નષ્ટ ઘાતુ રજ્ની રજ્ વિકૃતિ છે. ગઘને મુકાવેલે આઘ પધરચનારૂપે વિશેષ પ્રિય થઈ પહેલી વાણી તે વિરાજ્, ત્રિગુણામક પ્રકૃતિનો સ્ત્રીપુત્ર આદિમાં પ્રીતિ વધાવનાર ગુણ તે રજસ્, પાઢ્યની સરસ્વામણીમાં રંજક થઈ પહેલો લ્યવંચ તે .રાગ, પ્રાચીન

गणराज्यना तंत्रमां शासक तरीकेनी नीमणूकना प्रसंगमां जे प्रजानी प्रीतिनू पात्र धाय ते राजनू. निर्दिष्ट चारे गोत्रीओनो, गोत्रपुरुष नष्ट रज् धातु छे. प्रीति रूपजावे ते, मनोहर पण होय, एवा, कार्यकारणना संबंधथी शोभावाचक राज् धातु. पण ए जे गोत्रपुरुषनो वंशज छे. हृदयरंजक आव 'पद्यरचनानी विराज् संज्ञा पूरेपूरी सार्थक अने सुघटित छे. पद्यरचनानी पूर्वना देशी-गाननो एकम चार अक्षरनो बनेलो हशे तेथी अथवा चीजा कोइ अजाण्या कारणथी विराज् छंदनी साममां, योजना न थई. वैराज पदमां ऋण अक्षरना वधाराथी गायत्र पद थयूं. तेनो जे नवो छंद बन्यो ते सामगानने अनुकूल नीवड्यो अने, गायत्री एटले सामना रूपमां गोठाय एवी छंदामयी वाणी, एवा, अर्थवाहक नामथी ओळखायो. सोम पवमानना मंत्रोनो साममां विनियोग छे, तेनो मोटो भाग आ छंदमां छे. गायत्री छंद ऋचाना रूपमां तो पाठ्य ज छे, परंतु तेमां सामनी गेयता निगूढ रहेली छे; तेने छीधे तेनी गायत्री संज्ञा पडी छे. अनुष्टुभ् अने त्रिष्टुभ् शब्दनी घटनामां नजरे पडतो स्तुम् शब्द छूटो वपरायलो मळी अवतो नथी. परंतु ते स्तुतिवाचक स्तुम् धातु उपरथी उत्पन्न थई एक काले वपरातूं स्त्रीलिङ्ग धातुनाम होवूं जोईए. आ तर्क 'पद्यरचनाना प्रकार'मां में पा सद्दी उपर रज् कर्यो हतो. पदना पर्यायरूप स्तुम् नाम पूर्वोक्त रज् धातुनी पेंठे नाश पाम्यूं छे. गायत्र ऋण पद पछी(अनु) जेमां एक पद(स्तुम्) अधिक आवे, ते अनुष्टुभ्. आनाथी रहेज जुदो त्रिष्टुभ्नो विग्रह छे. ए शब्दने हूं 'शाकपार्थिव'ना जेवो मध्यमपदलोपी समास समजूं छूं. अष्टवर्ण गायत्र पदमां ऋण वर्ण जेमां वर्धित होय ते, अर्थात् एकादशवर्ण पदनो छंद, ते त्रिष्टुभ्. वंने छंद ऋण पदना गायत्री छंदथी आगळ वधी चार पदना बने छे. आ फेरफार एटलो व्यापक थई पडे छे, के छंद ते चार पदनो ज होय एवी समज. साधारण रीते रूढ थाय छे. परंतु ए मान्यता, छंदोनो जे क्रमिक विकास अहाँ वर्णज्यो छे तेनूं तोळन करी जोतां, मारा मनथी. मूल

મરેલી લાગે છે. પ્રધાન શુદ્ધ ઇંદમાં છેલ્લો જંગતી છે, એ શબ્દ ગતિવાચક ગમ્ કે એના કોઈ પૂર્વરૂપ ઉપરથી ઉત્પન્ન થયો છે; અને વૈષ્ટુમ્ પદનાથી વર્ણસંખ્યામાં એક અક્ષર આગલ વધવાનો ભાવ ઈમાં રહ્યો છે.

૨૪ મિશ્ર ઇંદ ગાયત્ર અને જાગત પદના મિશ્રણથી ઘને છે. વે ગાયત્ર પછી છેડે એક જાગત પદ વલ્ગાહ્યું હોય, તે પુરોણિહ્ લેવાય છે. જો જાગત પદ વે ગાયત્ર પદના પૂર્વે વલ્ગાહેલું હોય, તો પુરજ્ણિહ્ સંજ્ઞાથી તે ઇંદ ઓલ્લાય છે. પરસ્ અને પુરસ્ નિપાત જાગત પદના વલ્ગણનો દિશા વતાવે છે. ઉત્ સાથે સ્નિહ્ ધાતુનો અર્થ વલ્ગવું થાય છે, તે ઉપરથી ઝ્ણિહ્ શબ્દ ઝતરી આવ્યો છે. ત્રીજા મિશ્ર ઇંદનું નામ ક્કુમ્ છે, તે લાક્ષણિક છે. સ્ત્રીલિંગ ક્કુમ્નો અર્થ શિશ્વર થાય છે. વે ન્હાનાં ગાયત્ર પદના વચ્ચે પર્વતના શિશ્વર જેવું અર્થાત્ મોટું જાગત પદ આવતું હોવાથી પ્રસ્તુત મિશ્ર ઇંદનું નામ ક્કુમ્ પડ્યું સંભવે છે. વાકીના ચાર ઇંદનાં નામ તે તે ઇંદનાં વધાં પદોના વર્ણોની સંખ્યામાં થતા વધારાને આધારે રાખ્યાં જણાય છે. વૃહતી ઇંદમાં કુલ છત્રીસ વર્ણ આવે છે, તે સંખ્યા કુલ અઠ્ઠાવીસ અને ત્રીસના આંકથી વૃહત્ ઇંદને મોટી હોવાથી તે ઇંદને વૃહતી કહે છે. તેનાથી પળ મોટી સંખ્યાનો કુલ ચાલીસ વર્ણનો ઇંદ, તે સતોવૃહતી. અત્તિશક્તરી સંજ્ઞા શક્તરી ઉપરથી પડી છે. વહુ અર્થ સમાવવા સમર્થ કુલ છપ્પન વર્ણના ઇંદને શક્તરી કહે છે. તેનાથી વધારે મોટો હોઈ વધારે અર્થ સમાવાઈ શકાય એવો ઇંદ તે કુલ સાઠ વર્ણનો આતશક્તરી. આવી જ રીતે કુલ ચોસઠ અક્ષરના અષ્ટિ ઇંદથી મોટો, તે અઠસઠ અક્ષરનો અત્યષ્ટિ ઇંદ. ઉપરાંત કાક્કુમ્ અને વાર્હત પ્રગાય ગણાવ્યા છે, તે ગાયત્રીની પેઠે સામગાનના રૂપમાં ગોઠવાય છે; તેણે કરીમે તેમની પ્રગાય સંજ્ઞા ઠરાવા જણાય છે.

૨૫ શુદ્ધ અને મિશ્ર ઇંદનાં નામ વધાં એ સ્ત્રીલિંગે છે. તેનું કારણ મેં 'વધરચનાના પ્રકાર'માં સમજાવ્યું છે. વિરાજ્, ગાયત્રી, વગેરે સઘ-

વાચક નામ નથી, પણ ગુણવાચક છે. વિશેષણ હોઈ તેમનો અન્વય સ્ત્રીલિંગ વાચ્ વિશેષ્ય સાથે થતો હોવાથી તે પણ, સ્ત્રીલિંગમાં દેશા દે છે. પદાત્મક રચના માટે વાચ્ શબ્દનો પ્રયોગ કવિ ભવગૃતિ ઉત્તરરામચરિતમાં કરે છે. પૂજરાતીમાં પણ વાચ્ના પર્યાય વાણી બોલનો પ્રયોગ એવા જ અર્થમાં થાય છે; ઉદાહરણ, અશ્વા ભગતની વાણી. ઉત્તર કાઠના ઉપેન્દ્રવજ્રા અને ઈન્દ્રવજ્રા બોલનો સ્ત્રીલિંગે વ્યવહાર પણ ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ એ જ પ્રકારનો છે, તે યથાસ્થાન પ્રગટ કરવામાં આવશે. પ્રગાથ બોલ પુંલિંગે વપરાય છે તેનો અન્વય પુંલિંગ મન્ત્ર સાથે ઈષ્ટ હોવાથી તેની પુંલિંગે યોજના જોવામાં આવે છે. આવી જ રીતે આલ્યાનકાલનો વંશસ્થ શબ્દ જે નપુંસકલિંગે વપરાય છે, તે નપુંસક છન્દસ્ વિશેષ્ય સાથે સંબંધ ધરાવતો હોવાથી તેનો નપુંસક લિંગે પ્રયોગ રૂઢ થયો છે.

। ૨૬ આ છંદોવિદ્યાની ઉત્પત્તિ ક્યારે કેવા સંજોગોમાં થઈ, તેના ભગવાન શરવા કાનને પુરુપસૂક્તમાં સંમળાય છે. ઋગ્વેદસંહિતાના દશમા મંડલનું એ નેવુમ્ સૂક્ત છે. પશ્ચિમના વિદ્વાનોના મતે દશમા મંડલનાં સૂક્તો મોડામાં મોડાં સંહિતાના વ્યૂહમાં ગોઠવાયાં છે. બીજાં સૂક્તોની સરસ્વામણીમાં પુરુપસૂક્તની રચના પણ મોડી થઈ માનવામાં આવે છે. વ્યાકરણના પ્રયોગ વગેરે મુદાબો વાજૂ ઉપર રાખતાં પણ તેની આગઠ વધેલી આલંકારિક વાણી ઉપરથી જ ઠક્કાલના સાહિત્યના પરિપાકના ફલ તરીકે તેને સ્વીકારવાને વાચક આપોઆપ પ્રેરાય છે. પરંતુ એ વાત સ્વીકારતાં ગોજી મહત્વની વાત ભૂલી જવી ન જોઈએ કે, મોડું મોડું પણ પુરુપસૂક્ત પુરાણ ઠક્કાલનો ફાલ છે. એ ફાલ પાછલ્લથી સ્વસ્ત્રીમાં એકઠો કરવામાં આવ્યો અને અનેક કોઠારમાં સુરક્ષિત રાખવામાં આવ્યો. સૂક્તો છૂટા એકમો રૂપે રચાયાં અને સંહિતામાં અનુસૂત્રિત મળકારૂપે ગ્રથિત થયાં, તે વચ્ચે અંતર લાંબું છે. રચનાકાલનો વિચાર કરતાં પણ પુરુપસૂક્તની ઉત્પત્તિ છેક મોડી નહિ થઈ હોય, એનો મુદો તેના પદ્મવધની આંતર ઘટના

उपरथी उपस्थित थाय छे. ए क्षीणी चर्चामां शंपलावतां पहेलां मूळ सूक्त
अने एक सळंग सुसंबद्ध काव्यकृत तरीके तेनो अनुवाद अपेक्षित छे. ते
आपणे प्रथम लक्षमां लेइये.

सहस्रशीर्षां पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।

स भूमिं विश्वतो घृत्वात्यतिष्ठद् दशाङ्गुलम् ॥१॥

पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्च भव्यम् ।

उतामृतत्वस्येशानो यदज्ञेनातिरोहति ॥२॥

एतावानस्य महिमतो ज्यायांश्च पुरुषः ।

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥३॥

त्रिपादूर्ध्वं उदैत् पुरुष पादोऽस्येहाभवत् पुनः ।

ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि ॥४॥

तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पुरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमयो पुरः ॥५॥

यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।

वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्दिविः ॥६॥

तं यज्ञं वहिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः ।

तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥७॥

तस्माद् यज्ञात् सर्वद्भुतः संभृतं पृषदाज्यम् ।

पशून् तांश्चक्रे वायव्यांनारण्यान् ग्राम्याश्च ये ॥८॥

तस्माद् यज्ञात् सर्वद्भुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्माद्जायत ॥९॥

तस्माद्द्वा अजायन्त ये के चोभयादतः ।

गावो ह जज्ञिरे तस्मात् तस्माज्जाता अजावयः ॥१०॥

यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।

मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरु पादा उच्येते ॥११॥

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।

ऊरु तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥१२॥

चन्द्रमा मर्नसो जातश्चक्षुः सूर्यो अजायत ।

मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद् वायुरजायत ॥१३॥

नाभ्यां आसीदन्वरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत ।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात् तथा लोका अकल्पयन् ॥१४॥

सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ।

देवा यद् यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरुषं पशुम् ॥१५॥

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्

तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त

यत्र पूर्वं साध्याः सन्ति देवाः ॥१६॥

(जेने) हजारो मस्तक छे, हजारो नेत्र छे, (अने) हजारो पग छे, एबो पुरुष (आर्य)भूमिने सर्व बाजूए आवरो छेई तेनी बहार (मात्र)

દશ અંગુલ પ્રતિષ્ઠા પામેલો છે. ૧

આ (જે) સર્વ છે, જે હતું અને જે હશે, તે પુરુષ જ છે. તે ઘડી મૃત્યુરહિત(દેવો)નો શાસક છે; અને અન્ન વડે જે વધે છે (તે પ્રાણી-સોનો પણ શાસક છે). ૨

આયું તેનું મહાનપણું છે. એનાથી પણ પુરુષ આદકેરું મહાનપણું ધરાવનારો છે. (આ) સર્વ ભૂતમાત્ર તેનો પા ભાગ છે. તેનો પોળો ભાગ ઘુલોકમાં(નો) દેવસમૂહ છે. ૩

પોળા ભાગનો પુરુષ ઊર્ધ્વગામી રહ્યો. પા ભાગનો પુરુષ અહીં પુનરાવર્તી થયો. તે (પા ભાગ)થી વિશ્વરૂપધારી (પુરુષ), જેને આહાર જોઈએ છે અને જેને નથી જોઈતો, એ ઉભયમાં સંક્રાંત થયો છે. ૪

તે(આદિપુરુષ)થી વિરાજ્ જનમી. વિરાજ્થી (યજ્)પુરુષ^૫ જનમ્યો. તે જનમ્યો સતો (આર્ય)ભૂમિને વટાવીને પશ્ચિમમાં તેમ જ પૂર્વમાં ધ્યો. ૫

(એ જન્મધારી) પુરુષરૂપ ઘલિ વડે દેવોએ યજ્(સમારંભ) કર્યો, ત્યારે તેનું આજ્ય વસંત, તેનાં રૂંધણાં ગ્રીષ્મ અને તેનું હવિષ્યાન્ન શરદ વન્યાં. ૬

દેવોએ તે યજ્(ઘલિ)નું આદિએ કુશના આસ્તરણે પ્રોક્ષણ કર્યું. તે (યજ્ઘલિ) વડે આરાધ્ય દેવોએ અને જે ઋષિ કહેવાય—તેઓએ યજન કર્યું. ૭

સર્વ દ્રવ્યની આહુતિચાઝા તે યજ્(સમારંભ)થી ટપકતું આજ્ય પ્રગટ્યું. (તે આજ્યના અમ્યંજનથી) પ્રસિદ્ધ વાયુમાંનાં તથા વનમાંનાં (યજ્)પશુ, અને ઘડી ગામમાંનાં જે (યજ્પશુ), તેનું પણ વિધાન થયું. ૮

૫ જેવો અહીં યજ્ (sacrificial ritual) વિશે પુરુષનો અધ્યવ-સાનાત્મક ઉપચાર કર્યો છે, તેવો જાણીતી ' દ્વા સુપર્ણા ' પ્રતીકની ધૃતિમા પરમાત્મા અને જીવાત્મા વિશે બે સુપર્ણનો અધ્યવસાનાત્મક ઉપચાર કરેલો સુપ્રસિદ્ધ છે. વીજા પણ આવા ઉપચારના દૃષ્ટાંત ધૃતિસાહિત્યમા ઘડુ મઢી આવે છે.

સર્વ દ્રવ્યની આહુતિવાઝા તે યજ્ઞ(સમારંભ)થી ઋચાના અને સામના મંત્રો પ્રગટ્યા. તે યજ્ઞ(સમારંભ)થી ઇંદ પ્રગટ્યા. તે યજ્ઞ(સમારંભ)થી યજુસ્ પ્રગટેલ છે. ૯

તે યજ્ઞ(સમારંભ)થી અધો થયા છે અને ઉપરનીચેદાંતવાઝાં જે (વીજાં પ્રાણી) છે, (તે થયાં છે). તે (યજ્ઞસમારંભ)થી ગાયગોધા થયાં છે. તે (યજ્ઞસમારંભ)થી વઠરાં અને ઘેટાં થયાં છે. ૧૦

જ્યારે (તે) પુરુષનું (પશુ તરીકે) વિધાન તેઓઈ કર્યું, ત્યારે ફેટલા પ્રકારે (તેનાં અંગની) કલ્પના કરી? તેનું વદન કયું? તેના વે વાહુ કયા? વે જાંઘ કઈ? વે પગ કયા ફહેવામાં આવે છે? ૧૧

બ્રાહ્મણ તેનું વદન થયો. ક્ષત્રિય તેના વે વાહુ ઠરાવાયો. જે વૈશ્ય, તે ણી વે જાંઘ થયો. વે પગ વદલ શૂદ્રની ભાવના થઈ. ૧૨

(તે પુરુષના) મન વદલ ચંદ્રમા સંભાવિત થયો. ચક્ષુ વદલ સૂર્ય સંભાવિત થયો. મુલ વદલ ઇંદ્ર અને અગ્નિની સંભાવના થઈ. પ્રાણ વદલ વાયુ કલ્પાયો. ૧૩

(તે પુરુષની) નાભિ વદલ અંતરિક્ષનું વિધાન થયું. મરતક વદલ મૂલોકનું અને શ્રવણ વદલ દિશાઓનું વિધાન થયું. એ રીતે દેવોઈ (ત્રણ) લોકની (આ અંગરૂપે) કલ્પના કરી. ૧૪

જ્યારે યજ્ઞસમારંભ કરનારા દેવોઈ પુરુષને (યજ્ઞ)પશુરૂપે ઘાંધ્યો, ત્યારે તેની આસપાસ સાત પરિધિ ગોઠવવામાં આયા (અને ત્યાં) ત્રણ વાર સાત અર્થાત્ એકવીસ સમિધ રાલ્લવામા આવી. ૧૫

૬ ગર્દભ વગેરે.

૭ તૈત્તિરીય, મૈત્રાયણી, કાઠક અને ષાજસનેયી સંહિતામા પાલ યજ્ઞપશુ કથા છે, ઘોડો, ગાય, ઘેનો, વકરો અને પુરુષ પાલેમા પુરુષપશુ પ્રધાન મનાય છે, જુઓ Vedic Index, પુરુષ અને પશુ શબ્દ.

(આ પ્રકારે) દેવોએ (યજ્ઞપુરુષરૂપ) પશુ વડે યજ્ઞ(સમારંભ) કર્યો. તે વિધાન આજ યજનવિધાન . હતાં. (એ યજનવિધાન વડે) તે મહિમાશાળી દેવો, જ્યાં પ્રાક્તન આરાધ્ય દેવો વસે છે, તે દુલોકને પામ્યા. ૧૬.

૨૭ આ સૂક્તની ઋચા ૧ માં હજારો મસ્તક હજારો નેત્ર અને હજારો પગવાળો પુરુષ જે કહ્યો છે, તેમાં ઇતિહાસાતીત આર્યજનતાના દેવોની સમષ્ટિનો સંકેત હું સમજૂં છું. એ સંકેત અભિપ્રેત હોવાથી જ પુરુષને આર્યભૂમિમાં પ્રતિષ્ઠા પામેલો અર્થાત્ અર્ચાતો ઋષિએ કહ્યો છે. ભૂમિમાં ઇટલે અસ્થિલ ભૂમંડલમાં ત્રહાના વ્યાપકપણા પરત્વે આ ઋચાનો અર્થ કરવો મને ઇટ જણાતો નથી; કેમકે ઋચા ૪ માં અંશી પુરુષના ચતુર્થાંશને જ અસ્થિલ ભૂમંડલમાં વ્યાપી રહેલો વર્ણવ્યો છે. ઉક્ત ઇતિહાસાતીત કાઠમાં આર્યપ્રજા આર્યભૂમિ બહાર વહુ પસરી ન હતી, તે વાવત આસપાસના પ્રદેશમાં તેના દશાંગુલ જ વિસ્તારના નિર્દેશથી સ્પષ્ટ થાય છે.

ઋચા ૨ માં પુરુષનો મહિમા વસ્થાપ્યો છે. ભૂત ભાવી અને વર્તમાન સૃષ્ટિ તે પુરુષજ છે, અર્થાત્ તે પુરુષમાં તેનો અંતર્ભાવ થાય છે. ઉક્ત પુરુષ દેવોનો અને પ્રાણીમાત્રનો શાસક છે.

ઋચા ૩-૪ માં પુરુષનો પોળો ભાગ દેવસૃષ્ટિરૂપે ઊર્ધ્વગામી કહ્યો છે અને પા ભાગ ભૂલોકમાં ભૂતસૃષ્ટિરૂપે પુનરાવર્તી નિર્દિષ્ટ છે. અહીં આદિ-પુરુષ વિશેનો પ્રસ્તાવ પૂરો થાય છે.

ઋચા ૫ માં આદિપુરુષથી વિરાજ્ઞ અને વિરાજ્ઞથી પુરુષ જનમે છે: આદિપુરુષને હજારો મસ્તક હજારો નેત્ર અને હજારો પગ છે; અર્થાત્ તે દેવોની સમષ્ટિ છે. અપરપુરુષને એક મસ્તક અને એ પગ છે; એ સીતે આદિપુરુષથી અપરપુરુષનો વિવેક કરેલો છે. એ અપરપુરુષનો ઋચા ૭ વગેરેમાં યજ્ઞ શબ્દે નિર્દેશ કર્યો છે; અર્થાત્ તે યજ્ઞ(sacrifice, saorificial ritual)નું રૂપક છે. આદિપુરુષ અને યજ્ઞપુરુષનો સંબંધ જોટનારી કડી વિરાજ્ઞ છે. એ શબ્દ સ્ત્રીલિંગે પૂર્વોક્ત એક વેદિક પદ્યરચનાની સંજ્ઞા છે.

વૈરાજ, પદનું માપ પાંચ વર્ણ છે. તેથી દશવર્ણાત્મક પદવાલા વૈદિક ઠંદને, દ્વિપદા વિરાજ્ ઁટલે દ્વિમૂત (વેવડાયલ) પદવાલી વિરાજ્, ઁવી વિશિષ્ટ સંજ્ઞા મલી છે. આદિપુરુપથી વિરાજ્ જનમી, કહી છે તેનો અર્થ ઁ છે, કે આદિપુરુપ નિમિત્તે વિરાજ્ નામે પદાત્મક રચના ઁદ્રવ પામી. ઋક્લાલીની ઁપામાં દેવોની સ્તુતિ ઁ રીતે ગદાત્મક મટી પદાત્મક વની તે ઁ પંચવર્ણ વિરાજ્ રૂપે, ઁ પદ્યવંધનો ઁજનકર્મમાં વિનિયોગ થઈ નવા ઁજ્ઞ(sacrificial ritual)નો ઁવતાર થયો. આ ઁાવ 'વિરાજ્થી (ઁજ્ઞ)પુરુપ જનમેલ છે ' ઁમ કહી સૂચવ્યો છે. ઁ ઁજ્ઞપુરુપ પશ્ચિમમાં તેમ જ પૂર્વમાં આગલ વધે છે ઁવો જે આલંકારિક નિર્દેશ છે, તે ઁપરથી સૂચિત થાય છે કે ઁજ્ઞપરાયણ આયો વસત જતાં આર્યભૂમિ વહાર ઁ વે દિશામાં આગલ વધ્યા.

. આદિપુરુપ ઁને વિરાજ્ની જનકજન્યતા નિમિત્ત ઁને નૈમિત્તકના સંબંધને ઁવલંબીને કહી છે. આદિપુરુપના ઁર્ચન ઁર્થે વિરાજ્નો વિનિયોગ થાય છે; ઁટલે આદિપુરુપ તે નિમિત્ત ઁને વિરાજ્ તે નૈમિત્તક છે. વિરાજ્ ઁને ઁજ્ઞપુરુપ વચ્ચેનો જનક ઁને જન્યનો સંબંધ ઁપચારિક છે.

ઋચા ૬ માં, દેવો ઁ ઁજ્ઞપુરુપને વલિ કલ્પી ઁજન કર્યૂ તેમાં વસંત ગ્રીષ્મ ઁને શરદની ઁનુક્રમે આજ્ય ઁંધન ઁને હવિષ્યાન્નરૂપે કલ્પના કરવામાં આવી, તેનો નિર્દેશ છે. ઁજ્ઞવલ્લ પુષ્પોની સમૃદ્ધિને ઁદેશીને વસંતમાં આજ્યનો આરોપ છે. ઁત્યારે પળ ઁત્તમ ઁીને ફૂલની ઁપમા ઁપાય છે. પ્રસ્ર ઁતાપને ઁદેશીને ગ્રીષ્મમાં હોમનાં ઁંધણાંનો આરોપ કર્યો છે. શારદી જ્યાસ્નાને ઁથવા તો નવા પાકને ઁદેશીને શરદમાં હવિષ્યાન્નનો આરોપ કરેલો લાગે છે. ઁજ્ઞપુરુપમાં વલિની ઁાવનાનો ઋચા ૧૫ માં ફરી નિર્દેશ કર્યો છે.

. ઋચા ૭ માં ઁજ્ઞપુરુપરૂપ વલિ વડે ઁજસમારંભ(sacrificial celebration)નું વર્ણન છે. દેવો ઁને ઋષિઓ કુશના, ઁસ્તરણ ઁપર ઁજ્ઞવલિનું પ્રોક્ષણ કરે છે. આ ઋચામાં વાપરેલો સાધ્યા: શલ્દ છેલ્લી ઋચામાં પળ વાપર્યો છે. વેઁ સ્થલે ઁ દેવા. નું વિદ્યોપણ છે; ઁને તેનો

અર્થ ' જેની સાધના એટલે આરાધના કિંવા અર્ચના કરવામાં આવે છે તે, આરાધ્ય, અર્ચનીય ' એવો છે. અન્ય વિદ્વાનો પિત્રી(સં. પિતૃ)ની પેઠે ' સાધ્ય એ સંજ્ઞાના દેવ ' એવો અર્થ લે છે. એની અહીં યજ્ઞ ઉપપત્તિ સારા જાણવામાં નથી.

ઋક્ષા ૮ માં આદરેલા યજ્ઞસમારંભની પ્રસિદ્ધ પશુસમૃદ્ધિ ગણાવતાં છે. તેના વનચર અને વસતિચર યજ્ઞપશુ સર્વેનો નિર્દેશ કર્યો છે; કેમકે પ્રસ્તુત સમારંભ સર્વહુત્ એટલે સર્વ દ્રવ્યની આહુતિવાલો છે.

ઋક્ષા ૯ માં ઉક્ત યજ્ઞસમારંભના કારણથી ઉદ્ભવેલા સાહિત્યનું નિરૂપણ છે. તેના અંગે ઋક્ષા એટલે પ્રાર્થનાના મંત્રો તથા સામન્ એટલે ગાનના મંત્રો ઉત્પન્ન થાય છે; અનેક છંદ (છન્દસ્) રચાય છે; અને યજુસ્ એટલે યજનના મંત્રો અસ્તિત્વમાં આવે છે. અહીં ઋક્ષા સામન્ અને યજુસ્ શબ્દ મંત્રોના અર્થમાં છે, સંહિતાના એટલે કે ઋગ્વેદ સામવેદ અને યજુર્વેદની સંહિતાના અર્થમાં નથી, તે કહેવાની જરૂર નથી. પૂર્વે ઋક્ષા ૫ માં પદ્યાત્મક રચનાનો નિર્દેશ કરી અહીં ઋક્ષા ૯ માં યજ્ઞપુરુપરૂપ વલિ વડે આદરેલા યજ્ઞસમારંભના સંબંધે ઉત્પન્ન થયેલા પદ્યાત્મક શ્રીત સાહિત્યના વિવિધ છંદોનો આવિર્ભાવ ખાલ્યો છે. તેથી બૈજિક વૈરાજ પદથી આગળ વધી ઋક્ષાલમાં ગાયત્ર ત્રૈષ્ટુભ આદિ પદનો વિસ્તાર વિવક્ષિત છે.

ઋક્ષા ૧૦ માં પાલેલાં જાનવરોની ઉક્ત યજ્ઞસમારંભના સંબંધથી ઉત્પત્તિ વર્ણવી છે. ઘોડા તથા ઘોડાના જેવાં ઉપરનીચેદાંતવાળાં સ્વર વર્ગે જાનવર, ગોધા તથા ગાય, અને વકરાં તથા ઘેટાં પાલવામાં આવે છે.

ઋક્ષા ૧૧ થી ૧૪ માં યજ્ઞપુરુપરૂપ પશુનાં વિવિધ અંગની કલ્પના કરવામાં આવી છે. પ્રસ્તુત સમારંભમાં ઋક્ષા સામન્ અને યજુસ્ના મંત્રો ભળનારા વ્રાહ્મણને યાગીના વ્યાપારના અંગ તરીકે યજ્ઞપુરુપનું મુખ કહ્યું છે; ધર્મદ્રોહી મનુષ્ય અને હિતર દુષ્ટ સત્વના ઉપદ્રવ સામે સમારંભનું રક્ષણ કરનાર ક્ષત્રિયને રક્ષાકાર્યના સંબંધથી વાહુ કહ્યો છે; યજ્ઞસંભાર પંથ કરી પૂરો

पाडनारा । 'जघाल वैश्यने जांघ फतो छे; अने हलका परिचारकनुं काम करनारा शूद्रने पग कही छे. अहां ब्राह्मण, राजन्य, वैश्य अने शूद्र शब्द जन्ममूलक चातुर्वर्ण्यना वाचक नथी, पण कर्ममूलक मनुष्यगणना वाचक छे. ऋकालना वर्ण तो वे ज, आर्यवर्ण अने दासवर्ण; एक गौर अने बोजी श्याम. ए भेद चामडीना रंग(वर्ण)ने आधारे पडेलो छे; अने ते अति धणो जूनो छे. ब्राह्मण आदि गणनो यज्ञपुरस्चना मुख आदि अंग तरीके उपचार वाणी आदि व्यापारने, अवलंभीने करवामां आव्यो छे. ज्ञाननां साधनरूप मन अने चक्षु बदल प्रकाशस्वरूप चंद्र अने सूर्यनी भावना करी छे; अशन व्यापारना साधनरूप मुख बदल हविर्ग्रहणनो प्रधान अधिकार धरावता इंद्र अने अग्निनी योजना करी छे; अने सतत वहा करनारा प्राण बदल वायुनो निर्देश छे. वळो यज्ञपुरस्चना यज्ञभूमिरूप शरीरना शिरोभाग नाभि अने चरण बदल प्राकृतिक क्रमने अनुसरी देवलोक अंतरिक्ष अने भूलोकनुं विधान कर्युं छे, तेमज कर्णभाग बदल दिशजानुं विधान करेछे जोवामां आवे छे.

आ ऋचाओमां आरोपविषय अने आरोप्यमाणना सामानाधिकरण्यथी पण आरोप बताव्यो छे अने वैयधिकरण्यथी पण बताव्यो छे. ऋचा १२ मां यज्ञपुरस्चनां मुख बाहु तथा ऊरू ए आरोपविषयोनू अने ब्राह्मण राजन्य तथा वैश्य ए आरोप्यमाण पदार्थोनू सामानाधिकरण्य छे, एटलेके उभय एक ज विभक्तिमा छे. बाकीना वधा आरोपमां आरोपविषयनू अने आरोप्यमाणनू वैयधिकरण्य छे; आरोपविषय पचमी विभक्तिमां छे अने आरोप्यमाण प्रथमामां छे. ए वैयधिकरण्यवाद्या दृष्टातोमां पचमी प्रतिविधान(बदला)ना अर्थमा होय एम मारुं धारवू छे". स्पष्टता

८, जघाल-मजल बरती, प्रवामी, गामातरु करनार

९ आ वैदिक प्रयोग साथे 'तिलेभ्य प्रतिबच्छति नापान्' ए लौकिक प्रयोग सरस्वावा लोग छे. लौकिक दृष्टातमा एक बदल धीजानु ग्रहण विनिमयात्मक छे, वैदिकमा उपचारात्मक छे ।

सारं एक ज दृष्टांत लेह्ये. 'नाभ्यां आसीदुन्तरिक्षम् ।' एटले यज्ञपुरुषनी नाभि बदल अंतरिक्षनूं विधान थयूं, नाभिनुं स्थान अंतरिक्षे लीधूं, अंतरिक्षमां नाभिनी कल्पना थई; अर्थात् नाभिनो आरोप करवामां आव्यो. आरोप ज सर्व दृष्टांतमां विवक्षित छे, ते वात ऋचा १२ मां साथे साथे सामानाधिकरण्यनी अने वैयधिकरण्यनी रचनाना प्रयोगथी प्रतीत थाय छे. ए ऋचानां पहेलां त्रण पदमां उत्पात्तनो अर्थ विवक्षित छे—एटलेके यज्ञपुरुषना मुखमांथी ब्राह्मण बाहुयुगमांथी क्षत्रिय अने ऊरुयुगमांथी वैश्य उत्पन्न थयो एवो भाव छे, एम तो कोइ आ जमानामां कहेशे नहि. जो कहेवा इच्छशे, तो ऋचा ११ तेनूं म्हो बंध करी देशे. एमां जुदा जुदा अंगनी शी रीते कल्पना थई, एवो प्रश्न ऊठाव्यो छे; अने तेना उत्तर रूपे ते पछीनी ऋचाओमां ए अंगो कल्पी बताववामां आव्यां छे. बळी ऋचा ११ ना व्यकल्पयन् बोलने अर्थमां पूरेपूरी रीते मळतो अने रचनामां लेखामात्र ज तेनाथी भिन्न अकल्पयन् बोलऋचा १४मां वापरेलो छे, ते पण वाचकनूं आरोपपक्ष तरफ ध्यान खेचे छे. आ कारणथी उक्त ऋचाओमां उत्पत्ति अर्थनी विवक्षा नथी—आरोप अर्थनी ज छे, ए निर्णयथी हूं अनुवाद करवामां दोरायो छूं.

ऋचा १५ मां याज्ञिकी प्रक्रिया अनुसार परिधि अने समिध्नी योजना करवामां आवी छे. एमां आरोपनो अतिदेश करवो अनावश्यक छे. यज्ञपुरुषने बलि कल्पीने आदरेला यज्ञसमारंभनूं आलंकारिक वर्णन अहाँ समाप्त थाय छे.

ऋचा १६ मां प्रस्तुत यजनविधाननो आदियजनविधान तरीके उल्लेख कर्यो छे. ए यजनविधान वडे देवी दुलोकने पामे छे अने प्राक्तन देवोना समागममां वसे छे. आ फलश्रुतिनी ऋचा छे. एमां कहेला प्राक्तन देवो (पूर्वे देवाः) बोल ऋक्कालनी पूर्वना देवोने लक्षित करे छे. ए प्राचीनतर देवो ते, ग्रीक वगेरे टोळांना अने आर्यटोळाना पूर्वजो एकत्र

वसता हरो, तेभो बडे पूजाता देवो होवा संभवे छे. तेओमांना वै. घोसू-
ग्री. झ्यूस-स्के. त्यूस जेवा रब्द्याखड्या देव सिचाय अन्यनां नाम 'मूली
जवामां आख्यां जणायछे, कारण के तेमनी ख्याति जाळवी राखे एवं
स्थायी साहित्य हिंदजर्मनीय एकत्रवासी लोकमां ते अत्यंत प्राचीन काळे
उत्पन्न थयूं न हतूं. अभिन्न निवासस्थानमां जो साहित्य खेडायूं होत, तो
भिन्ननिवासी टोळानूं, ते केटलेफ अंशे मौलिक साहित्य बनी जूनामां जूनां
संस्मरणो जाळवी राखत; अने वधां टोळानीं भापाओ अने सर्वनी देववर्गनी
भावना जेम परस्पर मळती आवे छे तेम, एमना साहित्यनी पधरचनामां पण
मळतापणाना अंश सचवाई रहेला दृष्टिगोचर थात.

२८ 'सायणाचार्य पुरुषसूक्तने सृष्टिप्रतिपादक सूक्त फहे छे. भाष्यमां ए
सृष्टिनो, पूर्व सृष्टि अने उत्तर सृष्टि, एवो विवेक कयो छे. आदिपुरुषथी
विराज् अने विराज्थी अपरपुरुष प्रगटे छे; ए पूर्व सृष्टि. एना विधायक
पूर्व देव (पूर्व देवाः) कह्या छे. तेमने 'साध्याः' विशेषण सूक्तमां लगाडथूं
छे; तेनो भाष्यमां 'विराज्नी उत्पत्तिना साधक' एवो अर्थ कयो छे. उत्तर
सृष्टिमां पृषदाय्य अने वायव्य पशु आरण्य पशु तथा ग्राम्य पशु, ऋच्
सामन् तथा यजुस् अने छन्दस्, अश्वदि गवादि अने अजादि पाळेलां
जानवर, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य अने शूद्र, चंद्र सूर्य इंद्र तथा अग्नि अने वायु,
अंतरिक्ष धुलोक तथा भूलोक अने दिशाओ, उपरांत भाष्यकारना सूचन
प्रमाणे सात छन्दसूनो अने बार मास पांच ऋतु त्रण लोक तथा एरु
आदित्य ए एकवीसना समूहनो समावेश थाय छे. ए सौ अपरपुरुषनां
अंगोमांथी प्रगटे छे. ए उत्तर सृष्टिना विधायक अपर देव कह्या छे. तेमने
पण 'साव्य' विशेषण लगाडेल्ले छे, जेनो भाष्यमां 'सृष्टिसाधनयोग्य'
एवो अर्थ आप्यो छे. पूर्व सृष्टिनुं उपकरण भाष्य प्रमाणे आदिपुरुष अने
उत्तर सृष्टिनुं अपरपुरुष छे. पहिलां पूर्व देवो आदिपुरुषमांथी विराज् अने
अपरपुरुष उपजावे छे; पण ते शी रीते, आदिपुरुषना यज्ञी के अन्यथा,

ए भाष्यकारे जणाव्यु नथी. पत्नी अपर देवो पुरुषनो अर्थात् अपरपुरुषनो यज्ञ करी उत्तर सृष्टि ऊपजावे छे, एवो भाष्यमां स्पष्ट उल्लेख कर्यो छे.

आदिपुरुषने भाष्यमां ब्रह्मांडात्मक देहनो देही कह्यो छे; अने ब्रह्मांडांतःपाती असंख्य प्राणीओना मस्तकादि अवयवोने आदिपुरुषना ते ते अवयवो मान्या छे. ए आदिपुरुषने ऋचा १ ना भाष्यमां विराजू आल्याथी ओळखाव्यो छे. आगळ जतां ऋचा ५ ना व्याख्यानमां उक्त आदिपुरुषना ब्रह्मांडदेहना विशे पुंलिंग विराजू संज्ञानो प्रयोग कर्यो छे. ते विराजूथी प्रगटेलो अपरपुरुष ते ब्रह्मांडदेहाभिमानिदेवात्मक जाव. सूक्तमां विराजू शब्दनी देहीमां अने देहमां एम द्विधा योजना जे करवामां आवेली छे, ते मूझवनारी छे.

भगवान भाष्यकार पूर्व सृष्टिना विधायक तरीके पूर्व देवोनो निर्देश करे छे ते कया, एवो प्रश्न उपस्थित थाय छे. तेमने सृष्टिकार्य अधूर्त केम मूकवूं पडचूं, ए वोजो प्रश्न छे. उत्तर सृष्टिना विधायक देवो अर्थात् अपर देवो जे कहा छे तेओमां इंद्र तथा अग्नि आवी जाय के नहि, ए पण एक सवाल छे. जो आवी जाय, तो पूर्वदेवांतर्गत इंद्र तथा अग्नि उत्तर सृष्टिमां गणावेला इंद्र तथा अग्निने सरजे छे ते कथननो खुलासो जो करवो, ते पग प्रष्टव्य छे.

आचार्यश्री ऋचा १ मां भूमि बोल चालु 'भूमि' ना अर्थमां नहि, पण ब्रह्मांडगोलकना अर्थमां ले छे. ए अर्थ शी रीते ऊपजाववो ? आदिपुरुष अने ब्रह्मांडगोलक वच्चे व्यापक अने व्याप्यनो संबंध ऋचामां कह्यो छे. ए आदिपुरुषनूं महानपणूं निर्देश्य होतां ब्रह्मांडगोलकथी मात्र दण अंगुलपूर अधिकतानी मर्यादा बांधेली लेवी पडे छे, ते शूं बराबर छे ?

ऋचा ४ मां आदिपुरुषने चतुर्थांशरूपे चेतन अने अचेतनमां व्यापतो वर्णव्यो छे, ते चेतन अने अचेतन कयां ? उत्तर सृष्टिनां तो होई शके नहि; केमके ते तो अपर देवोना हाये उत्तर काळमां अपरपुरुषमांथी प्रगटे छे. भाष्यकार

પ્રસ્તુત ઋચાના ચોથા ચરણમાં સસર્જ ક્રિયાપદ અધ્યાહાર છે છે, અને એ શબ્દની પૂર્તિથી 'અપરપુરુપે પછી ભૂમિ તથા શરોરો (પુરઃ) સરજ્યાં' એમ વ્યાખ્યાન આપે છે^{૧૦}. પરંતુ સર્જ જોવો સ્વેસ્વરો મુદાનો વોલ, વાક્યમાં સર્જનક્રિયાનો ધ્વંજક કોઈ શબ્દ ન હોવા છતાં, અધ્યાહાર લેઈ શકાય સ્વરો ?

ઋચા ૬ માં સૃષ્ટિપ્રતિપાદક યજ્ઞસમારંભના આજ્યાદ ઉપસ્કર તરીકે વસંતાદિનો નિર્દેશ છે. પણ ઋચા ૧૫ ઉપરના માપ્યમાં પંચ ઋતુને તો એકવીસ સમિધ્માં ગણી લીધી છે. આનું સમાધાન શી રીતે કરવું ?

ઋચા ૮ માં અપરપુરુપ વડે આદરાયલા યજ્ઞમાં આજ્ય સંમૃત કહ્યું છે અને ઋચા ૫ માં વસંતનું આજ્ય તરીકે વિધાન કર્યાના ઉલ્લેખ છે. એમાં પરસ્પર વિરોધ જોવું કંઈ લાગતું નથી ?

ઋચા ૧૨ માં અપરપુરુપના મુખથી બ્રાહ્મણ અને તરત જ ઋચા ૧૩ માં ઈંદ્ર તથા અગ્નિ ઉત્પન્ન થયાનું કહ્યું છે; તેવી જ રીતે ઋચા ૧૨ માં પગથી શૂદ્રની અને ઋચા ૧૩ માં પૃથ્વીની ઉત્પત્તિ માલવી છે; તેનું કેમ ?

ઋચા ૧૪ માં અપર દેવોએ અપરપુરુપમાંથી ભૂમિ સરજેલી કહી છે, તે કથન ઋચા ૫ માં અપરપુરુપે ભૂમિ સરજ્યા વિશેના માપ્યકારના નિર્દેશ સાથે શી રીતે ઘટાવવું ?

ઋચા ૧૫ ના માપ્યમાં ગાયત્રી આદિ સાત છન્દસ્નો યજ્ઞના સાત પરિધિ તરીકે નિર્દેશ કર્યો છે અને વાર માસ પાંચ ઋતુ ત્રણ લોક તથા એક આદિત્ય એ એકવીસના સમૂહનું એકવીસ સમિધ્ તરીકે નિરૂપણ છે. પરંતુ પાંચ ઋતુ પૈકી પ્રગનું પ્રહણ તો ઋચા ૮ માં કરાઈ ચૂક્યું છે. વઝી આદિત્ય શબ્દ સૂર્યના અર્થમાં લેઈએ, તો તેનું પ્રહણ પણ ઋચા ૧૪ માં

૧૦ આકાશા સંનિધિ યોગ્યતા આદિ અર્થનિર્ણાયક સાધનથી અધ્યાહાર રહેલો શબ્દ પૂરો પાડી શકાય છે 'યથ નિમ્ન પરશુના યથેન મધુસપિથા । યથેન સ્વર્ણરાયાર્થે' સર્વેષ્વ કદુરેવ સ ॥' એ શ્લોકમા પરશુના ષષ્ટેરે પદ દિનસિ આદિ ક્રિયાપદ માગી જ લે છે, અન્યથા નિર્વાદ શક્ય જ નથી. તેનો પ્રત્યગ ઋચા ૪ માં ઉપસ્થિત થતો નથી, કે સસર્જ ક્રિયાપદ અધ્યાહાર લેવું પડે.

કરાઈ ચૂક્યું છે. પરિધિ અને સમિધ્ની ઘટના વિશે વીજો પક્ષ પળ છે. તે પક્ષે ક્ષીરોદાદિ સાત સમુદ્રની સાત પરિધિરૂપે અને ગાયત્ર્યાદિ સપ્તક અતિ-જગત્યાદિ સપ્તક તથા કૃત્યાદિ સપ્તક એ ત્રણ છન્દઃસપ્તકની એકવીસ સમિધ્રૂપે ગણના કરવામાં આવે છે. હવે ઋક્ષાલના ઋપિઓને જોકે સમુદ્ર અજાણ્યો ન હતો; તથાપિ ક્ષીરોદાદિ સપ્ત સમુદ્ર તો પૌરાણ કાઠ્ઠની કલ્પના છે. તેવી જ રીતે કૃત્યાદિ છન્દઃસપ્તક ઋક્ષાલમાં અજ્ઞાત છે. કૃતિ પ્રકૃતિ આદિ પદ્યરચના ઋગ્વેદમાં શોધી જડતી નથી. સદગત રણછોટમાઈ ઉદયરામે એમના રણપિંગળમાં કૃત્યાદિનાં ઉદાહરણ આપ્યાં છે; પણ તે પદ્ય નથી, ગદ્ય છે. એ ગદ્યાત્મક યજુર્મંત્રો છે, તે વાત બાજુ ઉપર મૂકતાં પણ એક જ ઋચાના અર્થના સંબંધમાં આમ વે પક્ષ ઊભા થવા તે ઉક્ત ઋચાનો ચોકસ અર્થ મૂલાઈ ગયો છે એવું અનુમાન બાંધવાનું કારણ બને છે.

ઉપર દશવિલી અનેક શંકાઓ, પુરુપસૂક્તનો સૃષ્ટિપ્રતિપાદક અર્થ જે કરવામાં આવે છે, તેની વિરુદ્ધ જાય છે. તેને લીધે એ સૂક્તને સૃષ્ટિપ્રતિ-પાદક અર્થમાં લેતાં હું પાછો હટ્ટૂ છું.

૨૯ પ્રસ્તુત સૂક્તમાં યજ્ઞવિધાની પરિમાપાને અનુસરીને યજ્ઞ વિશે પુરુપબલિ તરીકે ઉપચાર છે. તે ઉપચાર ક્વચિત્ અવ્યવસાનની અને અન્યત્ર અધ્યારોપની પદ્ધતિએ કરેલો છે. ઋક્ષાલના દેવાર્ચનનો પ્રકાર માત્ર યજ્ઞ-સમારંભ હતો. તેના સાર્વત્રિક પ્રચારને લીધે રૂઢ થયેલા ‘પુરુપેણ હવિષા યજ્ઞમતન્વત્,’ ‘યજ્ઞેન યજ્ઞમયજન્ત’ આદિ પ્રયોગ સૂક્તમાં દર્શન દે છે. પરિધિ અને સમિધ્નો ઉલ્લેખ પણ યાજ્ઞિકી વ્યવહારુ માપાના પ્રસારને લીધે છે. આ પ્રયોગો ઋક્ષાલમાં રૂઢ અને સુગમ છતાં તે પછીના કાઠ્ઠમાં વપરાટમાંથી જતા રહ્યા પડેલે કરીને દુર્ગમ બન્યા. વર્તમાન કાઠ્ઠના યજ્ઞસમારંભમાં પિષ્ટ-પશુ કલ્પવામાં આવે છે, તેને બદલે ઋક્ષાલમાં મનુષ્યાવધિ પ્રાણીનું પશુ તરીકે વિધાન થતું હતું. આથી આદિપુરુપને અર્પણના યજ્ઞ વિશે પુરુપપશુનો ઉપચાર કરવામાં આવ્યો છે. ‘યજ્ઞં પુરુપમ્’ (૭) એ ઉદાહરણમા અધ્યારોપાત્મક

‘ઉપચાર હોવાથી આરોપવિપય અને આરોપ્યમાણ વંને’ ઉક્ત છે. પરંતુ ‘પુરુષમ્’ (૧૧), ‘પુરુષેણ હવિષા’ (૬) અને ‘પુરુષં મથુમ્’ (૧૫) એ ઉદાહરણોમાં અવ્યવસાનાત્મક ઉપચાર હોવાથી આરોપવિપય ગમ્યમાન રહે છે.

૩૦ આ સૂક્ત યજ્ઞવિદ્યાની પ્રાચીનતાના નિરૂપણ સાથે તેનો મહિમા ગાય છે અને તેની ફલશ્રુતિનું શ્રવણ કરાવે છે. સંહિતાઓ ગોટવાઈ એ ન હતી તે પહેલાં યજ્ઞવિદ્યા હતી. એ યજ્ઞવિદ્યાના અવતાર પૂર્વે વિરાજ્ઞ નામે આદ્ય પદ્યરચના ઉદ્ભવે છે. તેમાંથી સમય જતાં ગાયત્રી દ્વિપદા-વિરાજ્ઞ અનુષ્ટુભ્ ત્રિષ્ટુભ્ જગતી આદિ છંદો ઉદય પામે છે; અને યજ્ઞવિદ્યા માટે ઋક્સાહિત્ય ઉત્પન્ન થાય છે તેમાં સાકાર થઈ તે દર્શન દે છે. ઋચાઓનો નવો અવતાર જે સામ તેનો અને યજ્ઞકર્મમાં ડગલે ડગલે જરૂરના જે યજુર્મત્રો તેનો સમૂહ ઊભો થાય છે. વીજા શબ્દમાં કહિયે તો ઋચ્ સામન્ અને યજુસ્થી હોતા ઉદ્ગાતા અને અચ્ચર્યુનું કામ કરનારા બ્રહ્મભાવિત બ્રાહ્મણોનો ગણ અસ્તિત્વમાં આવે છે. પરિધિ, સમિધ્, હવિસ્, આગ્ન્ય ધ્યાદિ યજ્ઞવિદ્યાની પરિભાષા ઘડાય છે. તે કાઠ્ઠમાં યજ્ઞની પ્રક્રિયા સર્વહુત્ આદિ વિરોપના સ્વરૂપમાં વિસ્તાર પામી હતી. યજ્ઞપથનાં વિવિધ અંગનો વિવેક પણ અવગત હતો. ઈંદ્ર અને અગ્નિને દેવોમાં પ્રાધાન્ય પ્રાપ્ત થયું હતું. યજ્ઞની ઉત્પત્તિ પ્રાચીન ઋષિઓ અને દેવોથી થઈ હતી. તેમણે આદિપુરુષનું યજ્ઞ રૂપી પુરુષબલિ વડે અર્ચન કર્યું હતું^૧. એ આદ્ય યજ્ઞવિદ્યાના પ્રભાવે દેવો ધુલોકને પામ્યાની માન્યતા પસરી હતી. અનેકદેવવાદમાંથી સર્વ દેવોની સમટિરૂપ સમર ભરેલા પુરુષનો એકેશ્વરવાદ પ્રગટી ચૂક્યો હતો. યજ્ઞનો જેનાથી અવતાર કહેલ છે, તે વિરાજ્ઞ પૂર્વોક્ત પંચવર્ણ પદ્યરચના છે. એ પદ્ય-વંધ સૂક્તો તે પહેલાં હવનકર્મ નહિ થતાં હોય એમ કંઈ કહેવું નથી; તે થતાં હશે; પણ તે મધ્ય યાગીના અધ્યહારથી થતાં હશે. વિવિધ હિંદુધર્મ-

૧૧ પુરુષ શબ્દની ધ્યાદિપુરુષ તેમ જ અપરપુરુષ વિદ્યા અથવા અપરપુરુષ પરચે ‘શૃણાતિ વિશ્વમિતિ પુરુષઃ ।’ એવી વ્યુત્પત્તિ મારે યોજવી પડી છે. બાહ્ય ‘પુરિ દેવે ઇતિ પુરુષઃ ।’ એ નિર્વચન ઉભય પ્રયોગમાં વંધ વેદ્યત્તું નથી.

નીય માપાઓની પદ્ધત્તના વિચારિયે છિયે, તો ઋગ્વેદ અને અવેસ્તા સિવાય અન્યત્ર વર્ણસંત્યાત્મક પદ્ધત્ત દષ્ટિયે પડતા નથી. તે ઉપરથી અનુમાન વંધાય છે, કે છૂટાં પડનારાં ગ્રીક આદિ ટોઝાં હિંદુસ્તાનીય વંધુઓના ઉક્ત પદ્ધત્તના ઉદય પહેલાં છૂટાં પડ્યાં હોવાં જોઈયે.

૩૧ પુરુષ સૂક્તની છેલ્લી ઋચા ત્રિષ્ટુભૂ હંદમાં છે. તે પહેલાની વધી ં ઋચામાં અનુષ્ટુભૂનો પ્રયોગ છે. પ્રસ્તુત પંદર અનુષ્ટુભૂ પૈકી અગિયારમા હંદનું ચોથું ચરણ નોંધ લેવા જોગ છે. ંમાં વાવા પદાંત યોજેલ છે. પ્રસ્તાવ ૧૫ માં જળાવ્યા પ્રમાણે અનુષ્ટુભૂના વીજા અને ચોથા ચરણમાં કવા પદાંત અપેક્ષિત છે. ંજ પદાંત ગાયત્રી હંદમાં સાઠસિત્તેર ટકા અને મિશ્ર હંદના તથા સંમિશ્ર પ્રગાયના ગાયત્ર પદમાં સોં સો ટકા નજરે પડે છે. તે જોતાં ઋચા ૧૧ ની ‘કા ઋઠૂ પાદાં ઉચ્ચેતે ।’ ં પદમાં વિરામના સંકેતથી વાવા પદાંતનો પ્રયોગ અપવાદમૂત્ત છે. ંનો વપરાટ ગાયત્રીમાં ત્રીસચાઠીસ અને ત્રિષ્ટુભૂમાં લગભગ સો ટકા જોવામાં આવે છે. નિર્દિષ્ટ અપવાદમૂત્ત વાવા ઉપર દષ્ટિ ઠેરઘતાં ંવો માસ થાય છે કે પુરુષસૂક્તનો આવિર્ભાવ ત્રિષ્ટુભૂ પડી, પળ મિશ્ર તથા સંમિશ્ર હંદ પહેલાં થયો હોય.

૩૨ આલ્યાનકાલની પદ્ધત્તનામાં ઉત્તરતા પહેલાં શ્રદ્ધાલની પદ્ધત્તના તરફ સિંહાવલોકનન્યાયે દષ્ટિ ફેરવો જઈયે અને તરી આવતાં તરવો યાદદાસ્તની પોથીમાં ટપકાવી લેઈયે. અજ્ઞાત દેશકાઠમાં ંકવાર જ્યારે હિંદુર્જર્મનીય માપાકુટુંબની મૌલિક વોલી વોલનારાં ટોઝાં ંકત્ર વસતાં હતાં, ત્યારે ઘોસૂ, વરુણ, ઘાવાપૃથિવી આદિ સ્મરણમાં ટકી રહેલા અને વીજા વિસ્મરણને શરણ થયેલા દેવોનું યજનપૂજન થતું હતું. તે પૂર્વે દેવોનો પ્રાક્તન સ્તુતિપાઠ અર્વાક્તન નમકસૂક્તની પદ્ધતિયે કેવઠ ગઘાત્મક હતો. તેમનું યજનકર્મ પ્રત્યેક મનુષ્ય વીજાની સહાયતા વગર સરઠ્ઠતાથી ફરી શકે ંવું સાદું અને ટૂંકું હતું. ં ઈતિહાસાતીત કાઠમાં ંકેશ્વરવાદ ઉદ્ભવ્યો ન હતો. અમિન્ન નિવાસમાંથી મિન્ન મિન્ન ટોઝાં છૂટાં પડ્યાં તે વસ્તે મૂલ-

સ્થાનની દેવભાવના અને ઢોલી સામાન્ય પૂંજી તરીકે તેઓ લેતાં ગયાં. તેનો ઉલ્લેખ રપટ ઝકેલાય એમ તેમની સંસ્કૃતિના પદમાં ઉકીર્ણ છે. એ પ્રાકૃત પ્રસ્થાન પછી હિંદુદરાનીય ટોઝાના વાસમાં કેટલેક ફાઝે પઘરચનાનો પ્રાદુર્ભાવ થયો. આહુતિઁ આહુતિઁ ઉચ્ચારાતા 'અગ્રયે સ્વાહા,' 'હૃદમગ્રયે ન મમ' ઇત્યાદિ વાન્યમાં સંવાદના વર્ણસંલ્યાત્મક તત્ત્વનું દર્શન સ્ફુરતાં વિરાજ્ નામે ઢૂંકામાં ઢૂંકી પઘરચના પ્રગટી. તેણે ઇંદોવિદ્યાનું વોજ રોપ્યું. પઠી ગાયત્રી, અનુષ્ટુભ્, ત્રિષ્ટુભ્, જગતી, એ પદાંતવિરામવાઝા શુદ્ધ વર્ણબંધ રચાયા; ગાયત્ર તથા જાગત, પદના મિશ્રણના બનેલા મિશ્ર ઇંદ પ્રચારમાં આયા; અને સામગાનને અનુકૂલ સંમિશ્ર ઇંદ પ્રગાથની પળ યોજના થઈ. ઋકાલની પઘરચનામાં પદની સમાપ્તિ કેવલ અને વિવર્ધિત સ્થિર વર્ણ દ્વારા વતાવાતી હતી. તે સ્થિરવર્ણનો પ્રયોગ વર્ણવુદ્ધિથી જ ફરવામાં આવતો હતો, નહિ કે રૂપવુદ્ધિથી. વૈરાજ ગાયત્ર આદિ પદ અવિભક્ત એકમરૂપ હતાં, એટલેકે એના ભાગ પડતા ન હતા. વિપમ અને સમ પદનો મિન્ન પદાંત વઢે વિવેક માત્ર અનુષ્ટુભ્ ઇંદમાં જ નવોસવો ચાલુ થવા માંઢ્યો હતો. સૂક્તની સમાપ્તિ મિન્ન ઇંદથી સૂચવવાની પદ્ધતિ પળ પ્રચારમાં હતી. 'મહા હેતવાઝી દયાઝી જ, મા તું' જેવી ટેકની પંક્તિની યોજના પળ ઘળા જૂના સમયથી જાણવામાં હતી; અને કુંડલિયામાં તથા ચંદ્રાવલીમાં વપરાતી કુંડલિના જેવી રચનાનો ઉપયોગ પળ ઉત્તર કાઝમાં શરૂ થયો હતો.

૩૩ આર્ય ઇંદોવિદ્યાના વર્ણબંધનાં મૌલિક પદ ત્રણ જ છે, વૈરાજ, ગાયત્ર અને ત્રૈષ્ટુભ્. વિવિધ શુદ્ધ ઇંદ મિશ્ર ઇંદ અને પ્રગાથનો વિકાસ એ ત્રણ પદમાંથી થયો છે. પ્રાચીન વર્ણબંધનાં આ મૌલિક તત્ત્વ સાથે ત્રણ ચાર શતકની હયાતી ધરાવતા અર્વાચીન વર્ણબંધનાં મૌલિક તત્ત્વ સરસ્વાવવાથી ઇંદોવિદ્યાના પ્રદેશમાં ઋષિઓની, સર્ગશક્તિનો કંદૂક લ્યાલ આવે છે. વર્તમાન કાઝનો અભંગ એકવર્ણ તથા દ્વિવર્ણ સંધિનો અને કવિત તથા પયાર ચતુર્વર્ણ સંધિના વનેલ છે! આ ત્રણથી ત્રોથો સંધિ અઢ્યાપિ ઉઢ્ઢવ્યો નથી, એ ત્રણ

સંધિનો વિવિધ વર્ણવંધાત્મક વિસ્તાર પણ વહુ જ પરિમિત છે. પ્રાચીન કાઠનાં વૈરાજ, ગાયત્ર અને ત્રૈપ્લુભ પદ પાંચ ઓઠ અને અગિયાર વર્ણનાં બનેલાં છે. તે ઇટલાં ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિગત છતાં સંધિભેદરહિત છે. પ્રત્યેક પદનો સંવાદ પણ ન્યારો છે અને તેનો વિવિધ છંદના આકારમાં વિસ્તાર વહુ વહોઠો છે. વિશેષમાં પ્રાચીન વર્ણવંધ પાઠ્ય છે. વર્તમાન અભંગ કવિત અને પયાર છંદમાં વધતૂઓહૂં ગેયતત્વ સમાયટું હોતાં કરી તે શુદ્ધ પાઠ્ય બની શકતા નથી. આર્ષ વૈરાજ, ગાયત્ર અને ત્રૈપ્લુભ પદના છંદ આપણા સાહિત્યમાં—સ્વાસ કરીને નાટકસાહિત્યમાં ઉત્તારવાથી આપણા વર્ણવંધની ઝગપ કંદૂક દૂર થાય એમ છે. આર્ષ સાહિત્યનો વિનાધનવેલે પ્રગટ થયેલો એ નિધિ આપણા છે. તે ભોગવો વિશેષ સમૃદ્ધિમાન થવું કયા કલાપ્રિયને પ્રીતિકર નહિ હોય ?

૩૪ પદ્યરચનાની ઉત્પત્તિને પગલે સંગીતના પ્રાચીન પ્રસ્થાનનો પણ ઉદય થાય છે; ઋચામાંથી સામ પ્રગટે છે. પ્રાચીન પંડિતો ઋચાને સામની યોનિ ઇટલે તેનું ઉત્પત્તિસ્થાન કહે છે. સામગાનને અનુકૂળ પદ્યવંધ ગાયત્રી અને પ્રગાધ જ નીવડે છે. એ છંદ મૂળ ઋચાના સ્વરૂપમાં પાઠ્ય છે અને નવા સામના સ્વરૂપમાં ગેય બને છે. ઋચા અને સામ વંનેનું સ્થૂલ શરીર છંદ છે એ અભિપ્રાયથી પુરુપસૂક્તમાં 'ઋચ્ઃ' અને 'સામાનિ'ના ઉલ્લેખ સાથે 'છન્દાંસિ'નો ઉલ્લેખ જોડ્યો છે; અને ગદ્યાત્મક સ્થૂલ શરીરના યજુમને નોંઘા નિર્દેશથી અલગ રાખેલ છે. આ અતિ પ્રાચીન કાઠનાં સંહિતાઓ ગૂંથાઈ ન હતી અને તેમનો ત્રયી સંજાથી સમુચ્ચય કરાયો ન હતો. ઋક્ષાલ સંહિતાકાલથી પ્રાચીન છે.

૩૫ આર્ષ છંદોત્તર વાણીનો મહિમા શ્રીત અને સૌત્ર સાહિત્યમાં વહુ વધી જાય છે. ઋક્ષાલના છંદ દેવ તરીકે પૂજા પામે છે અને તેમને યજ્ઞભાગ પણ મળે છે. એ દેવ આપણા સાહિત્યમંદિરમાં પણ પ્રતિષ્ઠિત થાઓ અને પૂજાઓ !

परिशिष्ट.

अवेस्तानी पद्यरचना,

अवेस्ता प पारसीओनुं पुराणुं धर्मपुस्तक छे. संस्कृत अभ्यस्तिस् किंवा अभ्यस्तिः, इद अइमिशतिश्, पहेलघी अपिस्ताक्, संस्कृत छायाटिप्पण रचनार नइर्योसने प्रयुक्त अपिस्ता अने सांप्रत काळमां रुढ अवेस्ता के अद्यस्ता, प पदनी अर्थ भणतर थाय छे. प पवित्र भणतरनो केटलोक भाग पद्यात्मक छे.

उपर कहेला आवेस्तिक भाषनी पद्यरचना अमुक अंशमां आर्चिक पद्यरचना साथे मळती आवे छे अने अमुक अंशमां तेनाथी जुदी पढे छे. एमां योजेला पद्यबंध वधा प घर्णमेळ छे. प्रत्येक पद्यबंधनुं चरण पांच अक्षरनुं, आठ अक्षरनु के अगियार अक्षरनुं होय छे, जेनो हं अनुक्रमे वैराज, गायत्र अने त्रैष्टुभ संज्ञाथी व्यवहार करूं हूं. घखते उक्त चरणमां एकाद अक्षर अधिक के न्यून पण होय छे. आर्चिक पद्यरचनानां वैजिक चरणो पण वैराज गायत्र अने त्रैष्टुभ छे अने ए चरणमां पण अप्रोक्त न्यूनधिकता नभायी लेवामां आवे छे. आ अंशो उभय पद्यरचनानां समान छे. ए वेमां जे भिन्नता छे ते पदांतना अने चरणनी संख्याना विषयमां छे. आर्चिक छंदमां चरणना छंदे स्थिर घर्ण होय छे अने चरणनी सरस्या बहुवा निश्चित होय छे. आवेस्तिक पद्यरचनाए आ वे बंधननो त्याग कर्यां छे. आर्चिक गायत्र अने त्रैष्टुभ चरणनो अंत्य भाग अनुक्रमे कथा अने कथापानो बनेलो जोयामां आवे छे. आवेस्तिक चरणना अंत्य भागमां उक्त स्थिर अक्षर अपेक्षित नथी. ऋग्वेदमां ध्रुण गायत्र चरणनो गायत्री अने चारनो अनुष्टुभ छंद बने छे. आयो विवेक अवेस्तामां छे नहि; एना अष्टाक्षर पद्यबंधनां तो घेयी मांडी दस पर्यंत चरण होय छे. चरणनी संख्याने अथलघीने ए विविध पद्यबंध जुदा जुदा नामथी ओळखायवामां आयता नथी.

आवेस्तिक पद्यरचना उक्त बंधनोना त्यागने लीधे आर्चिक पद्यरचनानी सरसामणीमां बहु सादी छे. परंतु अवेस्तानी घर्ण-योजना कइक विलक्षण छे. ए विलक्षणता लक्षमां लीधा अगर

पद्यध वैराज गायत्र अने त्रैष्टुभ पैकी कया चरणतो छे ते निर्धारधुं लगभग अशक्य थई पडे छे. वैदिक विधासस्-देवासः- देवासो पदमां व्रण अक्षर छे ए धोल आर्चेस्तिक वर्णयोजनामां दपवाओहो पद्या स्वरूपे पांच वर्णतो ज्ञानो रहे छे. वैदिक पदना पहेला अने छेला वर्णमांना ए अने ओ स्वर छूटा पडे छे; अने श्रीजा वर्णतो उच्चमध्यमन छूटो पडी प्राणावशेष वनो उपप्राणनी रीते ओ ना पढखामां पसवानु करे छे^१. लिपिमां जेनो पांच वर्णथी निर्देश कर्यो छे, ते बोल मूले तो व्रण वर्णनो ज उच्चारतो हशे वर्णयोजनाने अगे उद्भवतो आ तर्क आवेस्तिक पद्यवधोना चरणनी घटना विचारतां बूढ थाय छे. आगामी सुतकालना व्याख्यानमां पकीकरण विधानतो उल्लेख छे तेने अनुसरी पद्यवर्णात्मक दपवाओहो बोलनू वस्तुगत त्रिवर्णात्मक दपवाओहो स्वरूप नीपजी आवे छे विकृत योजनावाळा चरणनी शुद्ध योजना साध्या पछी चरणनी ऊठवणीनो तरत ऊकेल पडे छे.

आटली प्रास्ताविक सूचना पछी आवेस्तिक त्रिविध चरणना विविध पद्यध विचारिये दूकांमां दूकू चरण वैराज छे, तेना पद्यवधनो वृष्टांत नीचे प्रमाणे छे.

अप वदिशत ।

अघ सपशत ।

दरेसाम थ्या ।

पूरि थ्या जिन्याम ।

हमेम् थ्या हव्म ॥

आ पांच वैराज चरणो पैकी थीजामां एक अक्षर कर्मा अने चौथामां एक जास्ती छे.

वीजू चरण जे गायत्र, तेनार्यो वनेला पद्यवधना ये वृष्टांत नीचे आप्या छे.

यथा अह वैद्यो^२ ।

१ कल्प धनुनासिक आगतक छे.

२ आ मंत्रनी सहा शब्दमा अने पहेलवीमा अनुक्रमे अधुन वैद्य अने अधुन वर छे. ते जोतां पहेला चरणमां हाल बाहू वैद्यो नैणाय

અથ રતુશ્ અષાત્ ચિત્ દ્વા । . .

ઘઙ્ઘેઊશ્ દજા મનઙ્ઙો ।

ડ્યઙોઘનનામ્ અઙ્ઙેઊશ્ મઙ્ઙાઙ્ ।

ક્ષધેમ ચા અહુરાઙ્ આ ।

યિમ્ ત્રિગુઘ્યો દદત્ યાસ્તારેમ્ ॥

આત્ મે અપમ્ પૃથ્થ ઓઙ્ઙત્ ।

હઙોમો અપઘ દૂરઙોપો ।

અઙેમ્ અઙ્ઙિ જરથુશ્ઙ્ ।

ઢઙોમો અપઘ દૂરઙોપો ।

આ મામ્ યાસઙ્ઙહ સ્પિતમ્ ।

મા મામ્ હુન્થઙ્ઙહ યરે તેપ્ ।

અભિ મામ્ સ્તોમને સ્ત૙ધિ ।

યથ મા સોઙ્યન્તો સ્તઘાન્ ॥

એ ઉદાહરણ પૈકી પહેલા પદ્યવંધમાં છ અને ઘોઙામાં આઠ ચરણ છે અને મત્રોમાં ચરણની અદર ઘર્ણની ૫ ન્યૂનાધિક્તા છે

માયત્ર પછીનું ચરણ જે ત્રેષ્ટુમ, તેનાથી વનેલા પદ્યવંધના પળ ઘે દ્વિંત આપૂ છૂ, એક ત્રણ ચરણનો અને ઘોઙો ચારનો

છે તેને વદલે પ્રાચીન કાઢ્ઢમાં અહુન વઢ્યો પાઠ મળાતો હશે, એવો માસ ધાય છે. વઢ્ઢી મંત્ર જોકે હાલ યથા ઘોલથી શરૂ ધાય છે, તથાપિ પથરે તની અહુન વઢ્ય સહા પડી હશે, ત્યારે તો અહુન વઢ્યો ઘોલ જ આરંભે હશે અને યથા ઘોલ તેના પછી ઘોલાતો હશે, એવો પણ માસ મને ધાય છે ધાથીજે મત્રોને આરંભનાં પદાથી ઘોઢ્ઢલાવવાની પઢ્ઢતિ આઘેસ્તિક સાહિત્યમાં સ્ઢ જળાય છે, જુઓ અપેમ્ ઘોહ્, યેઙ્ઙે હાતામ્ આદિ સજ્ઙાઓ ધ્રુતિસાહિત્યમા પણ એવો જ પ્રચાર પ્રવર્તતો જોવામાં આવે છે. ઈસ કિવા દ્વિંતવાસ્ય ઉપનિપદ અને કેન ઉપનિપદ એ નામ ઉક્ત ઉપનિપદના આરમના ઘોલ ઉપરથી જ પઢ્યો છે સરલાવો વઢ્ઢી નાસદીયસૂક્ત, શઙ્ઙાદયસ્તુતિ, મહિમ્નસ્તોત્ર, મહામરસ્તવન. આ ઘર્ષા અઘેસ્તાનો ઙ્ઙંઢો અઘ્યાસ ધરાવનારા ધુરપર વિઢ્ઢાનોના અધિકારની હોઈ હું મારા તર્ક ઉપર માર મૂઢ્ઢવા માગતો નથી અહુન વર એ અઘેસ્તાનો એક જૂનામાં જૂનો મંત્ર મનાય છે મૌલિક અઙ્ઙિશતિશ્ સજ્ઙાને કાલનો ઘસારો લાગ્યો છે, તેવો પ્રસ્તુત મંત્રની સજ્ઙાને લાગ્યો હોય અને પદોના ઙ્ઙમ્ન પરિવર્તન ઘળ ઘર્ષુ હોય, એ સંભવિત છે.

યેઢ્ઢે હાતામ્ આઅત્ યેસ્ને પૃઈતિ ઘઢ્ઢો ।
 મઙ્ઢાઔ અહુરો ઘપયા અષાત્ દ્વા ।
 યાઔઢ્ઢામ્ ચા તાસ્ ચા તાઓસ્ ચા યજમૃદ્વે ॥
 કે વૃધેમ્-જા ધ્વા પોઈ સેઢ્ઢા યોઈ દેન્તી ।
 ચિન્ધા મોઈ દામ્ અહુમ્-તિશ્ રતૂમ્ ધિજ્ઢો ।
 અત્ હોઈ ઘોહુ સ્તોશો જન્તુ મનઢ્ઢા ।
 મઙ્ઢા અઘ્ઢાઈ યઘ્ઢાઈ ઘશી ફઢ્ઢાઈ-ચિત્ ॥

ઉપરના ઘંતે મંત્રોનાં ઘરણ અગિયાર અક્ષરનાં છે. ઘેરાજ અને ગાયત્ર ઘરણનો પેઠે વ્રૃઢ્ઢુમ ઘરણમાં પળ અક્ષરની સંખ્યા ફમી જાસ્તી હોય છે. નીચેના મંત્રના પ્રત્યેક ઘરણમાં ફક ફક અક્ષર ઘધારે છે.

તાઈશ્ ઘાઔ યશ્નાઈશ્ પૃઈતિ સ્તવસે અયેની ।
 મઙ્ઢા અપા ઘઢ્ઢેઢ્ઢશ્ ડ્યઔઘાઈશ્ મનઢ્ઢો ॥

આ પરિશિષ્ટમાં જે છ મંત્ર આયેસ્તિક પઘરચનાના ઢ્ઢુટાંત તરીકે આપ્યા છે, તે પૈકી ઘીજો અને છઢ્ઢો પ ઘે મંત્ર ડ્રીયુત માનશંકર પીતાંવરદાસ મહેતાના ફાર્વસ સમાપ છપાપેલા 'અહુનયર' પ નામના નિવંધમાંથી લીધા છે; પહેલો ડ્રીજો અને પાંચમો પ ઘ્રણ મંત્ર ઢા. પરઘ જઢાંગીર તારાપોરઘાલાના 'પારસી ધર્મમંત્ર અવેસ્તાનો અને વૈદિક છઢોનો મુકાઘલો' પ મઘાલાઘાલા^૩ લેખમાંથી ડુતાર્યા છે; અગે ઘોથી મંત્ર મારા ઉપરના ઢા. તારા-પોરઘાલાના પઞમાંથી સંગ્રહો છે.

पद्यरचनानी ऐतिहासिक आलोचना

दृष्टिपातः ३

आख्यानकालः

१ ऋग्वेदना सरळ वर्णालिक पद्यबंध पछीनो कलाविधानमां तेम ज सर्गशक्तिमां साधेली प्रगतिने लीधे ध्यान लेखनारो जे पद्यबंध, ते बे महा-
 ल्यानो (epics) पुरो पाडे छे. ऋकाल अने आख्यानकाल मच्चे अनेक
 अज्ञात शतकोनुं अंतर छे, ते लांबा गाळासां गद्यप्रधान ब्राह्मणभाग उदय
 पामे छे, ए अतिना मंत्रभागांनी अर्थवादात्मक अनुपुर्ति छे, तेकाळनुं
 आख्यान, अन्वाख्यान, इतिहास, पुराण, नारांसी, गाथा आदि संगृहीत
 अने असंगृहीत साहित्य उत्तर काळना नवा विशाल आख्यानसाहित्यनी
 भूमिका तैयार करे छे, ऐतरेय ब्राह्मणती, शुनःशेपनी कथा जेवी अनेक
 कथाओ नवतर साहित्यना कृति आख्यात संज्ञा पुरी पाडे छे. एकनी
 रूपरेखा अन्यनी रूपरेखाने अनुसरती छे; एकनी वर्णछाया बीजामां उत्तर
 छे; एकतो पद्यप्रवाह इतरमां पण श्रवणने आकर्षे छे, परंतु ए वेगी रूप-
 रेखाता परिमाणमां अने मरोडमां भोरे मेद, तरे छे, वर्णछायानी विविध-
 तामां मनोहर स्तरतम्य विकसे छे, अने पुराणी पद्यगंगासां नवी-गंगोदरीथी
 फूटता लघुगुरुवीचितरंगवाळा वहेण भळे छे;

२ जे महाख्यानोनी पद्यरचना चालु दृष्टिपातनो विषय छे, ते जगतना
 चिरजीवी साहित्यमां अप्रस्थान भोगवनारां रामायण अने महाभारत छे.
 तेमनो विस्तार महासागर सरखो छे. पहिलानुं ग्रंथमान चौबीस हजार अने
 बीजानुं एक लाख श्लोकने आशरे कहेवाय छे. आ असाधारण कदना
 प्रमाणमां पद्यनी विविधता विशाल नथी. नवा इरा ध्यानमां लेवा, उक्त
 महाख्यानोनी आखो अध्याय अथवा तेनो मोटो भाग जे छंदमां रचयो होय
 ते व्यापक अने जे छंद व्यापक न होय ते एकदेशी, ए छंदणीने अनुसरने
 क्रमशः उक्त महाख्यानोनी पद्यरचना तपासिये.

૩૧ રાગાયણ; અને મહાભારત. એ વેમાં પૂર્વોક્ત વધારે પ્રાચીન મનાય છે. એ મહાલ્યાનના; સાત; ભાગ; પાડેલા; છે; તેને; પુરાણ; આર્ષ; સાહિત્યની ' પરિભાષાને' અનુસરતું; કાણ્ડ. નામ આપેલું; છે. પ્રત્યેક કાણ્ડની ' જ્ઞાનામોટા' અધ્યાયમાં ' ર્ચેષ્ણી; કરી; છે. સસપ્ર: મહાલ્યાનમાં ' કુલ છસેંને પિસ્તાલીસ ' અધ્યાય; છે. અમુક પ્રકરણ; કે; પ્રસ્તાવ; વર્ણવતા; પરસ્પર સંવંધ ધરાવતા; શ્લોકનો ' ઇકીકૃત' સમૂહ તે; અધ્યાય; શ્રુતિસાહિત્યનો આ ' ચાલ દૈનિકા' અધ્યયનના ' પરિમાણનો' વાચક; છે; ઋગ્વેદના; સૂક્તની; પેઠે અધ્યાય બહુધા; એક જ; હંદમાં ' રચવામાં' આવે; છે.

૪ રાગાયણનો ' પ્રધાન' વ્યાપક હંદ અનુષ્ટુભ છે. ' છસેં પિસ્તાલીસેં' અધ્યાય ' પૈકી સાતેક' જ ' વાદ' કરતાં ' એ મહાલ્યાનના ' વાકાના અધ્યાય આ હંદમાં ' છે. માત્ર અધ્યાયના અંતે ' વૈવિંધ્ય' સ્વાતર ' વસ્તે' વસ્તે ' હંદ' બદલાય છે. ' એ નવતર હંદની ' નોંધ' એકદેશીના ' પ્રસ્તાવમાં' લેવાશે. અહીં ' તો ' અનુષ્ટુભ આદિ વ્યાપક હંદની આલોચના પ્રસ્તુત છે, તેમાં ' પ્રવૃત્ત રહીશું: ' રામાયણના' વ્યાપક ' અનુષ્ટુભના ' અને ' પૂર્વ' દૃષ્ટિપાતના ' ઋક્સાહિત્યના ' અનુષ્ટુભના' પ્રચારમાં તેમ જ ઘંધારણમાં ધ્યાનપાત્ર મેદ છે. ઋક્ષાલના ' પહેલા ' ચાર ' પ્રધાન' હંદોમાં સૌથી વધારે વપસદ: ત્રિષ્ટુભનો; તેથી ઉત્તરતો: ગાયત્રીનો, તેથી પળ ઉત્તરતો જગતીનો અને જગતીથી એ ઉત્તરતો અનુષ્ટુભનો છે. ઋગ્વેદમાં અને રામાયણમાં એક તરફ એકલો અનુષ્ટુભ લેઈયે અને બીજી તરફ સમસ્ત અન્ય હંદ એકત્ર કરિયે, તો આર્ષિક અનુષ્ટુભને મુકાવલે આલ્યાનિક અનુષ્ટુભનો

૧ મુવહ: તેમ જ કલકતામાં છપાયેલા: રામાયણમાં સર્ગ શબ્દ અધ્યાયને ઘડલે ' વાપરેલો' જોવામાં આવે છે. પરંતુ ' ભવભૂતિ: ઉત્તરરામચરિત' નાટકના ' છટ્ટા-અંકમાં- ' કુશાના મુલે રામાયણના ' શ્લોક' બોલાવે છે, તે પ્રસંગે ચાલચરિતના અંત્ય અધ્યાયના ' એ ' શ્લોક- છે ' એનો ' ઉલ્લેખ કરે ' છે. તે ' ઉપરથી ' પ્રચલિત ' સર્ગ ' વદલ અધ્યાય- શબ્દનો ' મેં ' પ્રયોગ કર્યો છે. મહાભારત તરફ નજર ફેરવતાં ' પળ' આલ્યાન- ' કાલનો ' પરિભાષિક- ' બોલ અધ્યાય ' જ ' ઠરે- છે. ' ભવભૂતિ' એ છતારેલા ' શ્લોક' રા: ૧૧: ૭૭: ૨૬-૨૭ | આંકના- છે. ૧

વપરાટ વ્યસ્ત પ્રમાણમાં વધી જાય છે. આલ્યાનકાલના અનુષ્ટુભના બંધારણમાં પળ તેવી જ સૂચક ભિન્નતા તપાસનારને માલ્દમ પડશે. પદ્યરચનાની દૃષ્ટિએ એ છેદના પ્રત્યેક પદ કિંવા ચરણના બે ભાગ પડે છે, પૂર્વ અને ઉત્તર. ચારે પૂર્વ ભાગ ચાર ચાર વર્ણના બનેલા, અર્ધાત્ વર્ણવદ્ધ જોવામાં આવે છે. ચારે ઉત્તર ભાગમાં કેવલ રૂપ જ નજરે ચડે છે. વીજા અને ચોથા ચરણનો એટલે-કે સમ ચરણનો ઉત્તર ભાગ એકાંતિક લગાલગા એ રૂપચતુષ્કનો બને છે. પહેલા અને ત્રીજા એટલેકે વિષમ ચરણના ઉત્તર ભાગની રચના વૈકલ્પિક છે. તેમાં વહુધા લગાગાગા, ગાલગાગા, ગાગાગાગા, લલલગા અને ગાલલગા એ પાંચ રૂપચતુષ્કમાંથી ગમે તે એક આવે છે. પરંતુ વધારે પ્રચાર લગાગાગા રૂપચતુષ્કનો નજરે પડે છે. પ્રસ્તુત વિકલ્પને લીધે પહેલા અને ત્રીજા ચરણના ઉત્તર ભાગમાં બંધની સરલતા અને ઘટનાની ચિત્રતા સાધી શકાય છે. આલ્યાનિક અનુષ્ટુભ અત્રોક્ત વિશિષ્ટ બંધારણને લીધે વર્ણસંવાદ અને રૂપસંવાદના પ્રવાહોનું સંગમતીર્થ નીવડે છે. વર્ણાત્મક સાદી સટક સાથે સંધાયલા મનોહર રૂપરચનાના છ ઘાટથી આલ્યાનકાલના ઉક્ત સંગમતીર્થનું અવગાહન નીચેનાં અવતરણો^૨ સધાય છે:—

સમ ચરણના ઉત્તર ભાગનો ઘાટ

લગાલગા....કૃતવિદ્યૌ મનસ્વિનૌ । મ.ભા.વિ.પ.૧૫૩।૧૫।

વિષમ ચરણના ઉત્તર ભાગના ઘાટ

લગાગાગા...અશ્વાઃ શોણાઃ પ્રકાશન્તે । મ.ભા.વિ.પ.૧૫૩।૪।

ગાલગાગા....તયોરાસીત્સંપ્રહારઃ । મ. મ.વિ.પ.૧૫૩।૫૩।

ગાગાગાગા!...અધાન્તરિક્ષે નાદોઽભૂત્ । મ.ભા.વિ.પ.૧૫૩।૬૩।

૨ દાહીવ સંવોધનપદ્ધતિથી રામાયણનો યાચના સ્થાપિત ણર્થ નથી. શાંતે તો મહામારતનું વિરાટપર્વ જ ઉક્ત પદ્ધતિએ મગરવર ઓરોએટલ રિત્તર્થે દ્વિન્દિટ ટપ્ટ ટરફથી પૂને મુરંચિત યર્થે વહાર પડ્યું છે. એટલે આલ્યાનસત્ત્વના ઘટનોનાં ઉદાહરણ તેમાંથી જ કેવામાં આપ્યા છે, રામાયણમાપી નથી ર્ત્તર્થાં.

લલ્લગા....બુધ્યા તુલ્યો શનસા । મ.મ.।વિ.પ.।૫૩।૭।

ગાલ્લગા....આચાર્યશિષ્યાવજિતૌ । મ.મા.।વિ.પ.।૫૩।૧૫।

૫ આર્ષિક અનુષ્ટુભ્ આહ્યાનિક અનુષ્ટુભ્માં પરિણામ પામવાની સાયે ત્રિષ્ટુભ્ ઇંદ ઉપજાતિનું સ્વરૂપ ધારણ કરી રામાયણનો વીજો વ્યાપક ઇંદ બને છે. હ્રન્દઃસૂત્રમાં વર્ણવેલા અગિયાર અક્ષરના ઉપેન્દ્રવજ્રા અને ઇન્દ્રવજ્રાના મિશ્રણથી બનેલો ઇંદ તે પ્રસિદ્ધ ઉપજાતિ. ચાર અક્ષરના વંશસ્થ અને ઇન્દ્રવંશાનાં ચરણોના મિશ્રણનો વીજો પણ ઉપજાતિ ઇંદ બને છે; તે ઓઠો જાણીતો અને આછો વપરાયલો છે. આ વે ઉપજાતિ વચ્ચે ભ્રમ ન થાય એ હેતુથી પ્રસિદ્ધ ઉપજાતિને ત્રૈષ્ટુમ અને ઓછા જાણાતા ઉપજાતિ છદને જાગત વિશેષણ હું લગાડું છું. અહીં કહેલો ત્રૈષ્ટુમ ઉપજાતિ છદ રામાયણના છ અધ્યાય-માં વ્યાપકરૂપે દેખા દે છે. ઉપેન્દ્રવજ્રા અને ઇન્દ્રવજ્રા બંને રૂપબંધ છે. ઇટ્ઠે ત્રૈષ્ટુમ ઉપજાતિ પણ રૂપબંધ છે, એ જણાવવાની જરૂર રહેતી નથી. ઉક્ત ઇકાદશાક્ષર રૂપબદ્ધ ઉપજાતિનું ઉદાહરણ નીચે પ્રમાણે—

તતઃ સ તેષાં પુરુષપ્રવીરઃ

શરાસનાર્ષિઃ શરવેગતાપ ।

બ્રાતાન્ રથાનામદહત્ સમન્યુ-

ર્વનં યથાગ્નિઃ કુરુપુંગવાગ્નયઃ ॥મ.મા.।વિ.પ.।૪૯।૮।

આ ઉપજાતિના અંગમૂત ઉપેન્દ્રવજ્રા અને ઇન્દ્રવજ્રાનાં લક્ષણ ઇકદેશી ઇંદના નિરૂપણમાં આગળ આવશે.

૬ ગત પ્રસ્તાવમાં પ્રસંગવશાત્ જાગત ઉપજાતિનો ઉલ્લેખ કર્યો છે. તેના બંધારણમાં આવનારા વે હંદોમાંનો ઇક જે વંશસ્થ, તે વાલ્મીકિના મહાહ્યાનનો ત્રીજો વ્યાપક ઇંદ છે. તેનો પ્રયોગ માત્ર ઇક જ અધ્યાયમાં

૩ જુઓ સુન્દર વાણ, અધ્યાય ૮ । આ અધ્યાય કદાચ ક્ષેપક હોય. ઇમા શવણની મહેલાતના ઇક ભાગમાં મૂકેલા પુષ્પક વિમાનનું વર્ણન છે, ઉક્ત અધ્યાય સિવાય વીજે કહીં વંશસ્થનો વ્યાપક તરીકે પ્રયોગ દૃષ્ટિગોચર થતો નથી. પરંતુ ઇકદેશી તરીકે તે ઘણી ચાર વપરાયો છે, તેથી મૌલિક રામાયણના પદ્યવધના મેં તેની નોંધ કાઢ્યમ રાખી છે.

કરેલો છે. રામાયણના આઠ છંદના એ ન્હાનકડા અભ્યાસમાં સાત વંશસ્થ વ્યાપકરૂપે દેસ્તા, દે, છે. લગાલ ગાગા, લલગાલ ગાગા, એ ચારરૂપજૂથોનો એ રૂપબંધ બને છે. તેનું ઇદ્રાહરણ:—

વલેન તુલ્યો ન હિ દ્વિપ્રસે મયા

તિમુદ્ગશીલશ્ચ તથૈવ પ્રાર્થિવઃ ।

રાજૈશ્ચ સિંહૈશ્ચ સમેયિવાનહં

સદા કરિષ્યામિ ચ તે નૃપ પ્રિયમ્ ॥ મ. આ. | વિ. પ. | ૬ | ૧૧ ॥

૭ રામાયણના એકદેશી છંદતી સીમાંસા માટે તેમને વિભાગમાં વહેંચી નાંખવા પહે છે, સંભાવ્ય કોટિના એકદેશી અને અસંભાવ્ય કોટિના. શકાલથી આગળ વધતો પદ્યપ્રવાહ આલ્યાનકાલમાં ક્રમશઃ વ્યવસ્થિત પ્રગતિ કરે, એ સમજી શકાય એમ છે. પાત્ર પણ વદલાય, ધારા પણ નવી પૂટે, એ પ્રકૃતિના નિયમને અનુસરતું છે. ઉક્ત મર્યાદામાં જે છંદો આવી શકે, તેમને હું સંભાવ્ય કોટિના એકદેશી છંદ છેલ્લું છું, અને જે છંદો ઉક્ત મર્યાદામાં ન આવી શકે, તેમને અસંભાવ્ય કોટિમાં મૂકું છું. આ રીતના વિભાગ સ્વીકારી સંભાવ્ય કોટિના એકદેશી છંદનું વિવેચન હું પ્રથમ હાથ ધરું છું.

૮ રામાયણના સંભાવ્ય કોટિના એકદેશી છંદ ઉપેન્દ્રવજ્રા, ઇન્દ્રવજ્રા, ત્રૈપ્તુમજાગત ઉપજાતિ, જાગત ઉપજાતિ અને ત્રિપ્તુમ્ છે. પૂર્વોક્ત ત્રૈપ્તુમ ઉપજાતિ અને વંશસ્થ તેમ જ અત્રોક્ત ઉપેન્દ્રવજ્રા ઇન્દ્રવજ્રા અને જાગત ઉપજાતિ ચાર ચાર સમાન ચરણોના બને છે. વીજમૂત આર્ચિક ત્રિપ્તુમ્ અને જાગતીની ઉચ્ચારણા અમિત્ર છે, તેને સીધે એ વે વર્ણબંધ ઉપરથી સધાયલા પ્રસ્તુત રૂપબંધની ઉચ્ચારણા પણ અમિત્ર જ છે. ઉપેન્દ્રવજ્રા અને ઇન્દ્રવજ્રાનાં ચરણના પણ વંશસ્થની પેઠે ચાર ભાગ પહે છે; પહેલો અનુક્રમે લગાલ તથા ગાગાલ રૂપત્રિકનો અને વીજો ત્રીજો તથા ચોથો ઉભયમાં અનુક્રમે ગાગા રૂપદ્વિકનો લગાલ રૂપચતુષ્કનો તથા ગાગા રૂપદ્વિકનો. ચરણના આન્હાનામોટા જૂથને હું સંધિ

संज्ञाथी ओष्ठखावूं छूं. प्रत्येक संधिनो आद्य अक्षर भारयुक्त होय छे अने ते पछीना अक्षर भारमुक्त रहे छे; उपेन्द्रवज्रा अने इन्द्रवज्रामां मात्र प्रथम संधिना आद्य रूपमां ज तफावत छे. एकमां ते रूप लघु अने बीजामां गुरु छे. आटला न्हानासरखा भेदना कारणथी ए वै छंद भिन्न नामथी ओष्ठखाय छे. रूपबंधना आ विशिष्ट लक्षणनी विस्मृति कदी पण थवी न जोईय. उपेन्द्रवज्रा अने इन्द्रवज्रानां उदाहरण अनुक्रमे नीचे प्रमाणे:—

प्रकीर्णपर्णानि यथा वसन्ते
निशातयन् वात्यनिलो नुदन् वै ।
तथा सपत्नान् चिकिरन् किरीटी
चचार संख्येऽतिरथो रथेन ॥ म.भा.।वि.प.।४९।१७॥
ततः स विद्धे भरतर्षभेण
वाणेन गात्रातिवलातिगेन ।
गतासुराजौ निपपात भूमौ
नगो नगान्तादिव वायुभग्नः ॥ म.भा.।वि.प.।४९।१३॥

जागत उपजातिनी घटनाभां वंशस्थ साथे जे बीजा रूपबंधनो उपयोग थाय छे, ते इन्द्रवंशा. एना चरणमां गागाल, गागा, ललगाल, गागा, ए चार रूपजूथ आवे छे. एनो प्रयोग सुत्तकाल उपरना दृष्टिपातमां नेांघाशे. निर्दिष्ट वंशस्थ अने इन्द्रवंशानां चरणोना मिश्रणथी नीपजनारा आख्यानकालना रूपात्मक जागत उपजाति छंदनो दृष्टांत नीचे आप्यो छे:—

४युधिष्ठिरस्यासमहं सखा पुरा
वैयाघ्रपादः प्रवरोऽस्मि वाडवः ।
अक्षान् प्रवप्तुं कुशलोऽस्मि देवने
कङ्कोऽथ नाम्नास्मि विराट विश्रुतः ॥म.भा.।वि.प.।६।११॥

४ मुद्रित पाठ कङ्केति छे. ते व्याकरणनी दृष्टिए अशुद्ध छे. ते बदल उपर आपेलो पाठ कल्पित छे.

ત્રિષ્ટુમ્ હંદ' જોકે રામાયણમાં મઝી આવતો નથી, તોપણ તે ઘપરાયો હોવો સંભવે છે; કેમકે-તે ઉત્તરકાલીને મહામારતમાં મઝી આવે છે. એ આર્ષિક ત્રિષ્ટુમ્નું લક્ષણ ઋક્કાલ ઉપરના દ્રષ્ટિપાતમાં અપાઈ ચૂક્યું છે; તેની પુનરુક્તિ કરવી અનુચિત છે. એ હંદનું મહાલ્યાનમાંનું ઉદાહરણ નીચે પ્રમાણે:-

અથોત્તરસ્ત્વરમાણસ્તુ દૂતા-

નાજ્ઞાપયદ્ વર્ચનાત્કાલ્ગુનસ્ય ।

આચક્ષધ્વં વિજયં પાર્થિવસ્ય

ભગ્નાઃ પરે તે વિજિતાશ્ચ ગાવઃ ॥મ.ભા.વિ.પ.૧૬૨।૧૧॥

અવશિષ્ટ ત્રૈષ્ટુમ્જાગત ઉપજાતિ પળ ઋક્કાલના' વારસાનો વર્ણવધ છે. તેથી તેનું લક્ષણ અહા પુનરુક્ત ન કરતાં માત્ર તેનું આર્યાનકાલનું ઉદાહરણ નીચે ટાકું છું.

તતઃ સ વહ્નિપ્રતિમો મહાકપિઃ

સહૈવ ભૂતૈર્દિવમુત્પપાત ।

તથૈવ માગ્નાઃ સકલાશ્ચ'તા વૈ

ધ્વજં ચ સિંહં યુયુજે રથે ચ ॥મ.ભા.વિ.પ.૧૬૧।૩૬॥

આ ત્રૈષ્ટુમ્જાગત ઉપજાતિની અને ત્રૈષ્ટુમ્ ઉપજાતિ તથા જાગત ઉપજાતિની વચ્ચે ભ્રમ થવા સંભવ છે, પણ તે ભ્રમ એક જ વ્યાવર્તક લક્ષણ ધ્યાનમાં રાખનાથી ટઝી જાય છે. આર્યાનકાલનું ત્રૈષ્ટુમ્ ઉપજાતિ અને જાગત ઉપજાતિનું જોડકું રૂપવંધ છે, -ચારે ઋક્કાલથી ચાન્ચો આવતો ત્રૈષ્ટુમ્જાગત-ઉપજાતિ હંદ તો વર્ણવધ છે. ઉપર ગણાવેલા એકદેશી ઉપરાંત પૂર્વે વ્યાપક તરીકે નોંધાયેલા કેટલાક હંદ પણ એકદેશી તરીકે દેસા દે છે. તેમના લક્ષણની પુનરુક્તિ નિરર્થક છે.

૧ રામાયણના અસંમાન્ય કોટિના એકદેશી હંદ ચોદ છે, (૧) અપરવક્ત્ર, (૨) પુષ્પિતાગ્રા, (૩) ત્રિયોર્ગિની, (૪) માલ્યભારિણી, (૫) વૈતાલીયો-પજાતિ, (૬) અપૂર્વ, (૭) મૃગેન્દ્રમુખ, (૮) વસન્તતિલકા, (૯) ઋષિગણ;

(૧૦) મુજંગપ્રયાત, (૧૧) શાલિની, (૧૨) વૈશ્વદેવી (૧૩) પ્રહપિણી, (૧૪) રુચરા. 'એકથી સાત આંકવાળા છંદનું એક કુટુંબ બને છે, તેને હું વૈતાલીયકુટુંબ એવી સંજ્ઞા આપું છું; કેમકે તે સુત્તકાલના વૈતાલીય છંદ સાથે સંબંધ ધરાવે છે. હવેપછીના દૃષ્ટિપાતમાં કહેવામાં આવશે તેમ એ-સૌત્તિક વૈતાલીયના ચરણોનો પૂર્વભાગ માત્રાત્મક અને ઉત્તરભાગ રૂપાત્મક છે. માત્રાભાગ અને રૂપભાગની સંસૃષ્ટિવાળાં પ્રસ્તુત ચરણા સમય જતાં સઠંગ રૂપાત્મક સ્વરૂપ ધારણ કરે છે, અને અપરવક્ત્ર, પુષ્પિતાગ્રા, વિયોગિની તથા માલ્યમારિણી, એ ચાર અર્ધસમ રૂપબંધને જન્મ આપે છે. આ વિષયની સવિસ્તર મીમાંસા પાંચમા દૃષ્ટિપાતમાં આપવામાં આવશે. અહીં તો એટલી જ નોંધ લેવાની જરૂર છે કે સુત્તકાલ પ્રહી પ્રવર્તનારા પ્રસ્તુત ચાર છંદનો અને તેમનાં ચરણના મિશ્રણથી થનાર છંદ જેને મેં વૈતાલ્યાયોપજાતિ નામ આપેલ છે તેનો પ્રયોગ એ સુત્તકાલ પૂર્વે સંભવતો જ નથી. વઢી કલ્પિત અપૂર્વ સંજ્ઞાવાળા અર્ધસમ છંદનો તેમ જ સમપદ મૃગેન્દ્રમુખની ઉત્પત્તિ પણ એ જ સુત્તકાલના ગોત્રપુરુષ વૈતાલીયથી થઈ છે. અર્થાત્ એ વેનો ઉદય પણ આહ્યાનકાલમાં સંભવતો નથી. તે કારણથી ઉક્ત સાતે છંદને અસંભાવ્ય કોટિમાં મૂકવા પડે છે.

૧૦ વાકોના એકદેશી વૃત્તની ચર્ચામાં ઉત્તરતા પહેલાં ત્રણ વાકત પર લક્ષ ઠેરવવું ઘટે છે: (૧) આહ્યાનકાલમાં વારથી અધિક રૂપનું ચરણ અસ્તિત્વમાં આવ્યું ન હતું; (૨) એ કાઠમાં આવૃત્ત સંધિના છંદ પણ હયાતો ધરાવતા ન હતા; અને (૩) એ કાઠમાં ચરણની અંદર યતિ એટલે છાંદસ વિરામનો પ્રચાર પણ ઉદ્ભવ્યો ન હતો. આ કસોટીએ ચઢાવતાં, અવશિષ્ટ એકદેશી પૈકી વસન્તતિલકા (રા. ૧૭।૮।૨૮।) અને ઋપિગણ (રા. ૧૨।૧૧૬। ૨૫।) એ વે છંદના ચરણમાં ચૌદ ચૌદ રૂપ આવે છે, તે કારણથી તે અસંભાવ્ય કોટિમાં મૂકાય છે. વસન્તતિલકાના ચરણમાં અટપટી લોમપ્રતિલોમ રૂપવ્યવસ્થાનો જે પ્રયોગ છે, તે પણ ઉપરના મતની પુષ્ટિ કરે છે. વીજો છંદ જે ઋપિગણ, તેનું તો નામ સરસું એ છંદોવિદ્યાના પ્રંથોમાં જુડતું નથી. એનાં પહેલાં વે ચરણ અનુક્રમે મમનનલગ તથા મમનજલગનાં અને પ્રહીનાં

વે, પૈકી પ્રત્યેક 'મતનેસગગ-નૂં' બનેલ છે. એના ઉદાહરણના પહેલા ચરણમાં 'ઋપિગણ' પદ આવે છે તેને આગળ કરીને 'નૂં ઋપિગણ' નામ મેં કલ્પેલું છે. 'પ્રસ્તુત' ઉપાંચ અને તે પછીનો અંત્ય 'એ' વંને શ્લોક પૂર્વાપરસંબંધ જોતાં પ્રથમ દૃષ્ટિએ જ અધ્યાયને છેડે પાછલ્લથી ઝમેરાયલા ઇટલે પ્રક્ષિપ્ત ઠેર છે. 'એ' પછીનો 'એકદેશી' જે 'શુજઙ્ગપ્રયાત', તેમાં આવૃત્ત સંધિ આવે છે. તે પછી અસંભાવ્ય કોટિનો જ છે; કેમકે આવૃત્ત સંધિનો પ્રયોગ આલ્યાનકાલથી અર્વાચીન છે. ત્યારપછી વિચારવાના 'એકદેશી' જે 'શાલિની', 'વૈશ્વદેવી', 'પ્રહર્ષણી' અને 'રુચિરા', તે ચારે મધ્ય યતિની અપેક્ષા રાખે છે. પહેલામાં 'ચોથા', 'વીજામાં' 'પાંચમા', 'ત્રીજામાં' 'ત્રીજા' અને 'ચોથામાં' 'ચોથા' અક્ષર પછી હંદોનુસારી વિરામ આવશ્યક છે. 'એ' મધ્ય યતિના કારણથી 'એ' ચાર હંદ પછી અસંભાવ્ય કોટિમાં ગોઠવાય છે.

૧૧ ઉપરની સમીક્ષા અનુસાર રામાયણનો પદ્યવંધ, ઋક્કાલનો ત્રૈપ્લુભ-જાગત ઉપજાતિ હંદ બાદ કરતાં, અનુપ્લુભ, ત્રૈપ્લુભ ઉપજાતિ, ઉપેન્દ્રવજ્રા ઇન્દ્રવજ્રા, જાગત ઉપજાતિ અને વંશસ્થ 'એ' છ હંદનો બન્યો છે. એમાંનો પહેલો અર્ધ વર્ણાત્મક તથા અર્ધ રૂપાત્મક, અને બાકીના પાંચ પૂર્ણ રૂપાત્મક છે.

૧૨ રામાયણના પદ્યવંધ જોઈ જઈ હવે મહાભારતના પદ્યવંધ તરફ લક્ષ ધાલિયે. પ્રથમ દૃષ્ટિપાતે 'એ' મહાલ્યાનમાં હંદોની મીમાંસા માટે રસ્તો કાઢવો દુર્ઘટ જણાય છે; કારણકે ભિન્ન ભિન્ન પાઠની, વધતાઓછા શ્લોક અને અધ્યાયની, 'એકવીજાથી' જુદી પડી મૂલ્યવનારી વાચનાઓ પ્રસ્તુત મહાલ્યાનની વિદ્યમાન છે, જેને લીધે હંદોના સ્વીકાર અને ત્યાગની ઘાવતમાં અનંત વિપ્રતિપત્તિ ઝમી થાય છે. સાંપ્રત કાલમાં આપણી પાસે આર્યું સંગોધિત મહાભારત નથી કે તેને આપણે પદ્યરચનાની આલોચના માટે આધારરૂપે

૫ પ્રસ્તુત શ્લોક નીચે પ્રમાણે છે: રામઃ સ્વપ્ત્ય ઋપિગણમનુગમનાર ડેવાન્ તસ્માત્ સુલપતિમભિવાદ્ય ઋદિમ્ । સમ્યક્ પ્રીતૈસ્તેરનુમા ઉપદિષ્ટાર્થઃ પુણ્યં વાગાય સ્વનિલયમુપસંપેદે ॥ ઋપિગણ નામ પસંદ કરવાનું નિમિત્ત ઉપર જણાવ્યું છે કે ઉપરાંત યોગ્ય પણ 'એક' છે. મુખ્ય પ્રસિદ્ધ ઋષિઓના યે ગણ સાન યાતના કરાવ્યા છે. તે યે 'એ' કરીને પ્રસ્તુત હંદના ચરણની રૂપગત્ય પૃષ્ઠ સૂચિત ધાય છે.

ઉપયોગમાં લેઇયે. પ્રસ્તુત મહાલ્યાનના સમુદ્ધારનું વિકટ કાર્ય કેટલાક વલ્લભી પૂનાની Dr. Bhandarkar Research Institute સંસ્થાએ હાથ ધર્યું છે. આજપર્યંત એ સંસ્થા દ્વારા પૂરૂં પર્વે એક જ વહાર પડ્યું છે, વિરાટપર્વ. એના આધારે સ્થાલીપુલાકન્યાયે મહાભારતના પદવંધની સમીક્ષા કરવાનો મારો સંકલ્પ છે. પૂનાની સંસ્થાના વિરાટપર્વમાં એકંદરે બે હજાર અને તેત્રીસ શ્લોક છે. તેમાં વ્યાપક છંદો ચાર તરી આવે છે, અનુષ્ટુભ (૧૮૬૭), ત્રૈષ્ટુભ ઉપજાતિ (૭૭), વંશસ્થ (૩૧) અને જાગત ઉપજાતિ (૨૯). એ પર્વના એકદેશી છંદ પળ ચાર છે, ઉપેન્દ્રવજ્રા (૩), ઇન્દ્રવજ્રા (૧૧) ત્રૈષ્ટુભજાગત ઉપજાતિ (૯) અને આર્ચિક ત્રિષ્ટુભ (૬). આ આઠે છંદોનાં લક્ષણ પૂર્વે કહેવામાં આવ્યાં છે, તેથી તેની પુનરુક્તિ હું કરતો નથી.

૧૩ ઉપર ગણાવેલા મહાભારતના છંદ પૂર્વોક્ત રામાયણના છંદ સાથે એકતા ધરાવે છે; અને તે આલ્યાનકાલના સાધારણ વપરાટના છંદ છે. જરા કુંડા ઉત્તરીને તપાસીશું તો જણાશે, કે મહાભારતનો વ્યાપક છંદ જાગત ઉપજાતિ, તે રામાયણમાં એકદેશી તરીકે જ દેખા દે છે. વઢી મહાભારતમાં આર્ચિક ત્રિષ્ટુભ એકદેશીમાં સ્થાન લે છે, તેનું રામાયણમાં દર્શન જ થતું નથી. કોઈને શંકા થશે કે પૂર્વકાલનો આર્ચિક ત્રિષ્ટુભ છંદ વચગાઠાના રામાયણમાં નથી મઢી આવતો અને ઉત્તર કાલના મહાભારતમાં દેખા દે છે તેનું શું કારણ ? આલ્યાનકાલમાંથી સુત્તકાલમાં ઉત્તરી આવતો અને ચાહુ રહેતો આ ઋક્કાલનો છંદ રામાયણમાં ન જણાય તેનું કારણ એવું તો ન જ હોઈ શકે કે, એ મહાલ્યાનના રચનાકાલમાં તેનો પ્રયોગ ઉચ્છિન્ન થયો હોય. સંભવ તો એમ લાગે છે કે વાલ્મીકિ મુનિએ તે છંદ સ્વરચિત મહાલ્યાનમાં વાપર્યો હોય, પરંતુ એ ઘર્ણવંધ તેમાંથી ઉત્તરી આવતા રૂપવંધમાં નજીવા ફેરફારથી પાહુઠથી રૂપાંતર પમાડાયો હોય તેને લીધે રામાયણમાં તેનો અભાવ અત્યારે જણાય. મવિપ્યમાં અનેક જૂની હાથપ્રતોને આધારે સમર્થ સંશોધકોનાં હાથે રામાયણની વાચના સ્થાપિત થઈ તે વાચનામાં આર્ચિક ત્રિષ્ટુભનાં ઉદાહરણ

મિટ્ટી પણ આવે. મહાભારતનો સમુદ્ધાર કરાય છે, તેવો રામાયણનો પણ વહેલો થવા પામો. । । । ।

૧૪ આલ્યાનિક છંદોએ આર્ષિક છંદો કરતાં જે અધિકતર પ્રગતિ કરી, તે અલ્યારસુધીતા વિવેચનને અનુસરનાર સ્ત્રીજે સમજી શકશે. આર્ષિક છંદ વર્ણવંધ હતા. વૈદિક ઋષિઓને રૂપરચનાનું દર્શન થયું ન હતું. એ રચનાની જ્ઞાત્રી આલ્યાનકાલમા થવા લાગી. આર્ષિક અનુષ્ટુભ તે આઠ આઠ વર્ણના ત્તાર ત્તરણનો છંદ. આલ્યાનિક અનુષ્ટુભ, તે મળ આઠ આઠ વર્ણનાં ચાર-ત્તરણનો છંદ, પરતુ પ્રગતિ એ કે તેનાં સમ અને વિષમ ચરણના ઉત્તર ભાગના વર્ણચતુષ્કમાં રૂપની આવના ઉદય પામે છે. સમ ત્તરણમાની રૂપરચના સ્થિર મની જાત્ર છે. વિષમ ત્તરણમાની સ્થિર થવાને પથે છે; એ વૈકલ્પિક રહે છે, સ્થિર થમા પામતી નથી. આલ્યાનિક અનુષ્ટુભના ચરણમાં વર્ણવંધના વિધાનને અન્વયે વર્ણચતુષ્કનો બનેલો મૂર્વ ભાગ ચર જ રહે છે. આ પ્રમાણે આલ્યાનકાલના અનુષ્ટુભમા રૂપરચના ચરણના અર્ધા ભાગમા મહેલાં દાલલ થાય છે. મ્ત્રી સાત્મીકિ મુનિને હાથે રામાયણમા જ ત્રૈષ્ટુભ ઉપજાતિ, ઉપેન્દ્ર-વજ્રા, ઇન્દ્રવજ્રા અને વંશસ્થમાં રૂપરચના માકી જમાવટ સાધે છે. આ ત્રાવત સવિસ્તર વિગતવાર વિવેચન એ છંદોના લક્ષણના પ્રસ્તાવમાં અપાઈ ત્રુવયુ છે. આલ્યાનકાલમાં રૂપરચનાનો ઉદય થયો છતાં ય ત્રિષ્ટુભ અને ત્રૈષ્ટુભજાગત ઉપજાતિ જેવા આર્ષિક વર્ણવંધ વપરાતા વંધ મહદ્યા ન હતા. ત્રિષ્ટુભ વર્ણ-વદ્ધ સ્વરૂપે ઠેઠ સુત્તકાલ સૂધી ચાલુ રહે છે. વંશસ્થ અને ઇન્દ્રવંશના સિથ ચરણોનો બનેલો જાગત ઉપજાતિ જે રામાયણમા ઇકદેશી હતો, તે મહાભારત-મા વ્યાપક બને છે. વલ્લી છ છ ચરણના આલ્યાનિક અનુષ્ટુભ પણ બને મહાલ્યાનોમાં વપરાયલા નજરે પડે છે.

૧૫ આલ્યાનકાલના ઉક્ત પદ્યવંધનો ઉદય રામાયણના ધારમે અમત્કારાત્મક સાળીમાં આ પ્રમાણે વર્ણવ્યો છે. એક સમયે વાન્મીકિ મુનિષ્ ભગવાન નારદને વિજાતિ કરી કે 'સાપ્રત યુગમા તુણવાન, પ્રીથવાન, ધર્મદ્

कृतज्ञ, सत्यवादी अने दृढव्रत आ जगतना विशे कई व्यक्ति छे ते जणाविये। देवर्षि उर्त्तर वाळ्यो के 'तमे जाणवा मागो छो एवी व्यक्ति तों एक रामचंद्र-छे, इक्ष्वाकुवंशमां प्रगटेला ए महान पुरुष आत्मसंपन्न, महावीर्यवान, तेजस्वी-तेम ज संयमी छे।' पछी नारद-मुनि संक्षेपमां रामनूं चरित्र वर्णवी आकाशमार्गे चालतीं थया. एक मुहूर्त वही गयूं; त्यारवाद भगवान वाल्मीकि शिष्य सहित जाहनवीना पडखामां वहेती तंमसा नदीए स्नानार्थे पधार्या. त्यां निर्दोष क्रीञ्च पक्षीनी एक जोडी तेमणे क्रीडा करती दीठी. एटलामां एक पारधी आवी चडचो. तेणे तीरथी नरने बांधी नांस्वी जोडी खंडित करी. लोहीथी लदवद थयेलो नर तत्क्षण भेयं डळी पडी तरफडियां खाई मरण पाय्यो. एकली पडेली क्रीञ्चि चीसे चीस नांस्वी आक्रंद करवा लागी. दरमियात ते त्रासदायक बनावथी अंतरमां भारे आघात पामेला धर्मात्मा मुनिना, मुखमांथी एकाएक एवा अर्थनी संस्कृत वाणी नीकळी के 'अरे जंगली मनुष्य ! तूं हाश करीने वेसवा नहि पामे, रखटी रझळीने मरी जईश. आथी-जे प्रेममां मुग्ध बनी क्रीडा करता एक पक्षीनो वध करी आ क्रीञ्च पक्षीनी जोडी तें खंडित करी छे !' ए स्वयंभू पद्यात्मक वाणीना उद्गारथी विस्मय पामता मुनीश्वरे विचार्यू के 'अहो ! आ ते केवा प्रकारनी वाणी मारा मुखमांथी नीकळी !' तरत मनथी निर्णय बांधता वाल्मीकि भगवाने शिष्य प्रत्ये कळूं जे 'शोकपीडित मारा मुखथी प्रवर्तेलो, चरणमां सरखाइ घरावतो, संख्या तथा रूपमां अक्षरसंवादवाळो, अने वीणा साथे मेळं खाय एवो आ श्लोक अन्याथा थवो-मिध्या जवो न जोईए, अर्थात् महान आख्यानमां योजाई सार्थक नांवडवो जोईए' पछी स्नानथी परवारी मुनि आश्रमे आन्या अने वार्तालाप बाद ध्यानमग्न थया. एवे भगवान ब्रह्मा तेमने मळवा

६. जुओ. सं. ११२१५१। मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः ।

यत्प्रोश्चमिधुनादेकमथधीः काममोहितम् ॥

७. जुओ. सं. ११२१५२। पादवद्धीऽक्षरसमस्तन्शीलयसमन्वितः ।

शोकप्रतस्य प्रवृत्तो मेः श्लोकोऽभयतु नान्यथा ॥

आस्या, ध्यानस्थदशामां पण पापी पारधीनूं दुष्ट कृत्य अने मरणान्मुख
 क्रीञ्चीनूं करुण आक्रंद मुनिने स्वटक्या करतूं हतूं. आधी ब्रह्मदेव आगळ
 पण तेमना मुखमांथी'पूर्वाक्त स्वयंभू संस्कृत श्लोक नीकटो गयो. ते सांभळी
 सृष्टिना कर्ता रहेज म्हो मलकायी वाल्मीकि मुनि प्रत्ये बोल्या के 'हे ब्रह्मन् !
 मारी इच्छाना योगे ज तमारा मुखमांथी आ वाणी प्रवर्तेली छे. एनी पद्यरचनाना
 संबंधमां तमारे विमासणमां पडवूं घटतूं नथी. तमे ए बंध एटले भेळथी युक्त
 श्लोक ज रच्यो छे. अस्तु, हवे हे ऋषिवर्य ! ए श्लोकमां तमे रामचंद्रनूं
 समग्र चरित्र रचो. नारदना मुखेथी ए धैर्यशील महान पुरुषनो वृत्तांत जेथो
 तमे सांभळ्यो छे तेथो वर्णवो .' परम पितामहनो आदेश थयो तेनी
 साथे सहस्र सूर्य समी वाल्मीकि मुनिनी प्रतिभा प्रकाशी; अने 'सरखाइ
 वाळां चार चरणोए मुनीश्वरनी शोकनी (करुण)' वाणी जे प्रथम उच्चारई
 हती, ते पळीथी रामचंद्रना चरित्रना कथनथी श्लोकपणाने पामीं. '

१६ उपरनी अद्भुत कथानूं तात्पर्य विचारिये तो एटलूं ज जणाय
 छे, के भगवान वाल्मीकि चरणना पूर्व अर्धभागमां वर्णबद्ध अने उत्तर अर्ध-
 भागमां रूपबद्ध रचनावाळा प्रस्तुत अनुष्टुभना आबद्धता हता. तेओ रामकथा
 रचवाना विचारमां हता ते संधिमां तेमने आ नवी पद्यरचना स्फुरी. ए नवा
 पद्यबंधमां मोटे भागे रामायण रचायूं. ते महाख्यान अपूर्व कवित्वने लीधे

८ जुओ रा.।१।२।३१-३२-३३। श्लोक एवास्तव बद्धो नात्र वार्या
 विचारणा । मच्छन्दादेव ते ब्रह्मन् प्ररुत्तेय सरस्वती ॥ रामस्य चरितं कृत्स्नं कुरु
 त्वं ऋषितत्तमा.....। वृत्तं कथय धीरस्य यथा ते नारदाच्छ्रुताम् ।.....॥।

९ जुओ रा..।१।२।४०। समाश्रयेष्वनुमिर्यः पादैर्गंतो महर्षिणा । सोऽनु-
 व्याहरणाद्भूयः श्लोकः श्लोकद्वयभाणतः ५. जुओ दडी २.३ १९४५००। त्रिपादविद्वाण्डज-
 दर्शनोत्थः श्लोकत्वमापद्यत यस्य श्लोकः ।. हालना रामायणना बालकाण्डनो पहलो
 अध्याय क्षेपक छे. छतां तेमां वाल्मीकि मुनिने यथेला आस्थानिक अनुष्टुभना
 दर्शननी कथा जे वर्णवी छे ते, रघुब्रह्मना अवतरणपी जणाय छे के, महाकवि
 कालिदासपी पण प्राचीन छे. आ समजपी ते अही में नोंधी छे.

કાવ્યકાલમાં આદિકાવ્ય કહેવાયું. ઉત્તરરામચરિતમાં કવિ ભવમૂતિ ગ્રહાદેવ પાસે વાલ્મીકિ મુનિ પ્રત્યે 'ભગવાન આદિકવિ^{૧૦} છો' એમ ઉચ્ચારાવે છે, તે આદિષ્ટ રામકથાના કર્તા થઈ ભવિષ્યમાં આદિકવિ લેખાવાના આશીર્વાદ રૂપે અભિપ્રેત છે. એ વધું જેમ હો તેમ હો. આલ્યાનકાલ ઉપરના વર્તમાન દષ્ટિ-પાતમાં આપણી નજરે ભગવાન વાલ્મીકિ અનેક સૂર્યના તેજથી પ્રકાશે છે, તે તો પથરચનાની રૂપાત્મક નામે નવીન સૃષ્ટિના વિધાતા તરીકે પ્રકાશે છે. એ રચનાનું પ્રથમ દર્શન થયું તે એ મહામુનિને. રામાયણ આદિ મહાલ્યાન છે અને ઘના કર્તા વાલ્મીકિ એમાં યોજેલા પ્રધાન વ્યાપક હંદના આદિદ્રઘા છે,—જે હંદ સમગ્ર સંસ્કૃત સાહિત્યનો પળ પ્રધાન વ્યાપક હંદ બને છે.

૧૭ આપણે ઉપર જોઈ ગયા તે આલ્યાનિક હંદોના ત્રણ વર્ગ પહે છે, (૧) અર્ધ રૂપરચનાનો અનુષ્ટુભ (૨) સંપૂર્ણ રૂપરચનાના ઉપેન્દ્રવજ્રા, ઇન્દ્રવજ્રા, ત્રૈષ્ટુભ ઉપજાતિ, વંશસ્થ તથા જાગત ઉપજાતિ અને (૩) આર્ચિક ત્રિષ્ટુભ તથા ત્રૈષ્ટુભજાગત ઉપજાતિ. તે પૈકી અનુષ્ટુભ અને ત્રિષ્ટુભ સંજ્ઞા સ્ત્રીલિંગે શા કારણથી વપરાય છે તે ઋક્કાલ ઉપરના વ્યાલ્યાનમાં કહેવાઈ ગયું છે. ઉપજાતિ નામ ઉપ+જન્ ધાતુ ઉપરથી થયું છે. એનો અર્થ, જે મૂલ-હંદ ઉપરથી થયેલો મિશ્ર હંદ, એવો થાય છે. એ શબ્દ સ્ત્રીલિંગ નામ હોઈ ત્રૈષ્ટુભ ઉપજાતિ તથા ત્રૈષ્ટુભજાગત ઉપજાતિ સ્ત્રીલિંગે વપરાય છે. એ સંજ્ઞાઓનું નિર્વચન પણ વીજા દષ્ટિપાતમાં નોંધાઈ ગયું છે. એમાં એવું પણ જણાવવામાં આવ્યું છે કે ચરણાંત બાદ કરતાં ત્રિષ્ટુભ અને જગતીની રચના ઉચ્ચારણામાં સમાન છે. ઉક્ત ચરણાંતનો મેદ હંદ:શાબ્દના અજાણનું ધ્યાન પણ ન રહે એવો અને જાણને ન સુંચે એવો, બલકે જાણઅજાણ ઉભયને રુચિકર થાય એવો હોઈ એ જે હંદોનાં ચરણોનો ત્રૈષ્ટુભજાગત ઉપજાતિ નામે મિશ્ર હંદ બને છે; અને તે ઋક્કાલમાં છૂટથી પ્રચલિત થાય છે. એ મિશ્ર હંદ આલ્યાન-કાલમાં પણ ઉત્તરી આવી તે કાઠના હંદોનું એક નવું ગોત્ર સ્થાપનાર નીવડે છે. એ ગોત્રને આપણે ત્રિષ્ટુભજગતીકુટુંબ તરીકે ઓળચીશું. ઉપર કહેલા

૧૦ જુઓ ઉ. ય. ૫. ૧ અંક પહેલ અને ધીજા ઘચ્ચેનો વિધ્વંસક,

ઉપેન્દ્રવજ્રા, ઇન્દ્રવજ્રા, ત્રૈષ્ટુભ ઉપજાતિ વંશસ્થ અને જાગત ઉપજાતિ ઇંદ્ર એ કુંડુંવના છે. આલ્યાનકાલના ઉપેન્દ્ર અને ઇન્દ્ર એ વે દેવના નામથી ઉપેન્દ્ર-વજ્રા અને ઇન્દ્રવજ્રા સંજ્ઞાઓ ઉદ્ભવી છે. એ કાલમાં ઉપેન્દ્ર ઇંદ્રે વિષ્ણુ ભગવાનનો મહિમા વધતો જતો હતો અને ઇન્દ્રનો ઓછો થતો હતો. તદનુસાર અધિક પ્રચારવાળી રૂપરચના ઉપેન્દ્રવજ્રાનું અને ન્યૂન પ્રચારવાળી રૂપરચના ઇન્દ્રવજ્રાનું નામ પામી હોય એવો તર્ક થાય છે. ઉપેન્દ્ર અને ઇન્દ્રના નામથી અંકિત કઠિન (વજ્ર. વિશે.) રૂપરચના, તે અનુક્રમે ઉપેન્દ્રવજ્રા અને ઇન્દ્રવજ્રા. ઋક્કાલની ગાયત્રી ત્રિષ્ટુભ્ આદિ સંજ્ઞાઓની પેઠે આ વે પણ સ્ત્રીલિંગે વપરાય છે. ત્રિષ્ટુભ્ જગતી કુંડુંવમાં ઉપેન્દ્રવજ્રા સાથે સામ્ય ધરાવતો સમાન વંશનો ઇંદ્ર, તે વંશસ્થ. તે શબ્દ સંસ્કૃત ઇન્દ્રસ્ નામના વિશેષણરૂપે નપુંસક લિંગે વપરાય છે. ત્રિષ્ટુભ્ શાખામાં ત્રૈષ્ટુભઉપજાતિ, ઉપેન્દ્રવજ્રા તથા ઇન્દ્રવજ્રા અનુક્રમે ઊત્તરતી સંલ્યામાં વપરાયલા જોવામાં આવે છે; અને તે જ સ્થિતિ જગતી શાખામાં જાગત ઉપજાતિ તથા વંશસ્થની છે. ત્રિષ્ટુભ્ શાખાના ઇન્દ્રવજ્રાને જવાબ આપતો જગતી શાખાનો ઇન્દ્રવંશા ઇંદ્ર તો આલ્યાનકાલમાં ઉદ્ભવી પ્રચાર પામ્યો જણાતો નથી. ઇંદ્રોવિધાનના પ્રદેશમાં આલ્યાનકાલની સર્ગશક્તિ ત્રૈષ્ટુભ ઉપજાતિ, ઉપેન્દ્રવજ્રા, ઇન્દ્રવજ્રા, જાગત ઉપજાતિ અને વંશસ્થના રૂપવિધાનમાં પ્રગટ થાય છે. પાંચમા દૃષ્ટિપાતના સંસ્કૃત સાહિત્યમાં આકર્ષતા અને વિસ્મય પમાડતા વડવાઈઓના વિસ્તારી ઘટાટોપનું સૂક્ષ્મ વીજ આલ્યાનકાલમાં ઉપર કહ્યા પ્રમાણે રોપાય છે. ઇંદ્રનાં ચારે ચરણોમાં લઘુ-ગુરુનો દૃઢ સંવાદ સાચવવાનો આગ્રહ વંધાય છે. અગિયાર અને બાર વર્ણનાં ત્રૈષ્ટુભ અને જાગત ચરણો એ મેઠમાં ગોઠવાઈ વર્ણાત્મક સ્વરૂપમાંથી રૂપાત્મક સ્વરૂપ ધારણ કરે છે; અને ઇંદ્રનાં ચારે ચરણ રૂપરચનામાં એકબારાં વની નવા ઇંદ્ર સમચતુષ્પદ કિંવા સમપદ કે સમ ધવી વિશિષ્ટ સંજ્ઞા પામે છે, જેમાંથી કાઠાંતરે અર્ધસમપદ અને વિપમપદનાં ઢાઢાંપાંચડાં ફૂટે છે.

૧૮ ઉપરના પ્રસ્તાવમાં ત્રૈષ્ટુભ ઉપજાતિ, ઉપેન્દ્રવજ્રા તથા ઇન્દ્રવજ્રાના અને જાગત ઉપજાતિ તથા વંશસ્થના પ્રાદુર્ભાવનો જે ક્રમ વતાવ્યો છે, તેના

संबंधमां कोइ शंका छे के एम केम बने ? छंदो ज तेमना नामनी पूरावो रजू करी उक्त निर्णयना विरुद्ध साक्षी आपे छे. त्रिष्टुभशाखामां पहेलो प्रकटे इन्द्रवज्रा, पछी उपेन्द्रवज्रा अने ते पछी तेमनां चरणोना मिश्रणथी बनेलो उपजाति छंद. तेवी ज रीते जगतीशाखामां पहेलो उदय इन्द्रवज्राने जवाब आपता इन्द्रवंशानो, पछी उपेन्द्रवज्राने जवाब आपता इन्द्रवंशाना ज वंशाना वंशस्थनो अने ते पछी तेमनां चरणोना मिश्रणथी बनेला उपजाति छंदनो थवो घटे छे. ए शंकाना समाधान अर्थे जणाववूं जोईए के बाळक जन्मे छे पहेछं, अने तेनूं नाम पडे छे पछी. ए प्रमाणे प्रस्तुत छंदो उद्भवी पहेला प्रचारमां आव्या अने पछी तेमने नामकरण संस्कार थयो, एम जणाय छे. ए अवसरे उत्पत्तिक्रम उपर दृष्टि न रहेतां न्यूनाधिक प्रयोग अनुसार इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा नाम संपूर्ण स्थिर नवी रूपात्मक रचनावाळा उक्त छंदोने अपायां. ए शुद्ध पद्यबंधोनां चरणोना मिश्रणथी बनेला त्रीजा छंदने मिश्र बंधारणना कारणथी उपजाति संज्ञा मळी, एवी मारी समज छे. ए ज धोरणे जगती—शाखाना शुद्ध अने मिश्र छंदनां नाम रखायां संभवे छे. जन्म अने नामकरण वच्चे आ रीते अंतर पडेछं छे. जन्म पाम्या छतां प्रचारमां न आवनार छंद नामरहित पण रही जाय छे. तेनूं उदाहरण आपणी भापानूं जोईतूं होय, तो ते रोपदर्शिका सत्यभामा आख्यानमांनूं नीचेनूं पद्य छे:

नवनीत नवलकिशोरे चोर्यूं चोर्यूं चपाचप होरे,
 नवरीत नवल निचोरे कार्यं कार्यं हृदे रूप कोरे.
 नव भीत नवल चिकोरे अंगो अंगे कचेष्टित मोरे.
 नव-नीत नवल चकोरे धारी धारी युवा-मणि चोरे^{११}.

११ रामायण अने महाभारत भगवान वाल्मीकि अने व्यासनी कृति तरीके जाणीतां छे. ए वे मुनिओ तेमणे रचेलं महास्त्यानोना कथापुरुषना समयमां थया कहेवाय छे. परंतु मारी समज एवी छे के ऋग्वेदना वंजा

મંડલથી આઠમા મંડલ પર્યંતના સાત ભાગ અનેક મંત્રદ્રાવણાં સાત ગોત્રમાં સ્વાપ્યાયના વારસા તરીકે પૃથક્ પૃથક્ સૂક્તસમૂહરૂપે જેમ જલવાઈ રહેલા જિણાય છે, તેમ જ આ વે મહાલ્યાનના; અનેક કથાપુરુષનાં ભિન્ન ભિન્ન આલ્યાતાએ તેના સમયમાં ભાષેલાં આલ્યાનો તે તે આલ્યાતા સાથે સંબંધ ધરાવતાં ભિન્ન ભિન્ન કુટુંબમાં સાહિત્યના વારસા તરીકે વચગાળે સચવાઈ રહ્યાં હશે; અને તે છૂટી છૂટી પૂર્વકૃતિઓને આધારે વાલ્મીકિ તથા વ્યાસ-મુનિએ પછીથી રામાયણ તથા મહાભારત એ મહાલ્યાન સરખ્યાં હશે. છૂટાં આલ્યાનોના કર્તા જુદા અને તે આલ્યાનોના વસ્તુને સંબંધ પૂર્વક ગોટ્ઠવી નવેસર રચેલાં સ્વતંત્ર મહાલ્યાનોના કર્તા જુદા. છૂટાં આલ્યાનોનાં અને તેમના કર્તાઓનાં નામ લુપ્ત થયાં છે. તેના સ્થાને તે તે મહાલ્યાન અને તેના સર્જકનાં નામ રૂઢ થયાં છે. પ્રસ્તુત મૌલિક મહાલ્યાનોના કર્તા તેમની ઇતિહાસાતીતતાને લીધે કથાપુરુષના સહજીવી ધણાયા છે. રામાયણના વિધાતાના વિશેષનામ તરીકે વાલ્મીકિ બોલનો પ્રયોગ પ્રચલિત છે. એ મુનિએ રામચરિત પહેલયહેલું ગાયું. એ વૃત્તાંત વાલ્મીકીય રામાયણમાં આપ્યો છે. પરંતુ એ પ્રસ્તાવ વાલ્મીકિના મુખમાં મૂક્યો નથી; એટલે તે રામાયણનો મહિમા વધારનારો અર્વાક્તન ક્ષમેરો ઠેર છે. વાસ્તવિક રીતે વસિષ્ઠ વિશ્વામિત્ર આદિ સંજ્ઞાની પેઠે વાલ્મીકિ પણ ગોત્રસંજ્ઞા છે. મૃગુગોત્રના વસગણમાં તે સંજ્ઞા મઠ્ઠી ધાવે છે^{૧૨}. કૃષ્ણયજુર્વેદના તૈત્તિરીયપ્રાતિશાખ્યમાં અને શુક્રયજુર્વેદની સંહિતામાં પણ પ્રાચીન ઋષિ તરીકે વાલ્મીકિનો નિર્દેશ છે^{૧૩}. તે રામાયણના કર્તાના સગોત્ર પૂર્વજ સંભવે છે. આદિકવિ તરીકે જાણીતા વાલ્મીકિનું વિશેષનામ ઉપલબ્ધ નથી. મહાભારતના વિધાતા વ્યાસ કહેવાય છે. તે બોલ ઉપનામ છે. કર્તાનું વિશેષનામ 'તો કૃષ્ણ છે. 'તેને દ્વૈપાયન

૧૨ જુઓ પ્રથમ-૦૪૨૧ અને પ્રથમ-૦૪૨૧, ગોત્રવરનિવંધકદમ્બ પૃ. ૨૨ અને ૧૧૦. જુઓ વઠ્ઠી રામા. ૧૭૧૨:૧૨૫૧. અહીં ગોત્રકૃત માર્ગવ સંજ્ઞાથી વાલ્મીકિનો નિર્દેશ કર્યો છે. એ સંજ્ઞા ઉપર તિલકવારું દિવ્વળ મૂલ મરેલું છે.
૧૩ જુઓ 'the Riddle of the Ramayana, chapter iii

વિશેષણ લગાડવામાં આવે છે, તે એ મુનિની જન્મભૂમિનું વૌધક છે. વસિષ્ઠ ગોત્રના પેટામાં ગણાવેલા પરાશરગોત્રમાં તે જન્મ્યા હતા; તેથી પારાશર્ય સંજ્ઞાથી પણ તે ઓઝરવાય છે. વ્યાસ ઉપનામ સંબંધપૂર્વક પર્વોની વ્હેંચણી કરીને મહાભારતના રચનાર તરીકે કૃષ્ણ દ્વિપાયનને મઢ્યું છે. આવી જ રીતે વિવિધ ઉપનિષદના સિદ્ધાંતોને સંબંધપૂર્વક અધ્યાયોમાં વ્હેંચીને વ્રહ્મસૂત્રના રચનાર^{૧૪} વાદરાયણ મુનિને પણ વ્યાસ ઉપનામ આપવામાં આવ્યું છે. પૂર્વ સૂરિઓની કૃતિને આધારે રચાયેલું રઘુવંશ મહાકાવ્ય જેમ કવિ કાલિદાસની સ્વતંત્ર કૃતિ છે, તેમ જ મૌલિક રામાયણ અને મહાભારત એ બે મહાલ્યાનોને હું વાલ્મીકિ અને વ્યાસની સ્વતંત્ર કૃતિ માનું છું. ઉક્ત મુનિઓ છૂટાં જૂનાં અન્યકર્તૃક આલ્યાનોના માત્ર સંપ્રાહક કર્તા નથી, પણ સુશ્લિષ્ટ મહાલ્યાનોના સર્જક કર્તા છે. સંવિધાન, પાત્રાલેખન, પદ્યબંધ, શૈલી, સર્વ તત્ત્વો તપાસતાં વિદ્યમાન મહાલ્યાનોમાં અભિન્નકર્તૃકતાનું દર્શન થયા વિના રહેતું નથી. ઋક્સંહિતામાં ક્ષેપક ભાગનો પ્રાયઃ અભાવ છે; પરંતુ ઉક્ત મહાલ્યાનોમાં અધ્યાયોના અધ્યાય પેસી ગયા છે. તેનું સમાધાન એ છે કે શ્રુતિ જ્યારે શબ્દ-પ્રધાન મનાય છે, ત્યારે આલ્યાનપુરાણ કેવલ અર્થપ્રધાન કહેવાય છે. વૈદિક સાહિત્યમાં એક અક્ષરની પણ વધવટ થઈ શકે જ નહિ, સ્વર પણ ભિન્ન લેવાય નહિ, એવું વિધાન ચિરસ્થાપિત છે. લૌકિક સાહિત્યના સંબંધમાં અર્થ ઉપર ભાર મૂકાય છે. એથી અર્થનું ઉપવૃંહણ કરનારો ઝમેરો તેમાં પેસવા પામે છે. રવેલેલા ધાનમાંથી રાસ ચાઢી કઢાય છે, તેમ આ ક્ષેપક ભાગ પણ પદ્યબંધની સમીક્ષા આદિ વારીક વાઢવણીથી જુદો પાઢી શકાય છે.

૨૦ જેમ પ્રાચીન ગ્રીસ દેશમાં કાવ્યેતિહાસનું પ્રકાશન ઓલિમ્પિયાના મેદાનના અક્ષવોટમાં થયેલું કહેવાય છે તેમ, પ્રાચીન આર્યાવર્ત યજ્ઞવિદ્યાનું

૧૪ વાદરાયણ વ્યાસ મરદ્વાજગોત્રના વિષ્ણુરૂદ્ધ પેટામાં ગણાવેલા વાદરાયણ ગોત્રના હતા. જુઓ મગધરનિવન્ધકદમ્બમાં સંપ્રહેલ પ્રથરમજ્જરી અને પ્રથરદર્પણ.

ઉપાસક હોવાથી, અહીં આલ્યાનસાહિત્ય પૂર્વે યજ્ઞવાટમાં ઝલરી વૃદ્ધિ પામ્યું હતું. દિવસોના દિવસો ચાલતા, વર્ષોના વર્ષો પણ ઘોચતા સત્રમાં દૈનિક કર્મજાલમાંથી છૂટા થયેલા ઋષિમુનિઓ કર્ણપેય આલ્યાનો સાંભળીને વિનોદ અને વિશ્રાંતિ મેલવતા હતા. ઐતરેયબ્રાહ્મણમાં^{૧૫} રાજસૂય દરમિયાન હોતાં શુન:શેપાલ્યાન કહે છે. શતપથબ્રાહ્મણમાં^{૧૬} અશ્વમેધ યજ્ઞ વિશે આવાં કથાચક્ર પ્રવર્તવાનો ઉલ્લેખ છે. એક વર્ષ માટે યજ્ઞિય અશ્વ છૂટો મૂકવામાં આવતો; તે સમય દ્વિજમંડલ આલ્યાનના કથનશ્રવણમાં ગાઢતું હતું. યાસ્ક ભગવાન નિરુક્તમાં આલ્યાન શબ્દ વહુવાર વાપરે છે. વેદવિદ્યાના એ પુરાણા અંગમાં સ્યમંતક મળિની ચોરી સાથે સંબંધ ધરાવતું ' અક્રૂરો દદતે મળિન્મ ' એવું અનુષ્ટુભ્નું એક ચરણ મઠી આવે છે^{૧૭}. ઉત્તર કાઠમાં ભગવાન પાણિનિ યાયાતિક અને યાવક્રીતિક^{૧૮} શબ્દોની નીચે પ્રમાણે ઘટના સમજાવે છે:— યયાતિનું આલ્યાન કહેનાર તે યાયાતિક અને યવક્રીતનું આલ્યાન કહેનાર તે યાવક્રીતિક. એ શબ્દસિદ્ધિ ઉપરથી યયાતિ અને યવક્રીતનાં છૂટાં આલ્યાનોનું અસ્તિત્વ પણ સિદ્ધ થાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે મહર્ષિ ઐતરેયથી માંડીને ભગવાન પાણિનિના સમયપર્યંતના ગાઢામાં આલ્યાનના પ્રાકટચનો વૃત્તાંત વિસ્તર્યો છે. આપણાં મહાલ્યાન પૈકી મહાભારતની ઉત્પત્તિ અને વિવૃદ્ધિની વિગત સાદી અને સ્પષ્ટ પ્રાપ્ત થાય છે, પણ રામાયણની તેવી સાદી અને સ્પષ્ટ નથી. વ્યાસ ભગવાનના^{૧૯} જય સંજ્ઞા ધરાવતા મહાલ્યાનનું

૧૫ જુઓ એ. ઘા. ૧૫ | ૩ |

૧૬ જુઓ શ. પ. ૧૩ | ૩ | : ૨ | ૫ |

૧૭ જુઓ. નિરુક્ત | ૨ | ૨ |

૧૮ જુઓ. પા. વ્યા | ૪ | ૨ | ૬૦ |. ઘઠી પા. વ્યા. ૧૩ | ૨ | ૫૬ |

મા ભારતસપ્રામનો ઉલ્લેખ છે.

૧૯ મહાભારતના શાદિમગલમા જયસંજ્ઞાનો પ્રયોગ છે. પ્રસ્તુત શ્લોક નીચે પ્રમાણે છે:— નારાયણ નમસ્તુત્ય નર ચૈવ નરોત્તમમ્ । દેવી સરસ્વતી ચૈવ તનો જયમુદીરયે ॥ પાઠ પાઠ ઉદીરયેત્ છે, તે રચનારના મુદ્દમાં ઘાષિત છે. વિષ્ણુ

પારાયણ તેમના શિષ્ય વૈશંપાયન મહારાજા જનમેજય સમક્ષ કરે છે. પ્રસિદ્ધ સર્પસત્રના પારાયણમાં તેમના હાથના ઝમેરા સહિત ઉક્ત સંહિતા થઈ તે શત પર્વમાં વિભક્ત સંહિતા ભારત સંજ્ઞાથી ઓઠ્ઠાલાય છે. ત્યારપછી કેટલેક કાલે પુરાણ સાહિત્યમાં પારંગત બ્રાહ્મણવર્ય સૌતિ ઉગ્રશ્રવા નૈમિષારણ્યના દ્વાદશવાર્ષિક સત્રમાં મુનિમંડલ આગલ્લ દનું વીજી વારનું પારાયણ કરે છે. સૂત અને સૌતિને હાથે વૈશંપાયનની સંહિતા ભારત મટી ઉપાલ્યાનોના ઝમેરાએ કરીને મહાભારત બને છે^{૨૦}. રામાયણની ઉત્પત્તિ અને વિવૃદ્ધિની વિગત અદ્ભુત કલ્પનાના અંવાર તલ્લે ઢંકાઈ ગઈ છે. સત્યના મુખ ઉપરનું એ હિરણ્મય ઢાંકણ દૂર કરનારને સ્વયંમૂ અનુદુઃખ દ્વેદમાં મૌલિક રામાયણની રચના કરતા ધર્મમૂર્તિ વાલ્મીકિ મુનિનું દર્શન થાય છે. એ મહાલ્યાન કુશીલવોને મુલે અશ્વમેધ યજ્ઞોમાં વીણાના સાજ સાથે ગવાય છે; અને સમય જતાં મહાપુરુષોનાં આલ્યાન ગાઈ આજીવિકા મેલ્લવનારા એ બંદિજનોને હાથે વિસ્તાર પામે છે. કુશીલવોની પરંપરામાં કોદને પોતાના વર્ગનો મહિમા વધારવાનું સૂક્ષ્મ હશે; તેણે વાલ્મીકિ ભગવાનના રઘુવંશી શિષ્યો કુશ અને લવના મુલે રામચંદ્રના અશ્વમેધ યજ્ઞમાં રામાયણ ગાયની કથા જોડી કુશીલવોની ઉત્પત્તિ કુશ અને લવથી કપજાવી કાઢી મૂલ્લમાં ઝમેરી જણાય છે. વાલ્મીકિના અને વ્યાસના મહાલ્યાનમાં થયેલા ઝમેરા ચાઢી કાઢવા અહીં અપ્રસ્તુત છે. આપણને સીધો સંબંધ એ વેની પથરચના સાથે છે. તેનાં શરણાં તો વર્તમાન વાચનામાં પળ તેનાં તે અતૂટ વહ્યા કરે છે, તે આપણે ઉપર જોયું.

૨૧ આલ્યાનકાલ અને ઋક્કાલ વચ્ચે ગાઢો કેટલો લાંબો છે તેનો લ્યાલ પથરચનાની સમીક્ષા ઉપરથી સારી રીતે વંધાય છે, અને તેનું સમર્થન એ વે કાઢના સાહિત્યની ભિન્નતાથી પૂરેપૂરું થાય છે. ઋક્કાલની માપા

ત્રીજા પુરુષના ઉદીરયેત્ વલ્લ વર્તમાન પહેલા પુરુષનું ઉદીરયે રૂપ અહીં અપેક્ષિત હોવાથી મે ત્રણ પાઠ સુધારી લીધો છે.

૨૦ જુઓ The Mahabharata :—A criticism, by C. V. Vaidya.

ઉદાત્ત અનુદાત્ત અને સ્વરિત એ આરોહાવરોહસિદ્ધ સ્વરથી રૂપાલક્ષિત છે. તેની રૂપાલ્યાનસમૃદ્ધિ અર્થવાહી, ઘૃષ્ણિગામી, તેમ જ વિપ્રાત છે. તેના કેટલાક શબ્દોનો અર્થ સમજાતો બંધ પડ્યો છે. આહ્યાનકાલની ભાષામાં ઉક્ત ટ્રણ સ્વરનો પ્રયોગ ઘસાઈ જાય છે. એ કાઠમાં રૂપાલ્યાન અપદ્ધ વધતું અટકી કેટલાંક રૂપ વ્યવહારમાં વપરાતાં બંધ પડે છે; વડી યજ્ઞમૂર્તિનાં પૂરાઈ ન રહી વિવિધ ક્ષેત્રમાં વિચરતા સાહિત્યનો વ્યાપ્તિપ્રદેશ અને શબ્દોનો વહુ જ વિસ્તાર પામે છે. ઠક્કાલની આર્ય ભાષા લોકભાષા હતી, એ ઘંઘેરોઈ મું છે. આહ્યાનકાલના સાહિત્યની ભાષા પણ તે સમયના કવિ અને પંડિતોની જ નહિ, પણ સમસ્ત જનસમૂહની વ્યવહારુ વાણી હતી—તે લોકભાષા જ હતી આપણાં બન્ને મહાત્યાનો એ લોકભાષામાં રચાયાં છે. આહ્યાન વાસ્તવિક રીતે લોકસાહિત્ય હતું, એટલે લોકભાષામાં જ રચાયું હોઈ શકે. બન્ને મહાત્યાનોની ભાષાની સરલતા અને તેમાં લાંબા સમાસનો અને અટપટાં રૂપનો અભાવ એ નિર્ણયને ઘટક બનાવે છે. આપણે એ લોકભાષાને પૌરાણ સંસ્કૃત તરીકે ઓળખાવીશું. સંસ્કૃત નામ ભાષાને વહુ પાઠ્યથી મળ્યું છે. સૈકાંતો પછીના વૈનયિક સંસ્કૃતથી વિવેક કરવા પૌરાણ વિશેષણ મેં તેની સાથે જોડ્યું છે. સંસ્કારવાળી એટલે શુદ્ધ ઉચ્ચારવાળી ભાષા તે સંસ્કૃત^{૨૧}. દરેક ભાષામાં શુદ્ધ સંસ્કારી ઉચ્ચાર માટે આગ્રહ રહે છે. આપણે પણ શુદ્ધ ઉચ્ચાર અને અશુદ્ધ ઉચ્ચાર કિંવા સંસ્કારી વાણી અને અસંસ્કારી વાણીનો ભેદ કરિયે છિયે. એ ભેદ પ્રાચીન કાઠથી ચાલ્યો આવે છે. જેમ સંસ્કાર શબ્દ ઉચ્ચારની શુદ્ધતાનો વાચક છે, તેમ ઉચ્ચારની અદ્યતાના અર્થમાં મ્લેચ્છ ધાતુ વપરાય છે. શતપથબ્રાહ્મણમાં અદ્ય ભાષા ઘોક્તાર માટે મ્લેચ્છ શબ્દનો પ્રયોગ

૨૧ 'સંસ્કારવાળું કિવા શુદ્ધ ઉચ્ચારવાળું' એવા અર્થમાં 'સંસ્કૃત' શબ્દના પ્રયોગ માટે જુઓ રામા. ૧૭ | ૭૧ | ૧૫-૧૬, તન્મૃતિયગમાયુષ્કે ત્રિરધાનકરણાન્વિ-
તમ્ | સંસ્કૃતે શ્વશ્વોપેતે શમતાસ્વનનિવહમ્ | દ્યુધાય રાનચરિત તસિમ્મ માટે ૧૧
શ્લોક ૧૧.

थयो छे. संस्कार एट्ठे उच्चार शुद्धिने केट्ठं महत्त्व अपातूं हतूं ते नीचेनी संक्षिप्त पुराणी कथा उपरथी समजाशे. 'वज्रनाभ नामे असुर ब्रह्मदेवनां वरदान पामी महा वळ्वान थई पळ्यो हतो. तेनो घाट घडवा प्रद्युम्न सांब गद आदि यादवो नटना वेपमां तेनी राजधानी जे वज्रपुर, त्यां जाय छे. शहेर वहार परामा ऊतरी तेओ रामजन्मनूं आख्यान भजवी बतावे छे. एमा गणिका द्वारा ऋष्यशृंगना प्रलोभनथी आरंभी रामचंद्रना जन्म पर्यंत वृत्तात समाव्यो हतो. तेना विविध प्रस्तावना साक्षात्कारथी, हृदयंगम अभिनयथी, आवाद संस्कारथी, अने आद्यंत समग्र प्रवेशथी असुरो विस्मित थया.'^{२३} आ ऊतारामां प्रयोगनी सफळतानां अनेक अंगमा संस्कार अंगनो पण उल्लेख छे. तेनूं कारण ए छे के नटनो धंधो निकृष्ट वर्ग करतो हतो. ते वर्गना उच्चार केळवणीनी खामीने लीधे भ्रष्ट जोवामा आवता. परंतु रामजन्मना भजवनारा तो राजवंशी यादवकुळना क्षत्रियो हता. तेमना वर्णोच्चारनी शुद्धतामा कशी न्यूनता हती ज नहि. एमने नटनो वेप धारण करनार यादवो नहि पण खरेखरा नट समजी तेमना अत्यंत शुद्ध उच्चारथी साभळनारने विस्मय थयो ए स्वाभाविक ज हतो. आ उच्चारशुद्धिनी चीवटने लीधे भापाने संस्कृत नाम मळ्छूं. रामायण अने महाभारत साथे प्राचीन पुराण पण ए लोकभाषामा होवाथी एने में पौराण संस्कृत कळूं छे.^{२४} समग्र

२३ जुओो ह वं । १३ । १० । संस्काराभिनयौ तेषा प्रस्तावना च धारणम् । इत्वा सर्वे प्रवेश च दानवा विस्मय गता ॥ अर्हो सर्वे पाठ कल्पित छे मुद्रित प्रतमा सर्वे छे आमा प्रवेश शब्द 'रंगभूमि उपर प्रवेश करनारा पात्रोना मुखनू समग्र काव्य, प्रयोगवध' एवा अर्थमा धररायो छे. तेनो वपराट उत्तर काळना संस्कृत साहित्यमा कहींए मळी आवतो नथी

२४ पुराणोर्ना मौलिक वाचना प्राकृतमा हती, अर्थात् पुराणो मूळे प्राकृत भाषामा रचाया हता. एवी सदसत डॉ पार्जिटरने तर्क छे परंतु पुराणी आर्यानकालमा प्रथम हचल्या, त्यारे चालु दृष्टिपातमा आगळ कहेवामा आवशे तैम लोकभाषा संस्कृत हती. प्राकृत तो ते काळे उद्भव ज पाम्य न हतू एट्ठे उक्त तर्क असाध्य छे

આર્યાનસાંહિત્ય સાર્વલૌકિક શ્રવણપ્રાણ હતુ, ઘટ્ટે ઉક્ત પૌરાણ સંસ્કૃતમાં જ તે ર્ચાયુ હતુ. આ + ર્યા તથા કથ ધાતુ અને આર્યાન તથા કથા નામ પર્યાયરૂપ છે. અર્ચાચીન કાઠ્ઠમાં કથામટ વાદિત્રના સાજ સાથે પૂર્વે શહેરમાં કથા કરતા હતા અને હાલ ફોર છે તેઓ જેમ અર્ચાચીન કાઠ્ઠની લોકમાપામાં કરતા હતા અને ફોર છે, તેમ મગવાન વાલ્મીકિ અને વ્યાસની વૃતિઓ પણ ઉક્ત પ્રાચીન કાઠ્ઠની લોકમાપામાં જ હતી એ નિર્ણયને વિશેષ પ્રમાણની અપેક્ષા નથી.

૨૨ વાળીની શુદ્ધતા વતાવનાર સસ્કાર શબ્દ ઉપર પ્રકાશ પાડનારો વાળીનો અશુદ્ધતાનો વાચક સ્લેષ્ટ શબ્દ પણ મહાભારતમાં પ્રયુક્ત છે. તેના વપરાટનો પ્રસંગ આદિપર્વમાં નીચે પ્રમાણ છે, પાડવોનો ઘાટ ઘડવાને તલપી રહેલો દુર્યોધન સાથેલા મત્રીઓના મુલે ગગાતીરે આવેલા વારણાવતમાં^{૨૫}

૨૫ મુવઈ (વી B) કલક્તા (સી C) અને કુમ્બોનમ (કે K)ના છપાયલા મહાભારતના આદિપર્વના પેટાના જનુશુદ્ધતાપર્વમાં પંદર શ્લોકોનો એક અધ્યાય (વી, ૧૪૯) આપ્યો છે, તેમાં સુરંગ માર્ફત નાસી છૂટેલા પાંડવો વિદુરે તૈયાર રચાવેલી હોડીમાં ગંગા કતર્યાનુ વળે છે પૂનાની Bhandarkar Research Institute નામે સ્થાપિત તરફથી છપાતા મહાભારતના આદિપર્વના ભાગ ૫ માં એ અધ્યાય ક્ષેપક ગણી ગાઢી નાંચ્યો છે. એ સ્થાપે ઉપયોગમાં લીધેલી TG (ટી જી) સંજ્ઞાની હાથપ્રતમાં ઉક્ત પંદર શ્લોક આપ્યા છે પણ તે પૂનાની સંસ્થાના આદિપર્વના અધ્યાય ૧૩૭ ની પૂર્વે જુદા અધ્યાયરૂપે નહિ, પરંતુ અધ્યાય ૧૩૭ ના અંત પાતી શ્લોક સમૂહરૂપે મજકૂર અધ્યાય ૧૩૭ ના સત્તરમા શ્લોક પછી આપ્યા છે આ જ એ પંદર શ્લોકનું વાસ્તવિક સ્થાન છે એમ પૂનાના વિદ્વાન સસ્કર્તા એક તરફથી સ્વીકારે છે અને બીજી તરફથી Cd (સી ડી) હાથપ્રતમાં આપ્યા ન હોવાથી એ શ્લોકને પ્રશ્નિત લેખકની તપ્તી ૨ છે પછીમર તૈયારી શ્લોકનો પુરાવો વાઙુ ઉપર રાખી ધીજી એક વાગત તપાસિયે ઉક્ત અધ્યાય ૧૩૭ ના સત્તરમા શ્લોકના ઉત્તરાર્થે વદલ $K_4 N V_1 BD$ (except D_5) ન આધારે જે પાઠાતર આપ્યું છે તેમાં તથા અધ્યાય ૧૩૮ ના ચોથા શ્લોકના ઉત્તરાર્થે વદલ $S K D$ ને અનુસરી જ પાઠાતર નોંધ્યું છે તેમાં પણ વારણાવત છોડવા પછી પાડવોએ ગંગા ઓઠ્ઠગયાનો નિર્દેશ છે, તેથી સ્પષ્ટ થાય

ऊजवानारा आगामी महादेवना महोरसवना विस्मयकारक वखाण करावी पांडवोने त्यां जवा ललचावे छे. पांचे पांडवो कुंती माता सहित वारणावत जवा नीकळे छे. दुर्योधनून कपट वधू ए विदुरना जाणवामा आवे छे. तेना कावतरानी चेतवणी आपवा, ते पांडवोने वळाववा जाय छे, ते अवसरे बहारथी जाणे वारणावत जतां प्रवासनां जोखमो तरफ ध्यान खंचता होय अने अंदरखानेथी लाक्षागृहना महेलनी आग सामे जाप्रत् रहेवा बोध आपता होय एवी कविपणाने छाजती द्विअर्थां वाणी ते उच्चारे छे; अने युधिष्ठिर 'हां, समज्यो' एवो उत्तर वाळे छे. त्यारपछी विदुर पाळा फरे छे; अने मातुश्री सहित पांडवो वारणावत सिधावे छे. त्यां तेओ शहेर बहारना ऊतारामां थोडो वखत गाळी तेमने माटे तैयार करेला महेलमां रहेवा जाय छे. वाद विदुरनो मोकलेलो खनक युधिष्ठिरने मळवा आवे छे अने युधिष्ठिरने प्रयाण समये विदुरे कहेलां वचन प्रत्ये ईसारी करी ते जणावे छे के 'हे पांडुपुत्र ! वडील विदुरे तमने म्हेच्छवाणीमां

छे के लाक्षागृहवाळं शहेर गंगाने कांठे ज हतूं. तकरारी पंदर श्लोक पैकी श्लोक ३, ९, ११ ने १२ वचारे पडता छे. बाकीना अगियार श्लोक वारीक नजरे तपासतां पूतानी संस्थाना आदिपर्वना अध्याय १३७ ना सत्तरमा श्लोकना स्थाने गोटावा घटे छे. ए असल स्थळे पूर्वे कोद हाथप्रतमां ए श्लोक ऊतारवा रही गया हशे अने ते पाळळथी प्रतना कोरा भागमां ऊतार्या हशे. प्रत् मजकूरनी नकल करनारे अध्याय १३७ मां असल जगाए चर्चास्पद श्लोको न मुक्तां जुदा अध्यायरूपे सदर अध्याय १३७ नी पूर्वे भूलथी मूकया हशे. अध्याय १३७ मां उक्त श्लोकोने स्थाने उत्तरार्धमां पूर्वे में नोथिला पाठांतरवाळो सत्तरमो श्लोक गंगा ओळंग्याना वर्णनना तकरारी श्लोकनूं अस्तित्व मागी, ले छे; पण पुनरुक्तिप्रस्त छे; अर्थात् त्याज्य छे. ए तजवा योग्य ठरेला श्लोकनी जगा, ते गंगा ओळंग्याना वर्णनना चर्चास्पद श्लोकोनूं स्थान छे; आ विवेचन पछी अध्याय १३८ ना चोथा श्लोकनी नोध लेयी अपेक्षित नथी. निर्णय एटलो ठरे छे के पूताना विद्वान् संस्कृताए तज्जी दीथेला पंदर श्लोक पैकी उपर तारवेला अगियार श्लोक मौलिक छे; अने तेमनूं स्थान अध्याय १३७ ना सत्तरमा श्लोकनी जगाए छे.

કંઈક કહ્યું હતું, અને તેને તેનો 'હાં, સમજ્યો' એ શબ્દથી ઉત્તર વાલ્યો 'હતો; તે ઇંધાણીથી તેમને મારો વિશ્વાસ આવશે.' પછી તેને શુભ રહી લાક્ષાગૃહથી ગંગાના કાંઠા સૂધી સુરંગ કરી આપી. તે રસ્તે, મહેલને આગ લગાડી, પાંડવો કુંતીજી સમેત નારી દ્યૂટયા. ગંગાકાંઠે વિદુરે અગાઉથી મોઝલેલો વિદ્વાન બ્રાહ્મણ તેમના આવવાની વાટ જોતો હતો. તેણે તેમને વિશ્વાસુ માઝીવાઝી હોડીમાં 'વેસારી સહીસલામત સામે કાંઠે પ્હોચાડી દીધા. ૨૬

૨૩ પાંડવો અને તેમનાં માતુશ્રીના જીવ બચાવવા ધર્માત્મા વિદુર ત્રણ પગલાં ભરે છે. પ્રથમ વદાયગિરી વચ્ચે જાતે લાક્ષાગૃહના અગ્નિદાહની ચેતવણી આપે છે. પછી ચનક માર્ફત સુરંગ કરાવે છે. તે પછી વિશ્વાસુ માઝીવાઝી હોડીમાં એ તેમને સામે કાંઠે પ્હોચાડે છે. પહેલા પગલાને લગતા શ્લોક જે મ્લેચ્છયાણી (મ્લેચ્છવાચ્)માં હોવાનું કહેલું છે, તેનો ઉત્તારો પ્રસ્તાવક શ્લોક અને પ્રત્યુક્તિના શ્લોક સહિત નીચે પ્રમાણે છે:—

પૌરેપુ વિનિવૃત્તેપુ વિદુરઃ સર્વધર્મવિત્ ।

બોધયન્ પાણ્ડવશ્રેષ્ઠમિદં વચનમ્બ્રવીત્ ॥ ૧૯ ॥

પ્રાજ્ઞઃ પ્રાજ્ઞં પ્રલાપજ્ઞ. પ્રલાપજ્ઞમ્. 'હું વચઃ ।

યો જાનાતિ, પરપ્રજ્ઞાં નીતિશાસ્ત્રાનુસારિણીમ્ ।

વિજ્ઞાયેહ તથા કુર્પાંદાપદં નિસ્તરેદ્ યથા. ॥ ૨૦ ॥

અલોહં નિશિતં શસ્ત્રં શરીરપરિકર્તનમ્ ।

યો વેત્તિ, તં તુ ન ઘ્નન્તિ પ્રતિઘાતવિદં દ્વિપઃ. ॥૨૧॥

કક્ષમ્નઃ શિશિરમ્નશ્ચ મહાકક્ષે ચિલૌકસ. ।

ન દહેદિતિ ચાત્માનં યો રક્ષતિ સ જીવતિ. ॥૨૨॥

નાચક્ષુર્વેત્તિ પન્થાનં, નાચક્ષુવિન્દતે દિશઃ, ।

નાઘૃતિભૂતિમામોતિ; બુઘ્યસ્વૈવં પ્રવોઘિતઃ. ॥૨૩॥

२४ प्रस्तुत उक्ति रूपांतर, पामी छतां पण अल्पज्ञ पुरुषो, कहेरो के ए संस्कृतमां छे, ए कोइ संस्कृतथी भिन्न भाषामां तो नथी ज, तेम ते कोइ सांकेतिक कृत्रिम भाषामां पण नथी के संकेत कल्पी काडी ते ऊकेलवी पडे, ते साथे बीजी वानर ए ध्यानमां राखवानी छे के उद्धृत उक्तिमां मात्र लाक्षाग्रहना अग्निदाह विशेष ज कथन छे, नहि के संस्कृत टीकाकार माने छे तेम उत्तर पर्यटन विशेष अने अंते राज्यप्राप्ति विशेष पण एमां सूचन समायुं छे, वल्ली ए पण लक्ष बहार न जवूं जोईए के अवसर लांबा नीतिबोधनो नधी, मुदासर संक्षिप्त बोधप्रचनतो ज छे, ए त्रण प्रकारनी सावचेती धरावनारने जणारो के उपर। आपेला उतारामा ओगणीस आंकनो श्लोक तो उक्तिना अवतरणरूप छे, ते उक्ति-अंतर्गत नथी, बीस आंकवाळो केवल सामान्योक्तिरूप छे, एटले करीने बधारा पडतो छे, एकवीसमो श्लोक बावीसमानी, जोडमां, निरर्थक बने छे, गंगाकाठे, विदुरे, मोकलेलो ब्राह्मण विश्वास ऊपजाववा सुधिष्टिर प्रत्ये बावीसमो श्लोक ज कहे छे, एकवीसमो नथी, कहेंतो^{२८}; ते जोतां पण एकवीसमो प्रक्षिप्त ठरे छे, त्रेवीसमा श्लोकमां लाक्षाग्रह, संबधी एक पण शब्द नथी, ए पण सामान्योक्ति छे, ते कारणधी एने पण मारे श्लेषक गणतो पडे छे, रखा मात्र बावीस, चोवीस अने पचीस ए आंकवाळा श्लोक, ए त्रण अनुष्टुभ् छंदमा ज विदुरनी उक्ति समायली छे, एनो उपलब्ध पाठ बहु रूपांतर पामेलो छे, उक्त रूपांतरने लीधे विद्वान टीकाकार पण ए श्लोकानूं हार्द, समजवामां आडे रस्ते चढी जाय, छे, विदुरनूं वक्तव्य स्फुट थवा मौलिक पाठनो उद्धार इष्ट छे, वक्तानूं द्वध जीवन

२८ सुओ कलवत्तातु म मा. १९१५११६-८। तत पुनरधोवाच शापर्थ पूर्वोदितम् । सुधिष्टिर निषोषेद सशयं वचनं, कवे ॥ कदाच. दिग्विप्राय महा-कथे विज्ञोक्त्वा, न हन्तीदिवमात्मानं यो जानाति स जीवति ॥ तन मां प्रेषितं विद्धि विभक्त सहायनया । अर्हा एव आदत्ता, अवतरणनामा श्लोकेति न वदत हन्तीदिवेवम्, अने रक्षति षडङ्ग जानाति पाठ्यतर छे, पूनानी सरयाना आदिर्पामो । उक्त अभ्याय माली जाग्यो छे, एटले तेनो हवाओ भाष्यो मयी.

ए कार्यनो उक्तेल पाडे एम छे विदुर मातृपक्षे शूद्र हता तेओ ए वर्णेनी विभापा किंवा बोली माताना धावण साथे घाय्या हता. तेमणे मोटा थंता ऊची केळवणी प्राप्त करी हती. व्यास भगवान तेमने कवि पद लगाडे छे ए शाखज कवि ए अभ्याससिद्ध भापामा विदुरनीति रचेली छे. चाल प्रस्तावना त्रण श्लोक शूद्र कवि ए जन्मसिद्ध विभापामा रच्या समवे छे. ए विषयमा कइ पण शका ऊपजे, तो ते खनकना मुखना स्पष्टीकरणथी निर्मूळ थाय छे, अने निर्दिष्ट समव केवल समव मटी वास्तवनु स्वरूप धारण करे छे^{२९}. आनी समजथी रूपातर दूर करी प्रस्तुत त्रण अनुष्टुभ् नीचे प्रमाणे म्लेच्छवाचा वाचवाने हूं प्रेराउ छूं

कक्षाग्निः सिसिरग्नो हि महाकक्षे विडौकश ।

न दहत्येवमात्मानं यो रक्षति श जीवति ॥ १ ॥

अनायैदत्तमाप्नोति सखं नरो-नलोरजम् ।

श्वाविच्छरणमासाद्य मुच्यते श हुतासनात् ॥ २ ॥

चरन्मार्गं विजानाति नक्षत्रैर्बिन्दते दिसम् ।

आत्मना चात्मनः पश्चायपीडन् नानु पीत्यते ॥^{३०}

जेम खेडुत वगैरे बोले छे तो गूजराती-पण ते उच्चारमां विवृत होय छे, तेम विदुरनी आ उक्ति छे पौराण संस्कृत-पण ते उच्चारमां विवृत छे. विकृतिना तत्वो त्रण ज छे, डकार लकारनो, बकार वकारनो, अने शकार सकारनो गोटाळो ए विवृति दूर करता प्रवृत्त स्वरूप वे सिद्ध थाय छे, प्रवासनी उपाधि परत्वे एक अने लक्षागृहना अग्निदाह परत्वे बीजू, शायीजे पूर्वे कहेवामा आव्यू छे तेम उक्ति द्विअर्थी छे जेगलना जोख-

२९ जुओ म भा १।१४।६। विचित्र विदुरेणोक्तो म्लेच्छवाचा सि पाण्डव । त्वयाच तत् तथैरुक्तमेतद्विश्वासकरेणम् ॥, अथवा पूतानो सस्थान् आदिर्ष्व १।३।६।

३० आ श्लોકોમા વપરાયલ્ય શબ્દોના વેવલા અર્થને માટે ચોટુ દષ્ટિપાતને અંતે આપેલું પરિશિષ્ટ જુઓ.

मनो निर्देश करतू अविद्वत किंवा संस्कारशुद्ध स्वरूप नीचे प्रमाणे गोठवाय छे.

कक्षाग्निः शिशिरघ्नो हि महाकक्षे विलाकसः ।
 न दहत्येवमात्मानं यो रक्षति स जीवति ॥१॥
 अनायैर्दत्तमाप्नोति शस्त्रं नरो नडोहजम् ।
 श्वाविच्छरणमासाद्य मुच्यते स हुताशनात् ॥२॥
 चरन्मार्गं विजानाति नक्षत्रैर्विन्दते दिशम् ।
 आत्मना चात्मनः पश्यापीलयन् नानु पीडयते ॥३॥

अहाँ जणाववुं जोईए के पांठवो वारणावत जना नीमळ्या, त्यारे शिशिरऋतुनी कटऋडती^{३१} टाढ पडती हती, ए टाढ सामे बचाव करवानो जंगलमां एक ज रस्तो हतो. प्रवासीओ रातवासो रहेता त्या ठेरटेर आखी रात सळगती तापणीओ राखता. ते तापणीथी कचित् एम वनतू के आसपासनी खसली सळगी ऊठती अने विचारा मुसाफरोने सर्वभक्षक दावानळना सपाटामांथी नासी छूटतां भोय भारे थती. ते वारे ऊंडी खोह कूवो के एवी बीजी आश्रय लेवानी जगामां भराई तेओ पोतानो जीव बचावता. ते तरफ लक्ष खेंची विदुर उपरथी कहे छे के 'टाढ ऊडाडवा सळगावेलो घासनो अग्नि (मार्गमा आवता)^{३२} महाकक्ष वनमां (फेलाता) ऊंडी खोह वगेरे बिलनो आश्रय लेनारने वाळतो नथी, ए रीते जे पुरुष

३१ जुओ म भा १९१४७।३३। अष्टमेऽहनि रोहिण्या प्रयाता फल्गुनस्य वै । वारणावतमासाद्य ददृशुर्नागरं जनम् ॥, अथवा पूनानी संस्थाना, आदिपर्वनो अध्याय १३३, श्लोक ३० फलग्ण ते शिशिरऋतुनो बीजो मास

३२ सावचेत रहेवानी पाडवोने चेतवणी आपता विदुरे जाहेर चोकस भय स्थाननो नाम निर्देश करवो ईष्ट छे ए कारणयो हुं अही महाकक्ष विशेषनाम तरीके लेउं छु हस्तिनापुरथी वारणावत जतां मार्गमा पूर्वे मोड घासनु जंगल आवतु हरो अने ते महाकक्ष सहाथी ओळखतलु हरो, एउ मार्ग समजव छे.

पोतानू रक्षण करे छे, ते (त्यां) जीवतो रहे छे (१). ^{३२}अनार्योए आदरेली, नड नामना तृणनो घाण काढनारी, विनाशकारक योजनामां (पण) मुसाफर सपडाय छे, (ते अवसरे) ते शाहुडीना घरना जेवा बिलनो^{३३} आश्रय लेई तेना सपाटामांथी मुक्त धाय छे (२). भमतां भमतां भमनारने (जंगलमां) मार्ग जडे छे; ताराओना आशरे दिशा सूजे छे; अने (ए रीते ते) मन साथे मगनी पांचे (इंद्रियो) ने प्रेरतो पुरुष आगळ उपर पीडातो नथी (३).

२५ विदुरनी उक्तिनो एक अर्थ थई गयो. हवे बीजो अर्थ आपवो बाकी रह्यो. लाक्षागृहना अग्निदाह परत्वना ए अर्थनू गूढ सूचन करतू, पूर्वोक्त विद्वत बोलीनू अविद्वत किंवा संस्कारशुद्ध स्वरूप नीचे प्रमाणे छे.

कक्षाग्निः शिशिरघ्नो हि महाकक्षे बिलौकसः ।
न दहत्येवमात्मानं यो रक्षति स जीवति ॥ १ ॥
अनायैर्दत्तमाप्नोति शस्त्रं नरोऽनलोहजम् ।
स्वाविच्छरणमासाद्य मुच्यते स हुताशनात् ॥२॥
चरन् मार्गं विजानाति न-क्षत्रैर्विन्दते दिशम् ।
आत्मना चात्मनः पश्चापीलयन् नानु पीडयते ॥३॥

आ गूढ कथननो अर्थ सहेलाइथी कळ्यामां आवे एटला माटे जणा-
वधू जोईए के पांडवोनी सरभरा करवा प्ररोचन नामे दुर्योधन तरफनो एक
अमात्य वारणावतना महेलना एक भागमां रहतो हतो, ते टाढ न वाय ए
निमित्ते पोताना खंडमां राते देवता सळगतो राखतो हतो; परंतु तेनी मत-
लव हो लाग साथी दुर्योधननी आज्ञा अनुसार पांडवोना ए उताराने आग
लगाडवानां हतीं. ए बावतनां तेम ज तेमने बचाववा पोते मोकलवा धारेला
खनकनी अने गंगा पार उतारवा रोकेला विश्वासु माछीनी गोठवणनो ख्याल

३२ जंगल सट्टगावी जंगलवासीओ दावानळना भयथी भागतां प्राणीनो
सहेलइथी शिवार करे छे, तेनो अहीं निर्देश छे. दूंगरी न्द्वाराववात्री रुडी बीजा
हेतुघी प्रवर्ती छे.

३३ अर्थात् वे वारणावाळी सुरंगनो.

આપવા વિદુર અંદરસ્તાનેથી સૂચને છે કે 'ટાઢ ડાડાટવાને મ્હાને ઓરદામાં વઢતો રાસેલો અગ્નિ મોટા ઓરદાઓવાઢા વાસમાં (પેલાતાં) સુરંગનો આશ્રય લેનારને વાઢતો નથા; એ રીતે જે પોતાનું રક્ષણ કરે છે, તે જીવતો રહે છે (૧). દુધોળ આપેલા આગ લગાડનારી વરતુઓની મેઢ્ઢવળીના વપરાશથી રચેલા શયનમંદિરમાં જે પુરુષ સપડાય છે, તે સ્વપથનાની ઓઢ્ઢસના પુરુ- પનો આશ્રય લેઈ (એ રીતે) આગના સપાટામાંથી મુક્ત થાય છે. (૨) પંચે પટનારને માર્ગ સૂઝે છે; (દ્વિહ્મૂઢ થતાં) તેને (માછીડા જેવા) અક્ષત્રિય (નદીના ઉત્તારની) દિશાએ દાર છે; અને એ રીતે તે પોતાના પંટ સમેત તેનાં પાંચે સગાંને પંથ કરાવતો કરારતા આગઢ ડપર પીડા પામતો નથી. (૩).'

૨૬. ડપર વર્ણવેલો પ્રસ્તાવ જેમાં વિરતારથી આપેલો છે તે જતુગૃહ- દાહપર્વ વ્યાસ મગવાનના જયસંજ્ઞાના મહાવ્યાનનો મૌલિક ભાગ છે. એનાં સ્ત્રીપાત્રોમાં સ્ત્રીપદી અપ્રસ્થાન ધરાવે છે. તેના સ્વયંવરનું જતુગૃહદાહપર્વ આમુખ છે, ઘટલે કરીને એ ભાગ ક્ષેપક સંભવી શકતો નથી. આ મંતયથી વિદુરની મ્લેષ્ઠવાચનું નિરૂપણ જયસંહતાના નિર્માણના સમયની લોક- ભાષાની ચર્ચાને અંગે કર્યું છે. ડક્ત વૈભાષિક પ્રસ્તાવ દ્વારા વ્યાસમુનિએ શ્રીમુલે જ પ્રસ્તુત મહાવ્યાન પૌરાણ સંસ્કૃતમાં રચ્યાનું પરોક્ષ જણાવ્યું છે. એ મૌલિક સંહિતા રાષ્ટ્રીય ભાષામાં ઠર્યા પછી વાલ્મીકિ મુનિના મહાવ્યાનની ભાષા પણ સ્હેજે જ પૌરાણ સંસ્કૃત ઠરે છે. પથબંધની કસોટીથી ડીસી આવે છે કે આપણાં આ વે મહાવ્યાનોના નિર્માણકાલ વચ્ચે વહુ લાંબું અંતર નથી.

૨૭ સિંહાવલોકન કરતાં ઋક્કાલના વર્ણાત્મક પથપ્રવાહના વે જ ક્ષરા આલ્યાનકાલમાં વહેતા ડપલબ્ધ થાય છે, ત્રિષ્ટુભૂ અને ત્રૈષ્ટુમજાગત 'ઉપજાતિ; વીજા ક્ષરા વધા વંધ પડી જાય છે. સાહિત્યપલટાનાં એ સંધિમાં વાલ્મીકિ મુનિના મુલેથી કૌશ્ઢવધના હૃદયમેદક પ્રસંગે, આર્ષિક અનુષ્ટુભૂને મઢ્ઢતી એ સરી અને તેનાથી જુડી પડતી એ સરી, એવી એક નવતર પથરચના સ્વયંમૂ પ્રવર્તી. આ હંદ તે આલ્યાનિક અનુષ્ટુભૂ. એ પથબંધ તેના આદિદ્રઢાના

महाख्यानमां रणकार करतो करतो, व्यासमुनिना मौलिक महाभारतमां रमी रहेतो, प्राक्त्तन पुराणोमां विचरतो, अन्यान्य क्षेत्रमां भमतो भमतो, समस्त संस्कृतसाहित्यनो व्यापक छंद बने छे. एना विपुल प्रयोगनूं लेखूं लाखे धवूं पण अशक्य छे. गद्य न छतां लगभग गद्यना जेटली सरळता अने सुगमता ए धरावे छे. एनो रणकार वीणाना रणकारमां पण उत्तरे छे. आख्यानकालनो आ एक ज छंद तेनूं गौरव स्थापित कर्वाने बस छे. तो पछी त्रैष्टुभ उपजाति, जागत उपजाति अने समपद उपेन्द्रवज्रा, इन्द्रवज्रा तथा वंशस्थ, ए पांच शराथी बहेतो नवो रूपरचनानो प्रवाह ते काळने अपूर्व फळरूप बनावी तेना गौरवमां जे असाधारण वधारो करे छे, तेनूं तो कहेवूं ज शूं? खरूं छे के आख्यानकालना छंदनी संख्या ओछी छे; परंतु ए काळनी कीर्ति गणितना आंकडे मापवानी नथी. ऋकालनी महत्ता जेम एना वर्णरचनाना प्रवाहथी, तेम आख्यानकालनी महत्ता एना रूपरचनाना प्रवाहथी मपाय छे; एना प्रादुर्भावमां प्रकाशती विशिष्ट सर्गशक्तिथी अंकाय छे. त्रिष्टुभ् अने जगती शब्द जे पूर्व काळमां असमचतुष्पद वर्णबंधना अर्थमां वपराता हता, ते उत्तर काळमां समचतुष्पद रूपबंधना वर्गना वाचक बने छे. आख्यानकाल वे ज वर्गनो परिचय करावे छे, त्रिष्टुभ्—वर्ग अने जगती—वर्ग. अर्वाक्तन संज्ञाओ उपरथी एम मानवामां आवे के त्रिष्टुभ्—वर्गमां प्रथम इन्द्रवज्रा पछी उपेन्द्रवज्रा अने ते पछी उपजाति छंद अस्तिवमां आव्यो हशे. परंतु ते समज भ्रांतिजनित छे. ए रूपबंधोना आविर्भावनो क्रम तो तेथी ऊलटो ज छे, ते चाळ दृष्टिपातनी चर्चाए मनमां ऊतारूं हशे. निर्दिष्ट छंदोमां रचायलां महाख्यान कई भाषामां छे ते विशे पण शंकांने स्थान नथी. बनेनूं निर्माण पौराण संस्कृतमां एटले जेने आपणे विस्तृत अर्थमां साधारण रीते संस्कृत कहिये छिये ते भाषामां छे. प्रत्येक भाषानां वे रूप होय छे, अविकृत अने विकृत. ते मुजब पौराण संस्कृत पण वे रूपमां देख दे छे. दासीपुत्र शाखपारंगत विदुरनी विदुरनीति पहिला रूपमां छे अने लाक्षागृहना संबंधमां तेमणे युधिष्ठिरने आपेली चेतवणी

બીજા રૂપમાં પણ છે. વ્યાસમુનિ પૌરાણ સંસ્કૃતના આ બીજા રૂપનો મ્લેચ્છવાચ સંજ્ઞાથી નિર્દેશ કરે છે. છેલ્લા પ્રસ્તાવમાં આપેલા લાંબા વિવેચન પછી લાક્ષ-ગૃહ સંબંધી ચેતવણીના શ્લોક આર્યાવર્તની કોઈ અનાર્ય પ્રજાની ભાષામાં છે જ નહિ એમ માર મૂકીને કહેવાની અગત્ય રહેતી નથી^{૩૪}. મહાભારતની પૌરાણ સંસ્કૃત ભાષા તે આર્યાવર્તકાલની લોકભાષા હતી; અને વાઙ્મી-કિન્નૂ રામાયણ અને વ્યાસનું મહાભારત બંને સાર્વજનિક શ્રવણપ્રાપ્ય મહા-ર્યાનો એ ભાષામાં રચાયાં હતાં. એક દીપક જેમ બીજા અનેક દીપક પ્રગટાવે છે, તેમ તે મુનીશ્વરોની કૃતિઓ એમના મહાન અને અક્ષત પ્રેરણાવસ્થાથી આપણી ભાષામાં મહાભારત પ્રગટાવે !

પરિશિષ્ટ

ધિદુરની મ્લેચ્છવાચનો શબ્દાર્થસૂચિ.

પ્રધાસના શબ્દ

ઉત્તારાના શબ્દ.

૧ કક્ષ પું. ઘાસ.

કક્ષા સ્ત્રી. ઓરડા.

કક્ષાગ્નિ પું. ઘાસનું તાપણું.

કક્ષાગ્નિ પું. ઓરડામાં રાખેલો અગ્નિ.

૩૪. જર્મન વિદ્વાન Winternitz ચર્ચાસ્પદ શ્લોક કોઈ અનાર્ય પ્રજાની ભાષામાં છે એમ માને છે, જુઓ એમના આર્યાવર્તની ભાષાના સાહિત્ય-ના ઇતિહાસના પૃષ્ઠ ૩૩૧ માંથી લીધેલો નીચેનો ઉત્તારો:—Vidura tells Yudhishtira privately of the treacherous plan and for this communication he makes use of a Mlechchha language, i. e. the language of a non-Indian tribe which was not understood by others. આ લેખથી ઉત્પાન પામતા ધ્રમના નિરાધરણ પૂરતી જ ઉપર મેં મારા મતની પુનઃકૃતિ કરી છે. એક જર્મન વિદ્વાને મ્લેચ્છવાચના અર્થગ્રહણમાં ભૂલ કરી છે, તે જ સુપ્રસિદ્ધ C. V. Vaidya નાથી પણ થઈ ગઈ છે. એઓ પણ પ્રસ્તુત શબ્દનો a Mlechchha or un-Aryan tongue એવો અર્થ કરે છે, જુઓ The Mahābhā-rata : A criticism, p. 120.

૧) સિસિર [વિ; સં. શિશિર] ન. ટાઢ.

સિસિરઘ્ન [વિ.] વિશે. ટાઢ
હળનાર.

મહાકક્ષ ન. પ નામનું ઘાસનું ઘન.

વિહ [વિ.; સં. વિલ] ન. ઊંઢી
ઘોઢ.

વિહૌકશ્ [વિ.; સં. વિલૌકશ્] પું.
ઘોહનો આશ્રય લેનાર.

૨) અનાર્ય પું. આર્યથી ભિન્ન જાતિનો
મનુષ્ય.

શઘ્ [વિ.; સ. શઘ્] ન. (શ્ઘ્ ૧
પરસ્મૈ. હળયૂ) સંઘાર, હ-
ત્યાકારી યોજના.

નઢ [વિ.; સ. નઢ] પું. ઘર.

નઢોદ્ધજ [વિ.] વિશે. ઘરના જ-
થામાં પ્રગટેલ.

શ્વાવિધ્ પુ. શાહુઢી.

શિશિર ન. ટાઢ.

શિશિરઘ્ન વિશે. ટાઢ હળનાર.

મહાકક્ષ પું. મોટા ઓરઢાવાઢો
ઘાસ, મહેલ.

વિલ ન. સુરંગ.

વિલૌકશ્ પુ સુરંગનો આશ્રય
લેનાર. ૧૧

અનાર્ય વિશે. ઢુષ્ટ.

શઘ્ ન. (શ્ઘ્ ૨ પરસ્મૈ. ઊંઘઢું)
શયનગૃહ.

અનલ પું. અગ્નિ, આગ.

અનલોદ્ધજ વિશે. ઢ્વાલાગ્રાહી
પદાર્થથી રઘેલ.

સ્થાવિદ્ [વિ. શ્વાવિદ્] વિશે (સ્વ
પોતાના પક્ષનું. આવિદ્ ૨
પરસ્મૈ. ઓઢ્ઢયૂ) વિશે.
પોતાના પક્ષનાની ઓઢ્ઢલાણ
ધરાવનાર.

શરણ ન આશ્રય, શરણ.

સ્થાવિચ્છરણ [વિ. શ્વાવિચ્છરણ] ન.
પોતાના પક્ષનાની ઓઢ્ઢલાણ
ધરાવનારનો આશ્રય ૨૧

ન-શ્વત્ર પુ. શ્વપ્રિય નદિ તે.
આત્મન પું. પોતે.

હલયજ્ઞ વ. ષ્ટ (હલ્ ૬ પરસ્મૈ જઢું)
પંચ કરાવતો.

અનુ ઇવ્ય. ત્યારપછી, આગઢ
ઉપર. ૩૧

શરણ ન. ઘર, આશ્રયસ્થાન.

શ્વાવિચ્છરણ ન. શાહુઢીના ઘર
જેઢુ આશ્રયસ્થાન.

૩) નક્ષત્ર ન. તારાનુ કુમઘુ.
આત્મન પુ મન.

હલયજ્ઞ [વિ.; સ. હલયજ્ઞ] વ. ક.
ગતિ કરાવતો, પ્રેરતો.

અનુ ઇવ્ય. ત્યારપછી, આગઢ
ઉપર.

તા. ઘ. -- વિ. સંજ્ઞા વિરૂઢ તિવા વિકારી ઢાપા માટે છે; અને સંઃ સંજ્ઞા
શુદ્ધ વિજ્ઞા સંસ્કારી માટે છે.

પઘરચનાની ઐતિહાસિક આલોચના

દષ્ટિપાત ૪

સુત્તકાલ

૧ આપણી પઘરચનાના ભાષાત્મક પ્રસવણપ્રદેશમાંથી પ્રવર્તતા વીજા પ્રવાહની પંચતીર્થા પૂરી કરી હવે ત્રીજા પ્રવાહની યાત્રા આદરિયે. એ પ્રવાહ જે મૂમિનું સિંચન કરે છે તે વિસ્તીર્ણ સુત્તસાહિત્ય છે. એક તરફ નજર નાંચતાં વર્ધમાન મહાવીરને પગલે અનેક શાખામાં વહેતું પુરાણું છતાં નવો દેચાવ ધારણ કરતું જૈન સુત્ત અને વીજી તરફ દષ્ટિ વાઢતાં સિદ્ધાર્થ બુદ્ધને પગલે ત્રણ પાત્રમાં વિભક્ત થઈ પ્રસરતું દેચાવ પણ પુરાણો રાચતું બૌદ્ધ સુત્ત તેમના પ્રૌઢ પ્રવાહની સૌમ્ય શોતઢ લહરીઓ આપણને એક-સાથે નોંતરે છે. લયનો અને ઉપવનોમાં કર્ણપાવન ગૂંજન પૂરતા એ પ્રવાહોની શાંચી કરવા કરાવવાનો આ દષ્ટિપાતમાં ઉદ્દેશ રાચ્યો છે.

૨ આલ્યાનકાલના અને સુત્તકાલના સાહિત્ય વચ્ચે આકાશ અને પાતાઢ જેટલું અંતર છે. એકમાં સમદ્વીપ પૃથ્વીના એકાકાર સાગરનો ક્ષોમ અને ગર્જના છે. વીજામાં પાતાઢતઢ ઉપર દઢ આસન વાઢી બેઠલા પ્રશાંત મહાહૃદનાં ઉપસમ^૨ અને ઉવહાન^૩ છે. એકની ભાષા પૂર્વે કહેવામાં આન્યું છે તે મુજવ પૌરાણ સંસ્કૃત છે; વીજાની ભાષા હવે પછી કહેવામાં આવશે તે મુજવ અગ્રિમ પ્રાહૃત છે. એકનું વસ્તુ સંસાર છે; વીજાનું સંસારનો વ્યાગ છે. વનેની પઘરચનામાં પણ જાતીય ભેદ ધ્યાન ચેંચે છે. આલ્યાનસાહિત્યની અને સુત્તસાહિત્યની અસ્પતિ વચ્ચે પણ અનેક ઘાતકોનો ગાઢો જોવામાં આવે છે. એ વાવત અત્રે ગૌણ હોવાથી ઢૂંકાવી દેઈ, પ્રધાન વિષય જે સુત્ત-કાલની પઘરચનાની આલોચના, તેમાં પ્રવૃત્ત થઈયે.

1. Water-shed.

૨ ઉપસમ, શાંતિ.

૩ ઉપહાન, સમાધિસ્થની સ્થિતિ.

ઋગ્વેદનો કોઈ પણ મંત્ર મળતાં દેવતા અને ઋષિનાં નામ સાથે હંદનો નામ મળવાનો પણ સંપ્રદાય ચાલ્યો આવે છે. એ રીતે તે સુસ્થાપિત અને સુરક્ષિત છે. રામાયણ અને મહાભારતના હંદોનાં નામ અને લક્ષણ હંદ-શાસ્ત્રના ગ્રંથોમાં સુલભ છે. પરંતુ જૈન તેમ જ વૌદ્ધ સુત્તસોહિત્યના હંદોનાં નામ ઘણે ભાગે મૂલ્યપ્રત્યોમાં નથી મળતાં, ટીકાઓમાં નથી જડતાં, તેમ જ હેમાચાર્યના હંદોઽનુશાસનમાં કે વીજાં હંદ-શાસ્ત્રનાં સંસ્કૃત પ્રાકૃત પુસ્તકમાં નથી હાથ લાગતાં. આયાર અને સૂયગડ અંગના અર્થ ઉપર પ્રકાશ પાડનારાં સાધન પુસ્તક છે. પરંતુ તેની પ્રાચીન પદ્ધતિનાનો પરિચય કરાવનારૂં સાધન એક પણ છે નહિ. સ્વતંત્રપણે માપ વિચારવા જડ્યે ઠિયે, ત્યાં વાચના ઘણું સ્વરૂં વધઘટથી એવી અનિયમિત બનેલી કતરી આવી છે, કે કોઈ જાતનો મેલ નજરે તરતો નથી. એ વધી મુસ્કેલી અને મૂંઝવણ છતાં એ સંતથી અને સાવધાનીથી પગલાં ભરનારને માર્ગ જડે સરો. આવી રીતે શોધ ચલાવતાં, જોડ્યે, પચસૃષ્ટિનો કોઈ અજાણ્યો સંકેત જાણ્યામાં આવે છે ?

૬ સુત્તકાલના સાંપ્રત વ્યાખ્યાનમાં આધાર તરીકે સ્વીકારેલાં આયાર અને સૂયગડ અંગમાં ચાર જ હંદનો પ્રયોગ છે, અનુષ્ટુભનો ત્રિષ્ટુભનો વૈતાલીય(પ્રા. વેઆલીય)નો અને ગાથાનુષ્ટુભી સંસૃષ્ટિનો. સૌમાં અધિક પ્રચાર અનુષ્ટુભનો છે. એમાં આર્ષિક અનુષ્ટુભનો, આલ્યાનિક અનુષ્ટુભનો અને સૌત અનુષ્ટુભનો અંતર્ભાવ થાય છે. પહેલો ઋક્કાલથી અને વીજો આલ્યાનકાલથી કતરી આવેલ છે. એનો વપરાટ સુત્તકાલમાં વહુ જ ફમી છે. વાલ્મીકિ મગવાને સરજેલા આલ્યાનિક અનુષ્ટુભની અધિકતર મનોહરતાને લીધે અને સૌત અનુષ્ટુભની વિશેષ સરઢતાને લીધે આર્ષિક અનુષ્ટુભ અછતાઈ ગયો લાગે છે. તેના પછીના આલ્યાનિક અનુષ્ટુભ હંદની સંલ્યા વહુ મોટી(૨૫૪) છે. આર્ષિક અનુષ્ટુભ અને આલ્યાનિક અનુષ્ટુભનાં લક્ષણ અને ઉદાહરણ ગયા વે દષ્ટિપાતમાં અપાઈ વૂવ્યાં છે. ઘટલે તેમને પડતા મૂકી સૌત અનુષ્ટુભના સંવંધમાં જ વિવેચન આપવું

પ્રાપ્ત થાય છે એનો પ્રયોગ આલ્યાનિક અનુષ્ટુભના મુકાવલે માત્ર ચોથા ભાગનો છે. છતાં પણ, સૌત્ત પદ્યરચનામાં એક વિલક્ષણ વિક્રિયાના પ્રવેશનું તે દ્વાર બને છે, તે કારણથી એ ખાસ નોંધને પાત્ર છે. આ વિક્રિયા તે એક વિવર્ધિત વર્ણ અને ગુરુ રૂપના વદલે અનુક્રમે વે કેવલ વર્ણ અને વે લઘુ રૂપનો ઉપયોગ. પાછલા દૃષ્ટિપાતમાં કહેવાઈ ગયું છે કે આલ્યાનિક અનુષ્ટુભનાં ચરણોના પ્રત્યેકના વે ભાગ પડે છે, વર્ણાત્મક અને રૂપાત્મક. ઇમાંના વર્ણાત્મક અર્ધિયામાં વ્યાં વિવર્ધિત વર્ણ અને રૂપાત્મક અર્ધિયામાં ગુરુ રૂપ વપરાય છે, ત્યાં સૌત્ત અનુષ્ટુભમાં અનુક્રમે વે કેવલ વર્ણ અને વે લઘુ રૂપ ધારંવાર વપરાયલાં જોવામાં આવે છે. કોઈ વચ્ચે તેથી ઝલ્લટ્ટું પણ બને છે, પરંતુ તે કોઈ વચ્ચે જ. મુત્તસાહિત્યમાં આ પ્રથા ત્યારથી ચાલતી થઈ તે સપ્રમાણ નિર્ધારી શકાય એમ નથી. એના નિર્ણય માટે પૂર્વતર અગ્રિમ-પ્રાકૃત સાહિત્યની અપેક્ષા રહે છે; તે તો લભ્ય છે નહિ. ઇટલે કરીને ઉક્ત વિક્રિયાના પ્રચારની સમજૂતી માટે કલ્પનાનો આશ્રય લેવો પડે છે. મને લાગે છે કે વિવર્ધિત વર્ણ અને ગુરુ રૂપ વદલ અનુક્રમે જે કેવલ વર્ણનું અને લઘુ રૂપનું જોડકું યોજાયું હશે, તેનો ઉત્તર વર્ણ નિઃસ્વર ઇટલે વ્યંજન તરીકે અધુરો ઉચ્ચારાઈ પૂર્વ વર્ણમાં વિવર્ધિત વર્ણની અને એક ગુરુ રૂપની શ્રુતિ સધાતી હશે; એ રીતે વે કેવલ વર્ણ અને વે લઘુ રૂપ એક વિવર્ધિત વર્ણની અને એક ગુરુ રૂપની ગરજ સારતાં હશે. ઇંદઃશાબ્દની દૃષ્ટિએ પ્રસ્તુત પદ્યબંધનો મેલ મેચ્ચવાને માટે ઉપર કહેલી જરૂરિયાતના સંબંધે સ્વાભાવિક રીતે સામાન્ય મનુષ્યનું દુર્લેક્ષ થતાં ઉક્ત જોડકાના બન્ને વર્ણ પૂરા ઉચ્ચારાયા; અને એક વિવર્ધિત વર્ણ તેમ જ એક ગુરુ રૂપ વરાવર અનુક્રમે વે કેવલ વર્ણ તેમ જ વે લઘુ રૂપ, એવું સમીકરણ વંધાયું; તથા ઝલ્લટ્ટું સમીકરણ પણ સ્વીકારાયું. આ રીતે અહીં નોંધવામાં આવેલી સૌત્ત વિક્રિયાની પ્રથાની ઉત્પત્તિ સંભવે છે. એ વિક્રિયા જે નવા પ્રવાહનું દર્શન કરાવે છે, તે વિશે વૈતાલીયના પ્રસ્તાવમાં કહેવાશે. ચાલુ પ્રસ્તાવ આટલેથી સંકેલી લેઈ સૌત્ત અનુષ્ટુભનું ઉદાહરણ આપું છું.

जे केइ तसा पाणा चिट्ठन्ति अदु थावरा ।

परियाए अत्थि से अञ्जू जेण ते तसथावरा ॥ सू०।१।१।४।८॥

उपर ऊतारला श्लोकना पहेला चरणना पांचमा सा अक्षरनुं स अने आमां पृथक्करण करवाथी ए चरणना उत्तर भागमां खूंचती क्षति दूर थाय छे. ए रीते उक्त चरण सात अक्षरनुं मटीने पूरेपूरां चार वर्ण अने चार रूपनुं बने छे. त्रीजा चरणमां अक्षर खूटवाने बदले वधे छे; ते वधोरा परि बदल पर वांचवाथी टळी जाय छे: अहाँ वे वर्णनुं एकीकरण करवूं पडे छे. एक अने वेना अंक उक्त एकीकरण अने पृथक्करणना सूचक छे.

७ अहाँ नेधिली विक्रिया पहेला दृष्टिपातमां कहेवामां आवेली लया-त्मकपदरचना तरफ दळती जणाय छे. ए वलण दृढ वर्णात्मक अने रूपात्मक पदरचनाओनुं विधातक छे. ए कारणने अग्रंबीने प्रस्तुत वलणने विक्रिया संज्ञाथी ओळखावूं छे.

८ सुत्तसाहित्यमां अनुष्टुभ् पळी प्रचारनी दृष्टिए विचारवा जोग छंद त्रिष्टुभ् छे. ते चार स्वरूपे वपरायो छे, आर्चिक त्रिष्टुभ्, त्रैष्टुभी उपजाति, इन्द्रवज्रा अने सौत्त त्रिष्टुभ्. पहेलो ऋकालथी चाल्यो आवेलो वर्णबंध छे. बीजो अने त्रीजो ए वे आल्यानकालना रूपबंध छे. एमनां लक्षण अने उदाहरण बीजा अने त्रीजा दृष्टिपातमां आप्यां छे. सूयगडमां एकनी संख्या छेताळीस छे अने बीजानी तेथी बमणी छे. एमां इन्द्रवज्रानो प्रयोग पचीस वार थयेलो छे. सूयगडनी आ संख्या न्हानी छतां रामायणना मुकाबले मोटी छे. ए छंदनो वपराट वधे छे एटलूं ज नहि, पण आल्यान-कालना एना मोटा सहोदर उपेन्द्रवज्रा करतां ते छंद सुत्तकालमां वधारे लोकप्रिय थतो जणाय छे. सूयगडमां उपेन्द्रवज्राना एक पण ऊदाहरण तरफ मारूं लक्ष खंचावूं नथी. सुत्तनिपातमां ए छंद देखा दे छे. पण तेनो प्रयोग बहु कमी छे, ज्यारे तेनी सरखामणीमां इन्द्रवज्रानो वपराट, कहेवूं

જોઈએ કે, મધ્યમ કોટિએ વ્હોચે છે. આ રીતે ઉપેન્દ્રવજ્રા છંદ ઉપેન્દ્ર+વજ્રા મટી ઉપ+ઇન્દ્રવજ્રા થવાના પંથે ચડે છે.

૯ આર્ષિક ત્રિપ્લુભ્ના સંવંધમાં એક વાત નોંધવા જેવી છે. ઋક્ષાલનો પ્રધાન છંદ હોઈ તે ઘણો જૂનો છતાં પ્રચારમાં ટકી રહેવાની શક્તિ તેનામાં વિશેષ છે. આર્ષિક અનુપ્લુભ્ સુત્તકાલમાં અછતાઈ જાય છે, ત્યારે આર્ષિક ત્રિપ્લુભ્ આલ્યાનકાલ અને સુત્તકાલ સારી રીતે પસાર કરી કાવ્યકાલમાં પણ 'હં હયાત છું હો' એમ કહેતો માથું ઝૂંચું કરે છે. એનું અપવાદમૂલ ઉદાહરણ મહાકવિ કાલિદાસ નીચે પ્રમાણે પૂરું પાડે છે.

અમી વેદિં પરિતઃ ક્લૃસધિષ્ણ્યાઃ

સમિદ્વન્તઃ પ્રાન્તસંસ્તીર્ણદર્ભાઃ ।

અપગ્નન્તો દુરિતં હૃદ્યગન્ધૈ-

વૈતાનાસ્ત્વાં વહ્નયઃ પાવયન્તુ ॥ અ. શા. । ૪ ।

૧૦ ત્રિપ્લુભ્ છંદનું ચોર્થું સ્વરૂપ જે સૌત ત્રિપ્લુભ્, તેની ઉત્પત્તિ ત્રૈન્દુભી ઉપજાતિમાંથી થઈ છે. સૌત અનુપ્લુભ્ના પ્રસ્તાવમાં નોંધેલી વિક્રિયા પ્રસ્તુત સ્વરૂપમાં પ્રવર્તમાન હોવાથી તેને સૌત ત્રિપ્લુભ્ નામ આપવું પડ્યું છે. એક ગુરુ રૂપ બરાબર વે લઘુ રૂપ અને તેથી ઝલટૂં વે લઘુ રૂપ બરાબર એક ગુરુ રૂપ, એ સમીકરણો આ રૂપવંચની રચનામાં પણ સ્વીકારાયાં છે. તેને લીધે નહતી રૂપની ન્યૂનાધિકતા સૌત અનુપ્લુભ્ના સંવંધમાં સૂચવેલા પૃથક્કરણ અને એકીકરણનો આશ્રય લેઈ ટાઢવામાં આવે છે. આ સૌત સ્વરૂપનો પ્રયોગ ત્રૈપ્લુભી ઉપજાતિ(૧૨)ના કરતાં આપણે વધતો જોઈએ છીએ, તે ઉપરથી અટકઢ વંધાય છે કે તેનો ઉદય સુધર્મા સ્વામીના પૂર્વે થયો હશે. સૌત ત્રિપ્લુભ્નું ઉદાહરણ નીચે મુજબ.

નિસમ્મ સે ખિક્ષુ સમીહિયટ્ઠં

પહિભાણવં હોઈ વિસારણ ચ ।

આયાણઅટ્ટી વોદાણમોળં

ઉવેચ્ચ, સુદ્દેણ ઉવેહ મોક્સં ॥૧૧૧૪૧૭૧

ઉપરના છંદના વીજા, ચરણમાં વે લઘુ રૂપનું જોડકું 'પહિ' એકીકરણ પ્રક્રિયાથી એક ગુરુ રૂપનું કામ બનાવે છે અને ત્રીજા ચરણમાં એક ગુરુ 'વો' પૃથક્કરણ પ્રક્રિયાથી 'વવ' કિંવા 'વડ (સં. વ્યવ)' એ વે લઘુના જોડકાની ગરજ સારે છે.

૧૧ સુત્તકાલનો ત્રીજો છંદ સં. વૈતાલીય (પ્રા. વેઆલીય) છે. એ ઇન્દ્રવજ્રા આદિ છંદની પેઠે ચાર ચરણનો બને છે. પરંતુ ઇન્દ્રવજ્રા સમ-પદ છે, ત્યારે વૈતાલીય અર્ધસમપદ છે. એના વિષમ એટલે પહેલા તથા ત્રીજા ચરણની રચના એકધારી છે, અને સમ એટલે વીજા તથા ચોથા ચરણની એકધારી છે. ઉક્ત ચારે ચરણનો ઉત્તર ભાગ આર્યાનિક અનુષ્ટુભૂનાં સમ-ચરણના ઉત્તર ભાગ જેવો જ રૂપાત્મક છે, એટલેકે વૈતાલીય છંદના ચરણોના પાછલા ભાગમાં લગાલગા રૂપચતુષ્ક આવે છે. પરંતુ આર્યાનિક અનુષ્ટુભૂનાં ચારે ચરણનો પૂર્વ ભાગ ત્યારે વર્ણાત્મક છે, ત્યારે વૈતાલીયનાં ચરણોનો પૂર્વ ભાગ વર્ણાત્મકે નથી, રૂપાત્મકે નથી, પણ કોઈ નવતર સ્વરૂપનો છે. છંદ શાસ્ત્રની પરિમાપામા એ માત્રાત્મક કહેવાય છે. માત્રાનું લેરૂં કરવા અક્ષરના વે વર્ગ પડે છે, ડ્રસ્વ અને વૃહત્. જે અક્ષર ઉચ્ચારવામા ઓઠાનાં ઓઠો સમય રોકાય તે ડ્રસ્વ; અને જેના ઉચ્ચારણમા ડ્રસ્વથી ઘમળો સમય જાય તે વૃહત્ લેગાય છે. ગત વ્યાખ્યાનોમાં કહેલા કેમઠ વર્ણ તથા લઘુ રૂપ તે આ વ્યાખ્યાનની પરિમાપામાં ડ્રસ્વ, અને વિવર્ધિત વર્ણ તથા ગુરુ રૂપ તે વૃહત્ કહેવાય છે. ડ્રસ્વ અક્ષરની એક અને વૃહત્નાં વે માત્રા ગણાય છે. આ સંકેત અનુસાર વૈતાલીય છંદનાં ચરણોના પૂર્વ ભાગનું ઘંચાગ્ણ માત્રામક છે. એના વિષમ ચરણનો માત્રાત્મક ભાગ આઠ માત્રાનો બનેશે જોત્રામાં આવે છે. સમ ચરણોના એ ભાગમાં વે માત્રા વધારે હોય છે. આ માત્રાવદ્ધ ભાગ

અનેક આકારમાં દેખા દે છે^૫. એ ઉપરથી એમ સમજાય છે, કે એ હંદનો પ્રચાર અગ્નિમ પ્રાકૃતમાં તાજો હોવો જોઈએ, બ્હેલાંનો ન હોય. વૈતાલીયનું ઉદાહરણ,

સીઓદગ પઠિ દુગુઞ્ચિણો

અપરિન્નસ્સ લક્ષવસપ્પિણો ।

સામાહ્યમાહુ તસ્સ જં

ગિહિમત્તે અસણં ન મુજ્જઈ ॥ સુ.૧૧૨૧૨૧૨૦ ॥^૬

૧૨ ઉપેન્દ્રવજ્રા અને ઇન્દ્રવજ્રાને જવાબ આપતા જેમ વંશસ્થ અને ઇન્દ્રવંશા છે, તેમ વૈતાલીયને જવાબ આપતો એક હંદ સુત્તકાલમાં પ્રગટે છે. તે વૈતાલીયના ચરણોના રૂપવદ્ધ ભાગને અંતે એક ગુરુ રૂપની વૃદ્ધિ-થી નીપજે છે, તે કારણથી હું તેને વૃદ્ધવૈતાલીય નામથી ઓઠ્ઠાલાવું છું. હંદ:શાસ્ત્રનાં પુસ્તકોમાં એનો ઔપચ્છન્દસિક સંજ્ઞાથી નિર્દેશ છે. આ હંદ સૂયગડમાં હાથ લાગ્યો નથી. પણ તેનો પૂર્વગામી ઉપજાતિ હંદ, જેને આ વ્યાખ્યાનમાં વૈતાલીયકાં ઉપજાતિ એવું નામ આપવું પડ્યું છે, તે મઠ્ઠી

૫ આવાં સાસ ધ્યાન રેચનારા વૈતાલીયનાં ચરણો નીચે આપેલાં ચાર છે.-સીઓદગ પઠિ દુગુઞ્ચિણો । સુ.૧૧૨૧૨૧૨૦, જમિઅં જગઈ પુટો જગા । સુ.૧૧૨૧૧૪૧, આયદણ્ડ ઇગન્તલ્લસણા । સુ.૧૧૨૧૩૧૬, કાસવસ્સ અણુધમ્મચારિણો । સુ.૧૧૨૧૩૧૨૦. આ ઉદાહરણ ઉપરથી એક વાત સ્હેજે લક્ષમાં આવશે કે વૈતાલીયના માત્રામઠ્ઠ ભાગની છેડી બે માત્રા, છૂટી મઠ્ઠી, એકઠી મઠ્ઠી ગુરુ રૂપના આકારમાં દેખા દે છે તે ૫છી મઠ્ઠત જતા તેના પૂર્વેની માત્રાના અક્ષરો પણ, સવાદ વધારે રોચક રીતે જાણ્યે, એવા લઘુગુરુના આકારમાં ગાંઠવાય છે, અને તેમ થતાં મિથ્ર વૈતાલીય રૂપણ રૂપવદ્ધ મિથ્રોમિત્તી અને અશરવશ્ચુત્ર એ બે હંદનાં પરિણામ પામે છે. એ જ પ્રકારે મિથ્ર વૃદ્ધવૈતાલીય પલટાઈ સંપૂર્ણ રૂપવદ્ધ માલ્યભારિણી અને પુલ્લપનાઘ્યા રૂત પ્રગટે છે. એ વિશે ઉત્તર દૃષ્ટિપાતમાં વહેવાશે.

૬ ઉત્તરાધેનો મુદ્રિત પાઠ 'સામાહ્યમાહુ તસ્સ જં જો ગિહિમત્તેડસણં ન મુજ્જઈ ।' છે.

આવે છે. જેમ, ત્રૈપ્લુમી ઉપજાતિના વંધારણમાં ઉપેન્દ્રવજ્રા તથા ઇન્દ્રવજ્રાનાં ચરણોનું અને જાગતી ઉપજાતિના વંધારણમાં વંશસ્થ તથા ઇન્દ્રવંશાનાં ચરણોનું મિશ્રણ હોય છે, તેમ આ વૈતાલીયકી ઉપજાતિમાં ઉક્ત વૈતાલીય તથા વૃદ્ધવૈતાલીયનાં ચરણોનું મિશ્રણ જોવામાં આવે છે. સૂયગડમાંથી તેનું ઉદાહરણ નીચે પ્રમાણે.

કામેદ્દિ ય સંથવેદિ ગિદ્ધા

કમ્મસહા કાલેણ જન્તવો ।

તાલે જહ વન્ધણચ્ચુપ

એવં આયુસ્વયમ્મિ તુદ્દહ ॥ સુ.૧૧૨।૧।૬॥

ઉપર આપેલાં ઉદાહરણમાં પહેલું ચરણ વૃદ્ધવૈતાલીયનું છે; અને બાકીનાં વૈતાલીયનાં છે. કહેવાની જરૂર જણાતી નથી કે વૈતાલીય, વૃદ્ધ-વૈતાલીય અને વૈતાલીયકી ઉપજાતિ, એ ત્રણેની ઊચ્ચારણા સમાન છે.

૧૩ સુત્તસાહત્યના ચોથા છંદનું નામ કહીં પળ મઠ્ઠી આવતું નથી. આ છંદનો પ્રયોગ આયારમાં તેમ જ સૂયગડમાં કરેલો છે. પહેલા અંગમાં પ્રથમ શ્રુતસ્કંધનું છેલ્લું અજ્ઞયણ, જે ઉવહાણસુય એવા નામે જાણીતું છે, તેનો એ વ્યાપક છંદ છે. એ પ્રાચીન જૈન સમ્પત્તિના ચાર ઉદ્દેશના ચાર સમાપ્તિ શ્લોક અનુષ્ટુભ છે. એ ચાર એકદેશી ઘાદ કરતાં આસી એ સમ્પત્તિ પ્રસ્તુત નામ રહિત છંદમાં છે. આ નવો છંદ, બીજા અંગના પ્રથમ શ્રુતસ્કંધનું ચોથું અજ્ઞયણ જે ક્ષત્રીપરિન્ના, તેના ઘંતે ઉદ્દેશમાં વ્યાપકરૂપે પ્રવર્તે છે, અને અન્ય અજ્ઞયણોમાં સમાપ્તિશ્લોકરૂપે પણ દેલા દે છે. એના વંધારણમાં સૌત અનુષ્ટુભનાં ચરણોનો અને ઉત્તર કાલ્પના માયા છંદના સંટોનો ઉપયોગ થાય છે. છેલ્લો કહેલો છંદ માત્રાવદ્ધ છે. પૃથ્વા સ્વરૂપે ગાથાના વંધારણમાં ત્રણ માત્રામઠ્ઠ સંહ વપરાય છે; એક ઘાર માત્રાનો, તે ગાથાનાં ઘંતે દલના પૂર્વભાગમાં; બીજો અઢાર માત્રાનો, તે

प्रथम दलना उत्तर भागमां; अने त्रीजो पंदर मात्रानो, ते बीजा दलना उत्तर भागमां. आ रीते अनुष्टुभ् अने गाथाना जोडाणने लीधे में उक्त ननामा छंदने गाथानुष्टुभी संसृष्टि एवूं कल्पित नाम आप्यूं छे. निर्दिष्ट त्रण गाथिक खंड पैकी लघु खंडना प्रयोगनूं उदाहरण शय्यभद मुनिना दसवेयालियमां मळी आवे छे. ते विशेष आगळ कहेवामां आवशे. उवहाण-सुयमांनी उक्त संसृष्टिनां सम चरण वृद्ध के वृद्धतर गाथिक खंडनां अने विपम चरण अनुष्टुभ्नां बनेलां जोईये छिये. मूयगढमां कचित् ए संसृष्टिनूं छेल्हं ज सम चरण वृद्ध के वृद्धतर गाथिक खंडनूं होय छे. उदाहरण नीचे प्रमाणे:—

सयणासणेहि भोगेहि

इत्थीओ एगया निमन्तेन्ति ।

एग्याणि चैव से जाणे

पासाणि विस्वरूवाणि ॥ सू. ११।४।१।४ ॥

असंबुडा अणाईयं

भमिहिन्ति पुणो पुणो ।

कप्पकालं उवज्जन्ति

ठाणा 'आसूरकिच्चिसिय ॥ सू. ११।१३।१६ ॥

झाणजोगं समाहहु

कायं विउसेज्ज सब्वसी ।

तित्तिक्खं परमं णच्चा

आ मोक्खाए परिव्वएज्जासि ॥ सू. ११।१।८।२६ ॥

पहेला उदाहरणमां विपम चरण अनुष्टुभ्नां छे; सम चरण पैकी एक वृद्धतर गाथिक खंडनूं एट्टेके बढार मात्रानूं अने बीजूं वृद्ध खंडनूं एट्टे-

કે પંદર માત્રાનું છે. આરંભના ચરણમાં સૌત્ર વિક્રિયાનો પ્રયોગ છે. એ વિક્રિયા એકીકરણથી દૂર થાય છે. વીજા તેમ જ ત્રીજા ઉદાહરણમાં પહેલું, વીજું અને ત્રીજું એ ત્રણે ચરણ અનુષ્ટુભનાં છે; માત્ર ચોથું જ ગાથિક સંડનું છે. વીજા ઉદાહરણનો ગાથિક સંડ પંદર માત્રાનો અને ત્રીજાનો અઢાર માત્રાનો છે.

૧૪ આચાર અને સૂચક સાથે સરસ્વામણીમાં મુત્તનિપાતમાં હંદ્રાની વિવિધતા વિશેષ છે. ઉપર ગણાવેલાં અનુષ્ટુભ, ત્રિષ્ટુભ, વૈતાલીય અને ગાથાનુષ્ટુભી સંસ્ટુષ્ટિ એ ચાર કુટુંબના કુલ દસે હંદ પ્રસ્તુત બૌદ્ધ મુત્તમાં વપરાયલા છે. એનાં લક્ષણ અને ઉદાહરણ મુત્તનિપાતમાંથી ઊતારા ટાંકી વેવટાવવામાં કાંઈ લાભ નથી. ઘણી ત્રૈષ્ટુભજાગતી ઉપજાતિ તથા અતિજગતી એ વે ઋક્કાલના, અને ઉપેન્દ્રવજ્રા જાગતી ઉપજાતિ તથા વંશસ્થ એ ત્રણ આલ્યાનકાલના હંદ પણ એમાં ઉપયુક્ત છે. તેનાં લક્ષણ અને ઉદાહરણનું પુનઃકથને નિરર્થક છે. ઉક્ત બૌદ્ધ મુત્તના જે હંદો વિવેચનની અપેક્ષા રાખે છે તે નવ છે,—ત્રૈષ્ટુભાનુષ્ટુભી સંસ્ટુષ્ટિ, આનુષ્ટુભવૈતાલીયકી સંસ્ટુષ્ટિ, ઇન્દ્રવંશા, ટ્વદ્વૈતાલીય, કૌકાલિયકી ઉપજાતિ, કૌકાલિય, આનુષ્ટુભકૌકાલિયકી સંસ્ટુષ્ટિ અને આનુષ્ટુભવૈતાલીયકૌકાલિયકી સંસ્ટુષ્ટિ. આ હંદ પૂર્વે વપરાયલા જાણવામાં છે નહિ. એમાંના એકલા ઇન્દ્રવંશા સિવાય કોઈ એ હંદના નામનો પત્તો લખ્યો નથી. આથી સૂચક કન્પિત નામથી તેમનાં લક્ષણ આપવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થયો છે. ઉપજાતિ હંદ:શાસ્ત્રનો પારિભાષિક શબ્દ છે. એક જ પ્રકારની પદ્યરચનાનાં, અર્થાત્, સજાતીય ભિન્ન ભિન્ન ચરણોના જોડાણથી થનારા મિશ્ર હંદ માટે તે શબ્દ વપરાય છે. આલ્યાનકાલના ત્રૈષ્ટુભ ઉપજાતિ અને જાગત ઉપજાતિ હંદ ઠાવાં સજાતીય લક્ષ્ણી પ્રજા છે. નિરનિરાટ્ટી પદ્યરચનાનાં, અર્થાત્, વિજાતીય ભિન્ન ભિન્ન ચરણોનું જોડાણ પણ મુત્તસાહિત્યમાં સ્થાય છે. આ પ્રકારનો હંદ તે ત્રૈષ્ટુભાનુષ્ટુભી સંસ્ટુષ્ટિ છે. પ્રયાગ આગઠ થઈ વહેતા ગંગા તથા યમુનાના પ્રવાહોની પંઠે વર્ણાત્મક તથા રૂપાત્મક પદ્યરચનાના પ્રવાહો ભિન્નતા જાઠવી સંયુક્તપણે વહે

છે, તે કારણથી તેના નામમાં સંસૃષ્ટિ શબ્દની યોજના કરી છે. એનું વંધારણ એના નામને અનુસરતું છે. સૌત અનુષ્ટુભ્ અને સૌત ત્રિષ્ટુભ્નાં ચરણોના સંયોગથી એ છંદ નીપજે છે. વર્ણના અને રૂપના તારો એમાં મેઘા વૃણાયા છે. નીચે એનાં ઉદાહરણ આપ્યાં છે; તેમાં પૂર્વે કહેલી વિક્રિયા પ્રવર્તતી જોવામાં આવશે.

પદ્મે સયાનો પરિફન્દમાનો

દીપા દીપં ઉપપ્લવિં ।

અથઽહસાસિ સંબુદ્ધં

ઓઘત્તિષ્ણં અનાસવં । સુ. નિ. ૧૫૧૮૧૨૨ ॥ (1145)

અસંહીરં અસંકુપ્પં

યસ્ત નત્થિ ઉપમા ક્વચિ ।

અઘ્ઠા ગમિસ્સામિ ન મેઽથ્ય કઠ્ઠા

એવં મં ધારેહિ અધિસુત્તા ચત્તં ॥ સુ. નિ. ૧૫૧૮૧૨૬ ॥ (1149)

ધમ્મારામો ધમ્મરતો

ધમ્મે ઠિતો ધમ્મવિનિચ્છયઞ્ચૂ ।

નેવાચરે ધમ્મસંદોસવાદં

તચ્છેહિ નીયેથ સુમાસિતેહિ ॥ સુ. નિ. ૧૨૧૮૧૪ ॥ (927)

પહેલા ઉદાહરણમાં અનુષ્ટુભ્નાં પ્રથમ ચરણ, ટ્રીજામાં વે અને ટ્રીજામાં એક છે. ટ્રીજા છંદના ટ્રીજા ચરણમાં રૂપાત્મક ભાગનું પહેલું રૂપ વે લઘુના એકીકરણથી સાચ્ય છે. એ છંદના ચોથા ચરણની વિક્રિયા પણ એ જ વિધાનથી દૂર થાય છે.

૧૫ પ્રસ્તુત જૂથનો ટ્રીજો છંદ આનુષ્ટુભવૈતાલીયકી સંસૃષ્ટિ છે.

૧ સ્વયમ્ઘ ળંગના પ્રથમ ધ્રુતસ્કંધના ટ્રીજા અજ્ઞયણના ટ્રીજા ઉદ્દેશને છેડે જે ગય માગ છે, તે ઉપર નોંધેલી ટ્રીષ્ટુભાનુષ્ટુભી સંસૃષ્ટિ સાથે સંવાદ

વર્ણ રૂપ અને માત્રાના સંગમની આ ત્રિવેણીનાં દર્શન નીચેનાં ઉદાહરણ
કરાવશે.

અજ્ઞ પૅળ્ળરસો ઉપોસથો

દિવ્યા રત્તિ ઉપદ્ધિતા ।

અનોમનામં સત્થારં

હન્દ પસ્સામ ગોદમં ॥સુ. નિ. । ૧૧૯ । ૧॥(1158)

વાહેત્વા સવ્વપાપાનિ

વિમલો સાધુસમાહિતો ઠિત્તત્તો ।

સંસારમતિચ કેવલી સો

અસિતો તાદિ પબુચ્ચસે સ બ્રહ્મા ॥સુ.નિ.।૧૧।૬।૧૦॥(5119)

પહેલા છંદમા અનુષ્ટુભ્નાં ત્રણ ચરણ અને એક વૈતાલીયનું છે. બીજામાં

ધરાવતી જાગતાનુષ્ટુભી સંસૃષ્ટિમા મૂલે હોય એવો સનહ અભિપ્રાય વધાય છે
'એવ સે ઉદાહુ અનુત્તરનાળી અનુત્તરદસી અનુત્તરનાળદસણધરે । અરહા નાયપુત્તે ભગવં
વેસાલિએ વિયાહિયે ॥' એ સઢ્યમ ઘામ્ય ગદ્યાત્મક છતા પચની રીતની પૂર્વાર્ધ અને
ઉત્તરાર્ધનો વિવેક સૂચવતી એકચડી અને વેવડી વિરામરેસાથી મધ્યમા અને અંતે અર્ધિત
છે. પ્રસ્તુત અજ્ઞસ્યણના પહેલા વે ઉદ્દેશની સમાપ્તિ પદ્યમધ્યથી કરી છે, તે જોતા
ત્રીજા ઉદ્દેશને છેડે ગય નહિ પણ પય જ સમવે છે. આતા એ પ્રયમ શ્રુતસ્વધ ઉપર
દષ્ટિ ધેરવતા છેગ પ્રાહ (પ્રા. ગાહ) ણ્ટલે સ્વરસપ્રહના અજ્ઞસ્યણ સિવાય અન્યત્ર
કોઈ પણ ટેકાળે ગયનો ઉપયોગ કરેલો જોવામા આવતો નથી. એ દરિજકત પ્યાનમા
કેઈ હુ એને નીચે પ્રમાણે પયસ્વરૂપમાં વાંચવા પ્રેરાઠું છું—એવં સે ઉદાહ અનુત્તર-
નાળે । અનુત્તરદસી । અનુત્તરદસણનાળે । અરહા નાયપુત્તે ભગવં' વેસાલિએ વિયાહિએ ॥

૧

૧

૧

૧

આર્જુ પૂર્વાર્ધ જાગત ચરણોર્મા અને ઉત્તરાર્ધ આનુષ્ટુભ ચરણોર્મા છે. વિવિચાના
આવરણને લીધે આર્જુ પયાન્મફવપ્ મૂનાયુ છે અને મેં સૂચવેત્તું સ્વરૂપ સ્વીકારતા
આચાર અને મૂલ્યનહના પદ્યમધોમા જાગતાનુષ્ટુભી સંસૃષ્ટિનો કમરો કરવો પડે.

एक अनुष्टुभ्नुं छे अने त्रण वृद्धवैतालीयनां छे. वैतालीय चरणनुं त्रीजुं रूप गुरु छतां लघु वांचवानुं छे. तेवी ज रीते वृद्धवैतालीयना छेछा चरणमां स रूप थडकाय छे ते छतां लघु लेखवानुं छे.

१६ चालु जूथनो त्रीजो छंद त्रैष्टुभवैतालीयकी संसृष्टि छे. एमां रूपरचना अने मात्रारचनाना प्रवाहो मळ छे. तेनुं उदाहरण

दूरं सभिया त्वमागतोऽसि^{१०}

पञ्हे पुच्छितुमभिकङ्खमानो ।

ते सन्तकरो भवामि पुट्टो

अनुपुब्बं अनुधम्मं व्याकरोमि ॥ सु.नि.।१।६।२॥ (511)

अहीं त्रण चरण वृद्धवैतालीयनां अने एक त्रिष्टुभ्नुं छे. छेछा चरणमां म्मं रूप लघु गणवूं पडे छे.

१७ जूथ मजकूरनो चोथो छंद इन्द्रवंशा छे. एनुं लक्षण आख्यान-कालना महाख्यानना जागत उपजातिना पेटामां अपाई गयूं छे. ए रूपबंधनुं सुत्तकालनुं उदाहरण नीचे मुजव.

मालं न धारे न च गन्धमाचरे

मश्चे छमायं च सयेथ संतते ।

एतं हि अट्टङ्गिकमाहुऽपोसथं

धुब्बेन दुक्खन्तगुना पकासितं ॥ सु.नि.।२।१४।२६॥ (401)

इन्द्रवंशानो वपराट भुत्तनिपातमां बहु कमी छे, जाणे ए छंद ताजो ज प्रचारमां आव्यो न होय ।

१८ उक्त छंद पली वृद्धवैतालीय छे, ते चालु जूथनो पांचमो छंद छे. तेनुं लक्षण वैतालीयकी उपजातिना पेटामां कहेवामां आव्यूं छे. इन्द्र-

વંશાની પેઠે એ પણ આયાર અને સુયગડ અંગમાં વપરાયો ન હોવાથી ઉક્ત પ્રસંગમાં ઉદાહરણ આપ્યું ન હતું, તે અહીં સુત્તનિપાતમાંથી નીચે પ્રમાણે:—

યો ઉપ્પત્તિતં વિનેતિ કોઘં
વિસતં સપ્પવિસંસવ ઓસધેહિ ।
સો ભિક્ખુ જહાતિ ઓરપારં

ઉરગાં જિણ્ણં^{૧૧} ઇવ તચં પુરાણમ્ ॥ સુ.નિ.૧૧|૧૧|૧ ॥ (૧)

૧૧ તે પછી જૂથમાં કૌકાલિયકી ઉપજાતી આવે છે. એ છેદ ચૌદ અને સોઠ માત્રાનાં ચરણોના મિશ્રણનો બનેલો છે. ચરણો અભિન્ન ઉચ્ચારણાનાં હોવાથી જૂથમાંના આ છટ્ટા છેદના નામમાં ઉપજાતિ પદ જોડ્યું છે. કૌકાલિયસુત્તમાં એના પ્રયોગને અનુલક્ષીને એનું નામ મેં પાડ્યું છે. ઉદાહરણ નીચે પ્રમાણે.

યો લોભગુણે અનુયુત્તો
સો વચસા પરિભાસતિ અઙ્ગે ।

અસ્સઙ્હો કદરિયોઽવદઙ્ગુ

મચ્છરિ પેસુણિયાનુયુત્તો ॥^{૧૨} સુ.નિ.૧૩|૧૦|૭ ॥ (૬૬૪)

૨૦ સાતમો છેદ જૂથમાં કૌકાલિય છે. તેનાં ચારે ચરણ સોઠ સોઠ માત્રાનાં રચેલાં હોય છે. ઉપર કહેલા કૌકાલિયસુત્તના છેદ્યા વે છેદ આ માત્રાત્મક પથરચનામાં છે. તેમાંથી એક ઉદાહરણરૂપે આપું છું.

યાવદુક્કસ્યા નિરયા ઇધ વુત્તા
તત્થઽપિ તાવ ચિરં વસિતવ્વં ।

૧૧ મુદ્રિત પાઠ જિણ્ણમિય છે જેથી માપ તૂટે છે.

૧૨ મુદ્રિત પાઠ અસ્સઙ્હો કદરિયો અવદઙ્ગુ મચ્છરિ પેસુણિ-
યસ્મિ અનુયુત્તો છે. તેથી માપમાં વધારો આવે છે.

तस्मा पेसलसाधुगुणेषु

वाचं मनं सततं परिरक्खे ॥^{१३}सु.नि.।३।१०।२२॥ (674)

आपेला उदाहरणना पहेला चरणमां दु थडकाई वृहत् वने छे. अने चोथा चरणमां चं अनुस्वारयुक्त होई ते पण वृहत् वने छे. छतां ए प्रत्येकनी वे मात्रा नहि, पण एक ज छेखाय छे.

२१ आठमो छंद आनुष्टुभकौकालियकी संसृष्टि छे. एना नाम प्रमाणे ए सौत्त अनुष्टुभू अने कौकालियनां विजातीय चरणाना संयोग-थी नीपजे छे. एनूं उदाहरण नीचे प्रमाणे.

अकित्तयि विवटचक्खू

सक्खिधम्मं परिस्सयचिनयं

पटिपदं वदेहि भदं ते

पात्तिमोक्खमथवाऽपि समाधिं ॥^{१४}सु.नि.।४।१४।७॥ (921)

उपरना उदाहरणमां विषम चरणो सौत्त अनुष्टुभूनां छे अने सम चरणो कौकालियनां छे. पहंला अने त्रीजा चरणमां सौत्त विक्रियानो उपयोग कर्यो छे. ए नडतर, एकीकरणसूचक अंक में मूकेल छे, तेथी स्हेजे दूर थई शकरो.

२२ नवमो छंद आनुष्टुभवैतालीयकौकालियकी संसृष्टी छे. एमां पण वर्ण रूप अने कलानो त्रिरंगी संगम छे. तेनूं उदाहरणः—

१३ मुद्रित पाठ तस्मा सुच्चिपेसल० छे. ते स्वीकारवाचो वे मात्रा वधी पडे छे.

१४ मुद्रित पाठ पात्तिमोक्ख अथ छे. ते प्रमाणे मापमां एक माना वधी जाय छे.

યં મે કહ્વિતમઙ્ગાસિ

^{૧૫}વિચિક્ષિચ્છમતારેસિ નમો તે ।

મુનિ મોનપથેસુ પત્તિપત્ત

^{૧૬}અસ્થિલાદિચ્ચબન્ધુ સોરતોઽસિ ॥ સુ.નિ.૧૨।૬।૨૧॥(૬૫૦)

અહીં પહેલું ચરણ અનુષ્ટુભનું છે, વીજું કીકાલિયનું છે; અને ઉત્તરાર્ધ દૃઢવૈતાલીય છંદનું છે. છેલ્લા ચરણમાં દિ વરડી થડકાઈ વૃહત્ થવા જાય છે, તે ન થડકાવતાં હૃસ્વ ઉચ્ચારવાની છે.

૨૩ ચાલુ વ્યાખ્યાનમાં એકંદર ઓગળીસ છંદની નોંધ લીધી છે. તેમાંના આર્ષિક અનુષ્ટુભ, આલ્યાનિક અનુષ્ટુભ, આર્ષિક ત્રિષ્ટુભ, ત્રૈષ્ટુભી ઉપજાતિ અને ઇન્દ્રવજ્રા, એ પાંચના વિકાસ વિષે વીજા અને વીજા દૃષ્ટિપાતમાં કહેવાઈ ગયું છે. વાકીના ચૌદ સુત્તકાલની પ્રસૂતિ છે. તેમનો વિકાસ હવે વિચારણીય છે. એ ચૌદ પૈકી ઇન્દ્રવંશા છંદ ત્રૈષ્ટુભ-જાગત ગોત્રની જાગત શાખાની છેલ્લી કૂંપઝી છે. તે પૈકી સૌત અનુષ્ટુભ છંદ આર્યાનિક અનુષ્ટુભ છંદમાંથી અને સૌત ત્રિષ્ટુભ છંદ ત્રૈષ્ટુભી ઉપ-જાતિ તથા તેના પેટામાંથી ફૂટે છે, અને ફાલે છે. તેઓ સૌત વિક્રિયાના સમીકરણોથી મઝતી સરઝતાને લીધે વહુ પ્રચાર પામે છે. એક વિવર્ધિત વર્ણ ઘરાવર બે કેવઝ અને એક ગુરુ રૂપ ઘરાવર બે લઘુ, તેમ જ બે કેવઝ ઘરાવર એક વિવર્ધિત જને બે લઘુ ઘરાવર એક ગુરુ, એ ચાર સમીકરણો સૌત પદ્યાત્મક સાહિત્યનું વિશેષ લક્ષણ નીવડે છે. ઉક્ત વિક્રિયાએ નવા છંદને જન્મ નથી આપ્યો, વિદ્યમાન પ્રકૃતિમૂલ છંદોની મૂળાવી નાંચનારી અનેકાનેક વિકૃતિઓ ઉપજાવી છે. છંદ:શાલના અઘાક્ષર અનુષ્ટુભ વર્ગમાં

૧૫ મુદ્રિત પાઠ વિચિક્ષિચ્છ મ અતારેસિ નમો તે છે. તેમાં માપ ઘરતાં વધારે માત્રા છે.

૧૬ મુદ્રિત પાઠ અસ્થિલ આદિચ્ચબન્ધુ સોરતોઽસિ છે; તે માપના ઘાટો ધાવે છે.

एकलो अनुष्टुभ् छंद ज सुत्तकालमां जाणीतो हतो, ज्यारे एकादशाक्षर त्रिष्टुभ् वर्गमां त्रैष्टुभी उपजाति, उन्पेद्रवज्रा अने इन्द्रवज्रा, ए त्रण छंद साहित्यमां प्रतिष्ठा पामी चूक्या हता. पहेलानी विकृतिने सौत्त अनुष्टुभ् नाम में आप्युं छे, अने त्रिष्टुभ् वर्गना त्रण छंदोनी विकृतिओ सौत्त त्रिष्टुभ् मां अंतर्भूत करी छे. सुत्तकालमां जे नवा छंद उदय पामे छे तेनां वर्णात्मक अने रूपात्मक अंगमां पण सौत्त विक्रिया प्रवर्ते छे. ए सुत्तकालना छंदो होई एमना नाम साथे सौत्त विशेषण जोटवानी आवश्यकता जणाती नथी. कालावच्छेदे करीने ए छंदोमां प्रस्तुत विक्रियानी प्रवृत्ति आक्षिप्त ज छे, कंठतः उक्त करवानी अपेक्षा नथी. दाखला तरीके सुत्तकालना छंदोमां मोखरे त्रैष्टुभानुष्टुभी संसृष्टि शुद्ध तेम ज वैप्रिय स्वरूपमां प्रचलित छे. ए संसृष्टि आख्यानकालना अनुष्टुभनां अने त्रिष्टुभ वर्गना चरणोनां जोटाणथी नीपजे छे. ए सजातीय चरणोनी चोकटी शुद्ध स्वरूपमां आख्यानकालनी अने वैद्वत् स्वरूपमां सौत्त विक्रियानी पेदाग छे, अर्थात् एमां विकासनां तत्त्वनो अभाव छे. ए तत्त्वो अवशिष्ट दश छंदोनी घटनामां नजरे पडे छे. जूना जाणीता छंदना पाया उपर नवा छंदनी दीवालो ऊमी थाय छे, अने काम आगळ वधी वे त्रण भज्य प्रासादो वधाई चूके छे. एरुनूं बांधकाम वधारो विकट होई अधुरूं रहे छे, तेने उत्तर काळमां कळग चडे छे. आ छंदोनी विकासक्रम सरळ तेम ज बोधक छे. अनुष्टुभ् अने त्रिष्टुभ् साथे एक नवा छंदनूं जोटाण प्रथम थाय छे. आ पद्यबध छंद शास्त्रमां वैतालीय संजाथी जाणीतो छे. एना प्रत्येक चरणने छेडे एक गुरु रूपना ऊमेराथी नीपजता छंदने आ व्याख्यानमा वृद्धवैतालीय नाम आप्युं छे. अनुष्टुभ् अने त्रिष्टुभ् साथे आ छंदोना योगथी आनुष्टुभ्वैतालीयकी संसृष्टि अने त्रैष्टुभ्वैतालीयकी संसृष्टि ए वे नवा छंदो बने छे. एमनां लक्षण बांधतां आपेलां उदाहरणना घटतरमां नवा छंदनां चरणोनी एकथी त्रण सूधी उत्तरोत्तर वधारो अनायासे दृष्टि तरे छे. प्रस्तुत संसृष्टिओना वैतालीय अने वृद्धवैतालीय चरणोमां रूपना सहचारमां मात्रानू पहिलवहेळं दर्शन याय छे.

તે પછી વિજાતીય જૂના છેદને પટતા મૂકી સજાતીય વૈતાલીય અને વૃદ્ધ-વૈતાલીયના વધારે મુશ્કિલ સંયોગથી વૈતાલીયકી ઉપજાતિ એ મિશ્ર છેદ પ્રગટે છે, અને તેમાંથી અમિશ્ર અર્ધસમ વૈતાલીય તથા વૃદ્ધવૈતાલીય પ્રાદુર્ભાવ પામે છે. આવી રીતે જૂના નવાના યોગથી પહેલાં આનુષ્ટુભકૌકાલિય-કી સંસૃષ્ટિ તથા આનુષ્ટુભવૈતાલીયકૌકાલિયકી સંસૃષ્ટિ, તે પછી કૌકાલિયકી ઉપજાતિ અને છેવટે કોકાલિય છેદ અસ્તિત્વમાં આવે છે. આ છેદો પચવંધ આય સંપૂર્ણ માત્રાત્મક સમચતુષ્પદ છેદ છે. એ ઉપરાંત ઘીજા એક માત્રાત્મક પચવંધનું ઘીજ ગાથાષ્ટુભી સંસૃષ્ટિની રચનામાં રોપાય છે. એમાં અનુષ્ટુભનાં ચરણનો અને ગાથા કિંવા પથ્યા આર્યાના પંદર અને અઢાર માત્રાના સ્વંડનો યોગ સધાય છે. તેમાં ચાર માત્રાનો સ્વંડ ઊમેરાઈ ઘીજી પેઢો સંપૂર્ણ માત્રાત્મક ગાથા કિંવા આર્યા પ્રકટે છે. અત્રે આપેલા વિવેચન-ને અનુસરીને સુત્તકાલના નવા છેદના વિકાસનો ક્રમ આ પ્રમાણે ગોઠવાય છે. પ્રથમ જૂનાનવાની સંસૃષ્ટિરૂપ મિશ્ર છેદ, તે પછી સજાતીય વે નવાની ઉપ-જાતિરૂપ મિશ્ર છેદ અને અંતે અમિશ્ર છેદ. એ ક્રમ ઋક્કાલની પદ્યરચનાએ સાધેલા ક્રમથી જુદો પડે છે. એમાં આપણે જોઈ ગયા તે પ્રમાણે પ્રથમ ગાયત્રી આદિ મૌલિક છેદ પ્રગટે છે, તે પછી કકુભૂ આદિ મિશ્ર છેદનું સક્ત ગાયત્ર અને જાગત ચરણના જોડાણથી ઉદ્ભવે છે અને તે પછી કાકુભ પ્રગાય આદિ સંમિશ્ર છેદ સતોઘૃહી સાથે કકુભૂ આદિ છેદના યોગથી જન્મે છે. એ કાઠના કેટલાક છેદ આલ્યાનકાલમાં અને આલ્યાનકાલના કેટલાક સુત્તકાલમાં ઊતરી આવે છે. તેમની સાથે મૈત્રી સાથી સુત્તકાલના નવા છેદો પ્રસિદ્ધિમાં આવવા મથે છે; અને ચલણ વધતાં પાછળથી અમિશ્ર છેદ તરીકે પચવંધમાં સ્થાન લે છે.

૨૪ સુત્તકાલના નવા છેદોનાં નામની સમજૂતી તેમનાં લક્ષણના પ્રસ્તાવમાં મોટે ભાગે અપાઈ ચૂકી છે. એમાંના ધનાસ્વરાનાં રૂઢ નામ ન મઠ્ઠાના કારણથી તેમને નવાં નામ આપવાની જરૂર પડી હતી. એ નામ-

समावेला विषयनूं नहि, पण तेमां वापरेला छंदनूं जापक छे. धा अपवादमूत प्रयोग एवूं अनुमान करवा प्रेरे छे के, वेआलीअ छंदना नाममां असाधारण आकर्षण हत्तूं. एनामां नवीनता उपरांत मनमोहक गेयता हती. भास कविना प्रतिज्ञायौगन्धरायण नाटकना बीजा अंकमां वेआलिआ बोल आवे छे, ते वीणाशिक्षिकाना अर्थमां बपरायो छे. ते उपरथी अटकळ बंधाय छे के इसवी सन पूर्वैना अग्रिम प्राकृतमां वेआली बोलनो वीणाना अर्थमां प्रयोग रूढ हरो. ए अटकळने जीवाजीवाभिगमसूत्राऱमांथी पाइअसइमह-ण्णवीमां ऊतारेला वीणाविशेषना अर्थना वेआलिआ बोलथी टेको मळे छे. वेआलीना एट्टे वीणाना साज साथे गावानो छंद ते वेआलीअ; तेवी ज रीते वीणामां ऊतारी मंगळपाठ गानारो बंदिजन ते वेआलिअ. अग्रिम प्राकृतनो बीजभूत वेआली बोल लुप्त थयो, पण तेना उपरथी थयेला वेआलिआ, वेआलिअ, तथा वेआलीअ, ए त्रण बोल प्राकृतमां ऊतारी आब्या; अने ते वैतालिका वैतालिक तथा वैतालीय एवा स्वरूपे-संस्कृतमां पण रूढ थया. आख्यानकालना कुशीलवोनी वीणामां जेम रामायणनो श्लोक झणत्कार करी रहेतो हतो तेम सुत्तकालना णिगन्थ अने भिस्खुओनी वीणामां झणत्कार मचावी मूकता धा नवा छंदनूं वेआलीअ नाम, कोण कहेशे के, सार्थक नथो?

२५ सुत्तसाहित्यनी अत्रोक्त पधरचना कया समयमां प्रगटी, ए प्रश्न अहां उपस्थित थाय छे. आयार अने मूयगड अंगना प्रथम श्रुतस्कर्ष सुधर्मा स्वामीनी प्रसादी छे. वीरसंबत् २० मां ए युगप्रधान गणधर निर्वाण पाम्या हता, एम परिशिष्टपर्वमां आपणे बांचिये छिये^{१८}; एट्टे करीने ए अंगोना निर्माणनो उत्तर अवधि एमना निर्वाणना वर्षथी भोडो होई शके नहि. बीजी तरफ पूर्व अवधि एमनी प्रज्ञ्याना वर्षथी न्हैलो पण न होई शके. एर्कदरे विचारतां संभव ए छे के तीर्थकरना पाटे आब्या पछी सुधर्मा स्वामीए प्रज्ञ्या स्वीकारनारनी अनुकूलता माटे जैन सिद्धांतना उक्त ग्रंथ अग्रिम

પ્રાકૃતમાં રચ્યા. એ અટકલ અનુસાર હું એ વેનો નિર્માણકાલ ઇસવી સન પૂર્વેના પાંચમા શતકના વીજા ચરણની આસપાસ ટેવું છું. જર્મન વિદ્વાન જેકોવી પ્રસ્તુત જૈન અંગોનો રચનાકાલ બહુ મોડો માને છે. સુત્તનિપાત પછી ધમ્મપદ અને ધમ્મપદ પછી આયાર તથા સૂયગડની રચના થઈ, એવો એમનો મત છે. તેઓ જણાવે છે કે “પાલિમાં રચાયલા પ્રાચીન (બૌદ્ધ) ગ્રંથોમાં આર્યા હંદમાં રચેલી કવિતા જોવામાં આવતી નથી; ધમ્મપદમાં તો તે નથી જ, અને વીજા ગ્રંથોમાં પણ મને તે મળી નથી. પણ આયાર અને સૂયગડ અંગ વચ્ચેનાં એક એક અજ્ઞયણ આશું એ આર્યા હંદમાં છે, જે નિઃસંશય ચાલુ આર્યા કરતાં જૂના રૂપમાં છે; અને સંભવિત છે કે ચાલુ આર્યા એની પ્રસૂતિ છે^{૧૬}.” પંડિત જેકોવીના આ લક્ષણમાં આયારના ઉપધાનસુય અજ્ઞયણનો અને સૂયગડના ઇથીપરિન્ના અજ્ઞયણનો નિર્દેશ રહેલો સમજાય છે. એ વે અજ્ઞયણ ગાયાનુષ્ટુભી સંસૃષ્ટિના પ્રસ્તાવમાં જણાવ્યા પ્રમાણે અનુષ્ટુભ અને ગાયાના યોગથી વનેલા હંદમાં રચાયલાં છે.

૧૬ જુઓ. S.B.E, Vol. XXLI Intro. xli માથી નીચેનો ઉત્તરો: “Ancient Pali Works seem to contain no verses in the Āryā metre, at least there are none in the Dhammapadam nor have I observed them in other works But both the Achārāṅga and Sūtrakritāṅga contain each a whole lesson in Āryā verses.....”
 જુઓ વળી S B E, Vol. XLV, p. 271. foot-note 2,
 “The whole Adhyāya(સૂ.૧૧૧)is composed in the archaic form of the Āryā of which I have treated at length in the thirty-eighth Volume of the Journal of the German Oriental Society, p. 594.”
 મારાથી પ્રો. જેકોવીએ કરેલા વિધેવનનો હામ લેવાયો નથી. ગાયાનુષ્ટુભી સંસૃષ્ટિ એ નામકરણ પણ મારૂ પોતાનું પડેલું છે, અને એ સંસૃષ્ટિમાર્થી મોટી આર્યા ક્ષમરા: પ્રકટવી એ શબ્દ પણ મારો પોતાનો છે.

ए मिश्र छंदने आर्या नाम आपी शक्याय नहि. जो गायानुष्टुभी संसृष्टिने तेमां वपरायला गाथिक खंडने लीधे गाथा किंवा आर्या नाम अपातूं होय, तो नीचे आपेला छंदने कयूं नाम आपयूं ?

जो सहइ ह्यु गामकण्टए

अक्कोसपहारतज्जणाओ·अ ।

भयभेरवसइसप्पहो

समसुहइकुखसहे अ जे स भिवखू ॥ ६.वे.।१०।११॥

આ ઉદાહરણમાં પહેલું ચરણ વૈતાલીયનું અને ત્રીજું તથા ચોથું એ વે વૃદ્ધવૈતાલીયનાં છે એ કારણથી એને વૈતાલીયકી ઉપજાતિ સંજ્ઞા આપવી કે પછી બીજું ચરણ વૃદ્ધતરગાથિક સ્વંટનું છે તે કારણથી ગાથા કિંવા આર્યા સંજ્ઞા આપવી ? સ્વરૂં જોતાં મિશ્ર છંદનો શુદ્ધ છંદની સંજ્ઞાથી વ્યવહાર થાય જ નહિ. એટલે કરીને મારે તેને ગાથાવૈતાલીયકી સંસૃષ્ટિ નામ આપવું પડે છે. ત્રણ ગાથિક સ્વંડ પૈકી મુધર્મા સ્વામીને તો, પંદર માત્રાનો અને અઠાર માત્રાનો, એ વે સ્વંડો જ જાણીતા હતા. એ વે સંટની અને અનુષ્ટુભનાં ચરણની સંસૃષ્ટિ જેને મેં ગાયાનુષ્ટુभी સંસૃષ્ટિ સંજ્ઞાથી ઓઢલાવી છે, અને જેને જર્મન વિદ્વદ્વર્ય આર્યા કહે છે તથા પ્રાચીન બૌદ્ધ સુત્તમાં તે છે નહિ એમ જણાવે છે, તેની પ્રયોગ પ્રાચીનતમ સૂક્તસંગ્રહ જે સુત્તનિપાત, તેમાં અનેક સ્થલે મઢી આવે છે. એનું મેત્તસુત્ત સમગ્ર અને તુવદ્ધકસુત્તનો મોટો ભાગ પણ એ જ મિશ્ર છંદમાં છે^{૨૦}. આ રીતે, પ્રાચીન બૌદ્ધસાહિત્યમાં પ્રસ્તુત ગાયાનુષ્ટુभी સંસૃષ્ટિનો પ્રયોગ નથી એમ જે પંડિત જેકોબી કહે છે, તે નિરાધાર ઠરે છે. જૈન અને બૌદ્ધ ઉભય સુત્તસાહિત્યમાં ગાથા કિંવા આર્યાના વૃદ્ધ અને વૃદ્ધતર સ્વંડ પદ્યરચનામાં વપરાયા છે. ત્રીજો બાર માત્રાનો સ્વંડ, જેને મેં ગાયાનુષ્ટુभी સંસૃષ્ટિનું લક્ષણ વાંધતાં લઘુ ગાથિક સ્વંડ એવી સંજ્ઞાથી

ओळखाव्यो छे, तेनो प्रयोग जैन दसवेआलिय (सं. दशवैकालिक)मां पहेलवहेलो नीचेना उदाहरणमां मने हाथ लाग्यो छे.

पढमं नाणं तओ दया

एवं चिद्धह सव्वसंजए ।

अन्नाणी किं काही

किंवा नाही छेअपावगं ॥ द. वे. । १।१०॥

उपरना उतारानूं त्रीजूं चरण गाथिक लघु खंडनूं वनेळं छे; वाकीनां त्रण चरण सुत्तकालमां प्रगटेला वैतालीयनां छे. प्रस्तुत गाथिक लघु खंड प्रचार-मां आवतां संपूर्ण गाथा किंवा आर्यानां प्रथम दर्शन पण दसवेआलिय व नीचेना उदाहरणमां करावे छे.

गेरुअवन्निअसेदिअ—

सोरट्टिअपिट्टकुवकुसकए य ।

उक्किट्टमंससट्टे

संसट्टे चेव बोद्धव्वे ॥ द. वे. । ५ । ३४ ॥

दसवेआलिय सुधर्मा गणधरना प्रशिष्य शय्यंभव स्वामीनी कृति छे. ए मुनिनूं धर्मराज्य वीरसंबत् ७५ थी ९८ सूधी षोच्यूं हतूं. गाथानुपट्टुभी संसृष्टिनी उत्पत्ति तो तेना पूर्वे एक शतक जूनी, एटलेके, जैन बौद्ध संघोनी स्थापनाना अरसानी संभवे छे. आ लांबी चर्चाथी स्पष्ट थरो के गाथानुपट्टुभी संसृष्टिने प्राचीन आर्या कहेवामां तेम ज आपार अने सूयगड अंगने धम्मपद पछी मूकवामां पंडित जेकोवीनी कंडक सरतचूक थई छे. जो गाथानुपट्टुभी संसृष्टिना प्रयोगना कारणथी उक्त जैन अंगोने धम्मपद पछी मूकिये, तो बौद्ध सुत्तनिपातमां तेनो प्रयोग होवाथी तेने पण धम्मपद पछी मूकवानो प्रसंग प्राप्त थाय, जे सर्व कोइ कहेसो के अनिष्ट छे. ए ए मुत्तोना संग्रहनो उत्तर भवधि बुद्ध भगवानना प्रथम शिष्योनी जीवन-चर्याथी मोडा नथी, एवो पश्चिमना विद्वानोनो निर्णय छे. धम्मपदनो संग्रह

મુત્તનિપાત પછી થયો છે એ વિષે મતમેદ છે નહિ અને ધ્યાન ઊપર થવાનો સંભવ નથી. હાથ થયેલા શબ્દો જૂના પ્રયોગો અને મિશ્રણની સાદી બસલી રહેણીકરણને આધારે ઠીરૂં છે કે મુત્તનિપાત જૂનામાં જૂનો બૌદ્ધ પદ્યામક સંપ્રદાય છે. બૌદ્ધ સંપ્રદાયની સ્થાપના તે એનો પૂર્વ અવધિ મનાય છે. આચાર અને સૂયગડ અંગ એક જ જૈન મુનિની કૃતિ છે, જ્યારે મુત્તનિપાત અનેક મિશ્રણના બૌદ્ધ મિશ્રણનાં મુત્તનો સંપ્રદાય છે. પદ્યબંધની કસોટી સૂચવે છે કે, એ સંપ્રદાયનો ત્રિપિટકાના સંપ્રદાયમાં રચાયેલાં મુત્તવાદો ભાગ આચાર અને સૂયગડથી કંઈક જૂનો જણાય છે; અને કૌકાલિયક વૃદ્ધ સાથે સંબંધ ધરાવતો ભાગ ઉક્ત જૈન અંગોથી અર્ધી સદી મોટી રચાયેલો સંભવે છે. સંપૂર્ણ આચાર એમાં ઉપલબ્ધ નથી તે કારણથી પ્રસ્તુત બૌદ્ધ મુત્ત શાસ્ત્રમય મુનિના દસવેઆલિયનો પૂર્વે ગોઠવાય છે. સામાન્ય રીતે વિદ્વાનો પ્રાચીન જૈન સાહિત્યને પ્રાચીન બૌદ્ધ સાહિત્યના પછી મૂકે છે, એ પ્રદાય જૈન અંગ અને ત્રિપિટકાની પારંપરિક વાચનાની માપમાં જે અંતર જણાય છે તેને લીધે બંધાયો હોય, તો તે શક્ય છે. પરંતુ પદ્યબંધની કસોટી તેમ જ સુધર્મા સ્વામીના ધર્મરાજ્યની તારીખો એ પ્રદાયની વિરુદ્ધ પડે છે. પ્રાચીનતમ જૈન અને બૌદ્ધ મુત્તસાહિત્ય સમકાલીન છે. વધારે ચીરુણાશથી કહિયે, તો મુત્તનિપાતમાં કેટલાંક મુત્તો આચાર અને સૂયગડ અંગના પહેલાનાં, કેટલાંક તે બેના પછીનાં અને કેટલાંક સમકાલીન લાગે છે.

૨૬ આચાર તથા સૂયગડનો અને મુત્તનિપાતનો પદ્યબંધ સમાન છે, છતાં જૈન અંગ અને બૌદ્ધ મુત્તનો માપના વાહ્ય સ્વરૂપમાં ભારે અંતર છે. શ્વેતાવરોની અર્ધમાગધી કિંવા આર્ષ બોલી અને હીનયાનીઓની માગધી કિંવા પાછી બોલી જાણે જુદે કાળે વપરાતી જુદી માપબો હોય એવો આપત્તતઃ માસ થાય છે. પરંતુ કહેવું જોઈએ કે તે માસ જ છે, મિથ્યા માસ જ છે. પદ્યબંધની સમાનતા જેવી ઉપર નોંધી છે, તેવી જ એમના શબ્દફોશની સમાનતા છે, એમના વૈયાકરણ

પ્રયોગની છે, ઇમાનામાં પ્રતિવિંચ પામતા દેશકાઠની છે. ધર્મવાસનાને અંગે માનવહૃદયમાં ક્ષોભ મચાવતા મહાપ્રશ્નો પણ એના એ ઉભયમાં ચર્ચાય છે. સંઘના અંદરની અને બહારની સંસ્કૃતિ પણ અભિન્ન જ છે. આ બધા સંવાદી મુરોમાં વિસંવાદી મુર જે સંભળાય છે, તે માત્ર વર્ણના તારમાંથી નીકળે છે. સંવાદી મુર રચનાકાઠનું માન્ય કરાવે છે, વ્યારે વિસંવાદી મુર કંઠસ્થ શ્રુતના સંપ્રહનો અને પત્રારોહણનો કાઠભેદ સૂચવે છે. આયાર મૂયગઢ અને મુક્તનિપાતના નિર્માણકાઠનો નિર્દેશ ગયા પ્રસ્તાવમાં કર્યો છે. ઉક્ત સાહિત્યનો ઉદય લગભગ અભિન્ન સમયે થયો સમજાય છે. પરંતુ તે મિત્રમિત્ર કાળે સંગૃહીત અને પત્રારૂઢ થાય છે. ઇસવી સન પૂર્વે ચોથા સૈકાના અંત્ય ચરણમાં પાટલિપુત્રનો જૈન સંઘ અંગોનો સંપ્રહ કરે છે. ત્યારપછી આશરે એક હજાર વર્ષે સમગ્ર જૈન સિદ્ધાંત દેવદ્વિ ગણીના પ્રશસ્ય પ્રયાસે પત્રારૂઢ થવા પામે છે. ઘટલા લાંબા ગાળામાં એકના મુલેથી બીજાના મુલે, બીજાનાથી ત્રીજાના, એમ પરંપરાએ ઊતરી આવેલાં અંગોનો વાચનની માપાના એકદેશમાં ઉક્તાંતિનો^{૨૧} અમલ અધિકતર અને વલવત્તર થાય, એ સમજાય એવું અને મનાય એવું છે. પાંચેક શતક ઉપર થયેલા મલ નરસંહનાં કંઠપ્રતિકંઠ ઊતરી આવેલાં લોકપ્રિય પદની જ સ્થિતિ જુઓ. તે જાણે મઠે કાળે જ કોઈપણ રચ્યાં હોય એવા સ્વરૂપમાં જૂનાપણનો દાવો વ કરનારા હસ્તલિખિત ચોપડાઓમાં અને કાવ્યદોહન જેવા મુદ્રિત સંપ્રહોમાં શૂં નથી જણાતાં ? એમાં પાંચસે વર્ષ ઉપરના મૂજરાત્તીવી છાંટ સરસી પણ જટતી વથી. તેના મુકાબલામાં દશ શતક વટાવનાર અંગોની સ્થિતિ વેશક સારી છે. ઉક્તાંતિનો અસર એકલી^{૨૨} વર્ણગત જ નજરે પડે છે. વર્ણોનું આ ઉક્તમણ^{૨૩} રૂપના સ્લક્ષમણનો ભ્રમ ઉપજાવે છે. મુક્તનિપાતમાં વર્ણગત ઉક્તમણ થયું છે સ્વરૂં; પણ તે વહુ અલ્પ છે. ત્રિપિટકનો સંપ્રહ અંગોના કરતાં

૨૧ Evolution.

૨૨ Phonological.

૨૩ Morphological.

અર્ધી સદી બ્હેલો થયો હતો; અને તેની સાથે વાચના પણ તે જ કાલે સ્થાપિત થઈ હતી. ઇસવી સન પૂર્વે ચોથા શતકના પહેલા ચરણમાં વીજી બૌદ્ધ મહાસંગીતિએ અને સ્થિર સ્વરૂપ આપ્યું હતું. એ જ સ્વરૂપમાં અશોકના શાસનથી ત્રિપિટક સિંહલદ્વીપમાં પહોંચવા પામ્યું હતું. એની વાચનામાં ઇસવી સન પૂર્વેના ત્રીજા શતકની ભાષા જઝવાઈ રહ્યાની પ્રતીતિ અશોકના શિલાલેખોની ભાષા સાથેના સામ્યથી થાય છે. ત્રિપિટકનો સંપ્રદ્ય બુદ્ધ અને મહાવીરના નિર્વાણના સમયથી આગરે દોઢસો વર્ષે વર્ષ મોડો છે. પ્રેમાનંદના વસતના ગૂજરાતીમાં અને હાલના ગૂજરાતીમાં થોડું જ અંતર છે. એ દૃષ્ટાંતથી આપણે માની શકીએ કે ભગવાન બુદ્ધ અને મહાવીરે લગભગ મુત્તનિપાતની જ ભાષા દ્વારા લોકને પ્રવોધ્યા હતા. એ ભાષાને શ્વેતાંવરો અર્ધમાગધી નામ આપે છે, અને હીનયાનીઓ માગધી કહે છે. એ બંને સંજ્ઞા મગધને લક્ષિત કરે છે. તે કાલના કાશી, કોશલ, વિદેહ, વસ, શરસેન આદિ દેશોમાં મગધ દેશ અપ્રસ્થાન ધરાવતો હતો. ગંગાનદીના પાત્રમાં આવેલા એ દેશોમાં હાલ જેમ હિંદી બોલાય છે તેમ અઢી હજાર વર્ષ ઉપર ત્યાં અગ્રિમ પ્રાકૃત બોલાતું હતું. એની વિવિધ બોલીઓમાં રાજકીય મહત્તાને લીધે મગધની બોલી આગળ પડતી હોય અને તેને લીધે બુદ્ધ તથા મહાવીરે ઉપદેશમાં એનો ઉપયોગ કર્યો હોય એમ સંભવે છે. તે મગધની પ્રાકૃત બોલી હોવાથી એક રીતે માગધી કહેવાય; અને ઇતર દેશમાં સર્વસુગમ થવા માટે તેમાંના પ્રાંતિક પ્રયોગનો ત્યાગ કરવાના કારણથી તે વીજી રીતે અર્ધમાગધી પણ કહેવાય. આમ એક જ અગ્રિમ પ્રાકૃતનાં બે જુદાં નામ પડ્યાં જણાય છે. અહીં એક વાવત સ્પષ્ટ કરવાની જરૂર છે કે વરરાચિ હેમચંદ્ર આદિ વૈયાકરણો જેને માગધી નામ આપે છે અને ભાસ કાલિદાસ આદિ કવિ જેને નીચ વર્ણના મુખમાં મૂકે છે, તે માગધીનાથી બા બુદ્ધ અને મહાવીરની માગધી વધુ ભિન્ન છે. વ્યાકરણ અને નાટકની માગધી કરતાં આચાર, સૂયગઢ અને મુત્તનિપાતની માગધી વધુ જૂની છે. પ્રાચીન માગધો-

नो विश्वासपात्र ऐतिहासिक नम्नो एक बच्चो छे. मथुराथी बार माइल उपर सोनौत गाममाथी एक पूतञ्ज नीचे ब्राह्मी लिपिमां कोतरेलो प्रण लॉटोनो लेख मळी आब्यो छे. ते प्रसिद्ध पौरातनिक जयत्वालजीए इसवी सन १९१९ ना The Journal of the Bihar and Orissa Research Society मां प्रकाशित कर्यो छे. एओ प्रस्तुत लेख नीचे प्रमाणे वाचे छे:—(१) सिनि डरसि कारिता (२) + + + (३) आचा कुनिकाज (३) । + + (न) + कता । हूं, सिनि नहि पण सिरि हशे, एम मानूं छूं. खूटता अक्षर पूरा करी ए लेख हूं नीचे भुजव वांचूं छूं:—सिरि डरिस(क) कारिता (२) (प्रतिमा) लाआज कुनिकाज (३) + + + न (अ) कता ।^{२४}. एनो अर्थ आ प्रमाणे थाय छे:—“ राजा कुणिकनी (आ प्रतिमा) श्रीदर्शके करावी (अने) + + + करी. ” आ लेखमां प्रयोजेलो कुनिक (सं. कुणिक) बोल ते शैशुनाग वंशना अजातशत्रुनूं बीजू नाम छे. प्राचीन जैन सुत्तमां कुनिक के कुणिक नामथी ज ए राजानो निर्देश करेलो छे. ते महावीर अने बुद्ध भगवाननो सहजीवी हतो; अने ए बनेन प्रसंगमां पण आब्यो हतो. उक्त लेखमां दर्शकनो उल्लेख छे, ते कुणिक अजातशत्रु पठी मगधनी गादीए आवनार राजा. एणे पितानी प्रतिमा तेना स्वर्गवास पठी कोइ शिल्पी पासे करावी हती, जेना नामना अक्षर लेखमां खवाई गया छे. मरनार राजानी प्रतिमा करावी राखयानो संप्रदाय बहु जूनो छे. भास कवि प्रतिमादशरथ नाटकमा आपणने तेनो परिचय करावे छे^{२५}. आ लेखनूं अग्रिम प्राकृत ते महावीर अने बुद्धनी धर्मदेशनानूं प्राकृत. आचार, मूयगड अने सुत्तनिपातनी भाषा मूळे आने मळती होवी जोईए. ते इसवी सन पूर्व पांचमा छठ सैकानी लोभाषा. ए

२४ संस्कृत छाया नीचे प्रमाणे—श्रीदर्शनकारिता प्रतिमा राजा कुणिकाना + + + न च कता । अहीं आआन कुनिकाज (सं. राजा कुणिकाना) मानार्थे बयुवचन छे.

२५ जुओ प्र. द. १३१

જમાનાના મુશિક્ષિત વર્ગની પળ એ જન્મભાષા હતી. પરંતુ વ્યવહારમાં અને સાહિત્યમાં એઓ વૈનયિક^{૨૬} સંસ્કૃતનો ઉપયોગ કરતા હતા. તેને અને અગ્રિમ પ્રાકૃતને એટલો ઘષો નજીકનો સંબંધ હતો, કે પ્રાકૃતભાષી પુરુષો તે સ્થેલથી સમજી શકતા. એ કાઠ આ રીતે દ્વૈભાષિક હતો. નાટક પ્રાયઃ જમાનાનું પ્રતિવિંચ રજૂ કરતું હોવાથી રંગભૂમિએ પણ દ્વૈભાષિકતાનો ગર્ભ ધારણ કર્યો. નાટકસાહિત્યમાં, ઉક્ત વે ભાષાઓ વચ્ચે સહકાર થયો તેના પરિણામે વૈનયિક સંસ્કૃત તેની શિષ્ટતાને લીધે રાજાના મુખમાં મૂકાતું હતું, ત્યારે અગ્રિમ પ્રાકૃત તેની મૃદુતાને લીધે રાણીના મુલમાં સત્કાર પામતું હતું. વીજી તરફ અગ્રિમ પ્રાકૃતમાં ધર્મદેશના ગજાવનાર મહાવીર સ્વામીએ ચૌદ પૂર્વતી રચના વૈનયિક સંસ્કૃતમાં કરેલી હોવાનું કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે ઈસવી સન પૂર્વે પાંચમા છટ્ટા સૈકામાં વૈનયિક સંસ્કૃત અને અગ્રિમ પ્રાકૃત બંને એકસરખાં પ્રચારમાં હતાં, તે પૈકી અગ્રિમ પ્રાકૃત જનતાની જન્મભાષા હોઈ તે ભાષામાં આચાર, સૂચકાણ અને મુત્તનિપાત રચાયાં હતાં.

૨૭ મુત્તકાલની મહત્તા ભરતચંડના ઇતિહાસમાં જૈન અને યૌદ્ધ એ વે મહાન ધર્મની સ્થાપનાને લીધે છે. એક કાલે વે પ્રભાકર યુગનો અંધકાર દૂર કરવા ઉદય પામે છે. એક સાથે વે સુધાકર તૃપાતુર જગતને સુધાનૂંપાન કરાવે છે. એ મહોદય પર્વમાં નિર્ગન્થ અને મિશુધોના આવાહનથી સરસ્વતી નવા દેહે પ્રાચ્ય દેશમાં અવતરે છે. આ નવો દેહ તે ચાલુ વ્યાખ્યાનમાં વર્ણવેલી માનાત્મક પદ્યરચના. એ નવી રચનાનો પહેલો અને છેલ્લો સૌત્ત ફાલ કોકાલિય છેંદ છે. તે છેંદ સંસૃષ્ટિ અને ઉપજાતિની અવસ્થાઓ પસાર કરી નવો જન્મ લેઈ સમચતુષ્પદ સ્વરૂપે દર્શન દે છે. એ જ અવસ્થાઓ ઘટાવી કોકાલિયના પૂર્વે રૂપમાત્રાત્મક અર્ધસમપદ વૈતાલીય અને શુદ્ધવૈતાલીય એ વે સહોદર મિથ્ર છેંદ પ્રગટે છે. વચગાઠામાં ગાથા કિંવા આર્યાના શુદ્ધ અને શુદ્ધતર એ વે ચંડ ગાથાનુષ્ટુભી સંસૃષ્ટિના ચરણોના ઘટતરમાં યોજાય છે, પણ સંસૃષ્ટિની ભૂમિકાથી આગળ વધતા નથી. સિદ્ધ સમચતુષ્પદ માત્રાત્મક છેંદ

परिशिष्ट

कौकालियसुक्त^१

प्रचलित वाचना

नवी वाचना

यो लोभगुणे अनुयुक्तो
सो वचसा परिभासति अ०जे ।
अस्सद्धो कदरियो अघदङ्गू
मच्छरि पेसुणियस्सि अनुयुक्तो ॥७॥
मुखदुग्ग विभूतमनरिय
भूनहु पापक दुक्कतकारि ।
पुरिसन्तकलि अवजात
मावहु भाणिऽध नेरयिकोऽसि ॥८॥
रजमाकिरसि अहिताय
सन्ते गरहसि किब्बिसकारि ।
पहूनि दुच्चरितानि चरित्वा
गञ्छिसि खे पपतं चिररत्तं ॥९॥
न हि नस्सति कस्सचि कम्मं
पति ह न लभतेऽथ सुयामि ।
दुक्ख मन्दो परलोके
अत्तनि पस्सति किब्बिसकारो ॥१०॥
अयोसङ्कुसमाहतटानं
तिण्हधार अयखलमुपेति ।
अथ तत्तअयोगुल्लमन्निभं
भोजनमत्थि तथा पतिरूपं ॥११॥

यो लोभगुणे अनुयुक्तो
नो वचसा परिभासति अ०जे ।
अस्सद्धो कदरियोऽघदङ्गू
मच्छरि पेसुणियानुयुक्तो ॥७॥
मुखदुग्ग विभूतं अनरिय
भूनहु पापक दुक्कतकारि ।
पुरिसन्तकारि अपजात
वहु माऽभाणिऽध नेरयिकोऽसि ॥८॥
रज आकिरसि अहिताय
सन्ते गरहसि किब्बिसकारि ।
वहूनि दुच्चरितानि चरित्वा
गञ्छिसि खलु पपतं चिररत्तं ॥९॥
न हि नस्सति कस्स चि कम्मं
पति ह न लभतेऽथ सुयामि ।
दुक्ख मन्दो परलोके
अत्तनि पस्सति किब्बिसकारि ॥१०॥
अयोसङ्कुमाहतटानं ।
तिण्हधारमथखलमुपेति ।
अथ तत्तअयोगुल्लसंनिभं
भोजनमत्थि तथा पतिरूपं ॥११॥

१ भा सुत्तनो पूर्व भाग गद्यमा अने उत्तर भाग पद्यमा छे पद्यात्मक
' भागना पहला छ श्लोक अन्य रत्तमा होवाची अर्ही नथी उक्तार्था श्लोक ७-२०
कौकालियकी उपजातिमा अने ते पछीना धे कौकालिय उदमा छे, माटे
ते अर्ही आप्या छे. एन् वधारण तपासता वावा सधिनो प्रयोग सुत्तमादमा
रुढ धयो जणातो नथी

न हि वग्गु घदन्ति घदन्ता
नाभिजयन्ति न ताणमुपेन्ति ।
अंगारे संथते सेन्ति
अग्गिनिसमं जलितं पविसन्ति ॥
१२ ॥

जालेन च ओनहियाणा
तत्थ हनन्ति अयोमयकूटेहि ।
अन्धंऽय त्तिमिसमायन्ति
तं विततं हि यथा मदिकायो ॥१३॥
अथ लोहमयं पन कुम्भिं
अग्गिनिसमं जलितं पविसन्ति ।
पच्चन्ति हि तासु चिररत्तं
अग्गिनिसमासु समुप्पिलवासो ॥
१४ ॥

अथ पुण्णलोहितमिस्से
तत्थ किं पच्चति किञ्चिसकारी ।
यं यं दिसतं अधिसेति
तत्थ किलिस्सति संफुसमानो ॥१५॥

पुळवावसथे सलिलस्मिं
तत्थ किं पच्चति किञ्चिसकारी
गन्तुं न हि तीरमपत्थि
सव्वसमा हि समन्तकपल्ला ॥१६॥
असिपत्तवनं पन तिण्हं
तं पविसन्ति समच्छिदगत्ता ।
जिह्वं वलिसेन गहेत्वा
आरचयारचया विहनन्ति ॥१७॥

अथ येतरणिं पन दुग्गं
त्तिण्हं धारं सुरधारमुपेत्ति ।
तत्थ मन्दा पपत्तन्ति
पापकरा पापानि करित्वा ॥१८॥
खादन्ति हि तत्थ रुदन्ते
सामा सबला काकोलगणा च ।

न हि वग्गु घदन्ति घदन्ता
नाभिजयन्ति न ताणमुपेन्ति ।
अङ्गारे सेन्ति मंतते
अग्गिनिसमं जलितं पविसन्ति ॥
१२ ॥

जालेन च ओनहियाणा
तत्थ हनन्ति अयोकूटेभि ।
अन्धंऽय त्तिमिरमायन्ति
तं विततं हि यथा मदिकायो ॥१३॥
अथ लोहमयं पन कुम्भिं
अग्गिनिसमं जलितं पविसन्ति ।
पच्चन्ति तासु चिररत्तं
अग्गिनिसमासु समुप्पिलया सो ॥
१४ ॥

अथ पुण्णलोहितमिस्से
तत्थ वि पच्चति किञ्चिसकारी ।
यं यं दिसतं अधिसेते
तत्थ किलिस्सति संफुसमानो ॥१५॥

पुळआवसथे सलिलस्मिं
तत्थ वि पच्चति किञ्चिसकारी ।
गन्तुं न हि तीरमपत्थि
सव्वसमा हि समन्तकपल्ला ॥१६॥
असिपत्तवनं पन तिण्हं
तं पविसन्ति समुच्छिन्नङ्गा ।
जिह्वं वलिसेन गहेत्वा
आरचयारचया विहनन्ति ॥१७॥

अथ येतरणिं पन दुग्गं
त्तिण्हं सुरधारं खु उपेन्ति ।
तत्थ च मन्दा पपत्तन्ति
पापकरा पापानि करेत्वा ॥१८॥
खादन्ति हि तत्थ रुदन्ते
सामा सबला काकोलगणा ।

સોના સિગાલા પટિગિજ્ઞા
કુલલા ઘાયસા ચ વિતુદન્તિ ॥૧૯॥

કિચ્છા યતાયં ઇધ વુત્તિ
યં જનો પસ્સતિ કિઠ્ઠિવસકારી ।
તસ્મા ઇધ જીવિતસેસે
કિચ્ચકરો સિયા નરો ન ચ મજ્જે ॥૨૦॥

તે ગણિતા વિદૂહિ તિલલાહા
યે પદુમે નિરયે ઉપનીતા ।
નહુતાનિ હિ કોટિયો પશ્ચ મ્બન્તિ
દ્વાદસ કોટિસતાનિ પુનઃસ્જા ॥
૨૧॥

યાવદુક્ષ્ણા નિરયા ઇધ વુત્તા
તત્થપિ તાવ ચિરં વસિતવ્યં
તસ્મા સુચિપેસલ સાધુગુણેસુ
યાચં મનં સતતં પરિરક્ષેત્તિ ॥૨૨॥

કોકાલિયસુતં નિદ્ધિતં

સુના સિગાલા પટિગિજ્ઞા
કુલલા ઘાયસા ચ વિતુદન્તિ ॥૧૯॥

કિચ્છા યતાયમિધવત્તી
યં યં પસ્સતિ કિઠ્ઠિવસકારી ।
તસ્મા ઇધ જીવિતસેસે
નો કિચ્ચકરો સિયા ન મજ્જે ॥૨૦॥

તે ગણિતા વિદૂહિ તિલલાહા
યે પદુમે નિરયે ઉપનીતા ।
ન તાનિ કોટી પશ્ચ મ્બન્તિ
દ્વાદસ કોટિસતાનિ પુનઃસ્જા ॥
૨૧॥

યાવદુક્ષ્ણા નિરયા ઇધ વુત્તા
તત્થપિ તાવ ચિરં વસિતવ્યં ।
તા સુચિપેસલસાધુગુણેસુ
યાચં મનં સતતં પરિરક્ષે ॥૨૨॥

સુ.નિ. ૧૩૧૦૧૫-૨૨ । (૪૬)

તુવટ્કસુતં ૧*

પુચ્છામિ તં આદિચ્ચવન્ધું
વિવેકં સન્તિપદં ચ મહેસિ ।
કયં દિસ્વા નિઠ્ઠવાતિ મિક્ષુ
અનુપાદિયાનો લોકસ્મિ કિચ્ચિ ॥
૨૧

મૂલં પપંચસંખાયા (તિ મગ્ગતા)
મન્તા અસ્મીતિ સ્વમુપરુન્ધે ।

પુચ્છામિ આદિચ્ચવન્ધું
વિવેકિનં સન્તિદં મહેસિમહં ।
કયં દિસ્વા નિઠ્ઠવાતિ મિક્ષુ
લોકસ્મિ કિંચિ અનુપાદિયાનો ॥
૨૧

મૂલં પ્રપચ્ચસંખાપ
મન્તા અસ્મિન્તિ સ્વમુપરુન્ધે ।

૨. આ સુત્તમાં કુલ ચાલીસ ગાથિક ચરણો છે. તે પૈકી અઠ્ઠાવીસ વૃદ્ધતર સંદનાં અને ચાર વૃદ્ધ સંદનાં બનેલાં છે. ઉત્તર કાલની ગાથા યિવા આર્યાનાં વંધારણ-માં ન્દ થયેલાં વાનાં દ્વાહ આદિ ચતુષ્કાલ સંધિ સુત્તકાલમાં સ્થાપિત થયા ન હતા, તે વંધારણના આરંભે જીવામાં આવતા અષ્ટકલ સંધિના પ્રયોગથી પ્રતીત થાય છે. વૃદ્ધતર સંદનાં વાર્તા અને વૃદ્ધમાં નવમી માત્રા તે પછીની માત્રા સાથે મળી જઈ બે માત્રાનો વહુ વર્ણ વપરાયલો ક્ષતિ રહિયે પડે છે, તે પણ ધ્યાનમાં લેવા યોગ્ય તથા છે. સુત્તનિપાત્તમાં ગાયાનુષ્ઠુભી સંસ્કૃતિનું સ્વરૂપ આધાર અને સૂચક-હની સરલામળીમા ઠીક જલ્થાય છે.

या काचि तण्हा अज्झत्तं
तासं विनत्था सदा सतो सिक्खे॥

२ ॥

यं किंचि धम्ममभिजञ्जा
अज्झत्तं अथ वाऽपि वद्विद्धा ।
न तेन मानं कुब्बेथ
न हि सा निव्व्युत्ति सतं वुत्ता ॥३॥

सेय्यो न तेन मञ्जेय्य
नीचेय्यो अथ वाऽपि सरिक्खो ।
फुट्ठा अनेकरूपेहि
नातुमानं विकप्पयं तिट्ठे ॥४॥

अज्झत्तमेव उपसमे
नाञ्जतो भिक्खु सन्तिमेसेय्य ।
अज्झत्तं उपसन्तस्स
नत्थि अत्तं कुतो निरत्तं वा ॥५॥

मज्झे यथा समुहस्स
ऊमि नो जायति ठितो होति ।
एवं ठितो अनेजस्स
उस्सदं भिक्खु न करेय्य कुहि चि
॥६॥

अकित्तयि चिघटचक्खु
सक्खिधम्मं परिस्सयविनयं ।
पटिपद वदेहि भद ते
पात्तिमोक्ख अथ वाऽपि समाधि॥७॥

चक्खूहि नेव लोलस्स
गामकथाय आवरये सोत्तं ।
रसे च नानुगिञ्जेय्य
न च ममायेथ किञ्चि लोकस्मिं॥८॥

फस्सेन यथा फुट्ठस्स
परिदेवं भिक्खु न करेय्य कुहिं चि ।

या काचि तण्हा अज्झत्तं
तासं विनत्था सदा सतो सिक्खे॥

२ ॥

यं कंचि धम्ममभिजञ्जा
अज्झत्तं वा अपि वद्विद्धा ।
न तेन मानं कुब्बेथ
न हि सा निव्व्युत्ति सतं वुत्ता॥३॥

सेय्यो न तेन मञ्जेय्य
निचेय्यो वा अपि सरिक्खो ।
फुट्ठा अनेकरूपेहि
नो अनुमानं विकप्पयं तिट्ठे ॥४॥

अज्झत्तं एवोपसमे
न अञ्जतो भिक्खु सन्तिमेसेय्य ।
अज्झत्तं उपसन्तस्स
न अत्थि अत्तं कुतो निरत्तं वा॥५॥

मज्झे यथा समुहस्स
उम्मी न जाति ठितो होति ।
एवं ठितो अनेजस्स
उस्सदं भिक्खु न करेय्य ॥६॥
अकित्तयि चिघटचक्खु

परिस्सयविनय सक्खिधम्मं ।
पटिपद वदेहि भद ते
पात्तिमोक्खमथ वा समाधि॥७॥

चक्खूहि नेव लोलोऽस्स
गामकथाय आवरये सोत्तं ।
रसे च नानुगिञ्जेय्य
ममाये न किञ्चि लोकस्मिं ॥८॥

फस्सेन यथा फुट्ठस्स
परिदेवं कुहिं चि भिक्खु न करेय्य ।

भवं च नाभिज्ञप्पेय्य
भेरवेसु च न सपवेधेय्य ॥१॥

अन्नानमथो पानान
खादनीयानमथोऽपिवत्थान ।
लद्धा न सन्निधि कयिरा
न च परित्तसे तानि अलभमानो ॥
१०॥

ज्ञायो न पादलोलस्स
विरमे कुक्कुच्च न प्पमज्जेय ।
अथ आसनेसु सयनेसु
अप्पसहेसु भिक्खु विहरेय्य ॥११॥

निद्द न बहुलीकरेय्य
जागरियं भजेय्य आतापी ।
तन्दि मायं हस्सं खिद्द
मेथुन विप्पजहे सविभूतं ॥१२॥

आयत्थण सुपिनं लक्खण
नो विदहे अथोपि नक्खत्त
विहत्तं च गब्भकरणं
तिक्किच्छ मामको न सेवेय्य ॥१३॥

निन्दाय न प्पवेधेय्य
न उण्णमेय्य पत्तसित्तो भिक्खु
लोभं सद्द मच्छरियेन
कोधं पेसुणिय च पनुदेय्य ॥१४॥

कयविह्वये न तिट्ठेय्य
उपघादं भिक्खु न करेय्य सहि चि
गामे च नाभिमज्जेय्य
लाभकम्म्या जन न लापयेय्य ॥१५॥

न च करियता सिया भिक्खु
न च घासं पयुत्तं भासेय्य
पागदिभयं न सिक्खेय्य
कथं विग्गादिकं न कययेय्य ॥१६॥

भवं च नाभिज्ञप्पेय्य
भेरवेसु उत न संपवेधेय्य ॥१॥

अन्नानि अथ पानानि
घत्थानि अथापि खादनीयानि ।
लद्धा न सन्निधि कयिरा
नो च परित्तसे अलभमानो ॥१०॥

ज्ञायो न पादलोलस्स
विरमे कुक्कुच्च नो पमज्जेय्य ।
अथासनेसु सयनेसु
भिक्खु विहरेय्य अप्पसहेसु ॥११॥

निद्द घघुळ न करेय्य
जागरियमथो भजेय्य आतापी ।
तन्दिं मायं हस्सं गिद्द
विप्पजहे मेथुन च सविभूता ॥१२॥

आयत्थण च सुपिन
च लक्खणमथ न घदेय्य नक्खत्त ।
विहत्तं च गब्भकरणं
च तिक्किच्छ मामको न सेवेय्य ॥१३॥

निन्दाय न पवेधेय्य
न उण्णमेय्य च पत्तसित्तो भिक्खु ।
लोभं सद्द मच्छरियेन
कोधं पेसुणिय च पनुदेय्य ॥१४॥

कयविह्वये न तिट्ठिय
उपघादं कुदि चि भिक्खु न करेय्य ।
गामे च नाभिमज्जेय्य
न लाभकम्मया लापयेय्य जन ॥१५॥

न कथेय्य सिया भिक्खु
घाच नो च पयुत्तो भासेय्य ।
पागदिभयं न सिक्खेय्य
विग्गादिककथं न कययेय्य ॥१६॥

मोसयज्जे न निरयेथ
संपजानो सटानि न कयिरा ।
अय जीयितेन पञ्जाय

सोलव्यतेन नाञ्जमतिमञ्जे ॥१७॥
सुत्वा रुसितो वहुं षाचं

समणानं पुथुवचनानं ।
फरसेन ते न पतिवज्जा

न हि सन्तो पटिसेनिकरोन्ति ॥
१८॥

एतं च धम्ममञ्जाय
विचिनं भिक्खु सदा सतो सिक्खे ।
सन्तीति निव्युत्तिं अत्था
सासने गोतमस्स न प्पमञ्जेया ॥
१९॥

अभिभू हि सो अनभिभूतो
सक्खिधम्मं अनीतिहमदस्सी ।
तस्मा हि तस्स भगवतो
सासने अप्पमत्ती सदा नमस्स-
मनुसिक्खेऽति (भगवात्ति) ॥२०॥

तुवट्टकसुत्तं निट्ठितं

मोसयज्जे न निरयेथ
संपज्जानो सटानि नो कयिरा ।
अय जीयितेन पञ्जाय

सोलव्यतेन न अञ्जमतिमञ्जे ॥१७॥
सुत्वा रुमितो वहुं षाचं

पुथुवचनानं खु समणानं ।
फरसेन ते न पतिवज्जा

सन्तो न करेन्ति पतिसेनिं ॥
१८ ॥

एतं च धम्ममञ्जाय
विचिनं भिक्खू सदा सतो सिक्खे ।
सन्तीति निव्युत्तिं अत्था
सासनेऽथ गोतमस्स न पमञ्जे ॥
१९॥

अभिभू हि सो अनभिभूतो
सक्खिधम्ममथ अनीतिहमदस्सी ।
तस्स तस्मा भगवतो
सासने सदा नमस्समनुसिक्खे ॥
२०॥

सु नि.।४। १४। (52)

उपधानस्सुत्तं ।^३

अहा-सुयं वइस्सामि
जहा से समणे भगवं उट्ठाय ।
संखाए तंति हेमन्ते
अहुणा-पव्वाइए रीइत्था ॥१॥

अय स्सुत्तं वदिस्सामि
समणो भगवं यया स उत्थाय ।
संखातो तंतिं हेमन्ते
रीइत्थाऽभिनघपव्वजितो ॥१॥

३ आचार अने सूयगडना प्रथम धृतस्कंधनां उपधावस्सुत अने इत्थी-
परिभा ए वे अज्जयण असली गाथा किंवा आर्यामां रचायां छे; ए मत

‘नो चेवि’त्रेण घत्थेणं ।
पीडिस्सामि तंस्सि हेमन्ते-
से पारणे आघकहाय ।
पयं खु अणुधम्मियं तस्स ॥२॥

‘चत्तारि सादिप मासे’
घहवे पाण-जाड्यागम्म
अभिदञ्ज कायं विहरिसु
आदसियाणं तत्थ हिंन्सु ॥३॥

संघच्छरं साहियं मासे
जे न रिक्कांसि घत्थयं भगघं ।
अचेलण तओ चाई
तं घोसज्ज घत्थयमणगारे ॥४॥

अदु पोरिसि तिरियभिसि
चक्खुमासज्ज अन्तसो झाइ ।
अह चक्खु-भोय सहिया ने
“हन्ता हन्ता” घहवे कन्दिदसु ॥५॥

सयणेहिं विइमिस्सेहिं
इत्थिओ तत्थ से परिज्जाया;
सागारिय न से सेवे
इत्ति से सयं पवेसिया झाइ ॥६॥

जे के इमे अगारत्था
मोसोभायं पहाय से झाइ
पुट्ठो वि नाभिभासिसु
गच्छइ नाइवत्तई अञ्जू ॥७॥

नो सुकरमेगेसि
नाभिभासे अभियायमोणे

नो चेव घत्थकमिमं ।
पिडिस्सामि तस्मिं हेमन्ते ।
सो पारगो; याघकथं
पवं अनुधम्मिकं तस्स ॥२॥

‘चत्तारो साधिके मासे’
घहवो पाणा व आगम्म ।
अभिदञ्ज कायं विहरिसु
आदसिआ णं अदिसिसु ॥३॥
संघच्छरं साधिकमासे

रिक्कासि न घत्थकं भगघं ।
अचेलको ततो चाई
घत्थं वोसज्ज अनगारो ॥४॥
उत पोरिसि तिरिअभत्ति

चक्खुं आसज्जज्ञाति सो अन्तो ।
अय च च्खुभियसेहिता ते
“हत हत” घहवो अकन्दिदसु ॥५॥
सदन्स्मि वितिमिस्सस्मि

इत्थिओ तत्थ सो परिज्जाय ।
“सागारिकं न सेवे”इत्ति
तत्थ पवेसिय सयं ज्ञाति ॥६॥
जे के इमे अगारत्था;

मिस्सोभायं पहाय सो तेभि ।
पुट्ठो वि नाभिभासित्था;
गच्छति नातिक्कपती अञ्जू ॥७॥
नो सुकरमेकमेकस्स;

अभिभासति नाभियादयन्ते सो ।

विप्रेती चयाने अंगे, ए वने अज्जयण अमिथ गाथामां नदि पण गायानुट्ठुभी
सेसुट्ठि एवा नामे ओट्टरत्तवैला मिथ छंदमां छे तेना समथंगमां, आयू ए
उपधानसुत अही सुद्धरूपमां क्तार्यु छे. ए छंदना वधारणना उपधमां बुवत्थपुत्त
उपरनी, टिप्पणी श्लोकी.

हयपुव्वो तत्थ दण्डेहिं
लूसियपुव्वो अप्प-पुण्णेहिं ॥८॥

फरुसाइं दुत्तिइक्खाइं
अइयच्चे मुणी परक्कमभाणे
आघायनदृगीयाइं
दण्ड-जुञ्जाइं मुट्ठि-जुञ्जाइ ॥९॥

गट्ठिप मिहुं-कहासु
समयम्मि नाइ-सुप विसोपे
अइक्खु;
पयाइं सो उरालाइ
गच्छइ नायपुत्ते असरणाप ॥१०॥

अधि साद्धिप दुवे वासे
सीओदं अभोच्चा निक्खन्ते,
एगत-गए पिहियच्चे

से अभिन्नाय-दसणे सन्ते ॥११॥
पुढविं च आउ कायं
च तैउकायं च वाउकाय च
पणगाइं बीयहरियाइं
तसकायं च सव्वसो नच्चा ॥१२॥

'पयाइं सन्ति' पडिलेद्वे
'वित्तमन्ताइ' से अभिन्नाय ।
परिघज्जियाण विहरित्था
इति संखापे से महावीरे ॥१३॥
'अद्दु थायरा य तसत्ताप

तसजीवा य थावरत्ताप,
अद्दु सव्वजोणिया सत्ता
कम्मणा कप्पिया पुटो घाला ॥१४॥

हत्तपुव्वो तत्थ दण्डेभि
लूसितपुव्वो अपुण्णेभि ॥८॥

परुसानि दुत्तितिक्खानि
अतिपति मुनी परिक्रमन्तो सो ।
आघातनदृगीतानि
दण्डकयुद्धानि मुट्ठियुद्धानि ॥९॥

मित्थो कथासु गथिते
सम विसोके अदक्खु नातिपती ।
एतानि सो उरालानि
च नायको गच्छति असरणाप ॥१०॥

अधि साधिके दुवे मासे
सोतोदमभुञ्ज निक्कन्तो ।
एकत्तगतो पिहइन्वा

सदा अभिञ्जातदस्सणो सन्तो ॥११॥
पुढविं च अपकायं
च तेजकायं च पायुकाय च ।
पणगानि बीअहरितानि

तसकायं चैव सो नत्था ॥१२॥
"एतानि सन्ति" पडिलेद्विअ
चेतनयन्तानि सो अभिन्नाय ।
परिघज्जित्वा विहरित्था

अतिसंखातो महावीरो ॥१३॥
उत्त थायरा तसत्ताप
तसजीवा थावरत्ताप ।
उत्त सव्वयोनिआ सत्ता
कम्मभि पिह कप्पिता घाला ॥१४॥

भगधं च एधमन्नेसी	भगधं च एधमन्नेसी
'सोषधिप हु लुप्पई घाले';	'सोषधिको लुप्पति तु घालो' ।
कम्म च सव्वसो नच्चा	कम्म च सव्वसो नत्था
त पडियाइयखे पावणं भगधं॥१५॥	त पतिआचरुत्त सो भगध ॥१५॥
दुधिहं समेच्च मेहायी	दुधिधं समेच्च किरिय
किरियमक्खाय'णेल्लिस-न्नाणी ।	सो पतिअक्खाति मेधायी ।
आयाणसोयमइघाय-	आयानस्सोतमत्तिपात-
सोय जोगं च सव्वसो नच्चा ॥१६॥	स्सोतं योगं च सव्वसो नत्था ॥१६॥
अइधत्तियमणाउट्टि	अत्तिपातिक अनाकुट्टि
समयन्नेसिं अकरणयाप :	अज्जासी स असरणताप ।
जत्तिस'न्यिओ परिन्नाया	यत्तियत्तिया परिच्छाता
सव्वकम्माधहाओ अइक्खू ॥१७॥	सव्व कम्मं स तमदक्खू ॥१७॥
अद्दा-व्वड न से सेवे	यथावतं न सेवति सो
सव्वसो कम्मणा य अइक्खू ।	दक्खू कम्मेण सव्वसो वन्धं ।
ज किञ्चि पावण, भगध	य किञ्चि पापक भगध
तं अकुव्व वियड भुज्जित्था ॥१८॥	तं भुज्जित्थ विकतमकुव्वं ॥१८॥
नासेवई घ परघत्थ,	नो सेवते स परघत्थ
पर-पाप वि से न भुज्जित्था.	परपत्तं सो न भुज्जित्था ।
परिघज्जियाण ओमाण	परिघज्जिय ओमाण
गच्छइ संखडि असरणाय ॥१९॥	नैखडिमेति असरणताप ॥१९॥
मायन्ने असणपाणस्स	मत्तज्जोऽसतपाणस्स
नाणुगिद्धे रसेमु अपडिन्ने,	अनुगिद्धो नो रसस्स अपरिज्जो ।
अच्छि पि नो पमज्जिया,	अक्खिं वि नो पमज्जित्था
नो वि य कण्हयप मुणी गाय ॥२०॥	नाधि घ कण्हयते गत्त ॥२०॥
अप्पं तिरियं पेहाप	अप्पं तिरियं पेक्खाय
अप्पं पिट्ठओ व पेहाप	अप्पं अधि पिट्ठतो अ पेक्खाय ।

अप्पं बुद्धप पडिभाणी

अप्पपत्तिभाणी बुद्धितो

पन्थ-पेहि चरे जयमाणे ॥२५॥
सिसिरंति अद्ध-पडिघन्ने
तं वोसज्ज वत्थमणगारे
पसारित्तु वाहूँ परक्कमे

पथपेक्खी सो अ चरति जयमाणो ॥२५॥
सिसिरेऽद्धपटिपन्ने
वत्थं वोसज्ज अनगारो ।
पसारिय परिक्कमति

नो अवलंघियाण खन्धंसि ॥२२॥

वाहू नोऽलम्बित्तु खन्धस्मिं ॥२२॥
एसो विधी अनुक्कन्तो
माहणेन मतिमता ।
बहुसो अपरिञ्जेन
एवं रिय्यत्तु भगवता ॥२३॥

एस विधी अणुक्कन्तो

माहणेण मईमया

बहुसो अपडिन्नेणं

भगवया एवं रीयन्ते—त्ति वैमि

इतिउपधानस्सुते पढमो उहेसो ।

चरियासणाइं सेज्जाभो

सदनासणानि चरियाप

पगइयाओ जाओ बुइयाओ

आइक्ख ताइं सयणासणाइं
जाइ सेवित्तय से महाघोरे ॥१॥

यानि सु एकाकिकानि बुद्धितानि
आचक्खे अथ एतानि
तानि असेवित्तय सो महाघोरो ॥१॥

आघेसण-सभा-पवासु

पणिय-सालासु पगया घासो

अदु वा पलिय-ट्टाणेसु

पलाल पुज्जेसु पगया घासो ॥२॥

आगन्तारे आरामागारे

नगरे वि पगया घासो,

सुसाने सुन्नगारे वा
रक्खमूले वि पगया घासो ॥३॥

पलालपुज्जे च एकदा घासो ॥२॥
आगन्तगारे आरामे
आगारस्मिं उत वा नगरे ।

सुसाने सुन्नागारे वा
मूले रक्खस्स एकदा घासो ॥३॥
मुनी एतेसु सद्दनेसु

पएहि मुणी सयणेहिं

समणे आसि प-तेलस वासे;

राइंदियं पि जयमाणे

अप्पमत्ते समाहिते झाइ; ॥४॥

निहं पि नो पगामाप
सेवइ य ममयं उट्ठाप;

समणो आसि य पतेरसे वस्से ।
रत्तिदियं जयमाणो
समाहितो अप्पमत्तो च ॥४॥
पकामतो वि नो निहं
भगयं सेवित्तय उत्थाप ।

जग्गावई य अत्पाणं ।
 ईसिं साइयासी अपडिन्ने ॥५॥
 सम्युद्धमाणे पुनरायि
 आसिंसु भगवं उट्टाप
 निक्खम्म एगया राओ
 धदिं चंफमिया मुहुत्तागं ॥ ६ ॥
 सयणेहिं तस्सुपसग्गा

भोमा आसी अणेग रूया य,
 संसत्पणा य जे पाणा
 अदु धा पक्खिणो उदधरन्ति ॥६॥

अदु कुचरा उदधरन्ति

गामरक्खा य सत्तिहत्था य,
 अदु गामिया उधसग्गा
 इत्थो एगइया पुरिसो धा ॥८॥

इह-लोइयाइ परलोइयाइ
 मीभाइ अणेगरूयाइ,
 अदिमव सुि दुब्धि-गन्धाइ
 सदाइ अणेगरू-धाइ ॥ ९ ॥

अहियासप सया सभिय

फासाइ विरूय-रूमाइ,

अरइ रइ च अभिमूय

रीयई माहणे अवहु-घाई ॥१०॥

सयणेहिं तत्थ पुच्छिंसु
 धग-वरा धि एगया राओ,
 अव्याहिप फसाइत्था

पेहमाणे समाहिं अपडिन्ने ॥११॥

जागरापेति^१ अत्ताणं
 ईसिं ध असइत्थ अ परि^०ज्ज ॥५॥
 संयुद्धमानो भगवं
 पुनरयि आसित्थ उट्टयाप ।
 निक्खम्म एअदा रत्तो
 चङ्गमिय धदिं मुहुत्तेकं ॥६॥
 स^१दनेसु तस्सुपसग्गा

भोमा आसी अनेकरूपा ध ।
 ससत्पणा तत्थ पाणा
 उत धा तं पक्खिणो अपधरन्ति ॥७॥

ऊत^१ अपधरन्ति कुचरा
^१ ^१

गामारक्खा ध सत्तिहत्था णं ।
 उत^१ गामिका उपसग्गा

इत्थो एकाकिंका ध पुरिसो धा ॥८॥
 पारलोकिकेहिं कानि
 सत्तानि अनेकरूपाणि ।
 सुरद्धमसुरभिणो गन्धे

स^१इ भोमे अनेके च ॥ ९ ॥

अधिआसते सदा स^१मितो
^१ ^१

भगव फटते विरूपे च ।

अरति रति चाभिमूय
^१

रीइत्थ ध माहणो अवहुधादी ॥१०॥
 तत्थापुच्छिंसु स^१दनत्तिं

एकचरा एकदा रत्तो ।
 अव्याहिते वसाइंसु
 अव्येकखमाने सभाधिमपत्तिञ्जे ॥

“अयमन्तरस्ति; कौं पत्य ?”

“अहमस्ति” ति ‘मिक्खु’ आहट्ट
अयमुत्तमे सँ धम्मो
तुसिणीपँ स कसाइप झाइ ॥१२॥

जंसि प्पेगे पवेवन्ति
सिसिरे मारुप पवायन्ते ।
तस्सि प्पेगे अणगारा
हिमवाप निचायमेसन्ति : ॥१३॥

“सघाडीओ पविसिस्सामो
पहा य समादहमाणा
पिहिया वा सक्खामो
अइदुक्खे हिमग संफासा ॥१४॥

तस्सि भगव अपडिन्ने
अहँ-वियडे अहियासप दविष्,
निक्खम्म पगया राओ
चापइ भगव समियाप ॥१५॥

पस विही अणुक्कन्तो
माहणेण मइमया ।
बहुसो अपडिन्नेजं
भगवया एव रीयन्ते-त्ति

वेमि।

तण-फास सीयफासे य
तेओफासे य दसमसप य
अहियासप सया समिप

फासाइ विरूवरूयाइ ॥१॥
अह दुच्चर-लाढ अचारी
घज्जभूमि च सुब्भभूमि च ।

अयमन्तरस्तिं को पत्य

अहमस्मिऽति मिक्खु आचट्ट ।
अयमुत्तमो से धम्मो
तुसिणीको सोऽपसाइतो ज्ञाति ॥१२॥

यस्मिं पके पवेपन्ते
सिसिरे भरुते पवामाणे ।
यस्मिं पके अनगारा
नियातमेसन्ति हिमवाते ॥१३॥

सघाडिं पविमिस्सामो
सम्मं पहेण दहमाणा ।
पिहिता उत सक्कामो
अतिदुक्खे हि हिमसंपाते ॥१४॥

तस्मिं भगवं अपतिञ्जू
दमितो अधिभासतेऽविकतो ।
निक्कम्म एकदा रसो
भगवं चायति स सम्मत्त ॥१५॥

पसो विधी अनुक्कन्तो
माहणेन मतिमता ।
बहुसो अ पतिञ्जेन
एव रियतु भगवता ॥१६॥

इति उपधानस्सुते दुतीयो उद्देशो।

तणप्फस्से सीतफस्से
तेजप्फस्से च दंसमसके च ।
अधिभासते सदा समितो

फस्से च विरूपरूपे सो ॥१॥
अचारी दुच्चरं राढं
घज्जभूमिमथ च सुब्भभूमिं च ।

पन्त सेजं सेधिसु
 आसणगाइ चय पन्ताइं ॥२॥
 लादेहि तस्सुपसग्गा
 बहवेः जाणवया लूसिंसु ।
 अह लुअएदेमिप भत्ते,
 उअकुरा तत्थ दिसिसु निधइसु ॥
 ३ ॥

अप्पे जणे निघारेइ
 लूसणप सुणप डसमाणे,
 'लुअकुरा' फारेन्ति आहन्तु
 "समण उअकुरा डसन्तु" ति ॥५॥
 एदिअए जणे भुअओ
 बहवे बज्ज-भूमि परसात्तो,
 लट्ठि गहाय नालीयं
 समणा तत्थ एव विहरिसु, ॥२॥
 एव पि तत्थ विहरन्ता

पुट्ट-पुव्वा अहेसि सुणपहि,
 सलुअमाणा सुणपदिं
 दुअरगाणि तत्थ लादेहिं ॥६॥
 निहाय दण्डं पाणेहिं
 त कायं योसज्जेमणगारे ।
 अह गामकण्टप भगव

ते अधियासए अभिसमेव्वा ॥७॥
 'नाओ' संगाम-सीसे घ
 पारए तत्थ से महाघोरे ।
 एव पि तत्थ लादेहिं
 अलद्ध-पुव्वो वि एगया नामो ॥८॥
 उअसंकमन्तमपडिन्नं

पन्तं सेर्यं अलेधित्य
 आसनानि चय पन्तानि ॥२॥
 राढस्मिं तस्सुपसग्गा
 बहवोऽलूमिंसु जानपदा ।
 अथ अएदेसिकं भत्तं
 उअकुरका तं अहिंसिसु ॥३॥

अप्पा जना न थारंति
 दसमाने रोसणे सुनके ।
 लुअअलुअऽत्ति पुअन्ति
 समणं सुनका दसन्तुऽत्ति ॥५॥
 एदिअओ जना भुअओ
 बज्जभूमिप च पारस्सो ।
 लट्ठिं गहाय नालीकं
 समणमहिसिसु ते तत्थ ॥२॥
 एव पि तत्थ विहरन्तो

पुट्टा पुव्वं अहेसि सुनकेभि ।
 सलुअमाणा समणा
 दुअरकस्मिं खु राढस्मिं ॥ ६॥
 निहाय दण्डं पाणेसु
 कायं योसठ्ठ अनगारो ।
 अथ गामकण्टके भगव

ते अधिभासति अभिसमेत्वा ॥७॥
 नागो संगामसिस्से वा
 पारगतो सो महाघोरो ।
 एव पि तेन राढस्मि
 अलद्धपुव्वो च एकदा नामो ॥८॥
 उअसंकमन्तमपडिज्जं

गामन्तिकं पि अप्पत्तं
पडिनिक्खमित्तु लूसिसु
“पयाओ परं पलेदि !”त्ति ॥९॥

हय-पुण्यो तत्थ दण्डेणं

अदु वा मुट्ठिणा अदु फलेणं ।
अदु लेहुणा कपालेण

“ हन्ता हन्ता ” वहधे कन्दिदु ॥
१० ॥

मंसूणि छिन्न-पुण्वाहं,
ओट्टभियाप पंगया कायं
परिस्सहाइ लुञ्चिसु

अदु वा पंसुणा उवकरिंसु, ॥११॥
उच्चालइय निहाणंसु
अदु वा आसणाओ खलइंसु-
चोसट्ट-काएँ पणयासी

दुक्ख-सहे भगवं अपडिन्ने ॥१२॥

सुरो संगामसीसे व
संबुडे तत्थ से महावीरे
पडिसेवमाणी फरुसाहं

अचले भगवं रीइत्या ॥१३॥

पस विही अणुक्कन्तो
माहणेण मइमया ।
वहसोअपडिन्नेणं
भगवधया एवं रीयन्ते-त्ति

वेमि

ओमोयरियं चापहं
अपुट्टे वि भगवं रोगेहिं;

पत्तं गामन्तिकं पि अप्पत्तं ।
निक्कमित्वा अलूसिसु
परमेत्तमा पलेदिऽत्ति ॥ ९ ॥

हतपुण्यो तत्थ दण्डेन

उत वा फलकेन मुट्ठिजा उत वा ।
उत लेहुना कपालेन

“ हत हत ” वहधो अकन्दिदु ॥
१० ॥

मंसूनि तेभि छिन्नानि
कायमेकदा अवट्टभिय ।
परिस्सहेण अ लुञ्चिसु

अवाकिरिंसु उत पंसूभि ॥११॥
उच्चालिय अहनिंसु
उत वा ते आसना तमसलंसु ।
घोसट्टकायो पुनरासी

भगवं सहते व दुक्खमपतिञ्जू ॥१२

सुरो संगामसिस्सेवा
संबुत्तो तत्थ सो महावीरो ।
परिसेवमानी परुसानि

भगवं खु अचेलको अरोइत्थ ॥१३॥

पसो विही अणुक्कन्तो
माहणेन मतिमता ।
वहुसो अपतिञ्जेन
पय रिय्यतु भगवता ॥ १४ ॥

इति उपधानस्सुते ततीयो उहेसो ॥

अधमोदरिकं भगर्यं
चायति रोगेभि अप्पुट्टो ।

पृष्ठो य से अपृष्ठो वा ।
नो से साइज्जइ तेइच्छ ॥१॥
ससोदण च घमणं च

गायधमण सिणाणं च
संवाहण न से कप्पे
दन्तपक्खालण परिन्नाप ॥२॥

धिरए य गाम-धम्मेहि
रोयइ माहणे अयहु-चाइं,
सिसिरम्भि पगया भगव

छायाए झाइ भासो य ॥ ३ ॥

आवावइ य गिम्हाणं
अच्छइ उक्कुटुए अभितावे ।
अदु जाघइत्य लूट्टेणं
ओयण-मन्थु-कुम्मासेण ॥४॥
पयाणि तिण्णि पडिसेवे
अट्टमासे च जाघए भगव
अपिइत्य पगया भगव
अद्धमास अदु धा मासं पि ॥५॥
अपि साधिप दुवे मासे

छप्पि मासे अदु धा अपिपित्या,
राओघिराय अपडिन्ने
अन्न गिलायमेगया भुञ्जे ॥६॥
छट्टेणमेगया भुञ्जे

अदु धा अट्टमेण वसयेण
दुवालसयेण पगया भुञ्जे
पेहमाणे सामाहिं अपडिन्ने ॥७॥
नद्याण से महाधीरे
नो पि य पायग सयमकासी ।

पुट्टो उत अपुट्टो वा
नो आसाइय्यते तिकिच्छ ॥१॥
संसोधनं च घमणं च

गसत्थमं सिनानं च ।
संवाहनं न कप्पेति
दन्तपक्खालन परिञ्जातो ॥२॥

धिरतो च गामधम्मेभि
रोयते स माहणो अयहुयादी ।
एकदा सिसिरे भगधं

छायाए ज्ञाति आसित्था ॥३॥
आयाते अय गित्तिस्मिं
आसते स उक्कटे तापे ।
उत यापइत्य लूट्टेण ।

ओदनकुम्मासमंधूभि ॥ ४ ॥
सेयते तिण्णि एतानि
अट्टा मासे च सो भगधं ।
अपीत्या एकदा अद्धं
मास उत एकमासमपि ॥५॥
अपि साधिके तिण्णि मासे

छप्पि च मासे उत अपीत्या ।
रत्तो रत्तो अघरिञ्जू
स मिलानं भुञ्जते अन्नं ॥ ६ ॥
छट्टेण एकदा उत धा

स भुञ्जते अट्टमेण वसयेण ।
दुवादसेन उत धा
अवेक्खमाणो समाधिमपरिञ्जू ॥७॥
नद्याण सो महाधीरो
नापि च पापं सयमकासी ।

अन्नेहिं धी न कारेत्या
कीरन्तं पि नाणुजाणित्या ॥८॥
गामं पविस्स नगरं घा

घासमेसे कडं परट्ठाप ।
सुचिसुद्धमेसिया भगवं

आयय-जीगयापं सेवित्या ॥९॥
अदु वायसा दिगिच्छन्ता,

जे अन्ने रसेसिणो सत्ता
घासेसणापं चिट्ठन्ते
सययं निवइए य पेहाप ॥१०॥

अद माहणं च समणं घा

गामपिण्डोलगं व अइहीं वा ।
सोवागो मूसियारिं घा
कुक्कुरं वा विविहं ठिय पुरओ, ॥
११ ॥

चित्तिच्छेयं वज्जन्तो
तेसंपत्तियं परिहरन्तो
मन्दं परिक्रमे भगवं,

अहिंसमाणो घासमेसित्या ॥१२॥
अवि सुइयं च सुक्कं वा
सीय-पिण्ड पुराण-कुम्भासं
अदु वोक्कसं पुलाग वा
लद्धे पिण्डे अलद्धए दविप ॥१३॥
अधि शाइ से महाधीरे
आसत्थे अकुक्कए शाणे,
उड्डं अहे य तिरिय च
लोपं शायइ समाधिमपडिन्ने ॥१४॥

अज्जेभि धिं न कारेत्य
कीरन्तं नानुजाणित्य ॥ ८ ॥

गामं पविस्स नगरं घा

घासं एसति कतं परत्थं ।
विसुद्धिमेनित्वा भगवं

आगतयोगा च सेवित्य ॥ ९ ॥
उत्त वायसा जिघिच्छन्ति

अज्जे च रसेसिणो सत्ता ।
घासेसणाए तिट्ठन्ति
निवत्तते तेसिं पेक्खाए ॥१०॥

उत्त माहणो समणो वा
अतिथी पिण्डोलगो उत्त वा ।
सोवागो मुसकारी वा
तिट्ठति घा कुक्कुरो पुरतो ॥
११ ॥

चित्तिच्छेदं वज्जयन्तो
तेसि अप्पीतिक परिहरन्तो ।
मन्दं परिक्रमइ भगवं

अहिंसनो घासमेसित्य ॥१२॥
सूमिकं वापि सुक्क वा
सीतं पिण्ड पुराणकुम्भासं ।
उत्त वक्कसं पुलाकं वा
दमितो लद्धा अलद्धा च ॥१३॥

अधि ज्ञाति सो महाधीरो
अकोक्कओ ज्ञानमासत्थो ।
उध्ध अथापि तिरिय
लोके ज्ञाति स समाधिमपतिञ्जु ॥
१४ ॥

अकासी, विगय-नेही य, ...
 सह-रूपेसु अमुच्छिप हाइ, ...
 छउमत्यो वि परकममाणे
 न पमायं सहं पि कुब्धित्या ॥१५॥

सयमेव अभिसमागम्म
 आयय-जोगमाय-सोहीप
 अभिनिव्युटे अमाइल्ले
 आवकहं भगयं समियासी ॥१६॥
 एस विही अणुफन्तो
 माहणेन मईमया ।
 घहुसो अपडिघेणं
 भनयया पर्यं रीयन्ते ॥-त्ति
 वेमि॥

अकासि विगतगिद्धी, च .
 सहं रूपे अमुच्छितो हाति ।
 परकमन्तो छउमत्यो
 सयं पमादं न कुब्धित्या ॥१५॥

सयं अभिसमागम्म
 अत्तसोधिते स अत्तयोगं च ।
 अभिनिव्युतो अमाइल्लो
 यावकयं चेष समियासी ॥१६॥
 एसो विधी अनुफन्तो
 माहणेन मतिमता ।
 घहुसो अपडिघेण
 पर्यं रिय्यत्तु भगयता ॥ १७ ॥
 इति उपधानस्सुते चतुत्थो उहेसो ।^४

४ चोधा दृष्टिपातना प्रस्तुत परिशिष्टमा आपेला कोकालियसुत्त, तुवटकसुत्त
 अने उपधानस्सुतना ऊताराओमां अग्रिम प्राकृतनो मागधी बोलीनी ज्ञासी कराववानो
 आ प्राथमिक प्रयास छे. सुत्तनिपातमानां सुत्तनो मुद्रित परंपरागत पाठ पर्युसन
 कालेजना पाठिना प्रॉफेसर पी. वी. वापट एम. ए. ना सुत्तनिपातोमाधी लीधो छे;
 अने अंगना आचार उपधानस्सुतनो मुद्रित परंपरागत पाठ पूतानी जैनसाहित्य-
 संशोधक समितिए बहार पाठेला आचाराङ्गप्रम (प्रथम भुतस्कन्धः)मांभी
 कृतार्यो छे.

पद्यरचनानी ऐतिहासिक आलोचना

दृष्टिपात ५

काव्यकाल

१ इसवी सन पूर्वे पांचमा शतकना धुरंधर धर्मस्थापकोए जे भापाने पद्यात्मक साहित्यनी दिशामां अग्रवेग^१ आय्यो, ते तरफ चोथा दृष्टिपातमां आपणूं ध्यान रोकयूं हतूं. ते अवसरे छेवट छेवटमां एक टूंकी नेांध लीधी हती, ते ए के सुत्तकाल द्वैभाषिक हतो. बुद्ध अने महावीरे अग्रिम प्राकृतमां धर्मघोषणा गजावी हती; ए ज भाषा सुत्तकालनी लोकभाषा हती; ए ज सिद्धार्थ अने वर्धमाननी जन्मभाषा हती. ते काळे^२ विनयननी भाषा धीजी हती. पारंपरिक शिष्ट साहित्य ए भाषामां रचातूं हतूं. केळवायला नागरिक ए ज भाषा बोलता हता. पौराण संस्कृतनी^३ उत्क्रान्तिना वे फांटा, अग्रिम प्राकृत अने समकालीन संस्कृत. बीजा फांटानी भाषाने हूं अंतःपाती संस्कृत नाम आपूं छूं. जूनामां जूनां श्रौत अने गृह्य सूत्रो, कात्यायननां वार्तिक अने व्याडिनो लक्षपूर संग्रह ए भाषामां हतां. पठनपाठन उच्छिन्न थई पाणिनिना वंशजनी संग्रह नाश पाम्यो छे, लांबा समयथी नाश पाम्यो छे. अंतःपाती संस्कृतनूं जे स्वल्प साहित्य उत्तरी आव्यूं छे, ते बहुधा गचमां छे; पद्यात्मक साहित्य विनाशने वश थयूं छे. इसवी सन पूर्वे चोथूं पांचमूं अने छठूं, ए त्रण शतकमां इसवी सन पछीना त्रीजा चोथा अने पांचमा शतकनी पेटे संस्कृत साहित्यनी प्रवाह त्रुटित छे. छतां चतुर्दश नष्ट जैन पूर्वनी अने मध्य एशिआना रणमां दटायलां शहेरोमांथी मळी आवेला महायानी त्रिपिटकना खंडोनो विचार करिये छिये, त्यारे स्वीकार्या विना रहेवातूं नथी के

१ Initial velocity.

२ Culture.

३ Evolution.

અંતઃપાતી સંસ્કૃતનું પરિવલ્લ સમકાલીન અગ્રિમ પ્રાકૃતના ઊંટલું જ હોયું જોઈએ અને તેની પ્રતિષ્ઠા પણ એ પ્રાકૃતના જેવી જ હોવી જોઈએ. 'પટલું પરિવલ્લ અને એવી પ્રતિષ્ઠા ધરાવતી ભાષાના સાહિત્યનો વેલો ધાગલ વધવા અને ફાલવા ન પામે એ અસંભવિત છે. ગાદીપતિ અલ્પાયુ નીવડે એ વને; પરંતુ ગાદીનું નસંતાન ન જાય. પ્રજાના જીવન સાથે સજીવન રહેતો પદ્ય-પ્રવાહ તો વહ્યા જ કરે, આ કથનનું સ્વલ્લ સમર્થન હસવી સન પૂર્વે ચોથા અને ત્રીજા શતકના સંધિકાલના નાટકકારની વૃત્તિના એક ન્હાના સરસા ઊતારાથી થાય છે. ભરતનાટ્યશાસ્ત્ર ઉપરની અપિનવભારતી ટીકામાં વિદ્વદ્વર્ય ઇમિનઘણુ નાટ્યાચિન્તના દષ્ટાંત તરીકે મહાકવિ સુવંધુવિરચિત 'વાસવદત્તાનાટ્યધારાનું' નામ છે છે અને તેમાંથી નીચે આપેલો ભાગ ઊતારે છે^૫.

સુત્રધારઃ ।

----- તવ સુચરિતૈરેવ જયતિ ॥

ઉદ્યનઃ (વાસવદત્તાવેષિતે સામાજિકીભૂતાઃ) કુતો મમ સુચરિતાનિ ।

સાધમ્ ।

एह्यम्ब किं कटकपिङ्गलपालकैरतै-

मुक्तोऽहमप्युदयनः परिपालनीयः ।

यौगन्धरायण, ममानय राजपुत्रीं

हा हर्षरक्षित गतस्त्वमसि कृतावत् ॥ ?

મિનુસારઃ (પ્રયોજ્યવસ્તુકે ઉદ્યનચરિતે સામાજિકીભૂતાઃ) ઘન્યા સ્વલ્લ સા યામેય પ્રલાપૈરનુદ્ગોચતિ ।

૪ નાટ્ય-સર્વેષામાં વાસવદત્તાનાટ્યધારા નામ સુદિત છે, તે વાસવ-દત્તાનાટ્યધારા સંભવે છે.

૫ જુઓ મના.શા. । ૨૨ । ૪૬-૪૭ । ઉપરની ટીકા. આથી આપેલા ઊતારાની નાટ્યસૂચિમા મેં સ્પષ્ટતાની રાતર ટીકાને આધારે જૂઝ ઊમેરો કર્યો છે અને ધીજી લક્ષિતો સુદિત પાઠ પૂરો કરી લીધો છે.

प्रतीहारी (आत्मगतम्) अगिहिदपरमत्थं अभिलपदि खु देवो ।

[अष्टहीतपरमार्थमभिलपति खलु देवः]

अभिनवभारतीकारे आपेला उपरना ऊतारामां विंदुसार राजानो उल्लेख कयों छे. ए नामनो राज्यकर्ता इतिहासमां अने लोककथामां एक ज जाणीतो छे, मौर्य चंद्रगुप्तनो पुत्र^६. परिशिष्टपर्वमां हेमाचार्ये ते द्वितीय मौर्य सार्वभौम राजाना अमात्य तरीके सुबंधुना निर्देश कयों छे. तेना उपर कोइ कारणथी एक वखत राजानी इतराजी थतां तेने कारागृह सेववूं पड्यूं हतूं. एवामां पूर्वे नरेश्वरनी आज्ञाथी रचेळं वासवदत्तानाट्यधारा नाटक राज-भवननी नाटकशाळांमां विंदुसार समक्ष भजवायूं; तेनी रचनाथी प्रसन्न थई राजाए बंदीघान नाटककारने बंधनमुक्त कयों, एटलुं ज नहि पण तेना उपर साहित्यरसिक नरेश्वरनो अढळक प्रेम ढळ्यो^७. उक्त वासवदत्तानाट्यधारा-ना प्रयोग समये एटलेके इसवी सन पूर्वेंना चोथा अने त्रीजा शतकना संधिमां पद्यरचनाए कई दिशामां केटली प्रगति करी हती, तेनो विस्मयकारक पूरावो अभिनवगुप्तनूं प्रस्तुत अवतरण पूरो पाडे छे. एनी पहेली वे उक्तिमां पद्यबंधनो प्रयोग छे. ते पैकी पहेलो छंद त्रुटित छे; अने बीजो आखो ए

६ जुओ प.प.।८।४४६। जुओ बळी भ.नाशा. । १८।-।

उपरनी अभिनवभारतीमांनूं नीचेनूं अवतरण :-अनया त्वार्यथा चन्द्रगुप्तविन्दु-सारादयोऽपि संगृह्यन्ते इति । एमां चंद्रगुप्त साये विन्दुसारनो उल्लेख छे, एटले राजा विन्दुसार मौर्यवंशी संभवे छे. अवतरणमां जेनो निर्देश कयों छे, ते आर्या कदाच वासवदत्तानाट्यधारांमांथी लीधी होय.

७ जुओ दंडी कविनी अथन्तिसुन्दरी कयाना उपोद्घातमांनो नीचे आपेले श्लोकः—सुबन्धुः किल निष्क्रान्तो विन्दुसारस्य बन्धनात् । तस्यैव हृदयं वदध्वाव(न्तिक्रान्ताट्यधारया)॥ संस्कृतमां वासवदत्ता नामे गद्यवार्ता छे, तेनो कर्ता सुबंधु वासवदत्तानाट्यधाराकार सुबंधुथी गिन छे. केमके क्रांतानी नायिक कल्पित छे; नाटकनी ऐतिहासिक छे. वार्ता घणूं करीने गुप्तवंशना बीजा चंद्रगुप्त विष्णुमादित्यना मरणोत्तर रचाई हती; नाटक मौर्य विंदुसार अभिनवघातना समक्ष भजवायूं हतूं. वे बच्चे सातसें वर्षेनो गळ्यो छे. वदध्वा पछी [आ]वन्तिकानाट्य-धारया पाठ कल्पित छे.

ઉપલબ્ધ છે. આ વીજો ઇંદ, તે જન્મકાઢથી લોકપ્રિય નીચડેલો વસંત-તિલકા છે. તેનો પ્રયોગ સૂચવે છે કે સુવંધુવિન્દુસારના સમયમાં ચૌદ રૂપના શકરી વર્ગના ઇંદો જાણવામાં હતા અને લોમપ્રતિલોમાત્મક રૂપસંવાદ પળ સિદ્ધ થયો હતો. પહેલી ડક્તિ સંહિત ઇત્તાં પચવંધ તરત ઓઢસ્વાય ઇવો છે. ઇનો વચેલો ભાગ શિસ્તરિણી ઇંદના ચરણનો ઉત્તર સંડ છે. તે જણાવે છે કે ડક્ત કાઢે અતિશક્તરી વર્ગ અને અષ્ટિવર્ગ વટાવી રૂપરચના સત્તર રૂપના અત્યષ્ટિ વર્ગ સૂધી પળ પ્હોચી ગઈ હતી. કલાવિધાનમાં મધ્ય યત્તિનો પ્રયોગ પળ તે કાઢે સિદ્ધ થયો હતો. સંભવ છે કે મધ્ય યત્તિ રાહત સત્તર રૂપના પૃથ્વી ઇંદનો પળ તે કાઢે પ્રચાર હશે; અને શાર્દૂલવિક્રી-હિત^૮ તથા કદાચ સ્ત્રગ્ધરા પળ અજાણ્યા નહિ હોય. તે કાઢે ગાથા કિંવા ધાર્યા ઇંદ પ્રાકૃતમાં થઈ સંસ્કૃતમાં પ્રસાર પામી પૂક્યો હતો^{૧૦}. આ રીતે અંતઃપાતી સંસ્કૃતના ગાઢાનું પથાત્મક સાહિત્ય નાશ પાગ્યું છે સ્વરૂં, તથાપિ રૂપપ્રવાહ અને માત્રાપ્રવાહ તો પ્રગતિ સાધતા જ રહ્યા છે, તે ધ્રુવિત નથી થયા, ઇ સ્પષ્ટ છે.

૨ અંતઃપાતી સંસ્કૃતના અદ્દ્ય થયેલા પચપ્રવાહ ઉત્તર કાઢમાં સુપુષ્ટ સ્વરૂપે વહે છે અને સાહિત્યના ઉપવનમાં અમૃત સીંચે છે. પ્રસ્તુત સાહિત્ય

૮ જુઓ નીચેની ટિપ્પણીનું ઉદાહરણ અને તે ઉપરની નોંધ.

૯ જુઓ ધામનકૃત કાવ્યાલંકારસૂત્રધૃતિમાનો નીચેનો ઉત્તારો:—“સામિ-પ્રાયત્વં યથા

સોડ્ય સંપ્રતિ ચન્દ્રગુપ્તતનયઞ્ચન્દ્રપ્રકાશો ધુષા

જાતો ભૂપતિરાશ્રયઃ કૃતધિયાં દિષ્ટ્યા કૃતાયંધ્રમઃ ।

આધ્રયઃ કૃતધિયામિત્યસ્ય સુવંધુસાચિવ્યોપશેપતયા સામિપ્રાયત્વમ્ ।’ પ્રસ્તુત પચમાં કૃતાધિયા પદે કરીને પ્રધાનપણે મહાકવિ સુવંધુ લક્ષિત છે. ઇનો ધમ વિન્દુસારે કૃતાર્થ કર્યો તે, નાટકથી પ્રસન્ન થઈ ઇને વન્ધનમુક્ત કર્યો, તે વડે. અવતરણમાંનું શ્લોકાર્થ ધાસઘદત્તાનાટ્યધારામાંથી સીધું છે ઇમ મને માસે છે. ચરણો શાર્દૂલવિક્રીહિતનાં હોવાથી ઇ હદ મેં સુવંધુવિન્દુસારના સમયમાં જાણીતો કર્યો છે.

૧૦ જુઓ ટિપ્પણી ૬.

મોટે ભાગે કાવ્યપ્રધાન છે, તે કારણથી એ ઉત્તર કાલને આ વ્યાખ્યાનમાં કાવ્યકાલ નામ આપ્યું છે. ઇસવી સન પૂર્વે ત્રીજા શતકથી આરંભીને ઇસવી આરમા શતક સૂઢીનાં પંદરસેં વર્ષનું તેમાં ગ્રંહણ થાય છે. એ અતિદીર્ઘ કાલનું સાહિત્ય પળ અતિવિપુલ છે. તેના ઓવારાની પરંપરાના કેટલાક પરચાર સંહિત છે. પળ તેથી પદ્યપ્રવાહના અસંહિત દર્શનમાં વાંધો આવતો નથી. ઉપલબ્ધ પદ્યાત્મક સાહિત્યમાં તે પ્રવાહ અતૂટ અને અસ્થલિત વહેતો નજરે પડે છે. પદ્યરચનાનાં વે પાસાં જે કલા અને સર્ગશક્તિ, એ ઉભયનો આ સમયના કાવ્યસાહિત્યમાં સુસ્પષ્ટ સાક્ષાત્કાર થાય છે. સંવાદનાં નવાં તત્ત્વો શોધી કઢાય છે, વર્ણની અને રૂપની વ્યંજકતા પરસી સાહિત્ય સંગીતની મૈત્રી સાધે છે, નાદ તથા વાળીનું પાળિગ્રહણ થાય છે અને મોટેરાંના આશી- વાદિ ઉક્ત શુભ લગ્નથી લયવંચ જનમે છે. કાવ્યકાલ આ રીતે, નવાનવા પદ્યવંચ અને નવી પદ્યરચના, એ ઉભયની ઉત્પતિ વિશે વહુવહુ જાળવાનું, પૂરું પાડે છે.

૩ મુત્તકાલની પેઠે કાવ્યકાલમાં પળ સાહિત્યના પ્રદેશમાં અનેક ભાપાનો પ્રચાર દાદગોચર થાય છે. પહેલાં સાત શતકમાં સંસ્કૃતમાં તેમ જ પ્રાકૃતમાં કાવ્યનાટક રચાય છે, અને તે પછીનાં શતકોમાં અપભ્રંશને પળ સાહિત્યની ભાપાની પંક્તિમાં સ્થાન મળે છે. સંસ્કૃતનો પ્રયોગ વૈનયિક ભાપા તરીકે ચાલુ રહ્યો હતો; તેની સાથે અગ્રિમ પ્રાકૃત ઉત્ક્રાંતિ પામી કાવ્યકાલનું પ્રાકૃત બન્યું હતું. એ ઉત્તર પ્રાકૃત જનતા સમસ્તની જન્મ- ભાપા અને આમવર્ગની વ્યવહારુ ભાપા હતી. પ્રસ્તુત લોકભાપાને આપણે અંતિમ પ્રાકૃત નામ આપીશું. પ્રાકૃતપ્રકાશમાં જેનું વ્યાકરણ વરરુચિ રચે છે તે માગધી, શૌરસેની, પૈશાચી અને મહારાષ્ટ્રી આ અંતિમ પ્રાકૃતની મિત્ર દેશમાં અને મિત્ર ^{૧૧}માનવજાતિમાં પ્રસ્તુતકાલે વોલાતી વોલીઓ છે. મગધ ગુરસેન અને મહારાષ્ટ્રની વ્યવહારુ લોકવાળી તે અનુક્રમે માગધી, શૌરસેની

૧૧ માનવજાતિ=Ethnic stock; race.

अने महाराष्ट्री कहेवाई; अने आटविक ^{१२}प्रायंतिक देशानी, इतर मानव-जातिए स्वीकारेला प्राकृतनी बोली ते पैशाची संज्ञा पामी, उक्त व्रण नाम आर्य देशनां वाचक छे, अने चोथूं अनार्य जातिनू ^{१३}बोधक छे. अहाँ गणा-बोली चार बोलीना; उत्क्रमणमां पण फेर छे. विगतमां न. उत्तरतां निर्दिष्ट भेदनुं एक ज. उदाहरण आपीशूं, मागधी, शौरसेनी अने पैशाची बोलीमां अनादि असंयुक्त अल्पप्राण अधोष व्यंजनने बदले तेने मळतो घोष व्यंजन वपराय छे, ज्यारे महाराष्ट्रीमां ते व्यंजन नाश पामे छे. आ उत्क्रमणगत भेद सूचवे छे के चारे बोलीओ ऐककालिक नथी. मागधी शौरसेनी अने पशाची इसवी सनना आरंभनी आसपासनां शतकोमां वपराती जणाय छे. मथुरामां भोंयमांथी मळी आवेला जैन स्तूपोनी प्रतिमाना लेख तथा तर्फननी रेतीना रणमांथी हाथ लागेला शारीपुत्रप्रकरणना कडकाओ शौरसेनी तथा मागधीना इतिहास उपर प्रकाश पाडे छे; अने गुणादच साधे शातवाहननो संबंध पैशाचीनो समय आंके छे. महाराष्ट्रीनू उत्पत्तिस्थान महाराष्ट्र अने तेनो उत्कर्ष करनार राजा गाहासत्तसईनी हालस्स मुद्रावाट्टी गाथाओनो कर्ता सिरिहाल. तेनू विरुद कइवच्छल ^{१४} (सं. कविदत्तसल) हतू. तेनी गोत्रसंज्ञा शातवाहन (प्रा. सालाहण ^{१५}). अनेक शतकना निवासने लीधे महाराष्ट्री बोली अपनावनारा आंध्र राजकुळनो उक्त वंशज श्रीहाल तरङ्गवई कथा रचनारा ^{१६}पालित किंवा श्रीपालितना आश्रयदाता तरीके

१२ सरहद उपरना, सीमावर्ता.

१३ गोंड सोंपळ घंगरे भूमिया वर्गना.

१४ जुओ गा.सं. । १-३, ५, ६ । १०१ ।

१५ जुओ वे.ना.मा. । सालाहणम्मि हालः ।; जुओ वट्टी अ. वि. । ३ ।

हालः स्यात्सातवाहनः ॥

१६ आ पालित किंवा श्रीपालित हाल राजानो आभिन कवि हतो. जुओ अभिनंदविरचित रामचरितना वट्टीसमा सर्गने धरे आवेला सोवतू पहेतू परण, एतेनोसमपूजना कविद्वया श्रीपालितो व्यक्तिः ॥ इयवी वट्टा वंशना क्षमा-

पण साहित्यमां जाणीतो छे. सत्तसईमांनी पालितस्स मुद्रावाळी गाथाओ प्रस्तुत कथामांथी हाले लीधी हशे. त्रीजी गाथामां^{१७} श्रीमान हाल राजा जणावे छे के “ एक करोड गाथा मळी आवी हती, तेमांथी अलंकारनी धमकवाळी सातसें गाथा तारवी काढी आ संप्रहमां में लीधी छे.” अर्थात् हाल शातवाहनना समयमां महाराष्ट्री बोलीमां रचायला गाथासाहित्यनूं लाखे लेखूं थतूं हतूं. शातवाहनो पोताना राष्ट्रनी प्राकृत बोली माटे अभिमान धरावता हता; तेमने लीधे महाराष्ट्रीनो आटलो उत्कर्ष थयो जणाय छे. तेमना राज्यनी पूर्व सीमाना आटविक लोकनी पैशाची बोलीमां रचायली

श्रमण जिनभद्र गणीए आवश्यकसूत्र उपर विशेषावश्यकभाष्य लक्ष्यं छे, तेमां नीचेनी वे गाथाओ छे:-छज्जीवणियायारो निदिद्वसेण तह सुयं चण्णं । तं चं व य जिणवयणं सत्वं निरेसयवसेणं ॥ जह वा निदिद्वसा वासवदत्तातरङ्ग-वइआइ । लोए निदेसगवसओ तु मणू अन्नसपाउ त्ति ॥ १५०७-१५०८ ॥ एना उपर आठमा शतकना हरिभद्रसूरिनी शिष्यद्विता नामे वृहदृष्टिमां व्याख्यान नीचे मुजव छे:- लोको द्विधा । अर्हद्दर्शनानुगतो लोकोत्तररूपः तदितरथ । तत्र लोकोत्तरे निदिद्वशाग्निदेशो यथा पञ्जीवनिका नाम अध्ययनम् आचार; आवश्य-कम् इत्यादि । तथा अत्रैव लोकोत्तरे तदन्यथ श्रुतं निर्देशकवशादेवोच्यते, यथा भद्रवाहुनिमित्तम्, नन्दसंहिता, कापिलीयम् इत्यादि । यथा वा इतरलोके निदिद्व-षशाद् घासघदत्ता तरङ्गयती इत्यादि । निर्देशकवशात् तु मनुः अक्षपादः इत्यादि । उदाहृत भाष्य अने वृत्तिना अभिप्राय प्रमाणे उक्त तरंगघतीनो कर्ता पालित द्विवा धीपालित मारी समजमां जेनेतर ठरे छे; केमके ए कथानो समावेश जेनेतर साहित्यमां कथो छे ए कथाने हार्तरच्छना सूर्यरूप वीरभद्रना शिष्य नेमिचंद्र गणीना यथा नामना शिष्ये तरगलोळा एवूं नाम राखी जैनी दीक्षा आपी, एम उक्त कथासारना अते आवेली भ्रष्ट गाथा उपरथी ठरे छे. अशुद्धि दूर करी ए गाथा .धूं नीचे प्रमाणे वाचूं छे: हारीयगच्छसूरस्स वीरभद्रस्स णाम जो सिस्सो । सिस्सेण तरस लिहिआ जसेण गणिणेमिचदरस ॥ पालितना नामे गा. स. ११।६३।, १२।७६।, ३।१७, ४८, ५६।, ४।७, ९३, ९४।, अने ५।१०। ए नव गाथाओ आपेली छे.

१७ उक्त गाथा आ प्रमाणे छे:-सत्तसआइं वइवच्छलेण कोडीअ मज्ज-आरम्मि । हालेण विरइआइं सालंकाराण गाहाणं ॥

વૃહત્કથા યુગ 'તેમના જ આશ્રયથી પ્રસિદ્ધિ પામી હતી. 'ઇસવી સનનાં પહેલાં વે વ્રણ, 'સૈકાં તે શતવાહનોનો ઉત્કર્ષકાઠ્ઠ લેરાય છે. પ્રસ્તુત ચાર વોલી પૈકી પૈશાચી વ્હેલી સુત થાય છે. જે વાર્તાસંગ્રહમાં તે જીવતી રહી હતી તે વૃહત્કથા યુગ કાલાંતરે નાશ પામે છે. વાકીની વ્રણ વોલી વોધા સૈકા પછી સાહિત્યમાં વૃત્તિમ રુદરુપે જીવન લંવાવે છે, અને લોકમાયા અપભ્રંશ થાય છે. આ માયા ઉત્તર કાઠ્ઠમાં ચાલુ રહેલા સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત સાથે ગ્રીજી સાહિત્યની માયા તરીકે વપરાય છે. યુગો ઉત્તર અવધિ વારમા સૈકાની લગભગ આવે છે. આ રીતે માયાને અવલંબીને કાવ્યકાલના દ્વૈમાપિક અને ત્રૈમાપિક યુગ માગ પડે છે. યુગી પદ્યરચનાની સમીક્ષા સુગમ થાય યટલા માટે થોડાક માર્ગદર્શક વિવેચનની જરૂર છે. હંદોવિદ્યાની પરિમાયામાં સાધારણ રીતે હંદ યટલે ચાર ચરણનો પદ્યવંધ. તેમાં ચાર ચરણ યક જ માપનાં હોય, તો તે સમચતુષ્પદ સમપદ કિંવા સમ કહેવાય. જો પહેલું ચરણ ત્રીજા સાથે અને વાંજૂં વોધા સાથે મઠ્ઠતું આવે, તો તે અર્ધસમચતુષ્પદ અર્ધસમપદ કે અર્ધસમ લેસ્યાય છે. જો ચારે ચરણ અણસરલા માપનાં હોય, તો તે વિપમચતુષ્પદ વિપમપદ કિંવા વિપમ હંદ મનાય છે. ચરણ અસંધ હોય અથવા તો સસંધ હોય. જેમાં વચ્ચે કોઈ યુગ સ્થલે વોલતાં વિરામ ન લેવો પડે, તે સસંધ ચરણ; અને વચ્ચે યુગ કે વધારે વાર વિરામ લેવો પડે, તે સસંધ. વિરામને માટે પારિમાધિક શબ્દ યતિ છે. ચરણ અસંધ હોય તો ચરણના અને સસંધ હોય તો સંધના ધટકાવયવ તે સંધિ કહેવાય છે. સંધિ વે કરતા વધારે વાર લાગલાગટ વપરાયો હોય, તો તે આવૃત્ત લેસ્યાય; વાકી અનાવૃત્ત. પ્રત્યેક સંધિના અશરોમાં અમુક યુગ જ અક્ષર મારુક્ત અને વાંજા વધા મારુક્ત હોય છે.

યુગ પદ્યવંધની માયાના કામજોગ સુલાસા પછી આપણે દ્વૈમાપિક કાવ્યકાલની પદ્યરચના તરફ વઠ્ઠિયે. તે કાઠ્ઠના કવિ માસ કાલિદાસ અને અશ્વધોપ. યુગ વ્રણે નાટકકાર અને વ્રણે કાવ્યકાર હતા. તેમાંથી પહેલાનાં

નાટકો જ વચ્ચાં છે^{૧૮}; વીજાનાં કાવ્ય તેમ જ નાટકો ઊતરી આવ્યાં છે^{૧૯}; અને 'ત્રીજાનાં કાવ્ય જ ઉપલભ્ય છે^{૨૦}. કાવ્ય શાસ્ત્રનો પ્રધાન હંદ રઘુવંશ અને સૌન્દરનન્દ તપાસતાં ત્રૈણ્ડુમી ઉપજાતિ ઠરે છે; અને તેનાથી ઊતરતો દરજ્જો આલ્યાનિક અનુષ્ટુભ્ ભોગવે છે. નાટક શાસ્ત્ર તરફ નજર ફેરવતાં કાલિદાસની કૃતિઓમાં ગાથા અને અનુષ્ટુભ્ વંને હંદ વધારે વપરાયા છે; તેમાં ગાથાની સંખ્યા તેના જોડીદારથી દોઢી છે. તે ઉપરથી વગર જોયે જ મેં ઇ. સ. ૧૯૧૨ માં છપાવેલી પરાક્રમની પ્રસાદીના ઉપોદ્ઘાતમાં જણાવ્યા પ્રમાણે અનુમાન કયૂં હતું, કે પુરોગામી ભાસનાં નાટકોમાં (આલ્યાનિક) અનુષ્ટુભ્ હંદ ગાથા કરતાં વધારે વપરાયો હોવો જોઈએ. એ અનુમાન સ્વપ્નવાસવદત્ત આદિ નાટકો મુદ્રાંકિત થયાથી સ્વરૂં પડ્યું છે. જૂનો નાટક-કાર આલ્યાનકાલથી ઊતરી આવેલા પુરાણા અનુષ્ટુભ્ને પ્રથમ સ્થાન આપે છે; નવો નાટકકાર કાવ્યકાલમાં નવા પ્રગટેલા ગાથા હંદને તે સ્થાને સ્થાપે છે. પ્રસ્તુત માત્રાવંધે તેની ચડિયાતી ગેયતાના કારણથી વધતી જતી લોક-પ્રિયતાને લીધે કલારસિક મહાકવિને આકર્ષ્યો હશે. ઉભય શાસ્ત્રમાં અગિયાર અક્ષરથી માંડીને એકત્રીસ અક્ષર સૂઘીના મધ્યયતિરહિત અને મધ્યયતિ-સહિત ચરણના વિવિધ સમચતુષ્પદ રૂપવંધ દષ્ટિગોચર થાય છે. એ મોટે

૧૮ ભાસને નામે તેર નાટક Trivandrum Sanskrit Series માં છપાયાં છે, તે પૈકી મધ્યમક, પ્રતિમાદશરથ, પ્રતિજ્ઞાયૌગન્ધરાયણ, સ્વપ્નવાસવદત્ત, પશ્ચરાત્ર, આવિમારક તથા દરિદ્રચારુદત્ત, એ આઠ ભાસની કૃતિ છે. અભિપેક, ઊરુમહ્ગ, કર્ણભાર, દૂતઘટોત્કચ તથા દૂતવાક્ય, એ પાંચ મારી સમજ પ્રમાણે ત્રીજાએ વહુ પાઠ્યથી રચેલાં જણાય છે. ભાસે વિષ્ણુધર્મા: નામે કાવ્ય રચ્યું હતું; શુભો પૃથ્વીરાજચરિત ॥૧॥૩॥ સત્કાવ્ય-સંહારવિધો ચલાનાં દીપ્તાનિ બન્દ્હેરપિ માનસાનિ । ભાસસ્ય કાવ્યં રાઠ્ઠ વિષ્ણુધર્માન્ સોડપ્યાનનાત્પારતવન્ મુમોચ ॥ એ નાશ પામ્યું છે.

૧૯ કુમારસંભવ તથા રઘુવંશ એ બે કાવ્ય અને માલવિકાગ્નિ-મિત્ર, વિક્રમોર્ધશીય તથા અભિજ્ઞાનશાકુંતલ એ ત્રણ નાટક.

૨૦ શારીપુત્રપ્રકરણ અશ્વપોષે રચ્યું હતું; તે નાશ પામ્યું છે.

ભાગે અનાવૃત્ત સંધિવાળા છે. આવૃત્ત સંધિના રૂપબંધ તો રહ્યાસ્વડ્યા જ મઠ્ઠી આવે છે, જેમકે ભાસના મૈઘમાલા^{૨૧} તથા ષણ્ડવૃષ્ટિપ્રપાત,^{૨૨} કાલિદાસનો નિશા કિંવા નારાચ^{૨૩} અને અશ્વઘોષનો એક નામરહિત અર્ધસમ છંદ^{૨૪}. તે ઉપરથી અનાવૃત્ત સંધિવાળા રૂપબંધ પ્રત્યે દ્વૈભાષિક કાવ્યકાલનો પક્ષપાત ઝવાડો દેસાઈ આવે છે. સુત્તકાલનો રૂપમાત્રાત્મક મિશ્ર ચરણનો અર્ધસમ વૈતાલીય છંદ ભાસની કૃતિમાં છેલ્લોછેલ્લો એક વાર દર્શન દે છે^{૨૫}. એ મરણ પામેલા છંદના શરીરમાંથી સિદ્ધિશાળી સાહિત્યકારો મંથનથી ચાર અર્ધસમ રૂપબંધ પ્રગટાવે છે, વિયોગિની કિંવા સુન્દરી, અપરવક્ત્ર, માલ્ય-ભારિણી અને પુષ્પિતાગ્રા. આ ચારે છંદ કાલિદાસની કૃતિમાં વપરાયા છે; અને છેલ્લા પુષ્પિતાગ્રા વૃત્તના પ્રયોગથી જણાય છે કે ભાસને પણ એ રૂપબંધોનું જૂથ જાણીતું હતું. પ્રસ્તુત કાલમાં શુદ્ધ માત્રાત્મક પદ્યરચના પણ અજ્ઞાણી ન હતી, તે ભાસના નાટકમાં ગાથાના અને કાલિદાસનાં નાટકમાં ગાથા તથા ઉર્વશીના^{૨૬} પ્રયોગથી પ્રતીત થાય છે. પદ્યબંધની આ નોંધ ઉપરથી સ્પષ્ટ સમજાશે કે ભાસ અને કાલિદાસ બહુ પાસેના કવિ હોવા જોઈએ. માલવિકાગ્નિમિત્ર નાટકની પ્રસ્તાવનામાં ભાસના નામનો ઉલ્લેખ છે^{૨૭}; એટલે કરીને ભાસ અને કાલિદાસના પૌર્વાપર્યનો પ્રશ્ન રહેતો નથી. એ

૨૧ જુઓ પ્રતિમાદશરથ ૧૩૧૧.

૨૨ જુઓ આલિમારક ૧૫૬૧.

૨૩ જુઓ રઘુવંશ ૧૨૧૧૦૪૧.

૨૪. જુઓ ચિકિત્સક ઉપરની ટિપ્પણી ૩૪.

૨૫. જુઓ પ્રતિજ્ઞાચૌગંધરાયણ ૧૩૧ જં પચ્ચવિતેસપિષ્ટિદા પીર્દિ
ધર્પેદું ઉવઠ્ઠિદા । લાભગહા ડિળ્ળમુદ્દા કાલવસેણ પદ્મદસવલા ॥

૨૬ જુઓ ચિક્રમોર્વશીય નાટ્યના ધીજા અંકમાં ઉર્વશીએ પુરુષવા ઉપર લખેલી પ્રેમપત્રિકા. પાઠ અષ્ટ છે, તેથી હંદ ઓઝરી શકાય એમ નથી. પદ્ય-રચનાને બંધ વેસતો શુદ્ધ પાઠ મેં પ્રસ્તાવે ૩૧ માં આપ્યો છે પ્રસ્તુત છંદનું નામ છદઃશાસ્ત્રનાં પુસ્તકોમાં છે નહિ તે કારણથી મેં એને ઉર્વશીના નામથી ઓઝરાખ્યો છે.

૨૭ જુઓ નીચેનું વાક્ય:--પ્રયિતયશ્શાં ભાસસોમિલકવિમિત્રાણાં પ્રચન્ધા-
મતિક્રમ્ય વર્તમાનકવેઃ કિયાર્થાં વધં પરિપદ્મો બહુમાનઃ ।

વિશેની ચર્ચા તો કાલિદાસ અને અશ્વઘોષના સંબંધમાં ઊભી થાય છે. તેમાં ઊત્તરતા પહેલાં બંનેનાં કાવ્યની પદ્યરચના ઉપર દૃષ્ટિ ફેરવવી ઇષ્ટ છે.

૫ કાલિદાસ અને અશ્વઘોષની પદ્યરચનાની આલોચના માટે રઘુવંશ અને સૌન્દરનન્દ ખાસ ઉપયોગી છે. સંહિત કુમારસંભવમાં વપરાયલા હંદ રઘુવંશમાં આવી જાય છે. વઢી સંહિત બુદ્ધચરિતના જાગતી ઉપજાતિ, માલિની અને માલ્યભારિણી સિવાયના હંદ સૌન્દરનન્દમાં મઢી આવે છે. એ ત્રણ હંદને ગણતરીમાં લેઈ ઉક્ત વે કાવ્યોના પદ્યબંધની સમીક્ષા કરતાં નોંધવું જોઈએ કે બંને કવિની આલ્યાનિક અનુષ્ટુભ્ ઉપર અને ત્રૈષ્ટુમજાગત કુટુંબ ઉપર એકસરસી પ્રીતિ જણાય છે. એ હંદોમાં રઘુવંશના ૬+૮ અને સૌન્દરનન્દના ૭+૮ સર્ગ અનુક્રમે રચાયા છે. વેડ કાવ્યમાં વિશેષે કરીને સમપદ રૂપબંધોનો ઉપયોગ કરવામાં આવ્યો છે. બંને કવિ વ્યાપક હંદ ટૂંકડા વાપરે છે. તે સાથે હંદોની વિવિધતાનો ધાંક પણ તેમની વૃત્તિમાં સમાન છે. પરંતુ કાલિદાસ રથોદ્ધતા, સ્વાગતા, શાલિની, દ્રુતવિલંબિત, તોટક જેવા ટૂંકા એકદેશી વાપરે છે, તે અશ્વઘોષના કાવ્યમાં જડતા નથી, એ તરફની સ્લોટ અશ્વઘોષ ટૂંકા નવા એકદેશી જોડી કાઢી અને જૂના મોટા એકદેશી કામમાં લેઈ કેટલેક દરજ્જે પૂરે છે. રૂપબંધની સમ અર્ધસમ અને વિપમ એ ત્રણે શાસ્ત્રમાં બૌદ્ધ કવિએ એકએક નવો હંદ આપ્યો છે. સૌન્દર-નન્દના બીજા સર્ગમાં ૧૪, ૧૩, ૧૮ અને ૧૫ એવી પલટાતી રૂપસંખ્યાનો વિપમ હંદ છે; ચારમા તથા તેરમા સર્ગમાં ચૌદ રૂપવાઢાં ચરણનો સમ હંદ છે; અને પૂર્વોક્ત તેરમા સર્ગમાં પંદર અને સોઢ રૂપનાં ચરણોનો અર્ધસમ હંદ છે. વઢી માહેશ્વર કવિ ય્યારે સમ અને અર્ધસમ જ વ્યાપક તરીકે યોજે છે, ત્યારે બૌદ્ધ કવિ હદ્ધતા નામે ઓઢ્ઢસ્વાતો વિપમ રૂપબંધ પણ વ્યાપક તરીકે ઉપયોગમાં લે છે. માસ અને કાલિદાસના પદ્યબંધમાં જેટલી સરલાઈ છે તેટલી જ કાલિદાસ અને અશ્વઘોષના પદ્યબંધમાં અણસરલાઈ છે. પહેલા વે પાસપાસેના નાટકકાર લાગે છે; બીજા જે કાવ્યકાર વ્હેલામોઢા થયેલા જણાય છે.

पद्यबंधमां फरेली प्रगति उपरधी सौन्दरनन्दनो कतां रघुवंशना कतां पटी
केटलोरु मुदते थयो संबधे छे. वचला गात्रांमां धिपम वृत्त उद्गता उद्गत
थई प्रचारमां आवे छे; अश्वघोष सौन्दरनन्दमां व्यापक तरीके तेनो उपयोग
करे छे; अने उत्तरकाळमां ते चाह रहे छे.

६ छंदोना वपराटनी कसोटीना आधारे बाधेली अटकंठने बीजा
दिशाएथी टेको मळे छे. अश्वघोष कविण शारीपुत्रप्रकरण^{२८} नामे नव अंकनूं
नाटक रचूं हतूं. तेनो जूज भाग मय्य एशिआना रणमांथी जडी आव्यो
छे. एनी हाथप्रत प्रथम कुशानोना समयनी ब्राह्मी लिपिमां लेखेली छे. ए
लिपिना अक्षरो भूंसी नांखी लीटीओ वच्चेना कोरा भागमां खरोष्टी लिपिमां
नयेसर मूळनो ऊतारो करवामां आव्यो छे. ब्राह्मी लिपिमां लेखेई मूळ
भूंमाया छतां वंचाय एवूं छे, अने लिपि ओळखाई आवे छे. उक्त हाथप्रत
ताडपत्र उपर छे. खरोष्टी लिपिनी नकल माटे नवां कोरां ताडपत्रो न बाप-
रतां जूनां अक्षरांकित ताडपत्रनी पंक्तिओ वच्चेना कोरा भागनो उपयोग
केरलो छे, ते सूचवे छे के ते काळे मय्य एशियामां ताडपत्रनी भारे अछत
हसे. ऐतिहासकोनो एवो मत छे के भरतखंडनां ताडपत्र लेखनना साधन
तरीके मय्य एशिआमां इसवी सनना पहेंला सैकामां प्रवेश पाग्यां हतां.
आ बात ध्यानमां लेतां शारीपुत्रप्रकरणनो खरोष्टी लिपिमां ऊतारो इसवी
सनना बीजा शतकथी मोडो न होई शके. ब्राह्मी लिपिगत मूळ तो तेनाथी
पण पहेंलां लेखायूं होवूं जोईए. एना संबधमां भारो तर्क एवो छे के
कुशानवंशना महा प्रतापी राजा कनिष्के छेछी बौद्ध महासंगीति काश्मीरमां
मेळवी, ते काळे प्रस्तुत बौद्ध नाटकनी रचना थई हसे. अश्वघोष उक्त
धर्मसभानो उपाध्यक्ष हतो. ए महासंगीतिमां चारे दिशाना महायानी भिक्खु-
ओ एकठा थया हता. तेमना विनोदने अर्थे वृद्ध उपाध्यक्ष कविण बुद्ध

ભગવાનના આદિ શિષ્યનું ચરિત્ર યુદ્ધચરિત અને સૌન્દરતન્દ કાવ્યોની અનુપૂર્તિરૂપે નાટકના આકારમાં આલેખ્યું હશે, મહાસંગીતિ વિસર્જન થતાં શારીપુત્રપ્રકરણ સ્વોત્તના સીમાવાસી મિક્ષુઓ સાથે વાયવ્ય વૃહદ્ભારત માં ગયું હશે અને ત્યાંની સ્વરોષ્ઠી લિપિમાં તેની પુનર્મૂ^{૨૯} પ્રત કોઈ સ્થાનિક બૌદ્ધ સાધુએ પોતાના ઉપયોગ અર્થે તૈયાર કરી હશે. તે મધ્ય એશિયાની પાછલથી રણરણાકાર થયેલી પણ પૂર્વે આવાદી મોગવતી ભૂમિમાં કોઈ મિક્ષુ કે ઉવાસગ સાથે જવા પામી હશે. પ્રકરણ સ્વોત્તનાં ગયું તેનો સમય હું ઇસવી સનતા પહેલા અને વીજા સૈકાના સંધિમાં મૂકું છું. ઉક્ત નાટકના કર્તાનો કાલ આ રીતે ઇસવી પહેલું સૈકું સંભવે છે. એને યુરોપના વિદ્વાનો કાલિદાસના પૂર્વે થયેલો શા માટે માને છે, તે સમજાતું નથી. પદ્યવંધના વપરાટની કસોટી તેમના એ નિર્ણયના વિરુદ્ધમાં જાય છે. ઉપરાંત વીજી પણ એક વાત ધ્યાનમાં લેવાની છે. જો બૌદ્ધ નાટકકાર અને કાવ્યકાર માહેશ્વર કાલિદાસના પૂર્વે થયો હોય, તો માલવિકાગ્નિમિત્રનો જગતો નાટકકાર પુરોચાચી માનપાત્ર નાટકકારોનાં નામ લેતાં શારીપુત્રપ્રકરણના કર્તાનો નિર્દેશ કર્યા વગર રહે નહિ. કાલિદાસે માસ અને સોમિલ^{૩૦} કવિમિત્રનાં નામના ઉલ્લેખ

૨૯ Palimpsest.

૩૦ નાટકકાર સોમિલ વિશે કંઈ પણ જાણવામાં નથી. શૂદ્ધકથાના જીઢીદાર કર્તાઓ તરીકે રાજશેખર રામિલસોમિલનાં નામ છે છે. શાર્દૂલધરપદ્ધતિમાં એમના સંયુક્ત નામે સ્વ્યાધેઃ કૃષ્ણતા પ્રતીકતો એક શ્લોક આવ્યો છે; તે જો ઉક્ત કથામાંથી લીધો હોય, તો તે કૃતિ સંસ્કૃતમાં રચાઈ હોવી જોઈએ. પ્રસ્તુત શ્લોકની અર્થત્રિષ્ટ શૈલી જોતાં કથાકારથી નાટકકાર સિદ્ધ તેમ જ શ્રાવીન જણાય છે. જેમ માસ નામ સંસ્કૃત માપ સંજ્ઞાનું પ્રાકૃત રૂપ છે, તેમ સોમિલ પણ સંસ્કૃત સૌમિકનું પ્રાકૃત રૂપ છે, એવી માત્રી સમજ છે. સૌમિક ગોત્ર વાસિષ્ઠ ગોત્રના પેટામાં ગણાવેલ છે. ઇસવી સન પૂર્વે ગ્રંથકારોમાં કર્તા તરીકે ગોત્રનામ આપવાનો સંપ્રદાય હતો. એતરેય, વાત્યાયન, શૌનક, ચારક, પાગિનિ, આશ્વલાયન, કૌટિલ્ય, એ વધાં ગોત્રનામ જ છે. સાહિત્યકારનું વિશેષનામ ક્યવિત્ત વચેલું મઠે છે, તો તે સ્તર પ્રવૃત્તિને લીધે છતરી આવ્યું જણાય છે; જેમકે મૌર્ય પંદ્રગુપ્તના ભ્રમાત્ય તરીકે કૌટિલ્યનું વિષ્ણુગુપ્ત નામ. મૌર્ય

भंगो अश्वघोषना नामनो उल्लेख कर्षो नथी, ते एम सूचवे छे के सौन्दर-
नन्दनो कर्ता रघुवंशना कर्ताना पूर्वे नहि, पण पछी थयो छे, वळी प्राचीन
नाट्यशास्त्रने नाटकमां आठ ज रसनो प्रयोग अभिमत हतो. कालिदासना
समय पर्यंत रसनी संख्या जूना नाट्यप्रस्थानमां आठ ज हती. विमोर्वशीय
नाटकना वीजा अंकना उत्तर भागमां इंद्र देव समक्ष अप्सराओ द्वारा भजव-
धाना भरत मुनिना प्रयोगनो उल्लेख छे, ते अष्टरत्नामक ज कहेले छे,
अर्थात् जूना नाट्यप्रस्थानना आठ रस साथे शांत रसने कालिदासना समयमां
स्थान भळ्यूं न हतूं. ए रसनी जमावट प्रथम शारीपुत्रप्रकरणमां दृष्टि-
गोचर थाय छे. बुद्धचरित अने सौन्दरनन्द काव्यमां प्रस्तुत रसने बहलावी
सिद्धहस्त कवि नाटकमां पण ए रसने अंगी रसनूं स्थान आपे छे. प्रयोग-
बंधमां आ नवा रसना दर्शनथी जणाई आवे छे के अश्वघोष कालिदासथी
मोडो छे. ए त्यागी एकरसरसिक कवि रागी अनेकरसरसिक कविना पछी
केटलेक अंतरे थयो छे. प्रथम भास, पछी थोडेक छेटे कालिदास अने पछी
कंडक लवि गाळे अश्वघोष, ए रीते मारी समज प्रमाणे तेमनी आनुपूर्वी
गोठवाय छे.

७ अश्वघोषे जे नवा व्रण छंद रच्या छे, ते एना पछीना कोइ कविए
उपयोगमां लोधा जणाता नथी. एमांना सम अने अर्धसमनां नाम तो छंदो-
विधाना ग्रंथोमां पण जडतां नथी. एमनी नोंध लेवाना साधन तरीके मारे

विन्दुसारना अमाल सुवंधुनी कदाच गोत्रकृत संज्ञा सौमिक होय. अभिनवगुप्त
ए अमात्य नाटककारनी वासुधत्ताना नाट्यधारानी नोंध लेतां तेना नामने
'महाकवि' विशेषण लग्गडे छे, जेमां नाटकनी अदर अंशभूत पैटानाटक होय, ते
नाट्यधारा. पैटानाटक संस्कृतमां गर्भाङ्ग संज्ञायी अने गजरातीमां अन्तर्जाटक नामयी
थोळखाय छे. तेना उत्पादक होवानूं मान इ. स. पूर्वना त्रीजा शतकना संमानित नाटक-
कारने घटे छे. आ सुबंधु अने सोमिल एक होय, तो तेना नामने कालिदास
'कविमिश्र' पद लग्गटी तेना प्रत्ये भासना जेठली ज मानबुद्धि प्रदर्शित करे
अने तेने बिल्यात कीर्तिवाळो बहे, ते जुगते जुगलू छे. कदाच बहु जूनो पाठ
'भापसौमिककविमिश्राणाम्' होय. अष्टता केटली हदे पहोंची छे तेनो 'मास्कर'
अने 'कविमिश्राणाम्' पाठांतरथी कंडक ख्याल आवशे.

एमनां अनुक्रमे अप्रमत्ता अने चिकित्सक एवां नाम पाठवां पठ्यां छे. त्रीजा छंदनूं नाम एक वखत में प्रवर्धमान^{३१} राख्यूं हतूं; केमके ए विपम छंदनां चरणोमां अनुक्रमे चौद, तेर, अठार अने पंदर, एम एकएकथी चडियाती अंकसंख्यानां रूप आवतां हतां^{३२}. पाठळथी हेमाचार्यना छंदोऽनुशासनमां एनूं वर्धमान नाम मळी आव्यूं, एटले ते नामथी तेनो अहां निर्देश कर्यो छे. अप्रमत्ता छंद शकरी वर्गनो रूपबंध छे. तेनूं चरण गागागागा अने लललललगा-गालगागा ए वे खंडनूं बने छे^{३३}. चिकित्सकमां गुरुलघुथी बनेल संघिनूं आवर्तन थया करे छे^{३४}. एनां विपम चरण तूणकना अने समचरण पञ्चचामरना चरणने मळतां छे. अर्थात् ए उक्त वे रूपबंधनां चरणना योगथी बननारो आवृत्त संघिनो मिश्र छंद छे. वर्धमाननां चरणोमां हेमाचार्यना सूत्र अनुसार अनुक्रमे मसजभगग, सनजरग, ननसननस अने नननजय, एवी गणरचना आवे छे. अप्रमत्तामां चोथा अक्षर पछी मध्य यति होय, एम मन्दाक्रान्ता साथे ए रूपबंधने मेळवी जोतां समजाय छे. चिकित्सकमां मध्य यति नथी. वर्धमानमां पहेला चरणना त्रीजा अक्षर पछी मध्य यति संभवे छे. छंदोऽनुशासनना त्रीजा अध्यायना उपस्थितप्रचुपित प्रकरणमां आपेल्य त्रण विपम वृत्तां वर्धमान कलानी दृष्टिए श्रेष्ठ छे. चिकित्सक छंद तूणक अने पञ्चचामर-

३१ जुओ पराक्रमनी प्रसादो (वा. ४, ५), उपोष्वात, शृष्ट ५-६.

३२ जुओ सौंदरनन्द १२।६४। स प्रेक्षैव हि जीर्णमातुरं च गृहं च, विमृशन् जगदनभिज्ञमार्तचित्तः । हृदयगतपरिच्छुणो न विपरयतिमगमज्, जननमरणमयमभितो विजिघांसुः ॥ जुओ बळी सौंदरनन्द १२।६५।

३३ जुओ सौ.न.१३।५६। तस्मात्पामकुशलकराणामरीणां, चक्षुर्वाण-धधपरसनस्पर्शानाम् । सर्वावस्थं भवविनियमादप्रमतो, मास्मिन्नर्थं क्षणमपि कृथास्त्वं प्रमादम् ॥ जुओ बळी सौ. न. १२२।४३।

३४ जुओ सौ. न. १२३।५५। काममोगमोगवदभिरात्मदृष्टिदृष्टिभिः, प्रमादनैकमूर्धभिः प्रहर्षलोलजिह्वर्षकैः । इन्द्रियोरगैर्मनोविलेक्षयैः स्पृहाविषैः, शमागदाहते न दष्टमरित यच्चिचिरस्यते ॥ हरप्रसाद शास्त्रीनी अने जोन्सबननी मुद्रित प्रतमां ' चिकित्सयेत् ' अने चिकित्सेत् ' पाठ छे, ते दूषित छे. नवो पाठ कल्पित छे.

थी। गंतार्थ गणाय, पण, अप्रमत्ता अने वर्धमाननां स्थान तो अन्य मेळायी वृत्तधो पूरावा पाण्यां नथो. अश्वघोषे कलामां करेली प्रगतिनूं मां प ए सम ज्ञाने विषम रूपबंधधी थाय छे.

८ द्वैभाषिक काळ जेम भाषाओना प्रचारमां तेम प्रयोगबंधना स्वरूपमां पण त्रैभाषिक काळना पुरोगामी तरीके तरत ओळखाई आवे छे. प्राचीन आख्यानश्रवणमांथी आख्यानदर्शन अस्तित्वमां आव्यूं. तेमांथी प्रगटेळें नवतर प्रयोज्य^{३५} साहित्य द्वैभाषिक काव्यकालमां सामान्य नाटक संज्ञाथी ज जाणीतूं हतूं. कालिदासनूं विक्रमोर्वशीय, ते नाटक हतूं. तेनो त्रोटक तरीके अज्ञानमूलक व्यवहार ते काळे न हतो. उपरूपकना अद्वार भेदमां त्रोटकनी भणना छे. रूपक अने उपरूपक वन्नेनो वाचिक अभिनयमां समावेश थाय छे. तेम छतां ए इसवी सनना त्रीजा चोथा शतकना भरतनाट्यशास्त्रमां वाचिक अभिनयने अंगे दश रूपकनो ज विवेक कर्यो छे. उपरूपकनो प्रकार कर्तनि अवगत होय, तो वाचिक अभिनयना प्रकरणमां के अन्यत्र ते विशे कंडू कहे ज नहि ए वने नहि. स्हेजे एवी अटकळ बंधाय छे के, उपरूपक ते काळे जनम्यां न हतां. आ स्थिति इसवी सनना त्रीजा चोथा शतकनी छे. पहिला शतकमां तो दश रूपकनो विवेक पण अज्ञात छे. अश्वघोषनूं शारीपुत्रप्रकरण, ए नाटक छे. तेनूं वस्तु उत्पाद नथी, ऐतिहासिक छे; अने ते दस अंकनो नथी, नवमां छे; ते छतां तेने नाटककारे प्रकरण संज्ञा आपी छे, ते नाटकना पर्याय तरीके आपी छे. पुरोयायी कालिदास पण अभिज्ञानशाकुन्तलनी प्रस्तावनामां नाटक किंवा प्रयोगबंधना अर्थमां प्रस्तुत प्रकरण बोलनो उपयोग करे छे. विक्रमोर्वशीय पेटे भासनां केटलांक नाटकने रूपकउपरूपकना पेटाभेदमां आजकाल गोटवचामां आवे छे^{३६}. नाटक पांचधी ओछा. अंकनूं न होई शके ए

३५ भजवी वतावाय एव साहित्य.

३६ The Trivandrum Sanskrit Series मां ए नाटको उपायां छे. तेमां सद्गत सहस्रनिहोपाध्याय 'त. गणपतिशास्त्रीए आ मिथ्या प्रयास अदियो छे.

અર્વાચીન મર્યાદાથી દોરાઈ ચાર અંકના પ્રતિજ્ઞાયૌગન્ધરાયણને વઠાત્કારે નાટિકા, ત્રણ અંકના પશ્ચરાત્રને સમવકાર અને એક અંકના મધ્યમકને વ્યાયોગ ઠરાવવાનો આ પ્રયાસ નિષ્ફળ છે; કેમકે તે સમયવિરોધથી દૂષિત છે. ચોથા અને તે પછીના શતકોની રૂપક અને ઉપરૂપકની વ્યવસ્થાનો નથી ગંધ માસને, નથી કાલિદાસને અને નથી અશ્વઘોષને. માસને નાટ્યશાસ્ત્ર વિદિત હતું^{૩૭}. તેમાં જો વ્યાયોગ સમકાર વગેરે પુલ્હિંગના અને નાટિકા વગેરે સ્ત્રીલિંગના પારિભાષિક શબ્દ ઉપયુક્ત હોત, તો મધ્યમકમ્, પશ્ચરાત્રમ્, પ્રતિજ્ઞાયૌગન્ધરાયણમ્ વગેરે નપુંસક લિંગના પ્રયોગ તે વાપરત નહિ. ભરત-નાટ્યશાસ્ત્રથી માસાદિ કવિત્રિપુટીના પરિચયનું નાટ્યશાસ્ત્ર જૂઠું હતું. તેમાં રૂપક અને ઉપરૂપકના વિવિધ ભેદનો નિર્દેશ ન હતો. તેમાં નાટકના અંકની સંખ્યા મર્યાદિત ન હતી. તેમ જ તેમાં રંગભૂમિ ઉપર નિયુક્ત વધ અને મરણનાં દૃશ્યનો નિષેધ ન હતો. આ કારણથી માસ કાલિદાસ અને અશ્વઘોષ ત્રણે નાટકકારો ભરતાટ્યશાસ્ત્રથી અર્થાત્ ઇસવી ત્રીજા ચોથા શતકથી જૂના છે^{૩૮}.

૧ કાવ્યકાલના પ્રયોગવંધમાં અંતિમ આકૃતની બોલીબોના વપરાટ્માં એક અજબ અસંગતિ નજરે પડે છે. એના ઉદાહરણમાં મહાકવિ કાલિદાસનું અભિજ્ઞાનશાકુન્તલ જ લેદ્યે. એ નાટકના ત્રીજા અંકમાં શકુન્તલા દુષ્યંત

૩૭ જુઓ ધાવિમારકના પહેલા અંક પછીના પ્રવેશમાંની નીચેની ઉક્તિ:-
અલ્પિ રામાઅર્ણ ગામ ગદ્ધસત્થં । આ ઉક્તિ ઉપરથી, માસના સમયમાં જેમ રામાયણ જાણીતું હતું તેમ કોઈક નાટ્યશાસ્ત્ર પણ રચાયેલું જાણીતું હતું, એવું સ્થાપિત થાય છે. પાણિનિ ભગવાનના પૂર્વે વિવિધ 'નાટ્યસૂત્ર' અસ્તિત્વ ધરાવતા હતાં. તેનાથી માસે જેનો ઉલ્લેખ કર્યો છે તે 'નાટ્યશાસ્ત્ર' અર્વાચીન ઠરે છે.

૩૮ કેટલાક વિદ્વાનો અભિજ્ઞાનશાકુન્તલ, રઘુવંશ આદિ-રચનાર કાલિદાસને ગુપ્તવંશના વીજા ચંદ્રગુપ્તના અને કુમારગુપ્તના સમયમાં મૂકે છે. રઘુના વિગિવંજયમા કોઈ સમુદ્રગુપ્ત પરાક્રમાદિત્યનું અને કુમારસંભવ સંહામાં કોઈ કુમાર-સુગુપ્તનું ઘન માને છે. એ કલ્પનાની અનુપપત્તિ ઉપરના લક્ષણથી જણાઈ ધાવશે.

उपर प्रेमपत्रिका लखे छे, तेनी गाथा अंतिम प्राकृतनी प्रादेशिकी (Provincial) महाराष्ट्री बोलीमां छे; अने पांचमा अंकना आरंभमां देवी वसुमती हंसपदिकाना मुखे दुष्यंतने उपालंभ आपे छे ते अन्योक्तिनूं पद्य बीजी प्रादेशिकी बोलीमां, मारी समज प्रमाणे शौरसेनीमां, छे. आ विरोध शी रीते टाळवो ? शकुंतला उत्तम पात्र छे अने हंसपदिका पण तत्रभवती विशेषणना ऊमेरणथी उत्तम पात्र ठरे छे. बने गद्यमां शौरसेनी बोले, ते पैकी एक पात्र पद्यमां महाराष्ट्रीनो अने अन्य शौरसेनीनो उपयोग करे, ए केम संभवे ? पांचमा अंक पछी आवेला प्रवेशकृमां मागधी बोली बोलनार माठी पोताना धंधानो बचाव करे छे ते पद्य मागधीमां छे; अने छट्टा अंकना आरंभे शौरसेनी बोलनारी उद्यानपालिका आंबामोरथी वसंतने बधावे छे ते गाथा शौरसेनीमां छे; ते जोतां शौरसेनी बोलनारी शकुंतलानी प्रस्तुत पत्रिका पण शौरसेनीमां ज होवी घटे छे, नहि के महाराष्ट्रीमां. व्यवहार ऐतिहासिक जीवनकालमां अमुक बोली बोलनारूं पात्र गद्यमां ते बोली बोले अने पद्यमां बीजीनो आश्रय छे, ए जेवूं असंगत तेवूं ज असंभवित छे. उपालंभनी अन्योक्तिना अने वसंतना बधामणाना दृष्टांतथी एवा निर्णय उपर अवाय छे, के शौरसेनी बोली बोलनारी व्यक्तिओनी पद्यात्मक उक्ति पण ते ज बोलीमां मूळे हरो. इसवी सनना आरंभे दक्षिणापथमां जन्म पामनारी बोली उत्तरापथमां पसरे अने तेनी रूढ शौरसेनीना स्थाने पद्यपद्यमा उपयोग कोइ करे, ए बनवा जोग नथी. कालिदास पछी अश्वघोषना समयमां महाराष्ट्रीनो उदय आपणी गणतरी प्रमाणे थाय छे. ते काले ए महाराष्ट्र बहार पसरवा ज पामी नहि होय. खरूं छे के उदय थया पछी राजाश्रयने लीधे ते बोलीनो एटली भारे उत्कर्ष थयो, के संस्कृतनी समोवडी गणाई तेमा काव्यो लखाता थया अने नाटकमां तेणे पगपेसारो कर्यो. जामेली शौरसेनीने ते पदभ्रष्ट करी शक्ती नहि, पण हठेलीने तेनूं अर्धू आसन दवावीने ते वेठी नाटकमां शौरसेनी बोलनारां उत्तम अने मध्यम पात्रना

મુખની કવિતા મહારાષ્ટ્રીમાં જોઈએ, એ કવિસંપ્રદાય ત્યારથી ચાલુ થયો હોય^{૩૭}. તેને લીધે નવા પ્રયોજ્ય સાહિત્યમાં ઉત્તમ મધ્યમ પાત્રના મુખમાં મૂકવાની કવિતા મહારાષ્ટ્રીમાં રચાઈ એટલું જ નહિ, પણ શૌરસેનીમાં રચાયેલી પૂર્વેની કવિતા એ સમયવિરોધનો વિચાર ન કરનારાને હાથે મહારાષ્ટ્રીના સંસ્કાર પામી. આવું કંઈક માસ તથા કાલિદાસના નાટકોના સંબંધમાં વન્યું હશે, એ જ ઉક્ત બોલીઓની ગૂંચ ઝુકેલવાનો માર્ગ જણાય છે. આ તર્કની વાસ્તવિકતા જો અંતરમાં ઊતરે, તો દ્વૈભાષિક કાલનાં નાટકોમાંથી મહારાષ્ટ્રીને લ્હાસેડીને શૌરસેનીને પદ્મવંધમાં પોતાને સ્થલે પુનઃ સ્થાપિત કરવી હૃદય છે.

૧૦ કાવ્યકાલના ત્રૈભાષિક વિભાગનું પદ્યાત્મક સાહિત્ય સંસ્કૃત પ્રાકૃત અને અપભ્રંશ એ ત્રણ ભાષામાં છે. સંસ્કૃતમાં ૪૦ શ્રવ્યવંધ એટલે (સંકુચિત અર્થમાં) કાવ્ય, અને દૃશ્યવંધ એટલે નાટક, બંને છેડાયાં છે; મહારાષ્ટ્રી પ્રાકૃત કાવ્યમાં અને નાટકમાં વપરાયું છે. શૌરસેની માગધીનો પ્રયોગ નાટકમાં થયો છે; અને અપભ્રંશ કાવ્યમાં પ્રચલિત છે. પદ્યરચનાની આલોચનાને અંગે એ સૌમાં સંસ્કૃત પદ્યાત્મક સાહિત્ય વિશેષ મહત્તા ધરાવે છે. એના વિશે બોલતાં જે નામ ઓઠે આવીને રહે છે, તે મારવિ અને માધનાં છે. મહાકવિ કાલિદાસે કુમારસંભવ અને રઘુવંશ સરજી કથાકાવ્યના અદર્શથી સંસ્કૃત સાહિત્યને વિમૂષિત કર્યું છે, ત્યારે મારવિએ મહાભારતમાંનો એક ટૂંકો પ્રસંગ લઈ, કિરાતાર્જુનીયની રચનાથી પ્રસ્તાવકાવ્યનું નવું પ્રસ્થાન ચલાવ્યું છે. એ જ વિશાળ વહીને માથે શિશુપાલવધ નામે કાવ્ય કિરાતની સરસાઈમાં રચ્યું જણાય છે. આ વે કવિની કૃતિમાં જૂના વ્યાપક માટેનો પક્ષપાત કમી થતો જાય છે, અને નવતર વ્યાપકના પ્રયોગથી વિવિધતા આણવાની રુચિ

વધે છે, તે ઇટલે સુધી કે ઘૃતકૌશલના પ્રદર્શનમાં અને શબ્દાર્થચિત્રના ચમત્કારમાં જે સર્ગો રોકાય છે તે વાદ કરતાં માઘ લગભગ વાકીના વધા સર્ગ નવા નવા વ્યાપકમાં જ રચે છે. એકદેશીની સંખ્યા કાલિદાસ અશ્વમેધ અને મારચિના કાવ્યોમાં વહુધા સરસી છે, પણ માઘની કૃતિમાં તે નમણીના ઉપર પણ પહોંચે છે.

૧૧ વ્યાપકના અને એકદેશીના પ્રયોગમાં ઉપર જે પ્રગતિનું નિરૂપણ કર્યું છે, તેનો વેગ માપવા અને સાહિત્યના ઇતિહાસની કાલગણનામાં કાલિદાસ મારચિ તથા માઘનું સ્થાન ઘટકઢવા એ ત્રણ કવિનાં ઉપર કહેલાં કાવ્યના પદ્યવંધની ચોક્કસાઈથી સમીક્ષા કરવાની જરૂર છે. આપણે ગણતરી કરીશું તો જણાશે, કે રઘુવંશની અપેક્ષાએ કિરાતાર્જુનીયમાં અને શિશુપાલવધમાં વ્યાપકની સંખ્યા ઉત્તરોત્તર વધતી જાય છે. રઘુના વ્યાપક ઉપરાંત કિરાતમાં વીજા છ વ્યાપકનો અને માઘકાવ્યમાં કિરાતના વાર વ્યાપક ઉપરાંત વઢી વીજા છ નો વધારો થાય છે. આ ગણિતશ્રેણિએ પ્રવર્તતી વૃદ્ધિ મેઢાં કાઢનું અંતર સૂચવનારાં અનેક તત્વ મઢેઢાં મઢી આવે આવે છે. આલ્યાનકાલના અનુષ્ટુભૂનો પ્રયોગ મારચિ અને માઘની કૃતિમાં છેક જ ઘટી જાય છે. એ છેદમાં પહેલા કાવ્યના છ સર્ગો છે, ત્યારે વીજાં વે કાવ્યમાં વઘ્વે જ છે, અને તેમાં પણ એક એક સર્ગ તો શબ્દાર્થચિત્રમાં રોકાયો છે. ઉક્ત ચિત્રના પ્રદર્શનનું વિધાન નવું હોઈ વંધની સુગમતા ઉપર દષ્ટિ રાસી અનુષ્ટુભૂનો ઉપયોગ મારચિ અને માઘે શબ્દાર્થચિત્રના સર્ગમાં કર્યો હોય એમ સમજાય છે^{૪૧}. આલ્યાનક અનુષ્ટુભૂના જેવો જ ઘટારો કિરાત અને માઘકાવ્યમાં ત્રૈષ્ટુમી ઉપજાતિના પ્રયોગમાં થયેલો છે. રઘુના આઠ સર્ગ ઉક્ત પુરાણા ઉપજાતિ છેદમાં છે, તેના સુકાવલામાં વીજા વે કાવ્યોનો એક એક સર્ગ જ એ છેદમાં રચેલો છે. કાલિદાસના વ્યાપક

૪૧ નવમા ઘાતકમાં રતનાપર કવિ દરબિજયમાં શબ્દાર્થચિત્રના પ્રદર્શન માટે મોટા ૭૬ ઘાપરે છે.

સમ ઇંદ એકે એક મધ્યયતિરહિત છે. ભારવિ પહેલવહેલો મધ્યયતિવાલો મહર્ષિણી ઇંદ વ્યાપક તરીકે વાપરે છે; અને માઘ તે ઉપરાંત શાલિની રુચિરા તથા માલિનીનો ઉપયોગ કરે છે. અર્ધસમ અને વિપમ રૂપબંધના પ્રયોગમાં પણ એને જવાબ આપતી પ્રગતિ નજરે પડે છે. પહેલા કાવ્યમાં અર્ધસમ પૈકી એકલો વિયોગિની ઇંદ જ વ્યાપક તરીકે યોજેલો છે; બીજાં વેમાં તે સાથે માલ્યભારિણી. અને પુષ્પિતાગ્રાનો પ્રયોગ પણ છે. રઘુનો મોટામાં મોટો વ્યાપક ત્રણ રૂપનો, કિરાતનો તેરનો અને માઘકાવ્યનો પંદરનો છે.

૧૨ ઉપરના ટાંચણમાં વ્યાપકનો આંકડો કિરાતનો રઘુથી વમળો થાય છે, અને માઘકાવ્યનો કિરાતથી દોઢો થાય છે; એટલેકે પ્રગતિનું ગુણોત્તર ચાર અને ત્રણના પ્રમાણમાં આવે છે. તે ઉપરથી એવી અટકલ બંધાય છે, કે ભારવિથી માઘ જેટલો મોડો હશે તેના કરતાં કાલિદાસથી ભારવિ વધારે મોડો થયો હશે. ઉપર કહેલા માલ્યભારિણી અને પુષ્પિતાગ્રા એ અર્ધસમ તેમ જ ઉદ્ભૂતા એ વિપમ ઇન્દ ભારવિ અને માઘ વ્યાપક તરીકે યોજે છે, તે કાલિદાસના કાવ્યમાં છે નહિ; એ પણ કાલગણનાના પ્રશ્નની ચર્ચામાં ધ્યાન વહાર રહેવું ન જોઈએ. વઢી રઘુમા ઇંદોવૈવિધ્ય અને શબ્દાર્થ-ચિત્રના સર્ગ જુદા નથી, એક જ સર્ગમાં બંને વિષય સમાવ્યા છે; અને તેમાં પણ ચિત્રના પ્રદેશમાં માત્ર ચમકનું જ નિદર્શન છે. કિરાતમાં ઉક્ત વિષયના નિરૂપણમાં કર્તાએ બે સર્ગ રોક્યા છે; અને માઘકાવ્યમાં તો ત્રણ સર્ગ ભરીને પણ કવિ ધરાતો નથી. *^૨સંલ્યાનવિદ્યાના આ આંકડાગણિત કરતાં પણ વધારે મહત્વનો મુદ્દો પ્રસ્થાનમેદનો છે. કાલિદાસ અને અશ્વઘોષ એક પ્રસ્થાનના કવિ છે. ભારવિ અને માઘનું પ્રસ્થાન તેથી ભિન્ન છે. જોકે રઘુવંશ કિરા-તાર્જુનીય અને શિશુપાલવધ એક જ મહાકાવ્ય સંજ્ઞાથી ઓઢાયાય છે, તથાપિ ત્રણે એક કોટિનાં કાવ્ય નથી. રઘુવંશ અને સૌન્દરનન્દથી કિરા-

તાર્જુનીય અને શિશુપાલવધનો આદર્શ જુદો છે. પહેલાં ત્રે કાવ્યમા આધિકારિક વસ્તુ તે આધિકારિક જ રહે છે. તેનો વેગમર મનોહર વિકાસ, તે જ આગલ પડતું ધ્યેય છે. વીજાં વેમાં આધિકારિક વસ્તુ સ્વલ્પ હોઈ પ્રાસંગિક ઋતુવર્ણન, વનવિહાર, જલવિહાર આદના આવરણને લીધે પાછલ પડી જાય છે. તેના મનોહર વિકાસનો અવકાશ વસ્તુના પ્રમાણે સ્વલ્પ હોવાથી વેગ મહુ મંદ રહે છે. હંદના નાદમાં કાવ્યના મુર સંમુહાતા વંધ પડે છે; અને અલ્કારના ઠાઠમાટમાં અલ્કાર્યની મધુર મૂર્તિનાં દર્શન દુસ્તપ્રાય બને છે. જૂના પ્રસ્થાનમા પ્રતિમાનો વિહાર છે; નવા પ્રસ્થાનમાં કલ્પનાનો વિલાસ છે. કાલિદાસ અને અશ્વઘોષ શ્રોતાને યથેચ્છ રસનું પાન કરાવે છે, મારવિ અને માધ વાચકને ચમત્કારમાં વૂઢાવી દે છે. નવા પ્રસ્થાનનો ઉદય મરતનાટચ-શાસ્ત્રના નિર્માણથી મહુ મોડો નથી. જેટલે દરજ્જે માસ અને કાલિદાસનુ નાટ્યપ્રસ્થાન પ્રસ્તુત નાટ્યશાસ્ત્રના પ્રસ્થાનથી મિન્ન છે, તેટલે જ દરજ્જે અથવા તેથી વધારે કાલિદાસ અને અશ્વઘોષનું કાવ્યપ્રસ્થાન મારવિ અને માધના કાવ્યપ્રસ્થાનથી મિન્ન છે; અને વિશેષમાં કહેવું જોઈએ છે કે મિન્ન હોવાની સાથે પુરાણ પળ છે. નિર્દિષ્ટ મિન્નતા અને નવીનતાના કારણથી મારવિનો પૂર્વ અવધિ ઇસવી ચોથું શતક સંમવે છે. કિરાતાર્જુનીય વિશા-સ્વદત્તના મુદ્રારાક્ષસથી પ્રાચીન છે. ઉક્ત નાટકના ચોથા અંકનો દસમો શ્લોક મારવિના કાવ્યના વીજા સર્ગના મુઢતાઢીસમા શ્લોકના ઉત્તરાર્થનો સુસ્પષ્ટ અનુવાદ છે. મારવિ જ્યારે 'સહતે ન જનોડપ્યથ ક્રિયા કિમુ લોકા-ધિકધામ રાજકમ્ ।' એમ ઉધારે છે, ત્યારે વિશારતદત્ત એને મઠતું 'સઘ-પ્રીઢારસચ્છેદં પ્રાઘૃતોડપિ ન મર્પયેત્ । કિમુ લોકોત્તરં તેજો ત્રિભ્રાણ પૃથિ-વીપત્તિ ॥' એમ વીજા શબ્દમા કહે છે^{૧૩}. વિચારનું મઠતાપનુ મહુ હોવાથી નાટકની હાથપ્રતોમાં 'લોકોત્તરં તેજ.' ને સ્થાને 'લોકાધિક ધામ' પાઠ પેસી

૧૩ Prof. A. Hillebrandt ના સંસ્કરણમાં તેજ પાઠાંતર સંપ્રદીન છે, તે મપાઢી કવિ મોરોપતના શાપની પ્રતના પાઠને સુષ્ટિ અપ છે.

गयो छे. जो मोरोपंत कविने हाये नाटककारनो मूलमूत पोते योजेलो पाठ बचवा पाम्यो न होत, तो तेने माये किरातमांथी पद ऊतारी लीधानो आरोप चोटत; अने भारविना समयनिर्णयनी सीडीनूं एक पगथियूं नष्ट थात. मोरोपंतनी प्रतमां आपेला पाठने आधारे आपणे निश्चयथी कही शकिये छिये, के भारवि विशाखदत्तना पूर्वे थयो हतो. चालु व्याख्यानमां आगळ कहेवामां आवशे ते मुजब मुद्राराक्षस छद्म शतकनो चोथा चरणमां रचायूं हतूं. तेथी किरातार्जुनीयनो रचनाकाळ छद्म शतकथी व्हेलो होवो संभवे छे. ए समयने सेतुबन्ध आगळ धकेले छे. एनो कर्ता वाकाटक राजवंशनो द्वितीय प्रवर्सेन, ते सार्वभौम चंद्रगुप्त विक्रमादित्यनो दौहित्र थाय. एनो राज्यकाळ पांचमा शतकना पहेला चरणमां आवे छे. एणे सेतुबन्ध राजगादीए आव्या पछी तरतमां नवा प्रस्थाननी पद्धतिए रच्यूं हतूं. ए काव्य अणुराज (सं. अनुराग) मुद्राथी अंकित छे. मुद्रानो उपयोग व्हेलाभां, व्हेलो किरातार्जुनीयमां करेलो मळी आवे छे. ए काव्यमां राज्यलक्ष्मी पाछी वाळवानूं प्येयं छे, तेथी तेनी मुद्रा लक्ष्मी राखी छे. सेतुबन्धमां प्रेरक तत्त्व अनुराग छे. नायकनायिकाना परस्पर अचळ प्रेमने उद्देशीने प्रस्तुत काव्यनी मुद्रा कर्ताए नवा विधानने अनुसरी अणुराज कल्पी छे. ए रीते उद्भव पामेली ^{४४}बन्धचिह्नी प्रणालिका उत्तर काळमां चालु रहे छे; अने श्री विरह रत्न विमल आदि मुद्रानां काव्यो संस्कृतमां अने प्राकृतमां रचाय छे. आ मुद्रापद्धतिना प्रवर्तक भारविने पांचमा शतकना आरंभ पहेलां एटले के चोथा शतकमां हं अटकळथी मूकूं छूं^{४५}.

४४ पोतानी कृति ओळखाववाने भविए काव्यना प्रयेक सर्गना अंत्य श्लोकमा वापरलो बोल, मुद्रा

४५ दशकुमारचरितना कर्ता दडीनो प्रपितामह दामोदर भारविना प्रसंगमा आव्यो हतो, एवो अथन्तिसुन्दरी कयामां कविवंशवर्णनना अंगे उल्लेख छे; ते कोइ बीजो भारवि होवो जोईए. दडी कविनी सत्ता इसवी आठमा शतकना मध्यमा अर्काई छे. एना प्रपितामहमा समयनो भारवि सातमा शतकना

૧૧૩૧. ભારવિનો સમય, વિચારતાં સાધક પ્રમાણની અછત નહેલી, તે માધના સંબંધમાં નહતી નથી. વિચારવદત્ત અને મદિના મુખની જુવાની સાહિત્યના દફતરે પડી છે, તે ઉપરથી સમજાય છે કે તેણે શિશુપાલવધ સાતમા શતકના વીજા ચરણમાં રચ્યું હતું. એ કાવ્યના સોઝા સર્ગના ચોરાશીમા શ્લોકને છેડે 'સંપત્સુ ચાપત્સવિ', સંકેત છે, તે મુદ્રારાક્ષસના વીજા અંકના ચૌદમા શ્લોકને છેડે આવનારા 'સંપત્સુચાપત્સુ ચ' એ સંકેતની કદંગી વિકૃતિ છે. સમુદયવાચક રૂઢ 'ચ-ચ'ને મૂકીને માધ ઉક્ત શ્લોકમાં નવતર 'ચ-અપિ' યોજે છે; એ પ્રયોગ નથી પદ્યવંધની જરૂરિયાતના કારણથી, નથી વર્ણાવૃત્તિના નિમિત્તથી, કે નથી ચાળીની વિશદતાના હેતુથી કરેલો. નવોનતાનો મુદો જ એમાં બુદ્ધિગોચર થાય છે. આ એક જ અદ્યતરણ ઉક્ત નાટક અને કાવ્યની પૂર્વાપરતા સ્થાપિત કરવાને વસ છે. મુદ્રારાક્ષસ છઠા શતકના ચોથા ચરણમાં રચાયું હતું. તેની સાલ શિશુપાલવધની રચનાનો પૂર્વ અવધિ ઠરે છે. મદિનું રાવણવધ એનો ઉત્તર અવધિ પૂરો પાડે છે. એ શાલકાવ્યની સમાપ્તિ મદિદ વલમિના ધરસેનના રાજ્યકાલમાં કરી હતી^{૫૬}. એ નામના ચાર વલમીશ્વર થયા છે, તેમાંનો ચોથો ધરસેન જ મદિકાવ્યના સમાપ્તિશ્લોકમાં નિર્દિષ્ટ છે એવું મારું સમજવું છે^{૫૭}. પ્રવોધચન્દ્રોદય નાટકની ચન્દ્રિકા ટીકાના કર્તાએ આદર્શભૂત અમાત્યોની ફોટિમાં મદિને મૂક્યો છે^{૫૮}. એવચ્ચના આધારે હું ધારું છું કે તે ચોથા ધરસેનનો અમાત્ય

અતમાં અથવા વહુ તો મધ્યમાં સંભવે છે. કિરાતાકુંનીચના કર્તા ભારવિનો સમય તો ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે વ્હેલી હોવાથી તે ડણ્ડીના ઉક્ત પૂર્વજથી તદન જુદો છે. પ્રસ્તાવ ૧૨ માં જણાવ્યા મુજબ છઠા શતકના અતભાગમાં રચાયેલા મુદ્રારાક્ષસમાં કિરાતના એક શ્લોકાર્થનો શુદ્ધ પ્રતિષ્ઠાનિ સંમલ્ય છે. સવય કિરાતકાર ભારવિ અયન્તિસુન્દરીકથાનો ભારવિ હોઈ શકે નહિ.

૫૬ જુઓ મદિકાવ્યનો સમાપ્તિશ્લોક, વાવ્યમિદં રચિતં મયા વલભ્યાં ધ્રીધસ્તેનરેન્દ્રપાલિતાયામ્ । કીર્તિરતો ભવતાન્નૃપસ્ય તસ્ય ક્ષેમકર. ક્ષિતિપો યતઃ પ્રજાનામ્ ॥. પૂર્વે આરંભાયેલા કવિકાર્યના નિર્વાહનો ભાવ સામિપ્રાય 'ક્ષેમકરઃ' પદમાંથી નીકળે છે.

૫૭ જુઓ મારા અમરુશતક(આ. ૫)નો ઉપોદ્યાત, પૃ. ૧૭-૧૮.

૫૮ જુઓ ચન્દ્રિકાની નીચેની યંત્રિઓ, ચાળયમશિક્ષિવર્મયુગાન્ધરાગીન

હતો. એની મંત્રશક્તિનો ગ્રભાવ વિગ્રહમાં પરામવ પામી નાસી છૂટેલા સ્વામીને વિજયશાહી સાર્વભૌમ હર્ષવર્ધન સાથે સંધિ કરાવી રાજ્ય અને રાજકન્યા અપાવી મૂર્ત થયેલો જોવામાં આવે છે^{૪૯}. ધરસેનનો પિતા દ્વિતીય ધ્રુવસેન બાલ-દિવ્ય પાણિનિના અને કૌટિલ્યના દર્શનમાં કુશલતાનું અભિમાન ધરાવતો હતો. તેણે એ ઉભય દર્શનમાં પરમ પ્રવીણ મહિને પોતાનો અમાત્ય બનાવ્યો હશે; અને તેની જ પ્રસન્નતા સારું મંત્રીશ્વરે રાવણવધ શાસ્ત્રકાવ્ય આરંભ્યું હશે. પરંતુ એ કાવ્ય સમાપ્તિ પ્હોચેલું જોવા ધ્રુવસેન જીવ્યો નહિ. અધુરું મટ્ટિકાધ્ય ધરસેનના સમયમાં પૂરું થયું. એનો રાજ્યકાલ ઇ. સ. ૬૪૧ થી ઇ. સ. ૬૫૧ ઠરેલો છે^{૫૦}. માઘના શિશુપાલવધ સાથે મહિના રાવણવધમાં નામના મલ્તાપણા ઉપરાંત સરસાઈનાં તત્ત્વ પળ મળ્યાં છે. પહેલા કવિની કૃતિ ૨૦ સર્ગમાં છે, ત્યારે બીજાની કૃતિમાં તેનાથી બે સર્ગ વધારે છે. માઘે એક જ માત્રાવંધ વાપર્યો છે, અને તે પળ એકદેશી તરીકે જ. આ માત્રાવંધ તે પ્રાકૃતમાંથી ઝતરી આવેલો સ્કન્ધક કિંવા આર્યગીતિ છંદ, જે સેતુવંધના પંદરે આશ્વાસનો વ્યાપક છે. મહિણે તે ઉપરાંત ગાથા કિંવા આર્યા અને મુલગલિતક એ બે માત્રાવંધ પળ વાપર્યા છે; તેમાં સ્કન્ધકનો તો વ્યાપક તરીકે ઉપયોગ કર્યો છે. શિશુપાલવધમાં મોટામાં મોટું વૃત્ત એકવીસ રૂપનું સ્વઘરા છે. રાવણવધમાં કવિ ત્રેવીસ રૂપનું અશ્વલલિત પળ યોજે છે. એ બધી વાવતો ધ્યાનમાં લેતાં માઘકાવ્ય મટ્ટિકાવ્યની પૂર્વે ગોટવાય છે.

અ: પૂર્વમન્ત્રિતિલક્ષ્મણપિ ધિક્કરોતિ ॥. આના શિવવર્મન શબ્દથી કાતશ્વર શર્ધવર્મા અભિપ્રેત છે. એ ગાઢાસત્તસર્દૈના સંગ્રાહક સાતવાહનનો મન્ત્રી હતો. યુગંધરાદિ પદ યૌગધરાયણ સજ્ઞાનું સ્તોત્ર છે. એ વત્સરાજ ઉદયનનો અમાત્ય હતો.

૪૯ જુઓ વિન્ધ્યવનની કન્યકા (આ. ૩), ઉપોદ્ઘાત, પૃ. ૪૪-૪૫.

૫૦ મહિના સંવધમા વિશેષ હલિકત સારું જુઓ અમરુશતકનો ઉપો-

દ્ઘાત, પૃ. ૧૬-૧૮.

૧૧. ૧૪' ભારવિનંત્રવૃત્ત (જોડી) કાઢ્યું હોય, 'તો તે એક જ મધ્ય-
ક્ષામા સંભવે છે.' એનો પ્રયોગ કિરાતમાં એક વાર કરવામાં આવ્યો છે^{૧૧}.
આ એક પગલાથી વીજૂં (પગલું) પચવંધની પ્રગતિનું કિરાતકારે ભર્યું નથી.
મધ્યક્ષામા રૂપવંધ ભરતનાટ્યશાસ્ત્રના પંદરમા અધ્યાયમાં (તેમ જ વૃહત્-
સંહિતાના એકસો ત્રણમાં) આવ્યો નથી. ભારવિના આ નવતર વૃત્તના મધ્ય
માગની લઘુપ્રધાન રચના સ્વપરથી તેનું પાછળથી મધ્યક્ષામા નામ પાડવામાં
આવ્યું હોય એમ લાગે છે. ગણપદ્ધતિ પ્રમાણે એ વૃત્તનું 'મધ્યક્ષામા મમનયગ-
ગયુગ્ વેદાદ્ધૈઃ ।' એવું લક્ષણસૂત્ર ઠરે છે. ભારવિ સાથે સરસ્વામણીમાં માઘે પચ-
વંધમાં પ્રગતિ સારી કરી છે. એણે, કમીમાં કમી ચાર નવા ઈદ્દ રચ્યા છે,
તેમાં તેર રૂપનો કુટ્જ અને પંદરનો નૂતન^{૧૨} એ વે મધ્યયતિરહિત છે. ઉક્ત
ચારે ઉન્દ પૈકી એકે વૃહત્સંહિતામાં છે નહિ. શિશુપાલવંધ સર્ગ ૬ના શ્લોક
૭૨ ના પહેલા ચરણનો, અને સર્ગ ૧૩ ના શ્લોક ૬૯ ના વીજા ચરણનો
કુટ્જ અને નૂતનત્વ બોલ શ્લોકો પાછળથી એ વે રૂપવંધના અનુક્રમે
કુટ્જ અને નૂતન નામ રાખવામાં આવ્યાં હોય એમ જણાય છે. એમનાં
લક્ષણ 'કુટ્જં ભવેદિહ સર્ગૌ સસગાથેત્ ।' અને 'રો નમૌ યદિ ભરૌ ચરણે વદ
નૂતનમ્ ।' એ પ્રમાણે છે. એવી જ રીતે સર્ગ ૮ ના શ્લોક ૭૧ નું અતિશાયિની
અને સર્ગ ૩ ના શ્લોક ૮૨ નું ધૃતશ્રી^{૧૩} નામ પણ તે તે શ્લોક ઉપરથી પહેલું
સંભવે છે. પહેલામાં સત્તર તથા વીજામા એકવીસ રૂપ છે; અને મધ્ય યતિ
દસમા તથા અગિયારમા રૂપ પછી છે. એમનાં લક્ષણ 'સસગા અતિશાયિની
ભવેદ્ ભજગગા દિગમ્ઘૈઃ ।' અને 'નજમજજાશ્વ રદ્વદશમિર્હિ જરૌ ચ વદેદ
ધૃતશ્રિયંમ્ ।' એ વે પંક્તિથી સમજાશે.

૧૧ બુબો કિરાત ૫૧ ૩૧૧

૧૨ યામ્યહ્લભમાં આ વૃત્તનું સારસિકા તેમ જ દ્વારવતી નામ આપેલ છે
એ પ્રથમ આધુનિક છે. સાર્થક નૂતન સહા મં રણપિગલ્લમાંથી છીપી છે. અન્યત્ર
આ ઉદ નોંધ્યો નથી.

૧૩ આ વૃત્તનું વીજૂ નામ પચકાવલી છે

૧૫ ભારવિ અને માઘની વચ્ચે વસે અહીં વર્ષનો ગાઠો છે. તેનો પૂર્વ ભાગ ભારતના ઇતિહાસનાં ત્રણ ચાર પરમ ઝગ્ગવઠ પર્વ રીકે છે. ઇસવી સનના ચોથા શતકના પહેલા ચરણમાં મહારાજાધિરાજ પ્રથમ ચંદ્રગુપ્ત યશસ્વી ગુપ્તમહારાજ્યનો પાયો નાંખે છે. પુરાણો રાઠ (અનુગઢ) અયોપ્યા (સાકેત) અને ત્રયાગ પર્યંત એની આણ પ્રવર્તવાનો નિર્દેશ કરે છે^{૫૪}. તેનો પુત્ર સમુદ્રગુપ્ત ઉત્તરાપથના નવ રાજાઓને રણમાં રોઢી, ચારે સીમાડાનાં રાજ્યો સ્વંદિયાં વનાવી. દક્ષિણાપથના ચાર રાજાના મુલક સર કરી તેમને તે પાછા આપી, ભરતસંઢ પારનાં દેવપુત્ર શાહિ તથા શાહાનશાહિના ઉપર તે તે મૂમિના મોગવટાના પરવાનાથી તથા મહારાજ્યની સેવા ભરવાના ફરારનામાથી આધિપત્ય સ્થાપી, સિંહલદ્વીપ આદિ દૂર દેશાંતરના સંધિનાં ઘ્રહેણ સ્વીકારી ગુપ્તવંશનો પ્રતાપ સર્વતોમુસ વિસ્તારી પરાક્રમાદિત્ય વિરુદ ધરાષે છે^{૫૫}.

૫૪ જુઓ નીચેનો શ્લોક, અનુગઢ પ્રયાગ ચ સાકેત મગધાસ્તથા । ઇતાન્-
જનપદાન્ રાવાન્ મોક્ષ્યન્તે ગુપ્તવંશજા ॥ વદાચ અસલ પાઠ મોક્ષ્યતે ગુપ્તવંશઙ્ક
એવો હશે.

૫૫ જુઓ Corpus Inscriptionum Indicarum. No. 1, Allahabad Stone Pillar Inscription of Samudragupta. આ કીર્તિસ્તંભમાં કોતરેલી હરિષેણકૃત પ્રશરિત ઉપરથી સમુદ્રગુપ્તની વિજયયાત્રાનો સારો ઢ્યાલ વાધી શકાય છે તે પ્રથમ ગુપ્તરાજ્યની પૂર્વમા ઉત્તર વગાઠના નંદીને તથા આસામના એક ભાગના ચલવમણિ અને પશ્ચિમમા પૂર્વ માલવાના મતિલ તથા તેના પાડોશી નાગદસ્તને, પુષ્કરણના ચદ્રવમણિ, પદ્માવર્તીના ગણપતિ નાગને તથા પશ્ચિમ માલવ (૧)ના સુદેવને, ઉપરાત ઉત્તર દોઆવના નાગસેનને તથા રોહિલ-
સઢના અચ્યુતને રણમા રોઢી મુલક ચાલસા કરે છે. આ નવ રાજ્ય મેગ્ દક્ષિણ દોઆવન્ રાજ્ય પણ ઉત્તરાપથમાં ચાલસા કરેલ્ 'આદિ' શબ્દથી અમિપ્રેત ઢાગે છે. ત્યારપછી સમતલ દવાક તથા કામરૂપ પૂર્વ સીમાએ, મેપાલ અને વર્તુપુર ઉત્તર સીમાએ, અને માલવ, ઢાર્જુનાયન, ચૌષેચ, માદ્રક આમીર, પ્રાર્જુન, સનકાનીક, કાક, સર-
પરિક આદિ પશ્ચિમ સીમાએ તે જીતી તાવામા ઢાગે છે અહીં કાશ્મીર અને સૌરાષ્ટ્ર પણ જીતેલા દેશ તરીકે 'આદિ' શબ્દથી લક્ષિત જણાય છે. આ રીતે ઉત્તરાપથ સર કરી સમુદ્રગુપ્ત દક્ષિણાપથની સવારીએ નીચઢે છે, અને મહાકોશલ, મહાકાંતાર,

કહે છે કે એ સાર્વભૌમ રાજા પરમ સંગીતકુશલ હતો અને ઉત્તમ કવિ પણ હતો^{૫૬}. તેનો પુત્ર દ્વિતીય ચંદ્રગુપ્ત કુમારપદે સતાં જ્યેષ્ઠ વંધુ રામગુપ્તના રાજ્ય-કાલમાં સ્વયંત્ર થઈ વેટેલા સૌરાષ્ટ્રના મહાક્ષત્રપના વંશને ઝલેડી નાંખે છે; ^{૫૭} અને ગાદીએ આવ્યા પછી રાજ્યાધિકારની સંભાલિત દરમિયાન માર્થુ ઝવક-નારા વંગોને પૂર્વમાં તથા વાહ્લિકોને પશ્ચિમમાં જલ્લવટ થલ્લવટના વેવડા

પિષ્ટપુર, વેંગી, પલ્લક (નાલોર), કુસ્યલપુર, કોટર, વાસી, ધવગુપ્ત, કેરલ, ઇન્દ્ર-પલ્લ (ચાનદેશ) તથા દેવરાષ્ટ્ર (મહારાષ્ટ્ર), એ ચાર રાજ્ય જીતી લેઈ તે તે રાજાને પાછાં ધાપે છે. ધા ધારીમાં, 'ધાદિ' પદે વિદર્ભ-કુંતલના વાકાટકવંશી ષ્ટિધીવી-પેળના રાજ્યનો પણ સમાવેશ સમજાય છે. દિગ્વિજયોત્તર તે ધર્મશ્વેદ થઈ કરે છે. ભરતસંહ પારના વાયવ્ય દિશાએ વહુ નદી પર્યતના દેવપુત્ર, શાદિ, શાહાનુશાદિ, શક અને મુલ્લ રાજાઓ દરવારગઢ ઉપર મરહબ્ધજ ફરકાવી તેના પરવાના થકા રાજ્યનો મોગવટો કરે છે. સિંહલદ્વીપનો રાજા મહામૂલ્યવાન્ મેટ્ર મોયલી તેની મૈત્રી સાધે છે. વિશેષમા ધીનાદ લેપનપદ્ધતિને મલ્લતી ઝર્ષાધોલ્લેપનપદ્ધતિના સમુદ્રગુપ્તના સિદ્ધા જડે છે, તે ઉપરથી મારા મનમાં એવો તર્ક ઊટે છે કે સૌન સાથે મિત્રાચારીનો સંબંધ વંધાયા પછી કદાચ એ લેપનપદ્ધતિ પાટલિપુત્રની ટક-શાલ્યમાં સમુદ્રગુપ્તે દાખલ થરી હશે. સમુદ્રગુપ્તની અને તેની સાથે રામગુપ્ત, દ્વિતીય ચન્દ્રગુપ્ત વિક્રમાદિત્ય તથા પ્રવરસેનની ઘરસવારી કાવત જુઓ ચાહુ વ્યાહ્યાનને છેલ્લે પરિશિષ્ટ ૧.

૫૬ સમુદ્રગુપ્તના ધીનાવાલ્ય સિદ્ધા હજ્યા છે. તેના ધાપારે અને ગાલ તો ટિપ્પણી ૫૨ માં કહેલી હરિપેળકૃત પ્રશસ્તિના ધાઠમા શ્લોકના કવિમનિવિમ્બોત્સારણે ચાપિ કાવ્યમ્ (ભસ્ય), તેમ જ ગાન્ધર્વલલિતૈર્મીઠિત
.. તુમ્બુરનારદાદિઃ વિદ્વજ્જનોપજીવ્યાનેકવ્યવ્યક્રિયાભિઃ પ્રતિષ્ઠિત્કવિરાજસાદ્ભસ્ય
વગેરે ધચનના ધાધારે પ્રસુત લલ્લેચ્ચ ધર્ષો છે. જુઓ યહી પ્રસ્તાવ ૪૦ માં પરકમસ્ય અને કદરાબસ્ય શુદ્રાની. ગાદ્યાસસસર્ઈમાંથી ડતારેલી ગાયાઓ.

૫૭ જુઓ ૬. ઠ. ૧૧૨૮ના નવેવર-હિસેવરના શુદ્ધિપ્રકાશમાં સમુદ્રગુપ્ત નો પ્રમપ્રાસ ઉત્તરાધિકારી એ મથાગ્રાથી છપાયલો મારો છેલ્લ. સૌરાષ્ટ્રના મહાક્ષત્રપે સમુદ્રગુપ્તના ઇમવથી ગુપોન્ ધાધિપત્ય સ્વીપાયું દટૂ. તેની રૂપ સમુદ્રગુપ્ત પટી તેનો મોટો પુંવર રામગુપ્ત ગાદીએ ધાવ્યો તે પ્રસંગે મહાક્ષત્રપ તૃતીય દરશિલે નજરાગી મોષ્લ્યો નદિ એમ જનાય છે. તેની એ નાફરમાની માટે દંષ દેશને

જંગથી જેર કરે છે^{૫૮}. વઢી દક્ષિણમાં વિદર્ભ-કુંતલના વાકાટકવંશી
ફિતૂરી દ્વિતીય રુદ્રસેનને વઢથી જીતી રાજકુમારી પ્રભાવતીગુપ્તા

રામગુપ્તે સૌરાષ્ટ્ર ઉપર ચઢાઈ કરી. તેમાં એનો ન્હાનો ભાઈ કુમાર ચંદ્રગુપ્ત વિદિ-
શાના પાટનગરથી જોડાયો; અને ઘવટ ભાઈ પ્રતિનિધિપદે પાટલિપુત્રમાં રહ્યો. રુદ્રસિંહ
ગિરિનગરમાં ભરાઈ પેસતાં શહેરને ઘેરી લેવાને ગુપ્તસેના આગઢ વધતી હતી, તેવામાં દુરમને
ગઢમાંથી એકાએક આઢે માગેં ઘસી આવી રામગુપ્તને ગિરનારની ઘાંટીમાં ઘાંતયો.
તેના પંજામાંથી છટકવા ગુપ્ત રાજાએ ઘણા ઘણા ડધામા કર્યાં, પણ તે નિષ્ફલ
ગયા. છેવટે સેનાના છૂટકારા સારું રુદ્રસિંહને રાણી ધ્રુવદેવી આપવાનું લાચારીથી વધૂલો
તે મેલાણે આઢ્યો. ત્યાં શક રાજા ઉપર ઘેર ઘાઢવા મહારાણીના વેશમાં સજ્જ થયેલા
રાજકુમાર ચંદ્રગુપ્તે ગિરિનગર જવા રાજાની રજા માગી; પણ વંધુવત્સલ રામગુપ્તે
આપી નહિ. ત્યારે ગુપ્તકુમાર પોતાના મિત્રને અને માતૃસ્થાનીય મહારાણી ધ્રુવદેવીને
જ માત્ર જાણ કરી મહારાણીના ઠાઠમાં શક રાજાના શહેરમાં ગયો અને ઇંત:પુરમાં
વિનશંકાએ પ્રવેશ પામી તેણે રુદ્રસિંહનો ઘાટ ઘડી નાંહ્યો. પછી ગાંઢાના વેશમાં
છટકી જઈ સેના સાથે ચઢી આવી રાજા રામગુપ્તના નામથી તેણે ગિરિનગરનો
કબજો લીધો. તેના અદ્ભુત સાહસ અને પરાક્રમથી પરમ પ્રસન્ન થઈ મોટા ભાઈ
રાજમુકુટ પાતાના માથેથી ડતારી ન્હાના ભાઈના માથે મૂક્યો. દેવીચંદ્રગુપ્ત
નાટવનાં અવતરણમાંથી આ હકીકત મોટે ભાગે તારવી કાઢી છે. કાવ્યમીમાંસામાં
વૃત્તેતિવૃત્ત એટલે ઇતિહાસિક મુક્તવના ઉદાહરણ રૂપે આપેલા શ્લોકથી, હર્ષચરિત-
માંના ડતારથી, અને રાષ્ટ્રકૂટવશી પ્રથમ ડમાંઘવર્ષના સંજાણના તામ્રપટના અઢ-
તાઢીસમા શ્લોકથી તેનું સમર્થન યાય છે; જોકે ડને શ્લોકના પાઠ વત્પનામાં ન
આવે એવા અષ્ટ છે. વઢી વ્યાઘ્રવધનો પહેલો સિક્કો સમુદ્રગુપ્તે પઢાવેલો મઢે
છે તે જેમ તેણે ઢંગઢ જીત્યાની સાક્ષી પૂરે છે, તેમ સિંહવધનો પહેલો સિક્કો
દ્વિતીય ચંદ્રગુપ્તે પઢાવેલો જઢે છે તે તેણે સૌરાષ્ટ્ર જીત્યાની સ્વાતરી આપે છે.
'પ્રાચીન ભારતના ઇતિહાસ'માં વિન્સેટ સ્મિથ દેવીચંદ્રગુપ્ત અને હર્ષચરિતના
ડતારા તરફ શા માટે અનાસ્થા ઘતાવે છે અને રામગુપ્તને ઢનૈતિહાસિક વ્યક્તિ
માને છે. તે સમજાતું નથી.

૫૮ જુઓ Mehrauli Iron Pillar Inscription of
Chandra. આ લેખમાં વહેલો ચંદ્ર તે ગુપ્તવંશી પ્રથમ ચંદ્રગુપ્ત હોવો જોઈએ, એમ
કેટલાએક પુરાવિદ્ કહે છે. ઢીજાઓનું એવું માનવું છે કે એ પુષ્કરણનો ચંદ્રવર્મા
સંભવે છે, જેને પાછઢથી સમુદ્રગુપ્ત યુદ્ધમાં હણી જીતી લીધેલું રાજ્ય પોતે
સાલસા કરે છે. પરંતુ પ્રસ્તુત લેખના પ્રથમ શ્લોકના ઉત્તરાર્ધમાં દરિયાદ સવારીની

પરણાવી સ્નેહના મંત્રથી વેવડા જીતી લે છે^{૫૯}, જે નીતિ ઘનસેં
 વરસ પછી ચક્રવર્તી હર્ષવર્ધન વલભિપુરના દ્વિતીય ધ્રુવમટ કિંવા ધ્રુવસેન
 પ્રત્યે અંગીકાર કરે છે^{૬૦}. અત્રોક્ત રામગુપ્તની રાણી ધ્રુવદેવીની નોંચ માગળી
 કરનાર મહાક્ષત્રપના નગરમાં મોજાઈ રાણીના વેશમાં જઈ તેનો જીવ લીધાથી
 દ્વિતીય ચંદ્રગુપ્ત ' સાહસાંક ' સંજ્ઞા આપે છે^{૬૧}. તે ચારિત્રમાં દેવ

નોંધ છે, તે તરીહદના રાજ્યથી થવી અશક્ય છે. જેના રાજ્યમાં જલપથ ન
 હોય, તે સમુદ્ર કોંઠવાનો વિચાર જ ન કરી શકે. સુસ્કીહદના રાજાથી એ ધને જ
 નહિ. ઉક્ત બે રાજામાંથી એક તરીહદનો રાજા હતો નહિ. એ બેમાંથી એકે
 રાજાએ આર્યાવર્તનને એકાધિપત્ય પ્રાપ્ત કર્યું ન હતું, ખ્યારે લેખના શ્રીજા શ્લોકમાં
 કહ્યા પ્રમાણે ચંદ્રે તો એકાધિપત્ય સ્થાપ્યું હતું. ઉક્ત ચંદ્ર કોણ તેનો કહેલ,
 વામનકૃત કાવ્યાલંકારસૂત્રવૃત્તિમાંથી નીચે શ્લોક કતારેલો છે, તેનાથી સાબ્ય ધને
 છે:—અપ્યશક્યં ત્વયા રત્તં દુઃસં શક્યન્તરાત્મનિ । વાષ્પો વાહીકનારીણાં ચાશુવાહી
 કપોલયોઃ ॥. એમાં જળાબ્યા પ્રમાણે સૌરાષ્ટ્રના શક રાજાની રાણીઓની દુર્દશા કર-
 નાર તે જ વાહીકરાજાની રાણીઓને ચોધાર રોતી કરનાર હતો. હવે દેવીચંદ્રગુપ્ત-
 ને આધારે આપણે જાણિયે છિયે કે શક રાજા તૃતીય શ્દસિંહને હણીને શક સ્ત્રી
 (શક્તી)ઓને હનેશની દુઃશિયાસી કરનાર મીઝો ચંદ્રગુપ્ત જ હતો. એલે વાહીક-
 સ્ત્રીઓને હમેશની રહતી કરનાર પણ તે જ ઠરે છે. વાહીક તથા વાહિક પર્યાય
 શબ્દ છે. પંજાબના લોક ધને પંજાબના રાજા તે વાહીક કિંવા વાહિક. અર્થાત્
 કાવ્યાલંકારસૂત્રવૃત્તિના શ્લોકનો અને મ્હેરૌલીના લેખમાંના શ્લોકનો ચન્દ્ર મારા
 સમજવા પ્રમાણે દ્વિતીય ચંદ્રગુપ્ત વિક્રમાદિત્ય છે. ઉક્ત લોહસ્તમ્ભમાં જેમ દુંક
 નામ ચન્દ્ર ટાંખ્યું છે, તેમ એના કેટલાએક સિક્કામાં પણ ચન્દ્ર મુદ્રા ટાંકેલી
 જોવામાં આવે છે.

૫૯ જુઓ The Journal of the Mythic Society, Vol.
 XII, No. 9, January, 1925, એ અંકમાંનો The Vakatakas
 in Gupta History એ મથાલ્કનો લેખ.

૬૦ જુઓ ધિંધ્યધનની કન્યકા (આ. ૩.), ઉપોદ્ધાત, પૃ. ૫૪-૫૫;
 અને અમરશતક (આ. ૩), ઉપોદ્ધાત, પૃ. ૯૮.

૬૧ એ સંજ્ઞાનો પ્રયોગ રાજશેસરની કાવ્યમીમાંસામાંનાં નીચે આપેલાં અથ
 તરણોમાં કરેલો છે:—(૧) વાસુદેવસાતવાહનવાહસાહ્યાદીન્ સ્વચ્ચન્ સમાપતીન્

जेवो होवाथी 'देवराज' अने 'देवगुप्त' एवां उपनामथी तेनो ताप्रपटमां उल्लेख छे^{६२}. चीनी यात्राळु फा-हियान पण तेना पवित्र शासननां वखाण करे छे^{६३}. तेना पराक्रम अने प्रतापथी मुग्ध थई पांटच देशना राजाए तेने भारे नजराणो मोकलाव्यो हतो^{६४}. विक्रमादित्य विरुद तेना शत्रुविजयनी साक्षी पूरे छे. म्हैरौलीना लेखमा जेना पराक्रमना परिमळथी दक्षिण

दानमानान्यामनुकुर्यात् १, (२) ध्रुयते हि उज्जयिन्या साहसाद्धो नाम राजा । तेन हि ससृष्टभापात्मकमन्त पुर एव प्रवर्तित नियमन । जुओ वळी सरस्वती फण्टाभरण।२।१६।नो नीचेनो श्लोक, केऽभूवभ्राह्मणराजस्य राज्ये प्राकृतभाषिण । काले श्रीसाहसाद्धस्य के न ससृष्टवादिन. ॥ साहित्यपोषक बीजा चद्रगुप्तनो उपरना कताराजोमा जेम साहसाक सज्ञाथी उल्लेख कर्यो छे, तेम गा स्. १५। ६७ । मा विक्रमादच (स विक्रमादित्य) सज्ञाथी निर्देश करेलो छे. मतलब के ए उपनाम जगजाणीता होवाथी नामने बदले कपराया छे.

६२ जुओ *Annals of the Bhandarkar Institute, July, 1823*, मा *Dr S K. Aiyanger* नो *The Vahatakas and their place in the History of India* ए मथाळनो लेख देवराज अने देवगुप्त उत्तमचारित्रवाचक उपनाम छे. ए उपनाम साथे *Corpus Inscriptionum Indicarum, No. 6* ना लेखना त्रीजा श्लोकनू पूर्वार्ध तस्य राजाधिराजपैरचिन्त्योजितकर्मण. । सरखाववू घटे छे

६३ जुओ पं विश्वेश्वरनाथ रेड कृत भारतके प्राचीन राजवंश, द्वितीय भाग, पृ २७०-७१

६४ जुओ *सुभाषितावलि (B S S), Introduction, p 118* मा कतारेलो नीचेनो श्लोक - अष्टौ हाटककोट्यखिनवतिमुत्ताफलाना तुला पद्याशान्मदगन्धलुब्धमधुपा क्रोधोदधुरा सिधुरा । लवण्योपचयप्रपञ्चचतुर पण्यज्ञानाना शत दण्ड पाण्डधनृपेण ढौकितमिम वैतालिकायापार्य ॥. प्रस्तुत श्लोकनी टिप्पणी अनुसार प्रसंग आ प्रमाणे छे. पाण्डव देशना राजाए मोकलेला नजराणो दरवारमा रजू थाय छे, तेनी बोध लेता भाडागारिक 'दण्ड पाण्डधनृपेण ढौकितमिम' पछो 'प्राप्य प्रभोन स्मय ॥' के एवू बीजू वंशक उबारवा जतो हतो एवामा कोइक वैतालिके प्रसंगे अनुकूल राजप्रशस्तिनो श्लोक जोडी काडी ललकार्या ते सामळी विक्रमादित्ये भाडागारिकनू अधुरुं वाक्य वैतालिकायापार्य ॥' ए मुष्टिदानना वचननी पूरुं करी वीधुं.

સમુદ્ર, સુવાસિત ધ્યેલો વર્ણવ્યો છે, તે આ શુભવંશનો વીજો, સાર્વભૌમ
 રાજા^{૬૫}. સુભાપિતાવલિમાં વિક્રમાદિત્ય નામસુદ્રાથી એનાં કેટલાંક સુભા-
 પિતો આપ્યાં છે^{૬૬}. એની કોઈક અજ્ઞાત કૃતિ ઉપરથી ઉજ્જયિનીના કાવ્ય-
 પંથે અર્પૂં સાહિત્યકાર તરીકે એનો સત્કાર કર્યો હોય એમ સમજાય છે^{૬૭}.
 મેંઠ અને વિક્રમાદિત્ય (અર્થાત્ દ્વિતીય ચંદ્રગુપ્ત વિક્રમાદિત્ય)ના કાવ્ય-
 વિનોદનો એક રમણીય પ્રસંગ સુભાપિતસંગ્રહના ગ્રંથમાં જઙ્ઘાઈ રહેલો જઢે
 છે. એક કવિએ વીજા કવિને સમસ્યાપૂર્તિનાં અતસીપુષ્પસંકાશં અને ન તેપાં
 વિચતે મયમ્ । એવે આર્થતચરણ આપ્યાં, તેના જવાબમાં તેણે એ સમસ્યા નીચેના
 શબ્દમાં પૂરેલી કહેવાય છે:--અતસીપુષ્પસંકાશં સ્વં વીદય જલદાગમે । યે
 વિયોગેऽપિ જીવન્તિ ન તેપાં વિચતે મયમ્ ॥^{૬૮}. આ ધરમ યશસ્વી રાજા

૬૫ જુઓ પ્રસ્તુત લેક્ષના શ્લોક. ૧ નું ચોથું ચરણ, યસ્થાયાપ્યધિવાસ્યત
 જલનિધિર્વીર્યાનિલૈર્દક્ષિણઃ ॥. પ્રશસ્તિના વિષયમૂલ રાજાનું સાર્વભૌમત્વ ઉક્ત
 લેક્ષના શ્લોક ૩ ના એકાધિપત્ય પદથી નિર્દિષ્ટ છે. એ પદ પ્રથમ ચંદ્રગુપ્તને લાગુ
 પાઠી શકાયું નથી.

૬૬ વિક્રમાદિત્ય નામસુદ્રાથી વીજા ચંદ્રગુપ્તની કૃતિ તરીકે ચાલ્યા આવતા શ્લોક
 માટે જુઓ સુભાપિતાવલી ૫૦૬, ૫૦૭, ૧૧૬૫, ૨૧૯૦, ૨૧૯૩, ૨૩૧૮,
 ૩૪૯૪ વગેરે. ચંદ્રગુપ્ત વિક્રમાદિત્યે નાટયશાસ્ત્ર સંબધી કોઈક પ્રમાણમૂલ ગ્રંથ રચ્યો હતો,
 એવું સાગરનંદીના નાટકલક્ષણરત્નકોશને અંતે આપેલા નીચેના શ્લોક ઉપ-
 રથી મારું અનુમાન છે:--શ્રીહર્ષવિક્રમનરાધિપમાતૃગુપ્તગૌડમકુટનરાવુટકવાદરાણામ્ ।
 એવા મતેન ભરતસ્ય મતં વિગાહ્ય સ્પષ્ટ મયા સમજગચ્છત રત્નકોશમ્ ॥. અહીં
 ટૂંકા વિક્રમ પદથી રાજા ચંદ્રગુપ્ત વિક્રમાદિત્ય અભિપ્રેત છે એમ મારું સમજવું છે.
 ટિપ્પણીમાં આપેલા ઉત્તારા વાચત જુઓ પુરાતત્ત્વ, પુ ૫, અં. ૨. 'નારતીય
 નાટયશાસ્ત્રના બે નવીન ગ્રંથો' એ મયાઢાનો લેક્ષ.

૬૭ જુઓ રાજશેખર કૃત કાશ્થમીમાંલા ૭૦૧, ધૂટતે હિ
 ઉજ્જયિન્યા કાવ્યપરીક્ષા । શ્દ્ધ કાલિદાસમેષ્ટાવત્રામરુ૧૧૨આસ્થયઃ । શ્રિચન્દ્ર-
 ચન્દ્રગુપ્તો પરીક્ષિતાવિહ વિશાલાયામ્ ॥.

૬૮ જુઓ સુભાપિતાવલિ, ૧૭૧૮. એ શ્લોકની સુદ્રામાં વિપમાદિત્ય
 છે, તે શાકિત વિ-માદિત્ય પરથી ધ્યેલ લાગે છે કસલ પાઠ વિક્રમાદિત્યસ્ય હસે;
 કારણકે વિપમાદિત્ય નામે કોઈ કવિ જાણીતો નથી.

પછી પ્રથમ કુમારગુપ્ત મહાદ્રાદિત્ય અને તેના પછી સ્કંદગુપ્ત ક્રમાદિત્ય કિંવા વિક્રમાદિત્ય^{૧૯} ગાદીએ આવે છે. અહાંથી ગુપ્તોનો સોઢે ફઢાએ પ્હોચેલો પ્રભાવ ક્ષીણ થવા માંડે છે. તેની સવાસો વર્ષની શારદી પૂર્ણિમામાં સરસ્વતીના હંસોના મધુર સંગીતથી આકાશ કેધૂં શબ્દાયમાન થઈ રહ્યું હશે, તે અત્યારે કેવઢ કલ્પનાગમ્ય જ છે. એ સંગીતના વિરલ સુર અલંકારના ગ્રંથોમાં અંકિત થયેલા કહાંક કહાંક સંભઢાય છે. વિક્રમાદિત્ય અને મેંટની સમસ્યાપૂર્તિના જેવું કાલિદાસ અને વિક્રમાદિત્યનું ઢુંકું સંભાષણ સરસ્વતીકળ્ઢાભરણ અને શૂંગારપ્રકાશમાં આપેલું છે^{૨૦}. આ વે નોંધનો વિક્રમાદિત્ય તે સંભાવિત વિદ્વાનોના અભિપ્રાય પ્રમાણે અપ્રોક્ત ઢ્વિતીય ચંદ્રગુપ્ત વિક્રમાદિત્ય છે. એના સમયને શોભાવનારા કવિઆનાં હ્યગ્રીવવધ આદિ મહાકાવ્યો તો વધાં એ નાશ પામ્યાં છે. વચૂં છે એક જ સંઢકાવ્ય, કાલિદાસનું મેઘદૂત. કાલિદાસનું એટલે રઘુકારનું^{૨૧} ના, તેનું નહિ, પણ તેના પછી ચારસે વરસે ગુપ્ત સાર્વભૌમ રાજાના દરવારમાં થયેલા વીજા કાલિદાસનું^{૨૨}. કુમારસંભવ અને

૬૬ જુઓ ૫ વિશ્વેશ્વરનાથ રેઢ દ્વિત ભારતકે પ્રાચીન રાજવશ, ઢ્વિતીય ભાગ, પૃ. ૨૬૨, સ્કંદગુપ્તકી ઉપાધિ ‘ક્રમાદિત્ય’થી । ચારીકે કિસી કિસી સિક્કે પર ‘વિક્રમાદિત્ય’ મી લિખી મિલતી હૈ.

૭૦ જુઓ નીચેનો ઉત્તારો.—કાલિદાસ ‘કિં કુન્તલેશ્વરઃ કરોતિ’ હ્વિ વિન્નમાદિત્યેન પૃષ્ઠઃ ઉક્તવાન્ । “અસમ્ભવહસિતત્વાત્ ક્ષાલિત્તાનીય વાન્ત્યા મુકુલિ- સનયનત્વાદ્ વ્યક્તવર્ણોત્પલાનિ । પિવતિ મધુસુગન્ધીન્યાનનાનિ પ્રિયાણા ત્વયિ વિનિ- હિતમારઃ કુન્તલાનામધીશઃ ॥ ”. હ્વદમેવોહયિત્વા વિન્નમાદિત્યઃ પ્રત્યુચ્યે । ‘અસ- કલ... । પિવતુ ..મયિ કુન્તલાનામધીશઃ ॥’ ઇતિ ॥

૭૧ મેઘદૂતમા અઢ્રેઃ શૂઢ્વં પ્રતીક્ષના શ્લોક ૧૪ ઉપરની ટીકામા દક્ષિણા- વર્ત અરુણાચલનાથ અને મઢ્વિનાથ મેઘકાર કાલિદાસને હ્વસથી ષોચા શતરના વીજા ત્રીજા ચરણમા થયેલા પ્રસિદ્ધ ષૌદ્ધ નૈયાયિક ઢ્વિઢ્વનાગાચાર્યના સમયમા મૂકે છે પ્રસ્તુત શ્લોકમાથી ટીકાકારોએ જે ષ્વનિ કાલ્લો છે, તે મેઘકારને માગ્યે જ હ્વટ હોય. એ ષ્વનિ એન્લો ક્લિષ્ટ છે, કે સાધારણ કવિ પણ તે ષોજે નહિ, મેઘકાર કાલિદાસે તો ષોજ્યાનો સમવ જ નથી. ટીકાકારોએ વન્પેલા ષ્વનિની ષોજના પાછલ ઢ્વિઢ્વનાગ મેઘકાર અને નિચુલ પાસપાસેના સાહિત્યકાર

રઘુવંશના પદ્યવંધની સંમીક્ષાના પ્રસંગે મેઘદૂતને મેઘૂં લીધું ન હતું તે આ જ કારણથી. પ્રસ્તુત ટંકકાવ્ય મતભેદ વગર રઘુકારને નામે ચાલ્યું ધાવે છે, તે અન્ય કાલિદાસનો કૃતિ કેમ હોઈ શકે ?—૧ પ્રશ્નનો ઉપલક્ષ્યા ઉત્તર શોધવો પડે એમ નથી. જેવી રીતે ઋતુસંહાર,, શૃંગારતિલક, શ્રુતવોધ આદિ એને નામે ચડેલાં છતાં એની કૃતિ નથી^{૭૨}, તેવી જ રીતે પ્રસ્તુત દૃતકાવ્ય પણ એને નામે ચડેલું છતાં એની કૃતિ નથી. નલોદય નામે યમકકાવ્ય એક કાલે રઘુકારે રચેલું લેખાતું હતું. હાલ તેનો કર્તા નવમા શતકના ઉત્તરાર્ધનો રવિતનય વાસુદેવ. સ્વીકારાયો છે^{૭૩}. પ્રાકૃત માધાનું સુવિખ્યાત સેતુબન્ધ કાવ્ય પણ અકબર વાદશાહના વચ્ચતમાં કાલિદાસના નામે નોંધાયું હતું^{૭૪}. આજ તે એના અસલ કર્તા વાકાટકવંશી પ્રરસેનને નામે પુનઃ સ્થાપિત થયું છે. અભિષેક કિંવા રામાભિષેક નાટક માસ કવિનો કૃતિ તરિકે પ્રકાશિત છે તે માસની કૃતિ નથી, એનું મારે આવા જ કારણથી અન્યત્ર કહેવું પડ્યું છે^{૭૫}. રઘુવંશનો કર્તા કાલિદાસ છે અને મેઘદૂતનો કર્તા કાલિદાસ જ છે,

હોવાની જૂની પ્રસિદ્ધિ પરપરાએ ચાલી આવેલી હોવાય છે. તેને અવલંબીને હું દિહ્નાગની ઉત્તરાવસ્થામા મેઘદૂતના કર્તાની સત્તા સ્વીકારું છું. એ લેખે કવિનો પૂર્વ અરધિ ફલગી ચોથા શતકના મધ્યમા ગોઠવાય છે. ઉત્તર અરધિ દશપુર (મદસોર)ના સૂર્યમંદિરની પ્રશસ્તિના વર્ષથી અંકાય છે. પ્રસ્તુત શિલાલેખના શ્લોક ૧૧-૧૨ માં મેઘદૂતના વિદ્યુત્ત્વન્ત પ્રતીકના શ્લોક છાસટની સુસ્પષ્ટ છાયા છે શિલાલેખની સાલ સં. ૫૨૫ ઇસલે દ. સ. ૪૭૩ છે. તેનાથી મોટા મેઘકારને મૂકી શકાય નહિ. અર્થાત્ ફલગી પાંચમા શતકના ત્રીજા ચરણનો અત્, તે એનો ઉત્તર અરધિ ઠરે છે.

૭૨ જુઓ પરાક્રમની પ્રસાદી (આ. ૬), ઉપોદ્યાત પૃ. ૨૬-૨૭.

૭૩ જુઓ. The Journal of the Mythic Society, Vol.

XIV, No. 4, Nalodaya and its author એ મથાલ્યાનો A. S. Ramnath Ayyar નો લેખ.

૭૪ જુઓ રામદાસદેવ સેતુપ્રદીપ ટીકાના આરંભે આપેલો શ્લોક ૧૪.

જુઓ વહી સે.વ. ૧૧૧૨૧ ઉપરની ઉક્ત ટીકાની ઉપાનિકા.

૭૫ જુઓ મારા પ્રતિમા નાટકનો ઉપોદ્યાત, પૃ ૧૭-૨૦.

તે ઉપરથી ઉક્ત મહાકાવ્ય અને સ્વંદકાવ્યનો કર્તા એક ઠરે નહિ. પાર્વતી-પરિણય નાટકના કર્તાનું અને કાદમ્બરી કથાના કર્તાનું નામ એક હોવાથી નાટક કથાકારને માથે મારવામાં આવવું જોઈએ નહિ. ઉક્ત નાટકમાં છૂટથી ગીતિનો ઉપયોગ કર્યો છે, તે પોકારીને કહે છે કે તે કથાકારની કૃતિ નથી. સંસ્કૃત સાહિત્યમાં એ માત્રામેળનો બદોલો પ્રચાર સાતમા શતક જેટલો જૂનો નથી. વાળીવિલાસપ્રન્થમાલામાં છપાયેલા પાર્વતીપરિણય નાટકની ભૂમિકા ઉપરથી જણાય છે કે નાટકકારનું નામ વામન હતું અને મદ્દવાળ, વાળ અને અભિનવવાળ તો તેનાં ઉપનામ હતાં. જેમ દ્વિતીય ચંદ્રગુપ્તનું ઉપનામ વિક્રમાદિત્ય તેના નામને સ્થાને વપરાયેલું મઠી આવે છે, તેમ પ્રસ્તુત ઉપનામ કવિ પોતાના નામના પર્યાયરૂપે વાપરે છે. નાટકકાર દક્ષિણનો અને કથાકાર ઉત્તરનો વતની હતો. ઉપનામધારી કવિ પંદરમા શતકમાં અને મૂલનામધારી સાતમા શતકમાં થયો હતો. બે વાળનામના સાહિત્યકાર એક વીજાથી ભિન્ન છે. માત્ર નામની એકતાને આધારે કર્તૃત્વનો નિર્ણય થતો હોય, તો પાતાલવિજય કિંવા જામ્બવતીજયના કર્તા વ્યાકરણાચાર્ય પાણિનિ ઠરવા જોઈએ. પરંતુ એ કાવ્યમાં શાર્દૂલવિક્રીડિત અને સ્વગ્ધરા હંદ વાપરેલા છે^{૭૬}, તે કહી આપે છે કે એનો કર્તા કિરાતકાર ભારવિનાથો પણ અર્વા-ચીન કોઈ અવૈયાકરણ પાણિનિ છે^{૭૭}. મેઘદૂતની અસાધારણ ચમત્કૃતિથી અંજારૂં ગયેલા જગતે મૂલથી વીજા કાલિદાસની કૃતિ પહેલા કાલિદાસને નામે ચઢાવી દીધી હોય, તો છેક ન માનવા જેવું જણાતું નથી. પરંતુ કર્પ-નાની ભોંય ઉપર શા માટે ભોંત ચળવી ? કંડા ક્તરી પાયાની મજબૂતાઈ સાધી આગળ વધિયે તે જ ઠીક. માટે જહી આવે તે દાર્શનિક પૂરાવાને માર્ગે વલ્લિયે. પૂર્વે ભારવિના કિરાતની સમીક્ષાને પ્રસંગે કાવ્યના જૂના અને નવા પ્રસ્થાનનો નિર્દેશ કર્યો હતો, અને રઘુને જૂના પ્રસ્થાનનું કથાકાવ્ય તથા

૭૬ જુઓ સુભાષિતાયલિના શ્લોકો ઉપોદયાતમાં પાણિનિને નામે નેધેલા હંદ. પાતાલવિજય ઉપલબ્ધ નથી.

૭૭ જુઓ પરાક્રમની પ્રસાદી (આ. ૬), પૃ. ૨૬.

કિરાતને નવા પ્રસ્થાનનું પ્રસ્તાવકાવ્ય ઠેરવ્યું હતું. રઘુ અને કિરાત જેવો જ પ્રસ્થાનભેદ રઘુ અને મેઘમાં પણ છે. પહેલામાં આધિકારિક વરતુની અતિ વિપુલ સમૃદ્ધિ અને કથાનો અસ્ખલિત વેગ અવિચ્છિન્ન આનંદ ઉપજાવે છે. વીજામાં વસ્તુ આહૂં છે, અને વેગ મંદ છે. મેઘમાં માર્ગનું નિરૂપણ પ્રાસંગિક લે. આધિકારિક સંદેશના પ્રમાણમાં એ પ્રાસંગિક વિષયનો કર્તાણ વધારે પડતો વિસ્તાર કર્યો છે. વિયોગમાં ઘુરી મરતી પ્રિય પત્નોનું જીવન ટકાવવાને અધીરા બનેલા પતિના મુખમાં એ વિસ્તાર વિદ્વેષકારી હોઈ ઔચિત્યનો મંગ કરે છે. આવો અંગની અતિવિસ્તૃત્તિનો દોષ રઘુકારની પાંચ કૃતિ પૈકી એકેમાં નજરે પડતો નથી. વિક્રમોર્વશીયના વીજા અંકમાં ઉર્વશી અમરાવતીથી પ્રતિષ્ઠાન આવવા નીકળે છે, ત્યારે ચિત્રલેખાએ કરેલું માર્ગનું નિરૂપણ અત્યંત પ્રમાણસર છે. એ નાટકના ચોથા અંકને છેડે રાજધાનીએ સિધાવવા ઉત્સુક બનેલી ઉર્વશી સાથે પુસ્કરવા ગંધમાદન વનથી પ્રતિષ્ઠાને આવે છે તેનું નિદર્શન નાટકકારે પ્રવેશકના એક જ વાક્યમાં પતાવી દીધું છે. શાકુન્તલના સાતમા અંકમાં દુષ્યંત સ્વર્ગ ભુવનથી પૃથ્વી પર આવતાં મારીચ મહર્ષિના આશ્રમમાં ઉતરે છે, તે પ્રસંગે પણ જે વર્ણન છે તે સંક્ષિપ્ત અને સુદાસર જ છે. રઘુવંશમાં રાવણને મારી રામચંદ્ર સીતા સાથે લંકાથી અયોધ્યા પધારે છે, ત્યારે તેઓ માર્ગનું મનોહર વર્ણન કરે છે તે તો સીતાના વિનોદ અર્થે છે. પૂર્વે વેટેલાં દુ.સ્વનું કથન સુસ્વના સમયમાં નિર્વિષ વની હૃદયરસનું ઉદ્દીપન કરે છે. મેઘમાં માર્ગના વર્ણનનો વિસ્તાર કવિએ કર્યો છે, તે વક્તાના મુખમાં અસ્થાને છે, અને અંગીનું તિરોધાન કરનારો છે. મેઘકાર માર્ગની રમણીયતાથી દિવ્ય મેઘને આકર્ષવાને કાવ્યનાની પોંછીએ ચિત્રમાં રંગરેખાની વિવિધ મિલાવટ કરે છે; પણ તે વક્તાના મનની સ્થિતિ ઘડીભર વીસરી જાય છે. તેને લીધે ચિત્રકારની કલમને અરવા-માવિકૃતાનો મઝ ચોટે છે. ઇંદ્રજાલની ભ્રમકવાઝૂં એ ચિત્ર મૂચર શ્રોતાને આકર્ષક નીવડે છે, તેવું વેશક સંબોધિત લેચર શ્રોતાને પણ આકર્ષે એવું છે. પરંતુ દિવ્યાદિવ્ય વક્તાને આપણે સિદ્ધિવદ્ધે વોલાવી શકિયે

અને પૂછીયે, તો તે કહેશે કે 'વિદિશા અને વ્રહ્માવર્ત વચ્ચેનો માર્ગવર્ણનવિભાગ મારા મુલનો નથી. અમારા વિપ્રલંભનું કાવ્ય ગૂંથતાં કવિએ સ્વભૂમિની પ્રીતિએ તળાઈ ઉક્ત ઝમેરો કર્યો છે. રઘુકારે જો અમારું કાવ્ય રચ્યું હોત, તો તેણે એ પચીસી વચમાં ગોઠવી દાધી ન હોત. 'આ ચર્ચાનો નિષ્કર્ષ એ છે કે રઘુવંશ અને મૈઘદૂત એ બે જૂદા જૂદા પ્રસ્થાનનાં કાવ્ય છે; એટલે રઘુકાર કાલિદાસથી મૈઘકાર કાલિદાસ ભિન્ન સંભવે છે. પૂર્વે રઘુકારને અશ્વઘોષનો પુરોચાચી ઠરાવ્યો છે; અને તેનો જીવનકાલ ઇસવી સનના આરંભની આસપાસ મૂન્મો છે. તે સમયે શક અને પલ્હવોના આક્રમણને લીધે ઉજ્જયિનીની વહુ ચૂરી દશા થઈ હતી. એ નગરીને મૈઘદૂતમાં વહુ સમૃદ્ધિમાન વર્ણવેલી જોઈએ છે. નિર્દિષ્ટ અવસ્થાંતર સૂચવે છે કે ઉક્ત પ્રસ્તાવકાવ્યનો રચનાર કથાકાવ્યના રચનારથી ભિન્ન સમયનો છે. આ બે કવિના પદવંધની સરસ્વામણી પણ ઉપરના નિર્ણયનું સમર્થન કરે છે. રઘુકાર વ્યાપકતરીકે ટૂંકા મધ્યયતિરહિત છંદ વાપરે છે. તેનાં બે કાવ્યમાંથી એકનો કોઈ પણ સર્ગ વારથી વધારે અક્ષરના રૂપવંધમાં રચેલો છે નહિ. ત્રીજે અક્ષરે મધ્યયતિવાળો તેર અક્ષરનો વ્યાપક પ્રદર્ષણી પહેલવહેલો મારવિના કિરાતમાં મળે છે. મૈઘદૂત આખું એ મન્દાક્રાન્તામાં રચેલું છે. એ રૂપવંધ સત્તર અક્ષરનો છે, અને તેમાં ચોથા તથા દશમા અક્ષરે મધ્ય યતિ છે. પહેલા કાલિદાસની કવિતા સરલ છે. એનાં ઝળ નાટક અને બે કાવ્યમાં સત્તરથી એકવીસ અક્ષરના અનેક છંદ વાપર્યા છતાં મોટા સમાસ વહુ વિરલ છે. ત્યારે ત્રીજા કાલિદાસના એકલા મૈઘદૂતમાં મન્દાક્રાન્તામાં આઠાં ચરણ સમાસના રૂપમાં મળી આવે છે. વધારે ને વધારે લાંબા સમાસનો પ્રચાર જોતજોતામાં એટલો વધી જાય છે, કે માધના શિશુપાલવધમાં બે બે ચરણ રોકી લેતા પચીસ અને ત્રીસ અક્ષરના સમાસ ત્રણ-ચાર ઘણા દૃષ્ટિ પડે છે. એકલા ટૂંકા સમાસના આધારે અમુક ગ્રંથ પ્રાચીન છે એમ તો ના કહી શકાય પરંતુ લાંબા સમાસના છૂટથી કરેલા ઉપયોગ ઉપરથી તે પ્રાચીન નથી એવો તો અભિપ્રાય મળી રીતે વાંધી શકાય.

१६ आपणे जोर्युं के मेघकार कालिदास विक्रमादित्यना एटले के द्वितीय चंद्रगुप्त विक्रमादित्यना समयमां थयो छे. ए कवि शुद्ध उत्तरनो मार्ग मूकी, मेघने पश्चिममां उज्जयिनी भणी आडो फंटावे छे, ते कुदरती पक्षपात कविना वगर-कद्ये कही दे छे के ते ए नगरीनो वतनी हतो. विदिशा अने ब्रह्मावर्त वच्चेनां भूभागनूं मेघमां सविस्तर अने चोकस वर्णन आपेलूं छे, ते उपरथी समजाय छे के कवि दशार्ण अवंति अने दशपुरनो मुलक खूंदी वळ्यो हतो. मेघदूत रचार्थुं ते काळे उज्जयिनीए इसवी सन पूर्वैनी जाहोजलाली कंडक पाछी मेळवी हती. गुप्तोना अमलमां वेपारना महामार्गो चालता थयार्थी भृगुकच्छना वाराथी पश्चिमनूं नाणूं अणलेख्यूं उज्जयिनीमां ढळतूं थयूं हतूं. मालवदेशाना वाणिज्यनूं मथक ए शहेर बन्धूं हतूं खरूं; पण पश्चिम गुप्तमहाराज्यनूं पाटनगर होवानूं मान तो ते काळे विदिशा नगरी भोगवती हती^{७८}. महाक्षत्रपने हणी सौराष्ट्र खालसा करी इ. स. ३८८ मां द्वितीय चंद्रगुप्त राज्याखूढ थयो, ते पछी महाराज्यनूं पश्चिम पाटनगर वद-

७८ मेघदूतना तेषां दिक्षु प्रतीकना श्लोकमां विदिशानो राजधानी पदे निर्देश छे. ते पद राज्यना अमलमां मळ्ळा महारवणूं योधक छे. राजा के राजाना प्रतिनिधिना निवायनूं शहेर ते राजधानी. प्रस्तुत राजकारणिक विशिष्टता वे वार भोगपवानो अवसर विदिशाने प्राप्त थयो हतो, इसवी सन पूर्वें शुंगोना अने इसवी सनना आरंभ पछी गुप्तोना राज्यकाळमां. मेघकारनी सत्तानो पूर्व अवधि इसवी चोथूं शतक छे ते कारणथी तेने गुप्तोना समयमां मूकवो पडे छे, अने विदिशाने गुप्तोना समयनी राजधानी समजवी पडे छे. समुद्रगुप्त पराक्रमादित्ये पश्चिमना राजाओने रणमां रोळी तेमनां राज्य खालसा करी विदिशाने पश्चिम गुप्तराज्यनी राजधानी बनावी हसे. ए दरजो द्वितीय चंद्रगुप्त विक्रमादित्य गादीए आवतां राज्यनी हद सौराष्ट्र अने राससिंधु पर्यंत वध्याथी उज्जयिनीने मळ्यो. मेघदूत रचार्थुं ते विदिशा पश्चिम गुप्तराज्यनी राजधानी हती स्यारे. उज्जयिनी ते अवसारे यवति देसानूं एक समृद्ध शहेर हतूं—व्यापारवणजने लीधे विदिशाथी वधारे समृद्ध हतूं. वळी अखिल भारतनूं काव्यपीठ पण उज्जयिनीमां हतूं. परंतु गुप्तराज्यनूं एक पाटनगर होवानूं मान भोगवता ते भागशाळी थयूं न हतूं. आ समजथी कुमार द्वितीय चंद्रगुप्तनी सुनागिरीनी राजधानी तरीके विदिशानो निर्देश कर्थां छे.

छायूं. नवा प्रान्तनो वहीवट वधारे सरळताथी करी शकाय एवा हेतुथी चंद्रगुप्ते उज्जयिनीने महाराज्यना आ तरफना भागनी राजधानी बनावी^{७८}. आ परिवर्तन पूर्वे एटले इ. स. ३८८ पहेलां मेघदूतनो रचनाकाळ. जे कालिदासनो उज्जयिनीना काव्यपाठे अपूर्व सत्कार कर्यांनूं राजशेखर जणावे छे^{८०}, ते आ मेघकार कालिदास संभवे छे. परीक्षानी कसोटीए चडावेळं काव्य पण घणूं करीने उज्जयिनीनी प्रशस्तिवाळूं मेघदूत होय एम भासे छे. काव्यपीठनो आ नवो स्नातक पछीथी कुमारपदे विदिशाना शासक कुमार चंद्रगुप्तनी सभामां स्थान पाम्यो, अने कविए कविनो गाढ संबंध बंधायो. ए संबंधने लीघे गुप्त महाराज्यना सिंहासने अभिषिक्त थया पछी इ. स. ३८९ ना अरसामां चंद्रगुप्त तरफथी सांधिवैग्रहिक तरीके कालिदासने विदर्भ-कुंतलना राजाना दरवारमां पडकारतो आपणे सांभळिये छिये. वाकाटकवंशी द्वितीय रुद्रसेने तेने महाराजाधिराज चंद्रगुप्तना दूत तरीके उचित आसन आयूं नहि, ते प्रसंगे पृथ्वी पर वेठक लेतां कालिदासे महाराज्यना दूतने छाजतूं जे वचन उचारूं हतूं ते औचित्यना उदाहरण तरीके अधापि आपणे आनंद रूपजाववा ऊतरी आवूं छे^{८१}. समजूतीनां कहेण निष्फळ जतां

७९ जुओ पं. विश्वेश्वरनाथ रेड वृत भारतके प्राचीन राजवंश, द्वितीय भाग, पृ २७२:—‘ इस द्वितीय चद्रगुप्तेने उज्जैनको अपने राज्यकी पश्चिम प्रान्तकी राजधानी बनाया था. ’

८० जुओ आ व्याख्याननी टिप्पणी ६७.

८१ जुओ क्षेमेन्द्रवृत औचित्यविचारचर्चामाथी लीघेलू नीचेनूं अवतरण:—अधिकरणौचित्य यथा कुन्तलेश्वरदौत्ये कालिदासस्य । ‘ इह निवसति मेघः शेखरः क्षमाधराणामिह विनिहितभारा सागराः सप्त चैव । इदमहिपतिभोगस्तम्मविभ्राजमानं धरणितलमिहैव स्थानमस्मद्विधानाम् ॥ ’ अत्र महाराजाधिराज-दूतोऽपि सामन्तास्थाने स्वप्रभुसमुचितगौरवपूजार्हमासनमनासाय कार्यवशेन भूमातुपविष्टः प्रागल्भ्यगाम्भीर्येणैव ब्रूते । यथा अस्मद्विधानां वसुधातल एव भुज-गपतिभोगस्तम्मप्राग्भारनिष्कम्पे स्थानं युक्तम् । यस्मादिहैव मेघरचलचक्रवर्ती समुपविष्टः सप्त महाव्यथ । तत्तुल्यतैवात्माभिमिति । इदौचित्यमधिकरणे सबद्धमेव ॥

ચંદ્રગુપ્તે જાડાઈ. કરી રુદ્રસેનને, હરાવી કુંવરી પ્રભાવતીગુપ્તા. વરાવી પૂર્વે કહેવામાં આવ્યું છે તેમ સ્નેહની સાંકળે વાંધી લીધો, રુદ્રસેન અને પ્રભાવતી-ગુપ્તાનો પુત્ર પ્રવરસેન. તે ન્યાણપણે મોસાંઝમાં કવિ કાલિદાસના પરિચયમાં આવ્યો. ડમરલાયક થતાં તે વિદર્ભ-કુંતલની માદીએ આવ્યો. તે પછી તેની મુલાકાત હેઈ પાટલિપુત્રે પાછા ફરેલા કાલિદાસને રાજદાહિરના સુખ-સમાચાર સાર્વભૌમ માતામહને નિવેદન કરતો છેલ્લેલ્લો આપણે જોડ્યે છિયે. તે, પછી મેઘકારનો મેઝાપ થતો નથી^૨.

૧૭ મેઘદૂત એકલે જાઝાંવાઝૂં પળ વહુ તેજસ્વી રત્ન છે. તે નવાં પ્રસ્થાનનો એક ચડિયાતો આદર્શ પૂરો પાડે છે. ગુપ્તકાળના સાહિત્યના સર્વનાશમાંથી એ જ એકલું તે કાળના પ્રવંધનો લ્યાલ ધાપવા બચ્યું છે. એને શબ્દાર્થચિત્રનો ચેપ લાગ્યો નથી. આદિથી અંત પર્યંત એક જ જાણીતું ઘટ્ત વાપર્યું હોવાથી મેઘદૂત નવા ઇંદ રચવાની કવિની કઝા વિચારવામા મદદ કરતું નથી. મેઘકાર કાલિદાસ પૂર્વકાલીન ફિરાતના એક મચ્ચયતિ-વાઝા તેર અક્ષરના વ્યાપકથી આગઝ ઢગ લંવાવે છે એટલું જ નહિ, પણ ઉત્તરકાલીન માઘકાવ્યના પંદર અક્ષરના વ્યાપકને પણ ટપી જતા વે મચ્ચ-યતિનાઝા સત્તર રૂપના વ્યાપકના પ્રયોગનું સફઝ સાહસ કરે છે.

૧૮ ચોથા પાંચમા અને છઠ્ઠા ઝાંતકને શ્રેણ્યવંધની સમીક્ષા મુક્તક ઉપર ક્ષણભર દષ્ટિ ફેરવ્યા વગર અધુરી લેવાય. શાસ્ત્રમા સૂત્ર અને કાવ્યમાં મુક્તક તે સંસ્કૃત સાહિત્યની વિદિષ્ટ સૃષ્ટિ છે. પૃથ્વી પરની વીજી પ્રૌઢ ભાષાઓમાં વાઙ્મય અનેક શાસ્ત્રાણ વિસ્તાર પામ્યું છે; પણ તે પૈકી એકમા સૂત્રની અને મુક્તકની ફોટિનો સંદર્ભ પાંગર્યો કે પાલવ્યો નથી. ઔપચારિક ભાષામાં ઘોલિયે, તો મુક્તક તે સૂત્રકલ્પ પ્રવંધ છે. તેમાં સૂત્રની ઘુવંધતા વગર પ્રવંધનો પ્રસાદ છે. જેટલે દરજ્જે મુક્તકમા પ્રવંધનું સ્વરૂપ ઉત્તરે, તેટલે દરજ્જે પ્રવંધે અપનાવેલા કાવ્ય નામને તે લાયક લેવાય છે. પ્રવંધનું અને

^૨ મેઘકારના જીવનને માટે, આ ધ્યાનવાનને અંતે પરિસીટ ૨ બાપ્યું છે તે જોવું.

मुक्तकनू लक्षण एक ज छे. जे पांच संधिए प्रबंधनू कलेवर बंधाय छे, ते मुक्तकना बंधारणमां पण इष्ट छे^{८३}. ए वेमां हाथी अने हाथीना दर्पणगत प्रतिबिंब जेवो परिमाणकृत भेद छे. मुक्तकसाहित्य संस्कृतमां बहोळुं छे. सुभाषितसंप्रहोमां नवे रसना अनेक मुक्तको संप्रहेला होय छे. मुक्तककवि तरीके ख्याति मेळवनारा साहित्यकार चार छे, हाल किंवा सातवाहन, अमरु, भर्तृहरि अने गोवर्धन. एओमां जेना मुक्तक रसथी ऊभराई जई प्रबंधनी बरावरी करनारा मनाय छे, ते तो अमरुज छे^{८४}. एणे रचेल मुक्तकोनी शतश्लोकी अमरुशतकना नामे प्रसिद्ध छे.

१९ अमरु कविना बतननू सूचन अमरुशतकना पांचेक मुक्तकोमां मळी आवे छे. ‘आलम्ब्याङ्गण’ प्रतीकना श्लोक उपरनी टीकामां वेम भूपाल नायिकाना उत्तरीयना छेडाने सव्य विशेषण लगाडे छे^{८५}. आ पहेरवेश दाक्षणापथनो छे. सातमा सैकामां उत्तरापथनी खीनो पहेरवेश तो आथी जूदो पडे छे. माघ कविना शिशुपालबधना सातमा सर्गना श्लोक १६-१८ जोयाथी आ कथन स्पष्ट समजाशे^{८६}. अमरु कवि दक्षिणनो छे एवं बतावी आपनारी बीजी विलक्षणता ‘त्वं मुग्धाक्षि’ प्रतीकना मुक्तकमां छे. ए श्लोक उपरनी टीकामां अर्जुनवर्मदेव जणावे छे^{८७} के ‘अहीं कञ्चुलिका शब्दे

८३ जुओ अमरुशतक(आ. ५), श्लोक ४६ उपर सरस्वती-
कण्ठाभरणने अनुसरी आपेलूं पंचसंधिविषयक विवेचन.

८४ जुओ नीचेनां बचनोः-‘अमरुकवरेकः श्लोकः प्रबन्धशतायते’
(भरतटीकाकाराः) ।, मुक्तकेषु हि प्रबन्धेष्विव रसबन्धाभिनिवेशिनः कवयो
दृश्यन्ते । तथा ह्यमरुकस्य कवेर्मुक्तकाः शृङ्गाररसस्यन्दिनः प्रबन्धायमानाः प्रसिद्धा एव’
(ध्वन्यालोकः । ३।७।)

८५ वेम भूपालनी शृङ्गारदीपिका टीका छपाई नथी. मारा संप्रहनी
हाथप्रतने आधारे अहीं उल्लेख कर्यो छे.

८६ जुओ बळी शि.ब.। ७। ४२ । अने ते उपरनी मल्लिनाथनी टीका.

८७ जुओ रसिकसंजीवनी टीकामांथी नीचेनो ऊतारोः-कञ्चुलिका चैय
दाक्षिणात्या चोलिकारूपैव । तस्या एव प्रयनपदार्थे वीटिकाव्यपदेशः । अन्यत्र
कपातनिकेत्येवमादयः ॥.

કરીને દક્ષિણાપથની 'ચોઢી જ સંમજવાની છે. શાથી જે . એ ચોઢીને જ વીટિકા એટલે વીટો દેઈ, ગાંઠ પાડવાની હોય છે. ઉત્તરાપથની કાંચઢીના સંબંધમાં તો 'કપા (ગૂ. કસ). તાનકા (હિં. તની) વગેરે શબ્દો પ્રયોજાય છે. બીજી પળ એક વાત નોંધવી ઘટે છે. 'પશ્યાશ્લેપ' અને 'નિ:શેપચ્યુત' પ્રતીકના મુક્તકોમાં સ્તનમંડન માટે, ચંદનના જ લેપનું નિરૂપણ છે. ઉત્તરનાં કેસર કસ્તૂરીનો મધમઘાટ અમરુશતકમાં નથી. દક્ષિણ સાયેનો કવિનો સંબંધ આ રીતે દૃઢ થાય છે. વઢી 'મલયમરુતામ્' પ્રતીકના શ્લોકમાં વાયુ મલયાચલથી વાતા ચર્ણવ્યા છે, તેથી અમરુ છેક દક્ષિણનો નહિ હોય એમ પણ સમજાય છે. આ હકીકત સાથે માઘકાવ્યનો પરિચય જે અમરુશતકના આદિમંગલથી પ્રતીત થાય છે તેનો સંબંધ હવે પછી દર્શાવ્યા પ્રમાણે જોડતાં, અમરુ કવિ લાટ—માલવની સમીપના પાશ્ચાત્ય ચાલુક્યોના રાજ્યનો વતની હશે, એવા અનુમાન ઉપર હું આવું છું. મૂલગત મુક્તક ૫૫ માં વાપીસ્નાનનો નિર્દેશ છે અને પૂરવણી ૧ ના ૧૧૨ માં જલાશયનો ઉપસેપ છે. તે ઉપરથી સમજાય છે કે કવિનું વતન વાવ કુંડ સરોવર આદિ જલાશયે સુશોભિત શહેર—કદાચ ચાલુક્યોની રાજધાની વાતાપી હશે.

૨૦ નવમા શતકના ઉત્તરાર્ધમાં આનંદવર્ધનાચાર્ય અમરુના મુક્તકોનાં મુક્તકોઠ વચ્ચે કરે છે. વઢી આઠમા શતકના ઉત્તરાર્ધનો વામન પણ કાવ્યાલંકારમૂત્રવૃત્તિમાં એના બે મુક્તક આપે છે. વિંધ્યાચઢની પારના મુક્તકકવિની કીર્તિ આ રીતે હિમાચઢના શિખર પર્યંત પ્હોચી ગઈ, એ બનાવને ઓછામાં ઓછા પાંચ દાયકા લાગ્યા હશે; કારણકે, સાતમા સૈકાના મધ્ય ભાગમાં ચક્રવર્તિકવિ હર્ષે રાજાનો કાઢ થયો, ત્યારપછી ઉત્તરાપથનું વાતાવરણ સાહિત્યના પ્રસારને અનુકૂલ ન હતું. શારદાદેશ વાદ કરતાં વિંધ્યાચઢની આ વાજૂએ કોઈ પણ સાહિત્યપોષક સમર્થ રાગ્ય રહ્યું ન હતું. દક્ષિણાપથમાં વાતાપીના ચાલુક્યો અને કાઢીના પઢવો હારજીતની ઝથલપાથલ મચાવી રહ્યા હતા. આવા પ્રતિકૂલ સંજોગમાં અમરુશતકની ક્યાતિના પ્રસા-

रनी अटकळने अनुसरी हू एणो निर्माणकाळ सातमा शतकना छेवटमां मूळूं छू. आतर प्रमाण मारी अटकळने पुष्टि आपे छे. शिशुपालवधना छटा सर्गना चौदमा श्लोकना लोभपरिभ्रमद्भ्रमर शब्दो नजेवा फेरफारथी अमरुए शतकना आदिमगळमा ऊतार्यां छे. वळी एणे विभ्रमभृत् बोल एनी साथे जोडचो छे, ते शक्यार्थथी माघना संभृतशोभनी अने स्वरूपथी संभ्रमनी स्मृति आपे छे^{८८}. माघनू वतन जे अपरमालव, ते देश चक्रपतीं हर्ष राजाना आधिपत्य नीचे हतो. हर्षना अवसान पछी वातापीना प्रथम विक्रमादित्य रणरसिके अपरमालव अने छोट जीतीं लेईं न्हाना भाइ जय-सिंहवगनि त्यानो सत्ताधीश वनाव्यो हतो^{८९}. एना तथा श्याश्रय शीलादित्यना अमलमां लाट-मालवना साहित्यनो चालुक्योना राज्यमां प्रचार थतां अमरु शिशुपालवधना परिचयमा आव्यो समवे छे. आ वधीबावतो ध्यानमां लेता अमरुशतकनो रचनाकाळ सातमा शतकनो अंतभाग ठरे छे.

२१ अमरुशतकनी अपूर्वता कविनी हयातीमां तेना निर्माणकाळे अंकाराई अने सत्काराई हती. उज्जयिनीना काव्यपीठे जे मान पूर्वे प्रबंधकवि-ओने आप्यूं हतू, ते मानथी तेणे अमरुशतकना रचनारा मुक्तककविने पण वधावी लीधो हतो. भारवि, मॅठ अने द्वितीय कालिदास जेटलो ज सत्कार अमरुनो थयानी मोध राजशेखर कविनी काव्यमीमांसामा छे^{९०}. एवू मान बीजा कोइ पण मुक्तककविने मळ्यानू जाणवामा नथी^{९१}.

८८ सरखाववा सरळ पडे एटला माटे वने श्लोक नीचे आपू छू - ज्याकृष्टिवद्वेखनकामुरसपाणिपृष्ठप्रेह्वन्नखाशुचयसबलितोऽम्बिकाया । त्वा पातु मञ्ज-रितपल्लवकर्णपूरलोभभ्रमद्भ्रमरविभ्रमभृत्कटाक्ष ॥अ श ११॥, कुसुमसौरभलोभपरिभ्रमद्भ्रमरसभ्रमसंभृतशोभया । चलितया विदधे कलभेखलकलकलोऽलकालोत्तृशान्यया ॥ शि य १६॥१४॥.

८९ जुओ प गौरीशंकर ओझा कृत भारतीय पेंतिहासिक ग्रन्थमाला, जिल्दू महिला, सोलकीयाका प्राचीन इतिहास, भाग १, पृ. ४४-५१

९० जुओ आ व्याख्याननी टिप्पणी ६७

९१ जुओ विशेष माहिती माटे अ श (आ ५), उपोद्घात

२२ अमरुनी शतश्लोकी वास्तविक रीति श्लोक ३ थी शरू थई श्लोक १०२ थी समाप्त थाय छे, 'ज्याकृष्टि' प्रतीकनो अने 'क्षिप्तो' प्रतीकनो, ए वे श्लोक शतकना आरंभमां मूकवामां आवे छे ते जो के अमरुनी कृति छे, तथापि सूक्ष्म बुद्धिए विचारतां ते अस्थाने अने चधारे पढता छे; अस्थाने एटला माटे के शृङ्गारना सुरोनी जमावटमां ए वे श्लोकना सुर छलित अने द्रावक छतां विसंवादी छे, अने चधारे पढता एटला माटे के प्रस्तुत शृङ्गार-शतकनूं शृङ्गारी मंगल 'आलोलाम्', प्रतीकना श्लोक द्वारा निष्पन्न ज छे. पद्यबंधनी कसोटी पण ए वे श्लोकने शतश्लोकीमां अंतर्भावित करतां खंचाय छे. पंच संधिना विकासने माटे मुक्तकना वाहन तरीके मोंटा छंद अपेक्षित होवाथी प्रस्तुत शतक २९ सत्तर अक्षरना, ६७ ओगणीस अक्षरना अने ४ एकवीस अक्षरना रूपबंधनूं बनेछं छे. एमां १४ अक्षरना एके रूपबंधनो प्रयोग छे नहि; अने एकवीसनानो ओछामां ओछो छे, आ कारणथी उक्त वे श्लोकने गणतरी बहार राखी मौलिक शतश्लोकीना पद्यबंध समीक्षाना विषय बने छे. एमां हरिणी,, मन्दाक्रान्ता तथा स्रग्धरा अने शिखरिणी तथा शार्दूलविक्रीडित, ए पांच रूपाल्मक छंदनो प्रयोग छे. ते पैकी हरिणी, मन्दाक्रान्ता तथा स्रग्धरामां वे वे, अने शिखरिणी तथा शार्दूलविक्रीडितमां एक एक मध्य यति आवे छे. अमरुशतकनो पोगो भाग एक-मध्ययति-वाळा छंदमां रचायलो छे; अने बाकीनो पा भाग वे मध्ययतिवाळा-छंदमां छे. कवि छंदोविधानो केवो ऊंडो मर्मज्ञ छे ते आ वृत्तनी वरणी कही आपे छे. यति ए छंदनी रचनामां विभिन्न खंडोनो भेळ साथी ओर खूबी आणनारूं तत्व छे. कलारसिक कवि तेदला माटे १७ अक्षरनो मध्ययतिरहित पृथ्वी छंद न वापरतां उक्त मध्ययति युक्त छंदोनो ज उपयोग करे छे.

२३ अहीं कदाचित कोइ शंका करे के छंदोविधाना मर्मज्ञ अमरुए एके नवतर छंद केम नहि रच्यो होय ? एनूं समाधान, प्रबंध अने मुक्तकनां स्वरूप तपासीशूं, तो मळी आवशे. प्रबंधना विस्तारी संविधाननी सांक्रळ नवा

છંદને ટકાવી રાખે છે. રૂઢ છંદોના જૂથમાં જોકે એ નવો છંદ બહુધા અરૂઢ જ રહે છે, તથાપિ અરૂઢ અરૂઢે તે જીવે છે. અજ્ઞાત છાપના સિદ્ધાંતની પેઠે અજ્ઞાત છંદમાં રચાયેલો મુક્તક પ્રચાર પામતો નથી. મળકાની ઢગલીમાંથી મળકા ગવડી જઈ સ્ત્રીવાય છે, તેમ રૂઢ છંદના મુક્તક પણ શતક આદિ સંપ્રદાયામાંથી ગૂમ થાય છે; ત્યાં અરૂઢ છંદના મુક્તકનું શું કહેવું ? નવા છંદનો મુક્તક અલ્પાયુ નીવડવાનો ભય છે. તે કારણથી અમરુદ્ધ રૂઢ પદ્યબંધની જ વરણી કરી સંભવે છે. કલાની દૃષ્ટિએ જેને નવો છંદ કહી શકાયે, તેની જ્ઞાંત્રી માધના દેહપાત પછી વિરલ થઈ પડે છે. અમરુદ્ધશતકમાં તો નવા છંદનો સંભવ જ નથી. અને અમરુદ્ધની વીજી કોઈ કૃતિ પ્રકાશમાં આવી નથી; એટલે પદ્યબંધને અંગે સર્ગશક્તિની ચર્ચાનો અવકાશ ન મળ્યાથી એ વિષયમાં મૌન ધરવું પ્રાપ્ત થાય છે.

૨૪ જેવડો ગાઠો સૌન્દર્યનન્દ અને કિરાત વચ્ચે પડે છે, તેથી વમળો શારીરપુત્રપ્રકરણ અને મુદ્રારાક્ષસ વચ્ચે છે. એ લાંબા ગાઠમાં રચાયેલા અનેક દૃશ્યબંધ અત્યારે અદૃશ્ય થયા છે^{૯૨}. છેક છઠ્ઠા શતકના ઉત્તર ભાગમાં આવતાં વિશાલદત્તની કૃતિઓ રંગમૂર્તિ ઉપર જગારા મારે છે. આ નાટકકારે ત્રણેક નાટક રચ્યાં હતાં. પણ સાંપ્રત કાઠમાં અણીશુદ્ધ ઉપલભ્ય તો એકલું મુદ્રારાક્ષસ જ છે. તેની ગણના પ્રધાન નાટકમાં થાય છે. એનો રચનાકાઠ ઠેલાતો ઠેલાતો છઠ્ઠા શતક સૂધી પાછો હૃદયો છે. કોઈ વિદ્વાન તો એ

૯૨ પાંચમા શતકના પૂર્વાર્ધમાં વાસ્તવી કવિ ચંદ્રકે પ્રેક્ષણીય નાટકો રચ્યા હોવાનો ઉલ્લેખ રાજતરંગિણિ ૧૨ | ૧૬ | મા છે. પરંતુ તેમાંથી એક પણ અત્યારે ઉપલભ્ય નથી. એ કવિના નામથી ઔચિત્યવિચારચર્ચામાં નોંધેલો શ્લોક આપ્યો છે.—કૃષ્ણેનામ્બ ગતેન રન્તુમધુના મૃદ મધિતા સ્વેચ્છયા, સત્યં કૃષ્ણ ક એવમાહ મુસલી મિથ્યાઽમ્બ પડ્યાનનમ્ | વ્યાદેહીતિ વિકાસિતેઽય વદને માતા સમસ્તં જગદ્ દૃષ્ટ્વા યસ્ય જગમ્ વિસ્મયવશં પાયાત્ સ ષઃ વૈશવઃ ||. આ શ્લોક એના આદ્ય નાટકનું આદિમગલ હોય એમ એની રચના ઉપરથી અટકલ ધાય છે.

नाटकने पांचभा शतरुमां पण मूके छे. वादयुद्ध एना छेला श्लोकना छेक
 छेला बोल उपर जाम्युं छे. ए बोल ते 'चंद्रगुप्तः' लेवो के 'अवन्तिवर्मा'
 ए वाचतमां मतभेद छे. आंतर प्रमाणने अमुसरी हूं 'अवन्तिवर्मा' पाठ प्राण
 गणू छूं. ए श्लोकना, उत्तरार्धमां म्ळेच्छोना त्रासदायक उपद्रवना उल्लेख छे,
 ते मौर्यवंशी चंद्रगुप्त गादीए आवतां थयो न हतो, तेम ज गुप्तवंशी द्वितीय
 चंद्रगुप्त विक्रमादित्य गादीए आवतां पण थयो न हतो. नव नंदना नाश करी
 वार वरसना विग्रहने अन्ते मौर्यवंशी चंद्रगुप्त ज्यारे राजा थयो, त्यारे अमात्य
 राक्षसनी आगेवानी नीचे म्ळेच्छ मलयकेतुए पाटलिपुत्र उपर चढाइ करी
 हती खरी; पण तेना अर्ही निर्देश तो राक्षसना मुखथी पोताना अंगे वचकूं
 भरवा जेवो अणधटतो होई असंभाव्य ज छे. विरोधी राक्षस साथे मेळ थया
 पछी वीसेक वरसे सीरियानो शाहानशाह सेल्युकस निकेटर भरतखंड उपर चडी
 आव्यो हतो; पण तेना उल्लेख प्रशस्तिमां^{१३} कल्पिये छिये, तो कालविरोध
 नडे छे. अर्थात् समाप्तिश्लोकमां मौर्यवंशी चंद्रगुप्तना संकेत बाधित छे.
 बीजी तरफ गुप्तवंशी द्वितीय चंद्रगुप्त विक्रमादित्यना संकेत पण घटावी
 शकातो नथी. ए परम प्रतापी राजानी कारकिर्दी दरमियान भरतखंड उपर
 म्ळेच्छोनी सवारीनुं नामनिशान सरखूं हाथ लागतूं नथी. एना मोटा भाइ
 रामगुप्तना टूंकामलमां जागेला विग्रहनी नोध त्रण चार जडे छे^{१४}. ए
 विग्रहमां कुभार चंद्रगुप्त बहु आगळ पडतो पराक्रमपूर्ण भाग ले छे. राजा

१३ नाटकना उपसहार किंवा निर्वहण संधिनुं छेळूं अंग ते प्रशस्ति.
 काव्यनी समाप्तिए कवि पोताना विशे प्रशंसागर्भित शब्दमां माहीती आपे छे ते
 साधारण रीते प्रशस्ति वहेवाय छे. वळी सरोवर, देवमंदिर आदि रचनारत्ना
 गुणानुवादना लेख ते पण प्रशस्ति शब्दथी ओळखाय छे. तेनाथी नाटयशास्त्रना
 आ पारिभाषिक प्रशस्ति बोल जुदो पडे छे. नाटकनी प्रशस्ति प्रशंसावाचक नहि,
 पण शुभेच्छावाचक होय छे. 'प्रशस्तिः शुभशंसनम्।' ए एनुं लक्षण छे.

१४ जुओ इ. स. १९२८ ना नवंबर-डिसेंबरना युद्धिप्रकाशना छपायलो
 'समुद्रगुप्तना क्रमप्राप्त उत्तराधिकारी' ए मयाळानो मारो लेख.

रामगुप्त शकाधिपतिनी राजधानी अरिपुर के अळिपुर उपर चडाइ करे छे. तेनो प्रतिपक्षी आडी वाटे घसी आवी तेने घेरी छे छे. ते अंतरामणमां राणी ध्रुवदेवी आपवानूं कबूल करी ते छावणीए पाछो फरे छे. काळाटीली टाळवा अने बेर वाळवा कुमार चंद्रगुप्त राणीना वेशमां शत्रुना नगरे जवा तैयार थाय छे; तेने वंबुवत्सल रामगुप्त जवा देवा ना पाडे छे. त्यारे चंद्रगुप्त राणी साथे राजाथी छानी मसलत करी ध्रुवदेवीना ठाठमां शकनी राजधानीए जई राजाना अंतःपुरमां दाखल थईटाव साधी तेनो घाट घडीनांखे छे. पछी ते नवा वेशे छावणीए पाछो फरे छे; अने गुप्तसेना साथे चढी आवी शकराजधानी सर करी शहेरमां रामगुप्तनी आण फेरवे छे. जीतायल नगरमां ठामठाम रास लेवाय छे अने कुमार चंद्रगुप्तनां पराक्रम गवाय छे. न्हाना भाइना आ उज्जवळ साहसथी परम प्रसन्न थयेलो राजा रामगुप्त पोताना माथेथी मुगट ऊतारी चंद्रगुप्तना माथे मूके छे^{६५}. देवीचंद्रगुप्त नाटकमांनो ऊतारा उपरथी आ संविधान में ऊपजावी काढचूं छे. प्रतिपक्षीनी राजधानीनूं नाम हर्षचरित अने शृङ्गारप्रकाशमांनो ऊतारा प्रमाणे उपर अरिपुर के अळिपुर आप्यूं छे^{६६}. परंतु दुःसनावाद जेम कोइ शहेरनूं विशेषनाम संभवतूं नथी, तेम अरिपुर के अळिपुर पण नथी संभवतूं. असल पाठ गिरिपुर होवो जोईए, एम मारूं धारवूं छे. एना उपरथी अरिपुर अने अळिपुर पाठ परंपराए ऊपजी आव्या जणाय छे. गिरिपुर के गिरिनगर ते सांप्रत जूनागढ-प्राचीन यवननगर; अने तेनो शक राजा ते महाक्षत्रप तृतीय रुद्रसिंह. तेनी साथेना विग्रह विशे देवीचन्द्रगुप्त, हर्षचरित, हर्षचरित-संकेत, अने शृङ्गारप्रकाशमांथी एरुटी करेली हकीकत उपर प्रमाणे छे.

१५ जुओ मारु सस्टत मुद्रारक्षस, (ed. 3), Introduction.

१६ जुओ शृङ्गारप्रकाशमाथी लीचिन् नीचिन् अवतरग -छीवेषनिहनुत-चन्द्रगुप्तः शत्रोः स्तब्धावारम् अळिपुर शकपतिवधाय अगमत् ।. जुओ बळी हर्षचरित । ६ ।, अरिपुरे च परकलत्रकमुक्तं कामिनीवेषगुप्तः गुप्तः चन्द्रगुप्तः शकपतिमशातयत् ॥.

બીજો એક ઋતારો કાવ્યમીમાંસામાંથી મળ્યો છે. તેમાં વિપ્રહનું ક્ષેત્ર હિમાલય ક્ષેત્ર છે. ત્યાં કાર્તિકેયનગર^{૧૭}, નામે શહેર ઉપર રાજા રામગુપ્ત ચઢાઈ કરે છે, પરંતુ પ્રતિપક્ષી સ્વશાધિપતિ. તેને આંતરી લેઈ રાણી ધ્રુવસ્વામિની આમી દેવાની જોરે ફરજ પાડે છે. તે સરતે છૂટી રામગુપ્ત પાછો ફરે છે. પછીથી હિમાલય પર્વત ઉપરના કાર્તિકેય નગરમાં કોઈકના પરાક્રમની કાર્તિ ગવાય છે. એ અનિર્દિષ્ટ ધીર તે રાજા રામગુપ્તનો ભાઈ કુમાર ચંદ્રગુપ્ત સંભવે છે. આ વૃત્તાંત દેવીચન્દ્રગુપ્તના વૃત્તાંતને પટલો મઝતો આવે છે, કે આધારભૂત શ્લોકના પાઠ સૂક્ષ્મ દષ્ટિએ તપાસી જોવાનું કુતૂહલ રોક્યું રોકાતું નથી. રાજશેખર કાવ્યમિમાંસામાં ઋતારેલો મુક્તક નીચે પ્રમાણે છે:—

દત્તવા રુદ્ધગતિઃ સ્વશાધિપતયે દેવીં ધ્રુવસ્વામિનીં
 યસ્મિન્ સ્વણિડતસાહસો નિવવૃત્તે શ્રીશર્મગુપ્તો નૃપઃ ।
 તસ્મિન્નેવ હિમાલયે ગિરિગુહાકોણવચ્ચણત્કિંનરે
 ગીયન્તે તથ કાર્તિકેયનગરસ્ત્રીણાં ગણૈઃ કીર્તયઃ ॥

આપેલા ઋતારાના પહેલા ચરણમાં સ્વશ બોલ છે તે શકને બદલે મૂલથી લખાયો હોય, એવું બનવા જોગ છે. મુદ્રારાક્ષસના પાંચમા અંકના પ્રસ્થાવન્ય પ્રતીકના શ્લોકના પહેલા ચરણમાં અને મઝતી મૂલ એક હાથ-પ્રતમાં થયેલી નજર પડે છે. તેમાં સ્વશને ઠેકાણે શક પાઠ આપ્યો છે. બીજી મૂલ એ જ ચરણને અન્તે એક અક્ષરનું પલાંઠું ઘસાઈ ગયાથી અને

૧૭ દેવીપુરાણ, અધ્યાય ૧ માં કાર્તિકેયપુરનો ઉલ્લેખ છે, એનું બીજું નામ વૈવનાથ છે. આ ગામ કુમાઈ જિલ્લામાં આવેલું છે. તે અલમૌડાથી ઇંશી માઈલ દૂર છે. જુઓ Nandoo Lal Dey's Geographical Dictionary of Ancient and Mediaeval India (ed. 2). આ કાર્તિકેયપુરની ઐતિહાસિક પ્રતિષ્ઠિ છે નહિ. સ્વયં કાવ્યમીમાંસામાં વહેલું કાર્તિકેયનગર તે દેવીપુરાણનું કાર્તિકેયપુર હોય નહિ. બીજું એ નામનું શહેર છે નહિ.

વાકીના ત્રણ અક્ષર સ્વાઈ ગયાથી ઉત્પન્ન થઈ છે. દેવીચન્દ્રગુપ્ત પ્રમાણે રામગુપ્તની રાણીનું નામ ધ્રુવદેવી હતૂ તે ધ્યાનમા લેતા મૂઝપાઠ દેર્વા ધ્રુવોપાધિકા^{૯૮} હોવો ઘટે છે. એ રાજારાણીના નામ પાછઝથી મૂલાઈ જવાયાં, અને તેમના પછી થનાર દ્વિતીય ચદ્રગુપ્ત વિક્રમાદિત્ય તથા તેની પટરાણી ધ્રુવસ્વામિની કિંવા ધ્રુવદેવીના સદોદિત રહ્યા. એટલે દુર્વાચ્ય સ્ખણિત પાઠના સ્થાને દેર્વા ધ્રુવસ્વામિની વનાવટી પાઠ સ્થાપિત થયો^{૯૯}.

૧૮ દશપૂર્વરથ (ર વ ૧૮ ૧૨૧) ચોલ ઉપરથી પ્રથમ દશરથ સજ્ઞા વાચ્ય બને છે અને તે ઉપરથી પછી દશરથ સજ્ઞી લક્ષિત થાય છે, તેમ ધ્રુવોપાધિકા દેર્વા ઉપરથી ધ્રુવદેવી સજ્ઞા વાચ્ય બની તે ઉપરથી સજ્ઞી ધ્રુવદેવી લક્ષિત થાય છે

૧૯ શક રાજાનો ઘાટ ઘડયા પછી મોટા માફ રામગુપ્તનૂ સૂન કરી ચદ્રગુપ્ત રાજા થયો તથા રહાયલા ધ્રુવદેવીને તેણે પોતાની રાણી વનારી, એમ પ્રો. એ એસ બલ્લેટ્ટર તથા ડૉ. વૃષ્ણસ્વામી આયર આપણા મનમા ઠસાવવા માગે છે પરતુ દેવ જેવો લેસાઈ દેવરાજ અને દેવગુપ્ત ઉપનામથી ઓઝ્ઝતાનાર ચદ્રગુપ્ત વધુવત્સલ મોટા માફનૂ જન કરે અને માજાઈન રહાપો આપી લોહીયી પીઝેલા હાથે પુનર્મૂ પત્ની વનાવે એ વિધાન દેર્વાચન્દ્રગુપ્ત નાટકના સવિધાન સાથે મેઝ સાય એવૂ નથી અમાત્ય રાક્ષસ સાથેના વિપ્રહમા જેણે કૌટિલ્યના હાથ રક્તપાતથી સરહાવ્યા નથી તે વિશારદક્ત ધ્રાતૃવધનૂ અને મોજાઈના પાણિપ્રહણનૂ નિરૂપણ કયા અર્થની સિદ્ધિ સારૂ, કયા રસના પરિપોષણ સારૂ, કયા પ્રેક્ષકના પરિતોષ સારૂ, કયા આશ્રયદાતાના મહત્તા સારૂ કર્યૂ હોય ? ઉક્ત વે એતિહાસકોન એક એતિહાસિક લેખે મૂલાવામા નારયા હોય એમ જણાય છે રાષ્ટ્રકૂટવશી પ્રથમ અમાઘવર્ષના સજાણના તામ્રપત્રના અડતાઝીસમા શ્લોકના પૂર્વાર્ધમા નીચ પ્રમાણે ઉલ્લેસ છે ‘કહ છે ક (આ) કલિયુગમા (એક) ગુપ્તવશીએ માફને જ હુણીને રાજ્ય તથા રાણી હર્યા (હત્વા ધ્રાતરમેવ રાજ્યમહરદ દર્વા ચ.....ગુપ્તાન્વય ।)’ આ અવતરણમા કહલો ગુપ્તવશી ત દ્વિતાય ચદ્રગુપ્ત વિનમાદિત્ય, એમ ઉક્ત એતિહાસકા સમજ છે, અને હૂ પળ એમજ સમનૂ છૂ પરતુ, પ્રસ્તુત તામ્રપત્રનીય શ્લોકમા ચદ્રગુપ્ત વાન હુણ્યાનૂ અને વાન હયાનૂ કહ્યૂ છે, તેના નિર્ણયમા હૂ તેમનાર્થી સુદો પહૂ છૂ એઆ એમ માન છે ક જેને ચદ્રગુપ્તે હુણ્યો તે રામગુપ્ત અને જેને તેણે હરી તે રામગુપ્તની રાણી માફ માનવૂ એમ છે કે ચદ્રગુપ્તન હાથે જે માયા

ગ્રીજા । મૂલઃગ્રીજા, ચરણનાં ૬, ૭ અને ૮ એ ચરણ સ્વવાઈ ગયેલા અક્ષરની
 સ્વાલી જગા પૂરવામાં થઈ છે. હિ અવ્યયને પર્વતના વિશેષનામનો આચક્ષર
 સમજી કોઈપૂ માલયે પદપૂર્તિ કરી હિમાલયે પાઠ સાધ્યો જણાય છે.
 પરંતુ વિપ્રહનું ક્ષેત્ર હિમાલય નહિ પણ શૃંગ્ગારમકાશમાં કડેલા ગિરિપુરનો

ગયો તે એનો વચટ ભાદ, મોટો ભાદ નહિ. સમુદ્રગુપ્તને રામગુપ્ત અને ચંદ્રગુપ્ત
 ઉપરાંત ધીર્જા સંતાન હતાં. એના એરના લેટમાં મહાદેવી દત્તદેવીને યહુપુત્રપ્રોત્ર-
 સંક્રામિણી કહી છે. રામગુપ્તથી ન્હાના પુત્ર ચંદ્રગુપ્તથી મોટા (અર્થાત્ વચટ) કુમારે
 ગિરનારની ઘાંટીમાં મોટો ભાદ સમસ્ત સેના સાથે શકરાજાના હાથમાં પડ્યાનું
 સાંભળી પાટલિપુત્રમાં રાજચિહ્ન ધારણ કર્યા હશે. તેની અને ચંદ્રગુપ્તની વચ્ચે
 એ રીતે રાજગાદી માટે જાગેલા વિપ્રહમાં વચટ માર્યો ગયો હશે, અને તેની રાણી
 વિજયી ચંદ્રગુપ્તના હાથમાં પડી હશે. આ પ્રવારે ભાદ એટલે વચટ ભાદ હણાયો;
 તેણે હૃથ કરેલું રાજ્ય દુરાયું; અને તેની રાણી એ દુરાઈ એટલેકે પકડાઈ, નહિ
 કે ચંદ્રગુપ્તે તેને પોતાની રાણી ધનાવી. દેવ જવા દિયરે વચટ ભાદની વિધવાનો
 માનમર્તયો જલ્દવાય એવો પાકો બંદોવસ્ત વર્ષો હોવો જોઈએ. ચંદ્રગુપ્તનાં આ ભાદ-
 મોજાઈનાં નામ મઢી આવતાં નથી; તેથી હું ધારી શકતો નથી. મોટા ભાદ એ
 રાજગાદીનો ત્યાગ કરી ન્હાના ભાદને રાજા કર્યો, ત્યારે ચંદ્રગુપ્તને ઘે રાણીઓ હતી,
 મોટી ધ્રુવસ્વામિની અને છોટી કુવેરનાગા. પહેલી રાણીનું એટલે કે પટરાણીનું
 ચીજૂં નામ ધ્રુવદેવી પણ લેટોમાં મઢી આવે છે. ધીર્જી રાણી જે કુવેરનાગા, તેના
 પેટની કુંવરી પ્રભાવતીગુપ્તા, ચંદ્રગુપ્ત રાજ્યાસુદ થયો, ત્યારે તેરેક વરસની યઈ
 હતી. ગુંધવારો ઊમો થયો છે તે એક તરફથી વચટને ઠેકાણે મોટો ભાદ હણાયો
 માનવાથી અને ધીર્જી તરફથી રામગુપ્તની રાણીના ધ્રુવદેવી નામનો અને ચંદ્રગુપ્તની
 રાણીના ધ્રુવસ્વામિની ઉકે ધ્રુવદેવી નામનો ભેદ ન રુમજાયાથી થયો છે. અરવી
 મજમુલ-ઉ-તવારિખનાં આપેરી સિંધના રવાલ [મ.રામ(મૂ)પાલ] અને વર્કમા-
 રિસ (સં. વિક્રમાદિત્ય)ની કહાણીથી ગુંચ ઝકલવાને ધદલે વધારે ગૂંચારું છે.
 સંસ્કૃતમાંથી ખારસીમાં અને ખારસીમાંથી અરવીમાં વધવટ સાથે રૂપાંતર પમેલી
 એ કહાણી ઉપર વજન મૂકવું અને કથાસરિતસાગરની કથા ઉપર વજન મૂકવું,
 તેથે સરસાં ગણાવ્ય. સમુદ્રગુપ્ત, રામગુપ્ત અને દ્વિતીય ચંદ્રગુપ્તના સમયના ઇતિહાસનો
 વંદક ક્રમવદ્દ માન થાય, એટલા માટે આ વ્યાખ્યાનના અંતે પરિશિટ ૧ માં
 ધરસવારી પત્રક ઘડસટ્ટે સાલોં મોઠ્ઠીને આપ્યું છે તે ધ્યાનપૂર્વક જોઈ જવાની
 જરૂર છે.

રૈવત ગિરિ હતું. આથી 'હિમાલયે' વદલ 'હિ રૈવતે' વાંચવા હું પ્રેરાઈ છું. ચોથી મૂલ ચોથા ચરણમાં દટિગોચર થાય છે. એ ચરણમાં 'તવ' સર્વનામ કુમાર ચંદ્રગુપ્તનો નિર્દેશ કરે છે, જેથી આશ્વો શ્લોક ચંદ્રગુપ્તને સંવોધ્યો ઠેરે છે. પ્રસ્તુત મુક્તક ગિરિનગર સર કર્યા પછી નેપથ્યમાં વૈતાલિકે લલ-કોરેલું કુમારનું યશોગાન છે. 'તવ' પદ પછી સંવોધનનાં 'ભોઃ કુમાર' પદ ઉપર કાવ્યમીમાંસાની હાથપ્રતમાં કોટકે યુદ્ધભ્રમથી કાર્તિકેય પર્યાય લલ્યો હશે અને એ હાથપ્રત ઉપરથી નવી નકલ કરતાં અજ્ઞાન લેખકે 'ભોઃ કુમાર' અશુદ્ધ અને 'કાર્તિકેય' શોધિત પાઠ સમજી એકને સ્થલે બીજો મૂલમાં દાખલ કર્યો હશે; એવી મારી અટકલ છે. ઉપર ચર્ચેલી ચાર મોટી મૂલો ઉપરાંત કેટલીક ન્હાની મૂલો પણ છે, તે સૂધારી લેઈ હું પ્રસ્તુત શ્લોક આ પ્રમાણે વાંચવા માગું છું:

દાતું રુદ્ધગતિઃ શકાધિપતયે દેવીં ધ્રુવોપાધિકાં
યસ્મિન્ સ્વપિડતસાહસો નિવધૃતે શ્રીરામગુપ્તો નૃપઃ ।
તસ્મિન્નેવ હિ રૈવતે ગિરિગુહાકાળક્રણવત્કીચકે
ગીયન્તે તવ ભોઃ કુમાર નગરસ્ત્રીણાં ગર્ણૈઃ કીર્તયઃ ॥

વિપ્રહના ક્ષેત્રના અને પ્રધાન પાત્રોના સંબંધમાં દેવીચંદ્રગુપ્તના કુતારા સાથે કાવ્યમીમાંસામાંના ઉપર વિચારેલા મુક્તકની એકતા સાચ્યા પછી જુદી જુદી નોંધોમાં કહેલ વિપ્રહ ભિન્ન નહિ, પણ એક જ અર્થાપન્ન થાય છે^{૧૦૦}. એ વિપ્રહમાં શકાધિપતિ મગધરાજ્ય ઉપર ચડાઈ નથી કરતો, પણ મહારાજા-ધિરાજ રામગુપ્ત શકાધિપતિની રાજધાની ગિરિનગર ઉપર ચડી આવે છે. એટલે કરીને પુદ્રારાક્ષસની પ્રશસ્તિમાં 'ચંદ્રગુપ્તઃ' પાઠ અગ્રાહ્ય ઠેરે છે અને

૧૦૦ કદાપિ એમ દલીલ કરવામાં આવે કે વિપ્રહ એક નહિ પણ બે થયા હતા, એક ગિરિનગરના શકો સાથે અને બીજો હિમાલયના કાર્તિકેયનગરના સ્વશો સાથે; તો તે સ્વીકારી શકાય એમ નથી. માણસની યાદદાસ્તમાંથી છેકાછેક મૂંસાઈ જાય એટલા ટૂંકા રાજ્યકાલમાં રાજા રામગુપ્ત ઉત્તરમાં રાજો ઉપર અને પશ્ચિમમાં શકો ઉપર સવારી લેઈ જાય, તેમાં હિમાલયની પહાડીમાં દેવી ધ્રુવસ્વામિની ધાપ-

‘अवन्तिवर्मा’ पाठ ज स्वीकारवो रहे छे. ए पाठने आधारे मुद्राराक्षस रचना हूं मौखर अवन्तिवर्माना राज्यकाळमां इ. स. ५८५ नी आसपास मूकूं छूं. साल विशेषे में अन्यत्र चर्चा करी छे^{१०१}; तेथी अत्र तेनी पुनरुक्ति करतो नथी.

२५ विशाखदत्तना पिता तथा पितामह मौशरोनी छायामां मोट राज्याधिकार भोगवता हता; अने कवि ए मुद्राराक्षस पांचाल देशना राज अवन्तिवर्माना अमलमां रच्यूं हतूं. दत्तकुळनी त्रण पेढी पांचालमां ज सत्त घरावती जोवामां आवे छे. ते उपरथी अनुमान थाय छे के अंतर्वेदिनो प उत्तम प्रदेश कविनी स्वभूमि हती. नाटकना पांचमा अंकमां काश्मीर कूटत अने मलयराज्य वडे पर्वतदेशानी सीमा आंकी छे, ते पण सूचवे छे के नाटक-कारे ए विषयमां जातमाहीती अने स्थानिक परिचयनो ज उपयोग कर्यो छे. वळी उत्तरना कविओने श्लेष अलंकार विशेष प्रिय छे एम वाण भट्ट जणावे छे^{१०२}; अने मुद्राराक्षसनां घणांखरां पताकास्थानक श्लेषमूलक ज छे^{१०३}. बीजी केटलीक उक्तिओमां पण श्लेषनो वधारे पडतो प्रयोग प्रस्तुत नाटकमां वाचक जनतानी आंखे चडे छे, आपणे कहीशूं के, बहारनूं अणु आवी आंखमां पडे अने खूंचे तेम, ते निमेषभर खूंचे पण छे^{१०४}.

वानी तथा गिरनारनी घांटीमां ध्रुवदेवी आपवानी सरते छूटे अने कुमार चंद्रगुप्त वेद प्रसंगमां गयां धन पाछां बाळे,—ए रीते एवनां एक म्होरां एक दिशामां राशो साथे अने बीजी दिशामां शको साथे एकना एकज बाळे शैतरंज खेले,—ए बनाव पाटलिपुत्र हिमालय अने रचताचळ वच्छेनूं अंतर ध्यानमां राखतां संभवनी मयादाने ओळंगी जाय छे.

१०१ जुओ मार्क संस्कृत मुद्राराक्षस (ed. 3.), Introduction.

१०२ जुओ हर्षचरितना प्रस्तावक श्लोकमांनो: ‘श्लेषप्रायमुदीच्येषु प्रती-च्येष्वर्थमात्रकम् । उत्प्रेक्षा दाक्षिणात्येषु गौडेष्वक्षरदम्बरः ॥’ ए श्लोक.

१०३ जुओ मार्क मुद्राराक्षस (ed. 3.) १११८८६-८९१, ११९३३-३६१, ४३१-६१, इ.

१०४ जुओ मुद्राराक्षस (ed. 3.) १३७-९१, ४१६१, ५११०१ इ.

૨૬ મુદ્રારાક્ષસ નાટકમાં સાત્વતી અને આરમટી વૃત્તિનું પ્રાધાન્ય છે^{૧૦૫}. એ વૃત્તિને અનુકૂળ શાર્દૂલવિક્રીડિત અને સ્વઘરા વૃત્ત છે. વિશા-
સ્વદત્તે સંસ્કૃતમાં એ વે રૂપવંધના પ્રધાનપણે કરેલા પ્રયોગથી હંદોવિદ્યા વિશે
પોતાની મર્મજ્ઞતા પ્રકાશિત કરી છે^{૧૦૬}. વઢી તેણે મૃતપ્રાય સુવદના હંદને
આરમટીના અવપાત અંગના નિરૂપણમાં જીવાડ્યો છે. ઉપરાંત આલ્યાનિક
અનુષ્ટુભનો પણ તેણે વિવેકસર ઠીક ઠીક ઉપયોગ કર્યો છે. પ્રાકૃતમાં
અર્ધસન અપરવક્ત્રથી આગઢ વધી, પંદર રૂપનો સમ હંદ જે માલિની, તે
પણ તેણે યોજ્યો છે; અને લોકવૃત્તિને પોષી એ માલિનીમાં અંત્ય યમકની
રચના પણ દાસલ કરી છે. પ્રાકૃતમાં ગાથા કિંવા આર્યા હંદ જ પ્રધાન પદે
રહ્યો છે. મુદ્રારાક્ષસમાં એકે નવતર હંદની યોજના છે નહિ^{૧૦૭}.

૨૭ દશ્યવંધમાં મુદ્રારાક્ષસ પઢી આપણું લક્ષ લાગહું જ પ્રિયદર્શના,
નાગાનન્દ અને રત્નાવલી તરફ સેંચાય છે. એ ત્રણ પ્રયોજ્ય કૃતિઓનો
કર્તા ચક્રવર્તિકવિ હર્ષ છે. મધ્યકાલીન ભારતનો એ છેલ્લો સાર્વભૌમ રાજા
છે. ણે ઇ. સ. ૬૦૬ થી ઇ. સ. ૬૪૭ સૂધી ભરતસંડનું આધિપત્ય મો-
ગવ્યું હતું. સોનપતની રાજમુદ્રાનો આ હર્ષવર્ધન, તે જ દામોદરગુપ્તના કુટ્ટ-
નીમતનો અનંગહર્ષ^{૧૦૮} અને મૈસુરના વીરગઢનો શીલાદિત્ય^{૧૦૯}. ણા

૧૦૫ જુઓ મુ. રા. (ed. 3), Appendix B, વૃત્ત્યોરજ્ઞાનિ.

૧૦૬ વિશાસ્વદત્ત વિશે વધારે માહિતી સારું જુઓ મુ. રા. (ed. 3),
Introduction.

૧૦૭ જુઓ મુ. રા. (ed. 3), Appendix A, Metrical
Table.

૧૦૮ સાધારણ રીતે આ નાટિકા પ્રિયદર્શિકા સંજ્ઞાથી જાણીતી છે.
પરંતુ તપાસ કરતાં તેનું અસલ નામ પ્રિયદર્શના નીકળે છે. તે કારણથી તેનો મેં
પ્રિયદર્શના નામથી નિર્દેશ કર્યો છે. માહિતી માટે જુઓ વિંધ્યવનની કવ્યકા
(આ. ૩), ઉપોદઘાત, પૃ. ૬૪ અને તે ઉપરની ટીપ્પણી.

૧૦૯ જુઓ વિંધ્યવનની કવ્યકા (આ. ૩), ઉપોદઘાત, પૃ. ૬૧-૬૨
અને તે ઉપરની ટીપ્પણી ૨,૩.

राजकीय, धार्मिक, अने सारस्वत जीवननी त्रिरंगी लांबी कथा में अन्यत्र^{११०} आपी छे. अहाँ, तो एना त्रण प्रयोगबंध विद्गे कंडक कहेवा मागूं छूं. ए त्रणेनूं संविधान, विवेचकनी दृष्टि ए मध्यम, पंक्तिनूं छे. प्रियदर्शनामां विपपाननो, नागानन्दमां जीमूतवाहनना आत्मोत्सर्गनो अने रत्नावलीमां इंद्रजालनो प्रसंग, ए त्रणे जोके प्रेक्षकने रसमां लीन करनारा, दृश्यो छे, तथापि कहेवूं पडे छे के पहेली अने त्रीजी कृतिना आरंभे संविधाननी कूंची रूपे जे विष्कंभक योज्यो छे, तेनो पछीना अंक साथे संबंध एकाएक तरतने माटे तूटी जाय छे अने ए अद्दर झलतो, तार अद्दर ज रहे छे,—एटले सूधी के ते तारने चोथा अंकमां बीजा तार साथे जोडी देवामां आव्यो न होत, तो तेनूं भान पण कदाचित् आपणा मगजमांथी लुप्त थयूं होत. वेड नाटिकानो आखो ए पहेलो अंक शेलडीनी, टोलती चमरीना जेवो निरर्थक बाहुल्यवाळो छे. नागानन्द नाटकमां तो, एक उपर एक एम त्रण थर जुदा छे; पहेलो पितृभक्तिनो, जेमां नायक रामायणमांना श्रवणनी स्मृति आपे छे; बीजो नायिका प्रत्येनी आसक्तिनो, जेमां युगल विवाहनी प्रंधिथी जोडाय छे; अने त्रीजो जीवरक्षानो, जेमां पितृसेवानो अने सप्तपदीनो भंग व्होरी नायक इतरनो देह बचाववा पोतानो देह समर्पे छे. नाटककार प्रेक्षकने एक थरथी बीजा थरे अने बीजा थरथी त्रीजा थरे कळाना आकर्षणे दोरी जाय छे. आ रीते छूटा मणका दोरे चडी गंठायीं जेवूं थाय छे खरूं, पण तेमां शाळे चडेल पाटना जुदा जुदा तारना वणाटनी खूबी खोवाय छे. संविधाननी सुश्लिष्टता वस्तुनी सुश्लिष्टता मागी ले छे, ते एमां नथी. हर्षे तो प्रस्तावो परस्पर सांकळी लेई संविधाननी रचना योजवानो नवो प्रयोग आदर्यो छे. एणे पाडेलो मार्ग एना पछीना कोइ नाटककारे लीधेलो जणातो नथी. नवीन घटनाना आ संविधानने मुकाबले हर्षेना प्रयोगबंधनो पद्यभाग चाडयातो छे. छंदनी

११० जुओ The Annual Report of the Mysore Archaeological Department for the year 1923, p. 83. वीरय्य कन्नडभाषानो बोल छे. सेनो अर्थ पाळियो थाय छे.

વરણીમાં નાટકકાર પુરોચાયી કવિને અનુસરે છે. તેમ કરતાં જ્યાં જ્યાં એ મોટા છંદ યોજે છે, ત્યાં ત્યાં એ છંદોમાં તે મુક્તકની સ્ત્રી આગવા ચૂકતો નથી. સંસ્કૃતમાં તેણે એકે નવો છંદ સરજ્યો નથી, પણ પ્રાકૃતમાં એણે દ્વિપદી-સ્વર્ણનો ઉપયોગ કર્યો છે. તે નવતર છે, એટલે ઘણાસ્થાને ભૂલાવામાં પણ નાંચે છે. રત્નાવલી નાટિકાના પહેલા અંકમાં આ વિશિષ્ટ પ્રાકૃત પદ્યવંધની પ્રથમ શાંસ્ત્રી થાય છે. એ છંદ અવલમ્બક અને ગીતિથી વનેલો મિશ્ર માત્રાવંધ છે. દ્વિપદીસ્વર્ણ સંજ્ઞા અજાણી હોઈ તેના મિશ્ર વંધારણનો લ્યાલ ન આવ્યાથી એકેએક છાપેલી પ્રતમાં એ મિશ્ર છંદની ત્રણ શુદ્ધ છંદ તરીકે ગણના કરવામાં આવી છે. હેમાચાર્ય 'ગીત્યન્તાવલમ્બકૌ દ્વિપદી-સ્વર્ણમ્' એવું લક્ષણ આપી એના મિશ્ર વંધારણનું ગર્ભિત રીતે સૂચન કરે છે^{૧૧૧}. અવલમ્બક ચાર સમ ચરણનો માત્રાવંધ છે. તેના ચરણનું માપ વાવા વાવા વાહવા છે. ગીતિનું લક્ષણ તો સંસ્કૃતગૂજરાતી પિંગ્લોમાં આપેલું છે. બે અવલમ્બક પછી એક ગીતિ, એ રીતે ત્રણ છંદનું જૂથ તે દ્વિપદીસ્વર્ણ. જૂથના ઘટકાવયવોને સાંકડી લેવાને કુંડલીનો પ્રયોગ પ્રસ્તુત મિશ્ર માત્રાવંધમાં કર્યો નથી, તે ઉપરથી દ્વિપદીસ્વર્ણ મિશ્ર છંદોમાં ઘણો જૂનો હોવો સંભવે છે. અવલમ્બક અને ગીતિ બંને ઉત્પત્તિ પ્રાકૃત પદ્યરચનાના છંદ છે. ભરત-નાટ્યશાસ્ત્ર તરફ દૃષ્ટિ કરતાં દ્વિપદીસ્વર્ણના સર્જનનો પૂર્વ અવધિ ત્રીજા શતક પછી મૂકવો પડે છે. રત્નાવલીમાં એના પ્રયોગને આધારે સાતમા શતકનું પૂર્વાર્ધ તે એનો ઉત્તર અવધિ ઠરે છે. હર્ષે દ્વિપદીસ્વર્ણ યોગ્યો કે પ્રયોગ્યો, તેનો નિર્ણય કરવાનું કાંઈ સાધન નથી. પણ મોટે ભાગે તેણે પૂર્વપ્રયુક્ત છંદો જ કામે લીધા છે, તેથી સંભવે છે કે દ્વિપદીસ્વર્ણ તેના પહેલાં કોઈ વાપરેલો હશે. જૂનો ગૂજરાતીમાં તલહારુ, ધવલુ વગેરે અને ચાલુ ગૂજરાતીમાં છપ્પય, કુંડ-લિયો વગેરે મિશ્ર માત્રાવંધ છે, તેવો દ્વિપદીસ્વર્ણ પણ પ્રાકૃતનો મિશ્ર માત્રાવંધ છે^{૧૧૨}.

૧૧૧ જુઓ હેમાચાર્યકૃત છન્દોનુશાસના અ ૪૧ને છેડે શોષકપ્રકરણ.

૧૧૨ તલહારુ અને ધવલુ શબ્દો જુઓ 'ઈસલો સનમા પદરમા

૧૨૮ હર્ષનાં નાટકનાટિકાની ત્રિપુટી પછી ભવભૂતિનાં માલતીમાધવ મહાવીરચરિત અને ઉત્તરરામચરિત વિવેચનનો વિષય વને છે. એ નાટક-કારના દેશકાઠ સદ્ગત ટૉ. રામકૃષ્ણ ગોપાઠ માંડારકરે નિર્ધાર્યા છે^{૧૧૩}; અને એની ઉક્ત કૃતિઓ સારી રીતે જાણીતી છે. માત્ર પદ્યવંધ વિચારવાનો, તેની તપાસમાં ઊતરતા પહેલાં એક વાચત ધ્યાનમાં રાસત્રી ઘટે છે. મહાવીર-ચરિત અને ઉત્તરરામચરિત એ વે નાટકોનું વસ્તુ કવિએ રામાયણ ઉપ-રથી યોજ્યું છે. તેની સાથે, રામાયણનો પ્રધાન વ્યાપક જે આલ્યાનિક અનુષ્ટુભ્, તેને એણે રામચરિતના આ વે નાટકનો પ્રધાન હંદ બનાવ્યો છે. સાત સાત અંકના મહાવીરચરિત અને ઉત્તરરામચરિતમાં અનુક્રમે અટચાસી અને એકસો અઠાવીસ આલ્યાનિક અનુષ્ટુભ્ છે. એ મોટા આંકડાઓની સરસ્વામણીમાં દસ અંકના માલતીમાધવમાં માત્ર બાર જ અનુષ્ટુભ્ મઠ્ઠી આવે છે. વિશિષ્ટ સંજોગમાં વધારે વપરાયલા એ હંદને વાજૂ પર રાખતાં ઉક્ત ત્રણ કૃતિમાં ઉત્તરોત્તર ચડતા અને ઊતરતા પ્રમાણમાં વપરાયલા હંદ ત્રણ છે, વસંતતિલકા, માલિની અને શિશ્વરિણી^{૧૧૪}. પહેલાની સંખ્યા ક્રમશઃ ઘટે છે, અને બીજાનીજાની વધે છે. આ ક્રમિક વધઘટ ઉપરથી અટકઠ બંધાય છે કે પ્રથમ માલતી-માધવ, પછી મહાવીરચરિત અને છેવટ ઉત્તરરામચરિત રચાયું હશે. ક્ષેમેન્દ્ર શિશ્વરિણી વૃત્ત પ્રત્યે ભવભૂતિના આદરની નોંધ છે છે^{૧૧૫}. જરા

શતકનાં પ્રાચીન ગુર્જર કાવ્ય'નો ઉપોદ્ધાત, પૃ. ૩૮, અને તેના ઉપરની ટિપ્પણી.

૧૧૩ જુઓ માલતીમાધવ (B. S. S.), by Dr. R. G. Bhandarkar, Preface.

૧૧૪ જુઓ પરાક્રમની પ્રસાદી (આ. ૬), ઉપોદ્ધાત, પૃ ૫૦-૫૧, પરિશિષ્ટ ૨.

૧૧૫ જુઓ લઘુ કાવ્યમાલા । ગુચ્છક ૨ । મુદ્રત્તિલક્ષ । ૩।૩૩। ભવભૂતે શિશ્વરિણો નિર્ભલતરદ્વિણો । શ્વિરા ધનસદર્ભે યા મયૂરીવ વૃત્યતિ ॥

શીળવટથી ગણતરી કરતાં જણાશે કે ઓગણીસ અને એકવીસ અક્ષરના રૂપ-
વંધ કરતાં સત્તર અક્ષરના છંદ જુમલે ભવભૂતિને વધારે પ્રિય છે. અત્યઘ્નિ
વર્ગ માધના સમયથી આંદર પાની ચૂક્યો હતો. શિશુપાલવધમાં કાવ્યકારે
૧ વર્ગના હરિણી, શિશ્વરિણી, મન્દાક્રાન્તા, પૃથ્વી, અતિશાયિની,
અને વંશપત્રપતિત છંદ એકદેશી તરીકે વાપર્યા છે. ભવભૂતિએ તેમાંના પહેલા
ચારનો અને નવામાં નર્દટકનો ઉપયોગ કર્યો છે. વંશપત્રપતિતના આરંભના
ગુરુ વદલ વે લઘુ અને અગિયારમા તથા ચારમા રૂપના વે લઘુ વદલ એક
ગુરુની યોજનાથી આ છંદ રૂપજી આવે છે. ઉક્ત રૂપાંતરથી એકંદર ઉચ્ચાર-
ણામાં કાંઈ ફેર પડતો નથી. અનાવૃત્ત સંધિના વંશપત્રપતિત ઉપરથી નીપ-
જતા નર્દટકનો ઉત્તર ભાગ લલગા લલગા લલગા એમ આવૃત્ત સંધિનો બનેલો
છે. વૃત્તરત્નાકરમાં આ છંદના ચરણના સાતમા અક્ષરે મવ્ય યતિ કહી છે.
પરંતુ માલતીમાધવમાંના વે નર્દટક પૈકી એકેમાં એ મવ્ય યતિ પઢાયલી
જણાતી નથી. વઢી સુવૃત્તતિલક પળ નર્દટકને યતિરહિત લેખવે છે^{૧૧૬}.
વિશેષમાં ભરતનાટ્યશાસ્ત્રના પંદરમા અધ્યાયમાં એ રૂપવંધ નોંધ્યો નથી;
પરંતુ બૃહત્સંહિતાના અધ્યાય ૧૦૩ માં આપેલો છે. તેથી એ પાંચમા છદ્ધ
શતકમાં ઘડાયો લાગે છે. રઘુવંશના નિશા વૃત્તની પેઠે માલતીમાધવના
આ છંદના ચરણમાં અનાવૃત્ત અને આવૃત્ત સંધિનો મનોહર યોગ છે. પ્રસ્તુત
પ્રકરણના પાંચમા અંકમાં સંગ્રામ દણ્ડક વાપરેલો છે. ચણ્ડવૃષ્ટિપ્રપાત
દણ્ડકના વે નગણ અને સાત રગણના ચરણમાં રગણાત્મક સંધિનો યથેચ્છ
વધારો કરવાથી જે અનેક દણ્ડક નીપજે છે, તેમાંનો તે એક દણ્ડક છે.
આમાં નવીનતાનો છાંટો પળ છે નહિ. ભવભૂતિના પ્રયોગવંધમાં પવરચનાએ
સ્વાસ નોંધવા જેવી કાંઈ પ્રગતિ કરી જણાતી નથી.

૨૯ ભવભૂતિ પછીના શતકોમાં નવા રચાયલા સંસ્કૃત શ્રવ્યવંધ અને

૧૧૬ જુઓ કાવ્યમાલાભુચ્છ ૨ । સુવૃત્તતિલક । ૧ । ૩૧ । આ
અનુષ્ટુભૂમા તેમ જ આગલ પળ વ્રતનૂ નામ નર્દટક આવ્યું છે. યોજૂ નામ મર્કટ
પળ મળે છે; જુઓ રણપિંગલ, ગાથ ૨, પૃ ૩૬૫; તે તો અટ જ લાગે છે.

दृश्यबंधनी संख्या बहोली है। परंतु जेमां पद्यरचनानी उत्क्रांतिनुं दर्शन थाय है एवी तो कृति एक ज है। नारायण, कुमारदास, रत्नाकर, राजशेखर, मुरारि, क्षेमैन्द्र, विन्टण, श्रीहर्ष आदि अनेक साहित्यकार थया है। तथापि पद्यरचनाना, विवेचकनी दृष्टि, वेणीसंहार, जानकीहरण, हरविजय, बालरामायण, अनर्घराघन विक्रमाङ्कदेवचरित, घोघिसत्त्वावदान-कल्पलता, नैपथ्यचरित आदि काव्यनाटकने मूर्काने जयदेवना गीतगोविन्द तरफ आकर्षण्य है; केमके छंद अने प्रबंधनी फलामय गूथणीनो पहेलो अने छेछो रमणीय आदर्श संस्कृतमां ए एक ज है। परिमाणमां न्हानूं छतां ते सर्वांगसंपूर्ण काव्य है। युरोपना साहित्यनो परिभाषामां जेने जर्मिकाव्य (Lyrio) कहे छे, ते वर्गीमां ए गोठवाय। मेघदूतनां जेम अनेक अनुकरण थयां छे, तेम गीतगोविन्दनां पण थयेलां मळी आवे छे। परंतु एक पण अनुकृति उक्त दूतकाव्यनी के गीतकाव्यनी कृतिने प्होची बज्जवा समर्थ नीवडी नथी। जयदेवे ए काव्यनी रचनामां जे मार्ग लीधो छे, ते साहित्यनी सृष्टिमां नूतन अने मनोमोहक छे। संस्कृत आलंकारिकोना संकेत प्रमाणे गीतगोविन्द श्रयबंध छे। तेम छता तेनी घटना दृश्यबंधनी रीतनी छे। भरतनाट्यशास्त्रना नियमने अनुसरी संक्षेप्य वस्तुनो संक्षेप, सूच्य वस्तुनुं सूचन अने त्याय वस्तुनो त्याग करी ते आधिकारिक वस्तुनो रसमय साक्षात्कार करावे छे। एनुं संविधान पण पंच संधिनो क्रम पाळे छे^{११७}, जे विधान सरस्वती-कण्ठाभरणना कर्ताने काव्यमां पण अभिमत छे। सर्गनी समाप्ति अंकनी समाप्तिनी पंठे स्थळनुं के प्रस्तावनूं बदल्योवूं सूचवे छे। एक सर्गमांथी बीजा सर्गमां प्रवेश बखते बखते अंकावतारनुं अने अंकारयनुं स्मरण करावे छे। वस्तुनुं उद्घाटन दृश्यकाव्यनो । पद्धतिए बहुधा पात्रमुखे कर्युं छे। आशी करीने, पात्रो ज जाणे आपणा आगळ गीतगोविन्द भजवी बतावता होय,

११७ स्थूल दृष्टिए सर्ग १-२ मा मुख, सर्ग ३ मा प्रतिमुख, सर्ग ४-६ मा कर्म, सर्ग ७-१० मा अवमर्श के विमर्श अने सर्ग ११-१२ मा निगंठण के उपसंहर। संधि छे।

એવો ભાસ થાય છે. પ્રૌઠ નાટકની સંગીતિ (chorus)ની પેઠે વચ્ચે વચ્ચે ઠક્કિના ઠંકોડા જોડવા કવિ એકાદ શ્લોક લલકારે છે, તે આ નાટકકલ્પ કાવ્યની ચૂલિકા બને છે. પ્રસ્તુત કાવ્યની આવી દૃશ્યપ્રાય રચનાથી આકર્ષાઈ કાલીકતના એક રાજાએ કૃષ્ણાદ્રમ એવા નામે એક પ્રયોગવંધ યોજ્યો છે^{૧૧૮}.

૩૦ જયદેવ ગૌડ કવિ છે, એટલે ગૌડી રીતિમાં તે લખે એ સાહજિક છે. પરંતુ ગીતગોવિન્દની ગૌડી તે ગૌડોના અક્ષરટંત્રવાઢી કર્કશ ગૌડી^{૧૧૯} નથી. ઓજસ અને ક્રાંતિ ગુણમાં માધુર્ય અને સૌકુમાર્ય મેઢવી એ આરમટી વૃત્તિની સહચરીને કવિએ કૈશિકીની અનુચરી કરવા સબલ અને બહુ ભાગે સફલ પ્રયત્ન કર્યો છે. તેમ છતાં એ ક્ષતિ પ્રવંધકાવ્યનો હૃદયહારી પ્રસાદ સમાસની જાઢથી ઢોઢાઈ જાય છે અને તેના મનોરંજક માધુર્યમાં કઠોર વર્ણનો યોગ ક્ષતિ સ્વૂંચે છે. મનને મૂક્ષવનારા દુર્વટ શબ્દાર્થચિત્રના ત્રાસના મુકાબલે સમાસ તથા અનુપ્રાસનો ત્રાસ અને શ્લેપનો ક્લેશ કંઢક સહ છે. લોકે શ્રવ્યવંધમાં એકાક્ષર, લોમપ્રતિલોમ, અનેકાર્થ, સર્વતોભદ્ર, ગજપદપાઠ, મુરજવંધ આદિ ચિત્રકાવ્ય વિહિત છે, તથાપિ ગીતગોવિન્દ તેનાથી મુક્ત છે. જયદેવ એ વર્ણરચનાના વમઢમાં ન તળાયો તે સદ્ભાગ્ય. પાંચાલીપ્રસન્નાચાન, તપતીઆચ્યાન, આદિ નાટકમાં અને દ્રૌપદીહરણ આદિ કાવ્યમાં એવાં ચિત્રકાવ્યો મૂકી પ્રેમાનંદે જે ગંભીર મૂલ કરી છે, તે જયદેવે નથી કરી; એ તેને બહુ માનપ્રદ છે. ગીતગોવિન્દ એકંદરે એક સુંદર કાવ્ય છે. જયદેવને રઘુકારની પંક્તિમાં મૂકી શકાય નહિ. તથાપિ વીજા વર્ગના કવિઓમાં તે અપ્રસ્થાનને યોગ્ય છે. મહારાજ લક્ષ્મણસેનની સભાના રત્નના

૧૧૮ જુઓ The Quarterly Journal of the Mythical Society Vol. XII, No. 3, p. 285. કન્નડ ઢદ્રમ શબ્દ નાટકના ઢર્થનો છે.

૧૧૯ જુઓ આ વ્યાખ્યાનમાંની ટિપ્પણી ૧૦૨ માંના શ્લોકનૂ છેલ્લું ચરણ, ગૌડેષ્વરહમ્બર: 1.

વેરસ્વાનો મેર તો જયદેવ જ. ગૌડદેશનો 'કવિરાજરાજ' તો ગીત-
ગોવિન્દકાર જ.

૩૧ વીજાં પૂર્વ કાવ્યથી ગીતગોવિન્દ જે વાનતમાં જુદું પડે છે તે તેની પરચના છે. પૂર્વ કાવ્યો છંદોવદ્ધ છે, ત્યારે ગીતગોવિન્દ છંદ અને પ્રવંધનું વનેદ્દં છે. એ કાવ્યમાં પ્રાધાન્ય ધરાવતો ભાગ કવિએ પ્રવંધમાં રચ્યો છે; છંદ તો પૂર્વે આવી પ્રવંધની ઝથાનિકાનું કામ કરે છે, અથવા તો પૂઠે આવી વલ્લય વાળે છે. પ્રવંધ સામાન્ય રીતે અષ્ટપદીને નામે ઓઠ્ઠસાય છે; તે સંગીતશાસ્ત્ર અનુસાર વિવિધ તાલથી નાના પ્રકારના રાગમાં ગવાય છે^{૧૨૦}. આથી કરીને, કાવ્યને જે ગીતગોવિન્દ નામ આપેદ્દં છે, તે સાર્થક વને છે. પાટચ અને ગેયની આ પ્રકારની મિલાવટ સંસ્કૃત સાહિત્યમાં વિરલ છે. પના છંદોવિભાગમાં જયદેવે કોઈ નવા છંદનો ઉપયોગ કર્યો નથી. પરંતુ જે પ્રચલિત છંદ તેણે એમાં વાપર્યાં છે, તે યથાસ્થાન ઔચિત્યપુરઃસર પસંદ કરેલા છે. જ્યાં આરંભે કે મધ્યમાં વસ્તુનો માત્ર સંક્ષેપમાં નિર્દેશ કરવાનો હોય છે, ત્યાં ટૂંકા અનુષ્ટુભ્ અને આર્યાં છંદ જ એ ચોજે છે^{૧૨૧}; અને જ્યાં પરિસ્થિતિનો પૂરતો ભાસ ઝમજાવવાનો હોય છે. ત્યાં તે માલિની, શિશ્વરિણી, હરિણા, અને પુષ્પિતાગ્રાનો ઉપયોગ કરે છે. એક જ શ્લોકમાં મુક્ક જેવું સુરેસ સંપૂર્ણ ચિત્ર આપવાનું હોય છે, ત્યાં તો મોટે ભાગે શાદ્-લવિક્રીઢિત અને કાચિત્ સ્વઘરા વૃત્ત જ તે ચોજે છે. ગુર્જરસાહિત્યમાં

૧૨૦ કુંમ મૂપતિ ગીતગોવિન્દ ઉપરની રસિકમિયા ટીકામાં ધોગ-
ળીસમા પ્રવંધને રાગરાજિ નામ આપે છે; કેમકે તે વિવિધ રાગમાં ગવાય છે. વઢી વાવીસમો પ્રવંધ વિવિધ તાલથી સત્તર રાગમાં ગાઈ ધવાય છે, તે વારણથી એ તેનું રાગધ્રોણિ નામ રાલે છે. ત્યમવઢી વીસમો અને ચોવીસમો એ વે પ્રવંધ વિવિધ તાલથી ગવાય છે, તેથી એ તેમને તાલરાજિ અને તાલધ્રોણિ નામથી ઓઠ્ઠસાવે છે.

૧૨૧ જુઓ અનુષ્ટુભ્ના સાર્થક પ્રયોગ માટે સર્ગ ૩, ૪ તથા ૧૧; અને આર્યાના તેવા પ્રયોગ માટે સર્ગ ૬, ૭, ૯ તથા ૧૨.

आवो विवेक श्रीधरना १२२रणमल्लछंदमां के कांतना वसंतविजय आदि खंडकाव्यमां आस्वादगोचर थाय छे.

३२ उपर कहेला छंदना सूक्ष्म विवेक माटे जयदेव जाणीतो नथी. एनी असाधारण ख्याति तो एना प्रबंधने लीधे छे. तेनी गेय पद्यरचनामां पूर्व संस्कृत साहित्यने अजाण्या एक नवा ज संवादनूं दर्शन थाय छे. तेनूं धोरण कालमान किंवा लय छे; ते कारणथी हूं तेने लयात्मक पद्यरचना कहूं छूं. आपणा साहित्यमां ए नवतर पद्यरचनानी वे मोटी शाखा फंटाई छे, छंदनी अने प्रबंधनी. पहेली शाखानां परिचय माटे सुत्तकालना पद्यबंध तरफ दृष्टि फेंकवानी जरूर छे. ए काळना प्राकृत साहित्यना जे जे वर्ण-बंध रूपबंध अने मात्राबंध विक्रियानी शुद्धि मागी छे छे, ते सर्वे लयात्मक छंदना दृष्टांत छे. छंदमां के प्रबंधमां वर्ण रूप के मात्रा न्यूनाधिक होय, तेने भैळमां आणनार पाठग्राह्य के गानग्राह्य मान ते लय. सुत्तकालना व्याख्यानमांनां पूर्वपरिचित उदाहरण मगजमां ऊतारवाधी लयात्मक. छंदनूं स्वरूप समजाशे. जेमके

जे केइ तसा पाणा चिह्नन्ति अहु धावरा ।

परियाए अत्थि से अञ्जू जेण ते तस धावरा ॥

सू. १।१।१।४।८॥

आ श्लोकना पहेला चरणमां एक अक्षर घटे छे अने श्रीजामां एक बधे छे. ए घटवध अधोरेखांकित सानूं सआ एम पृथक्करण कर्याधी अने परिनूं पर एम एकीकरण कर्याधी दूर थई उक्त श्लोक मापमां आवे छे. वळी

निसम्म सो भिक्खु समीहियइं

परिभाणवं होइ विसारए य ।

१

१२२ जुओ इसधी सनना पद्यरमा शतकनां प्राचीन गुर्जर काव्य, पृ. ३-५ अने ८-९.

આયાણઅટ્ટી વોદાણમોણં

૩
 ઉવેચ મુદ્દેણ ઉવેહ મોક્ષવં ॥ સૂ. ૧૧૧૪૧૭ ।

આમાં અધોરેखांकित વે લઘુનું પરિ જોડકું એકીકરણથી પર સ્વરૂપ ધારણ કરી એક ગુરુનું કામ બજાવે છે, અને એક ગુરુનું વો રૂપ પૃથક્કરણથી વડ સ્વરૂપમાં વે લઘુનો અર્થ સાર છે. એ રીતે રૂપનો મેલ મઠી રહે છે. ત્યમવઠી

યાવદુક્ષ્વા નિરયા ઇથ યુક્તા

તત્થપિ તાવ ચિરં વસિતવ્વં ।

તસ્મા પેસલસાધુગુણેસુ

વાચં મનં સતતં પરિરચ્ચે ॥ સુ. નિ. ૩ । ૧૦ । ૨૨ ।

અહીં પહેલા ચરણનો અધોરેखांकित અક્ષર તેના પછી આવનારા સંયુક્તાક્ષરને લીધે વે માત્રાનો લેખાય, તે એક માત્રાનો બોલાય છે. તેથી જ રીતે ચોથા ચરણનો અધોરેखांकित સાનુસ્વાર અક્ષર વે માત્રાનો છે, તે મેલ સાધવા એક માત્રાનો બોલાય છે. ઉદાહૃત વૈક્રિય છેદનો પ્રચાર સુત્તકાલ પછી વંધ પડે છે. સંસ્કૃતમાં અવૈક્રિય વર્ણવંધનૂ અને પ્રાકૃતમાં તેવા જ માત્રાવંધનૂ રાજ્ય સૈકાનાં સૈકાં ચાલે છે. અંતે લયાત્મક પરચરચનાની પ્રવંધશાસ્ત્રા જાદુહ આંબા જેવી એકાએક ફૂટે છે, અને ફૂટે છે તેવી જ ફાલે છે, ફૂલે છે, ફાલે છે.

૩૩ સંસ્કૃતમાં પ્રથમ પ્રવંધકવિ જયદેવ છે. એના પ્રવંધમાં પાંચથી અગિયાર સૂધી કડીઓ જોરામાં આવે છે. પહેલા ત્રીજા અને દસમા પ્રવંધમાં અનુક્રમે અગિયાર, નવ અને પાંચ કડી છે. ધીજા વધા પ્રવંધ આઠ આઠ કડીના છે. પ્રત્યેક કડી અંત્ય યમકુ એટલે પ્રાસથી સંકલ્પાયલી વે વે પંક્તિની વનેલી હોય છે. પ્રવંધની કડીઓનો સમન્વય ધ્રુવપદ એટલે ટેકથી સધાય છે. ગીતગોવિન્દમાં કુલ ચોવીસ પ્રવંધ છે. તે પૈકી ત્રેવીસ માત્રાત્મક લયના છે

અને એક રૂપાત્મક લયનો છે. સંસ્કૃતના રૂઢ રૂપાત્મક ઇંદની પેઠે પ્રસ્તુત રૂપાત્મક પ્રવંધ પણ અનાવૃત્ત સંધિનો બનેલો છે. તેનું લક્ષણ સ્ફુટ કરવા એ પ્રવંધની એક કડી ધ્રુવપદ સહિત નીચે ઝતારું છું.

વસતિ વિપિનવિતાનેત્યજતિ લલિતં ધામ |

લુઠતિ ધરણિશયને બહુ વિલપતિ તવ નામ |

તવ ધિરહે વનમાલો સખિ સીદતિ || ગી. ગો. ૧૫૧|૪|

છંદોવિધાના સંકેત અનુસાર એનો સ્થિર રૂપાત્મક લય નીચે પ્રમાણે અંકાય છે.

લલલ લલલલ ગાગા. લલલ લલલ ગાલ.

લલલ લલલ લલગા. લલલલ લલલલ ગાલ.

લલલલ ગા. લલગા ગાલલ ગાલલ.

સાંકેતિક પહેલી વે પંક્તિ કડીની છે અને ત્રીજી ધ્રુવપદની છે. એમાં યતિનાં સ્થાન પૂર્ણવિરામના ચિહ્નથી દર્શાવ્યાં છે. યતિએ યતિએ તે તે સંડ સમાપ્ત થાય છે. પ્રત્યેક સંડના સંધિ માગ મૂકી છૂટા પાડ્યા છે. કડીનો પહેલો સંડ ત્રીજા સાથે અનુપ્રાસથી જોડાયો છે. કડીની પંક્તિઓને પ્રાસ સાંકળી લે છે. કડીના ચાર અને ધ્રુવપદના વે મઠ્ઠીને કુલ છ સંડનો એક અંકોડો બને છે. પ્રવંધના આ અંકોડામાં એક વે ત્રણ અને ચાર રૂપના સંધિની પરમ આહ્વાદક ગૂંથળી છે.

૩૪ નિર્દિષ્ટ દસમા પ્રવંધ સિવાયના વીજાબધા પ્રવંધ ગીતગોવિન્દમાં માત્રાત્મક લયના છે. આપળી ભાષાના માત્રાવંધ જેમ આવૃત્ત સંધિના છે, તેમ સંસ્કૃતના આ માત્રાપ્રવંધ પણ આવૃત્ત સંધિના છે. તેમાં વૈજિક સંધિ ચાર છે, વાઘા, વાહવા, વાહવાવા અને વાવાહવા. પહેલો સંધિ અદારમા પ્રવંધના^{૧૨૩} વીજો વીજામાં^{૧૨૪} અને ત્રીજો પહેલામાં^{૧૨૫}, કડીમાં તેમ જ ટેકમાં,

૧૨૩ જુઓ પ્રવંધ ૧-૬,૮,૯,૧૧,૧૨,૧૪-૧૮,૨૦,૨૨ અને ૨૩.

૧૨૪ જુઓ પ્રવંધ ૧૩ અને ૧૯.

૧૨૫ જુઓ પ્રવંધ ૭.

વપરાયલો છે. એકવીસમા અને ચોવીસમા પ્રવંધની કઢીઓમાં અનુક્રમે બાહવા તથા વાયાનો અને તેમના ટેકમાં વાવા તથા વાવાહવાનો પ્રયોગ છે. વાવા, વાહવા તથા વાહવાવા અને વાવાહવા સંધિના પ્રયોગના સુગ્રાહ દૃષ્ટાંત અગિયારમો ત્રેમો તથા સાતમો પ્રવંધ અને ચોવીસમા પ્રવંધનો ટેક અનુક્રમે પૂરા પાડે છે. પહેલા ત્રણના ટેક સમેત કઢીના એક એક અંકોડાનું અને ત્રીજાના ટેકનું ઉદાહરણ, સમીક્ષકની, સુગમતા, સારૂં નીચે આપું છું.

(૧) રતિમુખસારે ગતમભિસારે મદનમનોહરવેશમ્ ।
 ન કુરુ નિતમ્બિનિ ગમનવિલમ્બનમનુસર તં હૃદયેશમ્ ।
 ધીરસમીરે યમુનાતીરે વસતિ વને વનમાલી
 ગોપીપીનપયોધરમર્દનચન્નલકરયુગશાલી ॥ ધ્રુવ૦ ॥

(૨) કથિતસમયેઽપિ હરિરહહ ન યયૌ વનમ્ ।
 મમ વિફલમિદમમલરૂપમપિ યૌવનમ્ ।
 યામિ હા^{૧૨૬} કમિહ શરણં સસ્વીજનવચનવશ્ચિત્ ॥ ધ્રુવ૦ ॥

(૩) મામિયં ચલિતા વિલોક્ય ઘૃતં વઘૂનિચયેન ।
 સાપરાધતયા મયાપિ ન વારિતાતિભયેન ।
 હરિહરિ હતાદરતયા સા ગતા ક્રુપિતેવ ॥ ધ્રુવ૦ ॥

(૪) નિજગાદ સા યદુનન્દને ક્રીડતિ હૃદયાનન્દને ॥

ત્રીજા અને ચોથા ઉદાહરણમાં અધોરસાંકિત વર્ણનો ઉચ્ચાર પ્લુત કર્યાથી, વાહવાવા અને વાવાહવા સંધિમાં માત્રાની જે સ્વોટ પડે છે, તે પૂરાય છે. પ્રવંધમાં નાદ અને વાણીના સહકારના પરિણામે પ્લુત ઉચ્ચાર દાસ્તલ થયો છે. એનો પ્રયોગ બીજાં ધ્રુવપદમાં પણ થયેલો મઝી આવે છે ^{૧૨૭}.

૧૨૬ મુદ્રિત પાટ દે છે રસિકપ્રિયામાં તેની પત્ની સમિ અપ્યાહાર લેઈ તેનાં સંવોધનવાચક અવ્યય તરીકે ધર્થ કર્યો છે. પણ નાદેયજુગમા ધા વચ્ચે રાધા પાસે કોઈ પણ સલી હતી નહિ; એટલે સંવોધનમાં અવરાસ નથી. એ વારણથી દે વદલ ઉદ્દેગવાચક હા પાટ મેં કર્યો લીધો છે.

૧૨૭ જુઓ પ્રવચ ૬, ૯. ૧૪, ૧૦ કોરેનો ધ્રુવપદ.

૩૫ પ્રબંધનું વંધારણ લયાત્મક હોવાથી તેમાં એકકલનો દ્વિકલ સ્વ-
રૂપે અને દ્વિકલનો એકકલ સ્વરૂપે પ્રયોગ કહીંક ફોફક નજરે પડે છે.
વિલસતિ યુવતિરધિકગુણા (પ્ર. ૧૪)-એ પંક્તિના ધીજા ચતુષ્કલમાં એક
માત્રા ઝૂટે છે, તે એ વિધાને પૂરી કરાય છે. વઢી શ્રીજયદેવકવેરિદં કુરુતે
મુદં એ મદ્ગલમુઙ્ગવલગીતં (પ્ર. ૨)-એ પંક્તિમાં, વહુ મનુતે નનુ તે તનુસંગતં પવ-
નચલિતમપિ રેણુમ્ । (પ્ર. ૧૧)-એમાં, તેમ જ નયનં નલિનમિવ વિગલિત-
નાલમ્ । (પ્ર. ૯)-એ વગેરેમાં અધોરેઝાંકિત સાનુસ્વાર સ્વર, ત્યમવઢી
રાસેરસે^{૧૨૮} સહનૃતપરા હરિણા યુવતિઃ પ્રશશંસે (પ્ર. ૪)-એ પંક્તિમાં
અધોરેઝાંકિત સ્વર, એ સર્વે વેવે માત્રાના છતાં એકએક માત્રાના બોલાય છે.

૩૬ ગીતગોવિન્દના પ્રબંધમાં ધ્રુવપદ વહુધા પ્રત્યેક કઢીને અંતે
આવે છે. માત્ર સોઢમા અને એકવોસમા પ્રબંધમાં તેમ ન કરતાં કવિએ ધ્રુવ-
પદને કઢીની વે પંક્તિની વચ્ચે મૂક્યું જણાય છે. પ્રસ્તુત કાવ્યના પ્રકાશ-
કોએ તો ઉક્ત બંને પ્રબંધમાં ધ્રુવપદ પ્રત્યેક કઢીના છેડે જ ગોઠવેલું છે. વેઢની
આરંભનો કઢી ધ્રુવપદ સમેત, જેવી છાપી છે તેવી, નીચે આપું છું.

(૧૬) અનિલતરલકુવલયનયનેન
તપત્તિ ન સા કિશલયશયનેન
સખિ યા રમિતા વનમાલિના ॥ ધ્રુવમ્ ॥

(૨૧) મઙ્ગુતરકુઙ્ગતલકેલિસદને ।
વિલસ રતિરભસહસિતવદને ।
પ્રવિશ રાઘે માધવસમીળમિહ ॥ ધ્રુવમ્ ॥

આ ગોઠવણીને જૂની હાથપ્રતોનો અને જૂના ટીકાકારોનો ટેકો મળે

૧૨૮ ટીકાકાર શ્વરમિથ્ર અને કુંમ મૂપાલ રાસરસે પાઠ આપે છે, તે
મૂલમરેલો છે, ઝુઝો વેણીસંહારનું આદિમગલ. હેમાચાર્યના અનેવાર્ધસંપ્રદા ।
૧૭૦૫ । માં રાસેરસ મોલ રાસના વર્ધમાં આપ્યો છે.

ને હો; પણ તે તદ્દન મૂલભરેલી છે. પહેલીમાં વ્યાકરણદોષ નહે છે અને બીજીમાં પંચમંગ સ્વટકે છે. સોઝામા પ્રવંધની કડી અને ધ્રુવપદનો અન્વય વિચારિયે, તો જણાય છે કે કડીની ઉત્તર પંક્તિ તે મુખ્યવાક્ય છે, ધ્રુવપદ તેના ઉપર આધાર રાખતું ઉપવાક્ય છે, અને કડીની પૂર્વ પંક્તિ એ ઉપવાક્ય-માંના વનમાલિના પદનું વિશેષણ છે. મુદ્રિત ક્રમ આંશો મીંચીને સ્વીકારવાથી યાય છે શૂં, કે પહેલું આવે છે ઉપવાક્યમાંના વનમાલિના વિશેષ્ય સાથે સંબંધ ધરાવતું વિશેષણ, પછી ગોઠવાય છે મુખ્યવાક્ય, અને છેલ્લું મૂકાય છે પ્રસ્તુત વિશેષ્યવાક્યું ઉપવાક્ય. આ રચના આકાંક્ષા સંનિધિ આદિ સ્થાપિત નિયમનો ભંગ કરનારી હોવાથી અપ્રમાણ છે, નિપિદ્ધ છે. એકાદ વાસ્તવના અવયવોની વચ્ચે ગર્ભવાક્યનો પ્રયોગ સાસ સંજોગમાં સંમત છે તે સરી વાત. પણ ઉપવાક્યમાંના વિશેષ્યને તેના વિશેષણથી, વચ્ચે મુખ્ય વાક્ય ઓઠવીને, છૂટું પાડવું, તે તો સંસ્કૃત જેવી વહોઝી તેમ જ સમર્થ રૂપસંપત્તિ ધરાવનારો ભાષાના પણ અધિકારના બહારનો વાવત છે. આ કારણથી ધ્રુવપદને હું અંતગત નહિ, પણ અંતર્ગત છેલ્લું છૂં, -એટલે કે પ્રત્યેક કડીની પૂર્વ અને ઉત્તર પંક્તિની વચ્ચે ગોઠવું છૂં. એ નિર્ણય પ્રમાણે ઉદાહૃત ભાગ નીચેના ક્રમમાં વ્યવસ્થિત કરવો પડે છે.

અનિલતરલકુવલયનયનેન

સચિ યા રમિતા વનમાલિના

તપતિ ન સા કિશલયશયનેન ।

પ્રસ્તુત પ્રવંધનો અવશિષ્ટ ભાગ પણ આ જ રીતે સૂધારી લેવાનો જરૂર છે. આ પ્રવંધના છેલ્લા અંકોડાને એકવાસમા પ્રવંધના છેલ્લા અંકોડા સાથે મેઝવી જોતાં ધ્રુવપદના માપની મધ્યસ્તર્તા પક્તિ એમાથી હુસ થઈ ગઈ હોય એમ લાગે છે. એ હુસ પક્તિની સારી જગાએ એ જ માપની મઝતી પક્તિ મૂકી એ અકોડો હું આ પ્રમાણે માપમાં અને ઘાટમાં બાળું છૂં.

श्रीजयदेवरचितवचनेन
शुचिना कलिकिल्बिपहारिणा
प्रविशतु हरिरपि हृदयमनेन ।

हृषे एकवीसमा प्रबंधनी रचना विचारिये. एनो अंतिम अंकोडो नीचे प्रमाणे छे.

विहितपद्मावतीसुखसमाजे
कुरु सुरारे मङ्गलशतानि
भणति जयदेवकविराजराजे ।

आमां पहेली अने त्रीजी पंक्ति सरखा मापनी छे अने ते प्रासथी संकळायली छे. ए वेनाथी ओछा मापनी पंक्तिने कविए उक्त वे पंक्तिनी वच्चे गोठवी छे. एना मापे मापथी अने एनी व्यवस्थाए व्यवस्थाथी कविए आखो ए प्रबंध रच्यो होवो जोईए. ए आत्मनिर्णयथी हूं एनी कोटिनो प्रथम उदाहृत अंकोडो नीचे मुजब मापमां अने मेळमां आणूं छूं.

मञ्जुतरकुञ्जतलकेलिसदने
प्रविश राधे माधवसमीपं
इह विलस रतिरभसहसितवदने

एना पछीना बीजा छ अंकोडा पण अंतर्गत ध्रुवपदथी आ प्रमाणे ज हूं गोठवी लेऊं छूं. प्रस्तुत मध्यगत ध्रुवपदनो अधोरेखांकित सानुस्वार अक्षर एक मात्रानो लेखवानो छे.

३७ पद्यरचनानी उत्क्रांतिना वृत्तान्तमां अत्रोक्त लयात्मक रचनाना प्रवर्तक तरीके जयदेवनूं स्थान गौरवभर्यु अने महत्त्वयुक्त छे १२६, पद्य-सरितानी ए चोथी धारा छे. एना लयबद्ध छंदोए अने एनी देशीओए

१२६ जुओ विशेष माहीती साहं मारा गीतगोविन्दनो उपोदघात; जुओ वल्ली जैनसंशोधक पु. १. अं. १ मां नो 'पवनदत्तनो कर्ता घोयो' ए मया-रानो मारो लेख.

સંસ્કૃત સાથે પારંપરિક સંબંધ ધરાવનારની ઉત્તર કાઠ્ઠની દેશભાષાઓના સાહિત્યને જે સ્ત્રીલવ્યું છે, તેનો વિસ્તાર નાંસી-નજર-ન-પ્હોચે-એવો વિપુલ છે. જલદેહા સરસ્વતીનું મુલ અંબાજી પાસેના કોટેશ્વરના ન્હાનકઢા કુંડમાં છે અને લયદેહા સરસ્વતીનું મુલ ન્હાનકઢા ગીતગોવિન્દ કાવ્યમાં છે. એનાં શરણોનો ઉદ્ગમ ઉપજાળની પ્હાડીમાંથી શોધી કાઢવાનું વિકટ કાર્ય અવિપ્વ્યતા નવજવાન ન-ધાકનારા શિશ્વરસેજુ પ્રજ્ઞાસીને માટે રહેવા દેઈ મારાં ઠાકેલાં પગલાં. પ્રાકૃત અને અપભ્રંશની પદ્યભૂમિ તરફ વાઙ્ મૂં.

૩૮ દ્વિભાષિક કાઠ્ઠની પ્રાકૃત પદ્યરચના સંસ્કૃત નાટકોમાં અને પ્રાકૃત મુક્તકના સંગ્રહમાં ઉપલબ્ધ છે તેમાં, શર્પ્યમ્વસૂરિના સમયનો માત્રા-બંધ જે આર્યા કિંવા ગાથા, તેનો મુલ્યત્વે કરીને ઉપયોગ થયેલો છે. ઉપરાંત માસે આલ્યાનકાલથી રૂઢ થયેલા ત્રૈષ્ટુમી ઉપજાતિ તથા વંશસ્પ, અને આલ્યાનકાલ તથા મુત્તકાલના ગાઠ્ઠામાં પ્રગટી પ્રચાર પામેલો વસન્ત-તિલકા, એ રૂપબંધ સંસ્કૃતમાંથી પ્રાકૃતમાં ઝતાર્યા છે; તેમ જ મુત્તકાલનો માત્રા તથા રૂપની મિશ્ર ઘટનાનો પુરાણો વૈતાલીય પળ તેણે એક વાર વાયર્યો છે. વઠ્ઠી રઘુકારે, સંસ્કૃતનો અર્ધસમ રૂપબંધ જે અપરવકૂત્ર, તે પ્રાકૃતમાં પ્રયોગ્યો છે. એ નાટકકારનો વાકીનો પ્રાકૃત પદ્યભાગ આર્યામાં છે. શાકુન્તલમાં નટીના ગાયનનું અને શકુન્તલાનો પ્રેમપત્રિકાનું પદ્ય ગીતિમાં ઉપલબ્ધ છે. પરંતુ રઘુકારના સમયમાં એ માત્રાબંધના અસ્તિત્વ વિશે મને ગંભીર શંકા રહે છે. ગીતિ શબ્દ માત્રાછંદના વિશેષનામ તરીકે જાણીતો હોય, તે પાંચમા અંકના આરંભે 'અહો રાગપરિવાહિની ગીતિઃ।' આદિ વાક્યોમાં 'ગાયનની ળીજ' અથવા 'છંદ'ની સામાન્ય સંજ્ઞા તરીકે કવિ તે વાપરે નહિ. પ્રકરણ અને ગીતિ શબ્દ ઇસવી સનના આરંભની આસપાસનાં સૈકામાં પારિભાષિક અર્થમાં રૂઢ થયા^{૧૩૦} ન હતા. પ્રાકૃત સાહિત્યને ઉત્તે-

જન આપનારા સાતવાહનોના રાજ્યકાલમાં આર્યા કિંવા ગાથા છંદ મહારાષ્ટ્રમાં વહુ જ લોકપ્રિય થઈ પડ્યો હતો; અને તે માત્રાબંધમાં ફરોડો મુક્તકો રચાયા હતા. તેની વીજી અને ત્રીજી પેઢીએ ગીતિ અને આર્યાગીતિ છંદ થયા. ત્રીજા શતકના ભરતનાટ્યશાસ્ત્રમાં આર્યા અને આર્યાગીતિનાં લક્ષણ આપેલાં છે. આ વે માત્રાબંધની વચમાં ગોઠવાતી ગીતિનો પ્રયોગ શાકુન્તલમાં સંભવિત લાગતો નથી. તે કારણથી પ્રસ્તુત શંકાસ્પદ ગીતિઓને નીચે મુજબ આર્યારૂપે વાંચવા મારું મન પ્રેરાય છે.

ईसीसि चुम्बिआहं भमरेहि सुजमारकेसरसिहाई ।
दअमाणा पमदा ओदंसेन्ति सिरीसकुमुमाई^{१३१} ॥
तुज्झ ण जाणे हिअअं मम उण कामो दिवा अ णत्तं अ ।
अधिणो तचह वलीअं तइ चुत्तमणोरहं अहं^{१३२} ॥

૧૩૧ મુદ્રિત પ્રતોમાં 'ઓદસઅન્તિ દઅમાણા પમદાઓ સિરીસકુમુમાઈ' એવો પાઠ છે. પરંતુ ઓદસઅન્તિ તો કાલિદાસના સમય પહેલાનું રૂપ છે. શાકુન્તલ નાટક રચાયું અને મજવાયું હશે, ત્યારે તો ઓદસેન્તિ રૂપ વપરાતું હશે. સર્વ નાટકકારે પણ નટીના મુખમાં ઓદસેન્તિ રૂપ મૂક્યું હોવું સંભવે છે. ઘડી 'પમદાઓ' અને 'પમદા' ઘન્ટે પ્રયમાના ઘડીવચનનાં રૂપ છે, એટલેકે પ્રક્ટને વડલે ઘડી પણ શક્ય છે. એ વે વાત પ્ર્યાનમાં રાહી ગાયને ઘડીકૂલ ધાવતો કલ્પિત પાઠ મેં ઉપર પ્રમાણે ગોઠવ્યો છે.

૧૩૨ મુદ્રિત પ્રતોમાં 'તુદ ચુત્તમણોરહાઈ અહાઈ' એવો ઘડીવચનાંત પાઠ છે. પરંતુ મનોરથ ધાંધલા એ, અંતરિંદ્રિય જે મન, તેનો ધર્મ છે, નહિ કે કાન નાક આદિ બહિરિંદ્રિયનો. ધર્મ્યાત્ અહીં મન જ અભિપ્રેત હોઈ એકવચનનો પ્રયોગ ઇષ્ટ છે. એ નિર્ણય સ્વીકારતાં અને અમલમાં મૂકતાં પંક્તિઓ આપોઆપ ગીતિની મટી આર્યાની બની જાય છે. ઉપરાત રત્તિ વડલ મેં ણત્તં (સં. નક્કં) નો પ્રયોગ કર્યો છે, તે તો દિવા અભ્યયને જવાબ આપતો અભ્યય મૂકવાના દેત્રુથી કર્યો છે. ઘડી શાકુન્તલા રાજાનું હૃદય જાણતી નથી, એટલે તે એના ઉપર નિર્ષણતાનો આરોપ મૂકે નહિ; એવી સમજથી મેં 'કમો'ના વિશેષણ તરીકે નવો 'અધિણો' (સં. અપૂણઃ) પાઠ યોજ્યો છે.

ઉત્પત્તિકાલે આર્યાના યાર, અઢાર, વાર ને પંદર, એવા ચાર માત્રા-
 યંદ પડતા હતા; અર્થાત્ વારમી માત્રાએ યતિ આવતી હતી. ઘઠ્ઠી એ કાલે
 માત્રાગણનું ધોરણ; સ્થપાયું ન હતું; ઇટલે અમુક સ્થલે અમુક જ માત્રા-
 ગણ; આવવો જોઈએ એવું બંધન પણ ન હતું. માસ, અને કાલિદાસના સમ-
 યમાં સ્થિતિ જરા વદલાય છે. વારમી માત્રા પછી યતિનો નિયમ શિથિલ
 પડે છે; અને ઠ્ઠસ્વ વૃહદ્ તથા ઠ્ઠસ્વથી તેમ જ ચાર ઠ્ઠસ્વથી થતા ચતુષ્કઠ્ઠના
 અને ઘઠ્ઠી કેવલ ઠ્ઠસ્વથી થતા એકકઠ્ઠના, પ્રયોગના નવા નિયમ સરજાય
 છે. તે સાથે પથ્યા વિપુલા અને ચપલાનો વિવેક પ્રગટે છે. ડપર આપેલી
 નટીના મુલ્કની તથા શરૂંતલાના હાથની આર્યાઓ અનુક્રમે વિપુલા તથા
 પથ્યા છે.

૩૧ રઘુકારના માલવિકાગ્નિમિત્રના વીજા અંકમાં એક સમચતુષ્પદ
 માત્રાબંધ આપ્યો છે. માલવિકા તેનો આંગિક અભિનય કરી બતાવે છે. એ મુકરુ
 શર્મિષ્ઠા નામે કવયિત્રીની કૃતિ છે, રઘુકાર છલિતકના પ્રયોગને અંગે એનું
 અવતરણ આપે છે. તે ડપરથી અનુમાન થાય છે, કે શર્મિષ્ઠા એ નવા નાટક-
 કારના સમયમાં સારી લ્યાતિ ધરાવતી હશે. એ કવયિત્રીની વીજી કોઈ કૃતિ
 જાણવામાં નથી. એનો ડહારો નીચે આપું છું.

દુલ્લહો પિઓ તસ્સિ ભવ હિઅઅ ગિરાસં

અમ્હો અપદ્ધઓ મે ફુરદિ કિંપિ ઘામો ।

એસો સો ચિરદિદ્દો કહં પળદ્દવ્વો ?

ળાહ મં પરાહીણં તદ્ ગળઅ સત્તિણ્હં ॥ ^{૧૨૩}

પ્રસ્તુત માત્રાબંધનું નામ ન જહચાથી તેને હું કલ્પિત શર્મિષ્ઠા
 સંજાથી ઓઢસ્વાર્ધું છું. આગલ સૈતુવન્ધની પઢરચનાના વિવેચનમાં
 વિલમ્બિતગલિતક ઇંદનો નિર્દેશ કરવામાં આવશે, તેનું ડક્ત શર્મિષ્ઠા ઇંદ

૧૨૩ ત્રીજા ચરણમા મુદ્રિત પાઠ ડષ્ણદ્દવ્વો છે. તે યઢવેસતો ન
 હોવાથી પળદ્દવ્વો પાઠ મેં કલ્પ્યો છે.

પૂર્વરૂપ છે. તેવી જ રીતે વિક્રમોર્વશીયના વીજા અંકમાંથી નીચે ઉત્તારેલા માત્રાબંધ લલિતગલિતકનું પૂર્વરૂપ છે. એના પ્રત્યેક ચરણમાં ચોવીસ માત્રા છે.

સામિઅ સંભાવિદા જહાહં અમુણિઆ તણ
હોમિ તહેવ્વ ણામ જાદિ અણુરત્તસ્સ તે અહં, ।
વિલ્હિલિદપારિજાદકિસલઅસઅણિજ્જઅમ્મિ ણં
નન્દણવાદા વિ કહં ઉણ્હા મહ સરીરણ ? ॥^{૨૭૪}

।વલમ્વિતગલિતકમાં અને લલિતગલિતકમાં અન્ય ચમક ફિંવા પ્રાસ આવશ્યક છે, જ્યારે ઉપર ઉત્તારેલા ચાવીસ અને ચોવીસ માત્રાના ચરણના માત્રાબંધ અન્ય ચમકથી રહિત છે. શર્મિષ્ઠાની કૃતિમાં પદાંતે વે બૃહદ્ વર્ણ અપેક્ષિત છે. કાલિદાસના માત્રાબંધનો પદાંત હવા છે, એટલે કે હ્રસ્વ અને બૃહદ્નો બનેલો છે. પ્રસ્તુત માત્રાબંધોની ઉત્પત્તિ મુત્તનિપાતના કોકાલિય પછી, પણ ઇસવી સનની શરૂઆત પહેલાં થઈ સંભવે છે.

૪૦ આર્યામાં રચાયેલા પ્રાકૃત મુક્તકોનો મોટો સંગ્રહ ગાહાસત્તસૈ છે. અમરુ અને ભર્તૃહરિના સ્વરચિત મુક્તકોના સંગ્રહની જે દશા કાલાંતરે થાય છે, તે જ આ હાલ સાતવાહનના સ્વપરચિત મુક્તકોના સંગ્રહની પણ થઈ છે. એમાં છેક આઠમા શતક પર્યંતના કવિઓના મુક્તકો પેસી ગયા છે. એમાંથી પરક્કમરસ અને કઙ્કરાબરસ એ મુદ્દાની વે ગાથાઓ નીચે આપી છે, તે ચોથા શતકના કવિરાજ વિરુદ્ધ ધરાવનારા સમુદ્રગુપ્ત પરાક્રમાંદિત્યની હરો એમ મારું મન કહે છે.

ગઅકલહ્કુમ્ભસંણિહ્વણપીણપિરન્તરેહિં તુક્કેહિં ।
ઉસ્સસિંઙં ચિ ણ તીરઙ્કિં ઉણ ગન્તું હઅથણેહિં ॥ .

૧૩૪ ઉર્વશીની આ પ્રેમપત્રિકાની મુદ્રિત વાચના છંદોમંગથી દૂષિત છે. મૂળને મોટે ભાગે વચ્ચી રહી મેં ઉપર મુજબ છંદ માપમાં આપ્યો છે. એનું નામ ન મચ્ચાના કારણથી દું એને ઉર્વશી સંજ્ઞાથી ઓચ્છ્યાવું છું.

अणुदिअहवाङ्कुआअरविण्णाणगुणेहिं जणिअमाहप्पे ।

पुत्तअ अहिजाअजणो विरज्जमाणोऽइंदुल्लखो ॥^{१३५}

ए राजाना यशस्वी पुत्र द्वितीय चंद्रगुप्त विक्रमादित्यनी युद्धचर्या अने दानचर्याना उल्लेखनी एक आर्या पण प्रस्तुत संग्रहमा' छे. ते ऐतिहासिक होबाथी नीचे आपूं छूं.

संवाहणसुहरसतोसिएण देन्तेण तुह करे लक्खं ।

चलणेण विक्रमाइच्चचरिअमणुसिक्खिअं तिस्सा ॥

एवी ज ऐतिहासिक नीचेनी सातवाहन विशेषनी गाथा पण ए गाथाकोशमां छे:-

आवण्णाइं कुलाइं दोच्चिअ जाणन्ति उण्णइं षेउं ।

गोरीअ हिअअदइओ अहवा सालाहणणरिन्दो ॥

अज्ञात सुभाषितकार कहे छे के अपर्णा जे गौरी, तेमनां सगांसबधी (आपर्णानि कुलानि)नी उन्नति जेम गौरीने अंतःकरगधी ब्हाला रंकर भगवाने करी, तेम अवदशा पामेली आन्ध्रजाति (आपन्नानि कुलानि)नी उन्नति पृथ्वी (गौरी)ने अतःकरणधी ब्हालो सातवाहन राजा करी जाणे छे^{१३६}. आ गाथा, ऐतरेयनाक्षणमां आन्ध्र आदि जातिनी उत्पत्ति विशेष इतिहास आप्यो छे, तेने लक्षित करे छे. उक्त प्राचीन ब्राह्मणमा कथू छे के विश्वामित्र ऋषिने मधुच्छंदा सिवाय वोजा सो पुत्र हता, पचास मधुच्छंदाथी मोटा (अने) पचास मधुच्छंदाथी न्हाणा पिताए शुन शेषने पुत्र करी लीधो हतो ते वात मोटा पचासने रुची नहि. तेमणे वतावेली अरुचिधी क्रोधे

१३५ मूळमा तेम ज टीकाभा बीजी गायाने अत्ते मुद्रित पाठ 'विरज्जमाणो वि इल्लखो' छे एमा वि(संअपि) बदल में कल्पित पाठ अइ(स.अति) लोधो छे

१३६ टीकाकार प्रस्तुत गायानो सातवाहन परत्वे जुदो अर्थ करे छे. सेनो भावार्थ, सातवाहन दूतिया (आपन्न) नू दु रा टाब्बनार हतो, एवो नीरुळे छे, परंतु ए अर्थमा उपमा घटावी शकती नथी शकरनी उपमाना निबोह सार अर्थ बदलवो पडयो छे.

भराई विश्वामित्रे तेमने शाप दीधो के तमारी प्रजा शूद्र थई जशे. शापथी दस्युपणाने पामेला ए वैश्वामित्रो ते आन्द्र,पुडू, पुलिंद,शबर अने मूर्तिव^{१३७}. तेओ पैकी आन्द्र शापित स्थितिमाथी उन्नति पाम्या अने इतिहासप्रसिद्ध थया, ते राजा सातवाहनना पुण्यप्रतापे. आवो भावार्थ उपर उतारेली गाथाने छे. सातवाहन वंशसंज्ञा होवाथी कयो सातवाहन अहाँ अभिप्रेत छे ते अनिश्चित रहे छे.

४१ गाहासत्तसईमा पालित कविनी नव अने गुणद्धनी एक गाथा (गां.सं.।२।६०।) संगृहीत मळी आवे छे. ते पैकी पहेलो रामचरितना कर्ता अभिनन्दना कहेवा प्रमाणे हाल सातवाहनना दरवारनी संमानित कवि हतो^{१३८}. एणे प्राकृतमां तरङ्गवई नामे कथा रची हंती. असल ग्रंथ नाश पाम्यो छे, पण तेना संक्षेपरूप तरङ्गलोला उपलब्ध छे. ते बांचवाथी पालित किंवा श्रीपालितनी कवित्वशक्ति विशे ऊचो अभिप्राय बंधाय छे. बीजा कविनी गाथा तो एक ज बची छे, पण ते गाथा साथे तेना कर्तानूं नाम पण बध्यूं छे ते बहु महत्त्वनृ छे. गुणद्ध नाम सं. गुणद्धनूं पाकृत रूप छे. ए जूना तद्भव उपरथी नवो तद्भव गुणद्ध ऊपज्यो छे. एने नवो संस्कार आपी सं. गुणाढ्य बोल ऊपजावी कादर्यो लागे छे. गाहासत्तसई।२।६०। नो जूनो तद्भव गुणद्ध, नवो तद्भव गुणद्ध अने पुन संस्कार पामेलो नवतर गुणाढ्य, ए सौ मूलभूत गुणद्धनो विस्तार छे. कथासरित्सागर अने बृहत्कथागञ्जरी तेने सातवाहनना समयमा मूके

१३७ जुओ पेत्रेय ब्राह्मण । पश्चिका ७ । अध्याय ३ । खण्ड ६ । मन्त्र १८ । नो नीचे आपेलो उतारो -तस्य ह विश्वामित्रस्यैकशर्तं पुत्रो आसुः । पश्चाशदेव ज्यायासो मयुच्छन्दस पश्चाशत्वनीयासः । तद् ये ज्यायासो, न ते कुशलं मेनिरे । ताननुव्याजहारान्तान् धै प्रजा भक्षीष्टेति । त एतेन्द्रा पुण्ड्रा शबरा पुलिंदा मूर्तिवा इयुदन्त्या महवो भवन्ति वैश्वामित्रा दस्यूना भूयिष्ठा ।

१३८ जुओ चाल ध्यालयाननी प्रस्ताव ३ अने तेन ख्याती टिप्पणी १६।

છે. એ પૈશાચીમાં રચેલી, વઢૂકહા, જેને, આધારે કથાસરિગર વૃહત્કથામञ्जરી અને વૃહત્કથાસંગ્રહ રચાયેલ છે, તે નાશ પામી છે. તરંગવતી અને વૃહત્કથાની રચના ઘણું કરીને ગાયામાં કરાઈ હશે.

૪૨ પુરાણોમાં રાજવંશોની આપેલી નોંધ પ્રમાણે સાતવાહનવંશનો સત્તરમો રાજા તે હાલ. એનો રાજ્યકાલ પાંચ વર્ષનો કહ્યો છે. ઐતિહાસક વિન્સેટ સ્મિથ હાલનો રાજ્યારંભ ઇ. સ. ૬૮ની સાલમાં મૂકે છે^{૧૩૯}. શકસંવત્ના આરંભ સાથે મેઝ મેઝવવાને એના રાજ્યની શરૂઆત દસકો મોડી માનિયે, તોપણ પુરાણોક્ત ટૂંકડા પાંચ વરસના રાજ્યકાલમાં રાજાના આશ્રયથી વિવિધ પ્રકારનું સંસ્કૃત મહારાષ્ટ્રી અને પૈશાચી સાહિત્ય^{૧૪૦} સરજાયું અસંભવ્ય જણાય છે. એમ વન્યું હોય કે રાજા થતા પહેલાં હાલ સાતવાહને રાજકુમાર તરીકે કેટલોક વસ્ત પ્રાંતિક રાજ્યાધિકાર ભોગવ્યો હોય, અને એ રીતે લંબાયલા સમયના ગાઝામાં પ્રસ્તુત અતિ વિપુલ સાહિત્ય અસ્તિત્વમાં આવ્યું હોય. અસલ ગાહાસત્તસર્ઈનો સંગ્રહકાલ પણ એ સંભવે છે. એમાં હાલે પોતે રચેલી ગાથા કર્ડ કર્ડ, તે જાણવાનું સાધન માત્ર ટીકાકાર પીતાંબર પૂર્ણ પાઠે છે. એને રચેલી રત્નાવલી નામે ટીકામાં ગાથા સાથે ગાથાકર્તાનાં નામ વહુધા આપ્યાં છે. દિલગીરીની વાત એટલી છે કે સદગત પંડિત દુર્ગાપ્રસાદને મઝેલી હાથપ્રતમાં ચારસેં વગ્રીસમી ગાથા પર્યંત જ નામની નોંધ આપો છે^{૧૪૧}. નામવાઝા માગમાં પિસ્તાઝીસ ગાથા હાલસ્સ મુદ્રાની મઝી આવે છે^{૧૪૨}. ગાહાસત્તસર્ઈની આર્યા કિંના ગાથાનું લક્ષણ માસ અને કાલિદાસની આર્યાના જેવું છે.

૧૩૯ જુઓ Early History of India, ch. VIII.

૧૪૦ ક્ષાત્રગ્ન વ્યાસરણ, ગાહાસત્તસર્ઈ, તરંગવદ્, ઘટ્ટકહા ઘોરે.

૧૪૧ જુઓ કાવ્યમાલામાં ઉપાયની ગાહાસત્તસર્ઈનો સસ્કૃત ઉપોદ્ઘાત અને કનું પરિક્ષિટ.

૧૪૨ હાલે રચેલી ગાથાની ટીપ નીચે પ્રમાણે છે.—૧ || ૧, ૨, ૧૩, ૧૬, ૨૫, ૧૦૧ ||; ૨ || ૧૭, ૧૮, ૧૯, ૨૦, ૩૦, ૪૦, ૪૮, ૫૬,

૪૩ પ્રાકૃત પદરચનાની આલોચનામાં શ્વાસ મહત્વ ધરાવતું કાવ્ય રાવણવહો (સં. રાવણવધઃ) છે. એના કર્તા પ્રવરસેન વિશે પૂર્વે કહેવાઈ ગયું છે^{૧૪૩}. મુદ્રિત ગાદ્યાસત્તસર્ઈમાં પવરસેણસ્સ મુદ્રાવાઙ્ગી ચાર આર્યા મઙ્ગી આવે છે^{૧૪૪}. એ ચાર આર્યા અને રાવણવહો સિવાય એની કોઈ કૃતિ પ્રકાશમાં આવી નથી. એના માતામહની સંસ્કૃત તથા પ્રાકૃત અને પ્રમાતામહની પ્રાકૃત કવિતા જૂજ ઉપલબ્ધ છે^{૧૪૫}. પ્રવરસેને રાવણવહોના પેટાભાગને આસાસબો (સં. આશ્વાસઃ) નામથી ઓઢલાવ્યા છે. પ્રસ્તુત કાવ્યમાં પંદર આશ્વાસ છે. સમુદ્ર ઉપર સેતુ વાંધી રામચંદ્રજી લંકેશ્વર રાવણને યુદ્ધમાં મારીને સીતા પાછાં મેઢવે છે, એ એનું વસ્તુ છે. ઉક્ત પંદરમાંથી ત્રણ આશ્વાસ સેતુવંધનના અદ્ભુત વર્ણનમાં રોકાયા છે, તે કારણથી એ કાવ્ય સાધારણ રીતે સેતુવંધના નામે જાણીતું છે^{૧૪૬}. સાતમા શતકના પૂર્વાર્ધમાં બાણભટ્ટ^{૧૪૭} સંક્ષિપ્ત સેતુ સંજ્ઞાથી તેનો નિર્દેશ કરે છે. સેતુ કાવ્યનો વ્યાપક છંદ આર્યાગીતિ કિંવા સ્કન્ધક છે. કુલ વારસેં નેવુ છંદમાંથી એમાં વારસેં છેતાઙ્ગીસ આર્યાગીતિ છે. બાકીના ચુમાઙ્ગીસ છંદની

૬૮, ૭૯, ૮૨, ૮૩, ૯૦, ૧૦૧ ॥; ૩ ॥ ૧૫, ૨૩, ૨૪. ૨૭, ૩૫, ૩૮, ૪૦, ૫૧, ૬૪, ૬૫, ૭૮, ૧૦૧ ॥; ૪ ॥ ૨૧, ૨૬, ૫૯, ૭૧, ૭૪, ૯૦, ૯૧ ॥; ૫ ॥ ૧, ૮, ૯, ૨૦, ૩૧ ॥; ૭ ॥ ૧૪ ॥.

૧૪૩ જુઓ ચાહુ વ્યાખ્યાનનો પ્રસ્તાવ ૧૬.

૧૪૪ જુઓ ગા. સ. ૧ ॥ ૬૪ १, ગા. સ. ૧ ॥ ૩, ૮, ૧૬ ૧.

૧૪૫ જુઓ ચાહુ વ્યાખ્યાનના પ્રસ્તાવ ૧૪ અને ૩૯.

૧૪૬ જુઓ સેતુવંધ, આશ્વાસ. ૬-૮. માસના એક નાટકમાં યૌગંધરાયણે હીધેલી પ્રતિજ્ઞાને અને યીજામાં ઘસરાજની સ્વપ્નાવસ્થાને અનુલક્ષીને પહેલાને પ્રતિજ્ઞા યૌગંધરાયણ અને યીજાને સ્વપ્નવાસવદત્ત સદા આપવામાં આવી છે. સરરાવો વઙ્ગી મૃચ્છકટિક, યેણીસંહાર, યિદ્ધશાલભઙ્ગિકા વગેરે સંજ્ઞા.

૧૪૭ જુઓ હૃપંચરિતના આરંભે આપેલો નીચેનો શ્લોકઃ—કીર્તિઃ પ્રવરસે-
નસ્ય પ્રયાતા કુમુદોજ્જ્વલા ॥ ઘાગરસ્ય પરં પારં કપિસેનેવ સેતુના ॥.

વર્ગસંજ્ઞા ગલિતક છે. ગીતિના પ્રત્યેક ઢલને, અંતે વે માત્રાનો એક વૃહદ્ વર્ણ ઊમેરવાથી આર્યાગીતિ બને છે. ગલિતક વર્ણના અનેક પ્રકાર દેમા-
ચાર્યે ગણાવ્યા છે. તેમાંથી સાત પ્રકારના ગલિતક હંદ સેતુકાવ્યમાં વપ-
રાયા છે^{૧૪૮}. તેર માત્રાના ચરણનો સુન્દરગલિતક, એકત્રીસનો ગલિતક,
બાવીસનો વિલંબિતગલિતક, ચોવીસનો લલિતગલિતક, ત્રીસનો સુગ્ગલિ-
તક તથા છેતાઢીસનો માલાગલિતક એ છ સમ ચતુષ્પદ છે,
અને પહેલા ત્રીજા ચરણમાં સાત તથા ચોથામાં પચીસ માત્રાનો
સુગ્ગલિતક અર્ધસમ છે. શર્મિષ્ઠાના બાવીસ માત્રાના અને રઘુકારના
ચોવીસ માત્રાના ચતુષ્પદ માત્રાવંધથી વિલમ્બિતગલિતક અને લલિત-
ગલિતક અંત્ય યમક કિંવા પ્રાસને લિધે જુદા પડે છે. અંત્ય યમક
એ ગલિતકવર્ગનું સર્વસામાન્ય લક્ષણ છે. સેતુ કાવ્યના આરમે
પ્રવરસેન પ્રથમ વિષ્ણુને અને પછી શંકરને સ્મરે છે. એને વૈષ્ણવી
દીક્ષા મોસાલપક્ષથી મઢી સંભવે છે. એના પિતા દ્વિતીય રદસેનને વિષ્ણુ-
ભક્તિ રાજ્યપ્રાપ્તિના રૂપમાં અને એને પોતાને સેતુ કાવ્યના નિર્માણના રૂપમાં
પઢી હતી. પરમ ભાગવત દ્વિતીય ચદ્રગુપ્તથી હાર સ્વાઈ રાજ્ય સ્વોઈ વેસતાં
રદસેને વૈષ્ણવમાર્ગ સ્વીકાર્યો, જેથી પ્રસન્ન થઈ તેને વિજેતાએ વિદર્ભ-કુતલન
રાજ્ય પાહું આપ્યું. એનો ગર્ભિત નિર્દેશ એક લેખમાં 'ભગવતશ્વક્રપાળે પ્રસા-
દોપાર્જિતશ્રીસમુદાયસ્ય' પદસમુદાયથી કરેલો છે^{૧૪૯}. વૈષ્ણવમાર્ગમા આવેલા
રદસેનને ચંદ્રગુપ્તે રાજકુમારી પ્રભાવતીગુપ્તા પરણાવી હતી. તેના ધાવણની

૧૪૮ જુઓ ચાહુ વ્યાખ્યાનને છેડે ધાપેલુ ગલિતકનું પરિશિષ્ટ ૩

૧૪૯ જુઓ Indian Antiquary XII, p 243. પ્રસ્તુત લેખ-
માંની નીચેની પક્તિઓ ઉપયોગી જાઓ યાચકની સગબડ સારુ નીચે ધાર્પ છુ -
ભગવતશ્વક્રપાળે પ્રસાદોપાર્જિતશ્રીસમુદાયસ્ય યાવટવાના મહારાજથીરદસેનસુતોર્
મહારાજાધિરાજ શ્રીદેવગુપ્તસુતાયાં પ્રભાવતીગુપ્તાયામુત્પન્નસ્ય દામો પ્રસાદધૃતિ[ત]-
ધાર્તિયુગસ્ય યાકાટવાના પરમમાહેશ્વરમહારાજશ્રીપ્રવરસેનસ્ય વચનાત્ . ધા ક્રતારામાં
હં વ્યાખરણશુદ્ધિ સારું રદસેનસ્ય સુતોર્ અને અર્થશુદ્ધિ સારુ શ્રીસમુદાયસ્ય તથા
શૃતકૃતિયુગસ્ય માત્રું છે.

साथे प्रवरसेनने विष्णुभक्तिनू पोषण न्हानपणथी मळ्युं हतू. परंतु पाळळथी ते पितामहोनी शैवी दीक्षा ले छे अने शूलधारी कृत्तिवासानी प्रसादीरूप शूल अने कृत्तिस्वीकारे छे. एनी उल्लेख उपर कहेला लेखमां एना नामने लगाडेला 'शंभोः प्रसादधृतकृत्तियुगस्य' तथा धीजा एक लेखमां 'शंभोः प्रसादधृतशूलायुधस्य' एवे सूचक विशेषण द्वारा तेम ज उभय लेखमां 'परममाहेश्वरस्य' एवा स्पष्ट बचन द्वारा करेलो मळी आवे छे^{१५०}. माहेश्वर मार्गमां भळता पहेलां सेतु काव्य रचायूं हतू. तेनी प्रेरणा परम भागवत मातामह साहित्यकार तरफथी मळी होय, तो तेमां अश्रद्धा धराववा जेयूं फंड ए नथी. चंद्रगुप्तनी हयातीमा गादीए आव्या पठी आरंभायळं ए काव्य तेना मरणोत्तर नवो राजा पूरूं करे छे. आवी समजथी हूं सेतुवन्धनो निर्माण काळ इ.स. ४१४ कल्पूं छूं.

४४ सेतुवन्धना अत्रोक्त चुमाळीस गलितक टीकानी मदद वगर साधारण वाचकथी समज्या जाय एवा नथी. सेतुप्रदीपनो कर्ता तेने कण्टक कहे छे^{१५१}, ते चरावर छे. ए गलितको प्रक्षिप्त छे एम ज्ञाता पुरुषोनुं कहेवूं छे, एवो उल्लेख हेमाचार्यना काव्यानुशासनमां छे^{१५२}. अवन्ति-

१५० जुओ उपरनी टिप्पणीवाळो लेख. जुओ वली The Journal of the Bihar and Orissa Research Society, Vol. XIV, part 4, September, 1929 गानो Patna Museum Third Plate of Pravarasena II, ए लेखनी नीचेनी पक्तिओ.—(१) प्रभावती-युतायाम् समुत्पन्नस्य शम्भोः(ः) प्रसादधृति(त)शूल(ला)युध(२)स्य वाकाटकानाम् महाराजध्रीप्रवरसेनस्य... (३) मातृभटारिकाना(णा)म् पुण्योपचये ऐहिकामुष्मि(कि) गई टिप्पणीमाना ऊतारा साथे सरलावता चाले टिप्पणीना लेखमा वाकाटकानाम् पछी परममाहेश्वर बोल खोदथी रही गयो छे.

१५१ जुओ सेतुप्रदीपना आरंभे आपेळो १८ मो श्लोक.

१५२ जुओ काव्यमालामा छपायला काव्यानुशासनना पृष्ठ ३६७ मांवी छेणेनी नीचेनी ऊतारो—रावणविजय—हरिविजय—सेतुवन्धेध्वदित समाप्तिपर्यन्तमेकमेव छन्दो भवति । गलितकानि तु तत्र कैरपि विदग्धमानिभिः क्षिप्तानि इति तद्विषा मापन्ते ।

। મુન્દરીકથાના કર્તાનો પળ એવો જન્મત છે, એમ તેના નીચેના શ્લોક ઉપરથી સમજાય છે.

। સેતુરૂપેણ તિષ્ઠન્તો લોકે સદ્વસ્તુદર્શિનઃ ।

। પદ્મપદ્મશત્ પ્રમાણત્વં ગતા નઃ કવિપુત્રવાઃ ॥

પ્રસ્તુત શ્લોકમાં કવિ કહે છે કે ઉત્તમ વસ્તુ સાથે તદાકાર વનનારા અને સેતુરૂપે જગતમાં ચિરસ્થાયી રહેનારા ઉત્તમ છપ્પન કવિ અમારે પ્રમાણ છે. અહીં ઉત્તમ વસ્તુ તે પ્રવરસેને સેતુ કાવ્યમાં અર્પૂર્વ ઘટનાએ ગૂંથેલી રામકથા સમજાય છે. નવો ઝમેરેલો એક એક ગલિતક ઇંદ સેતુ કાવ્યમાં મઝી જતો હોવાથી તેને સેતુરૂપ કહ્યો છે. 'એ ઝમેરેલા ગલિતકના રચનાર યમક કવિઓને અવન્તિમુન્દરીના કર્તાએ ઉત્તમ કવિ ઠેરવ્યા છે. એ ગલિતકો દ્વારા ચિરસ્થાયી સેતુ કાવ્ય સાથે ઉક્ત કવિઓ પળ તેણે જગતમાં ચિરસ્થાયી વનેલા વર્ણવ્યા છે. આ પ્રક્ષેપક કવિઓ ચાર પાંચ નહિ, પણ છપ્પન હતા. તેમણે કેટલા ગલિતક ઝમેર્યા તે જણાવ્યું છે નહિ. પરંતુ તે છપ્પનથી તો ઓછા ન જ હોઈ શકે. એ લેખે, અત્યારે માત્ર ચુમાઝીસ ગલિતક ઉપલબ્ધ છે, તે મૂલ્ય સંભ્યાથી વહુ કમી છે. કંઈ નહિ તો બાર પ્રક્ષિપ્ત ગલિતક નાશ પામ્યા જણાય છે. પ્રસ્તુત શ્લોકોનો ઝમેરો ક્યારે થયો, તે સ્વાતરીથી કહેવું અશક્ય છે. તથાપિ, એક તરફ શર્મિષ્ઠા તથા કાલિદાસના ચાવીસ તથા ચોવીસ માત્રાના અંત્ય-યમક-રહિત માત્રાબંધ અને વીજી તરફ મઢિનો મુખગલિતક લક્ષમાં લેતાં, એવી અટકલ ઘંધાય છે કે સેતુરૂપ ઉક્ત પ્રક્ષિપ્ત ઇંદ પ્રવરસેન અને મઢિના ગાઝામાં એટલે પાંચમા શતકની આસપાસના સમયમાં ઝમેરાયા હશે^{૧૫૩}.

૧૫૩ સમ અને અર્ધસમ ગલિતકનો વિકાસક્રમ વિચારતાં મુખગલિતક ઇંદ મોટો પ્રગટ્યો સમજાય છે. એ સાતમા શતકના પૂર્વે થયેલા ગલિતકને મઢિ વ્યાપક આર્યાંગીતિ સાથે એકદેશી તરીકે પ્રાચીનમાંથી સંસ્કૃતમાં ઉતારે છે. એ વિગત ગણતરીમાં છેડે સેતુકાવ્યના ગલિતકનો પ્રચાર મેં પાંચમા શતકની આસપાસ કર્યો છે.

४५ प्रवरसेनने एना मातामहना दरवारना कवि कालिदासनो परिचय थयानूं पूर्वे सूचन कर्युं हतूं. ए परिचय गाढ थईने सेतु काव्य रचार्युं त्यारे मैत्रीना रूपमां परिणाम पाम्यो. प्रस्तुत काव्यना पहेला आश्वासनी नवमी आर्यागीतमां लेनो गर्भित निर्देश छे^{१५४}. सेतुकारनो भेघकार प्रत्येनो नवो स्नेह हृदयरसथी ऊभराई जाय छे. जवान प्रवरसेनना प्रमादथी तेमां तूट पडवा जेवूं थाय छे. परंतु कालिदास बगडेली बाजी सूधारी ले छे; अने वे कवि एक-बीजाना दिलोजान दोस्त बनी रहे छे. जेम मैत्रीना संबंधमां तेम सेतुनिर्माण-ना संबंधमां प्रवरसेननां स्वलनो थाय छे. कालिदास ते सूधारी ले छे; अने, ए बंधुकार्यथी सेतुकार श्रीमुखे कहे छे तेम, सेतु समाप्तिए प्होचे छे. आ मित्र-भावथी आपेला सहकारने लीधे सेतु काव्य कालिदासे रच्यःनो प्रवाद ऊनो थयो छे. आथी सेतुप्रदीपनो कर्ता सेतुबन्धने कालिदासनी कृति कहे छे. पण ए मूल खाय छे^{१५५}. टीकाना निर्माणनूं वर्ष आपतां शककार विक्रमादित्यनो द्वितीय चंद्रगुप्त विक्रमादित्यना साहसांक विरुदथी ते निर्देश करे छे, ते पण एथी ज मूल छे^{१५६}. अहीं कहेवूं जोईए के छप्पन प्रक्षेपक कधिबोमां कालिदासने गणवानो नथी. भेघकारने यमकचित्रनो मोह हतो ज नहि. एटले तेणे गलितकनो उमेरो कर्यो लागतो नथी.

१५४ प्रस्तुत आर्यागीति विवेचननी सुगमता सारुं ह नीचे आपूं उं:-
अहिणवराआरद्धा सुकवखलिएसु बिहडिअपाट्टिबिआ। मेत्तिव्व पमुहरसिआ णिव्वोडुं
शेइ दुकरा वववक्कहा ॥ अहीं दुकरा पाठ प्रक्रमभंग टाटवा सारुं में कल्यो छे.
सुद्रित पाठ दुकर छे.

१५५ जुओ सेतु काव्यना प्रथम आश्वासनी पहेली आर्यागीतिनी उत्थानिक तथा नवमी आर्यागीतिनी टीका, अने प्रत्येक आश्वासनी पुष्पिका.

१५६ जुओ सेतुप्रदीपना समाप्तिश्लोकनी नीचे आपेली पंक्तिओ:-बधु-
भूंतारिणीतांशु(१६५२)भिरभिगणिते साहसाहस्य वपे...विज्ञेनापूरितोऽयं तिर्यितु-
लितशियो रामसेतुप्रदीपः ॥

૪૬, પદ્યરચનાની આલોચનાને અંગે સેતુ કાવ્યની ઉપયોગિતા પ્રક્ષિપ્ત ગલિતકવને લીધે છે. ગલિતકવર્ગ પ્રાકૃતમાં એક નવી કલામય ઘટના છે. આર્યામાંથી, જેમ ગીતિ, આર્યાગીત આદિની ઉત્પત્તિ થઈ, તેમ સાદા બાવીસ, અને ચોવીસ માત્રાના પદ્યબંધમાંથી અંત્ય યમકવાળા વિવિધ ગલિતક ઉત્પન્ન થયા છે. અનાવૃત્ત સંધિનો પ્રયોગ એ તેનાં ચરણની વિશિષ્ટતા છે. સંસ્કૃત સાથે સંબંધ ધરાવતી વર્તમાનકાળની દેશભાષામાં આવા અનાવૃત્ત સધિના માત્રાબંધ છે નહિ. હેમાચાર્યે વિવિધ ગલિતકનાં માત્રાગણમાં માપ આપ્યાં છે. રૂપગણો અને માત્રાગણો રૂપબંધ અને માત્રાવધના ચરણનું સ્થૂલ સ્વરૂપ ટૂંકામાં ઘટાવવા માટે ઉપયોગી છે. પળ ચરણના વાસ્તવિક સંધિનો તેથી ઘોષ થતો નથી. ગલિતકવર્ગના માત્રાસંધોના ચરણના વિવિધ અનાવૃત્ત, સધિના નિરૂપણને માટે એક સ્વતંત્ર લેક્ષની અપેક્ષા રહે છે. અહીં તેને માટે, જોઈતો અવકાશ નથી.

૪૭ પદ્યબંધમાં અંત્ય યમક કિંવા પ્રાસના કલામય પ્રયોગનું પ્રથમ દર્શન ગલિતકવર્ગમાં ધાય છે. અંત્ય યમકને વદલે 'અંત્ય' અનુપ્રાસનો પ્રયોગ સ્વલ્પકવર્ગમાં દેલા દે છે. પળ છેવટે અંત્ય યમક જ ફાવી જાય છે; અને અપભ્રંશમાં તેમ જ તેમાંથી થયેલી દેશભાષામાં તેનું અધિવાદિત એકાધિપત્ય સ્વપાય છે. પ્રવંધમાં અંત્ય યમક અને અંત્ય અનુપ્રાસના પ્રયોગનો દૃષ્ટાન્ત ગીતગોવિન્દ પૂરો પાડે છે. એનો દસમો પ્રવંધ રૂપાત્મક લયબધ છે, તેનો કડીનો પહેલો તથા ત્રીજો સંડ અંત્ય યમકથી સંકર્યાયલો છે^{૧૫૭}.

૪૮ લગભગ સેતુવન્ધના જેવડી પળ તેનાથી વધુ જ ઉત્તરતી પદ્યાત્મક વૃત્તિ તે ગડડવહો છે. પાંચમા શતકના પ્રવરણનું કાવ્ય આર્યા-ગીતિમાં છે; અને આઠમા શતકના વાકૂપતિરાજની રચના આર્યા કિંવા ગાયામાં છે પ્રસ્તુત ગાથાબંધમાં અપવાદમૂલ્ત એક સમચતુષ્પદ માત્રાબંધ છે. એ ઓગણસાટમાં ગાથા પટ્ટીની ચાર પંક્તિનો બનેલો

छे. सद्गत विद्वान् शंकर पांडुरंग पंडिते शा धोरणथी आ एक छंदना वे छंद गण्या हशे ते कळ्यूं जतूं नथी. उक्त चार पंक्तिनो एकठो अन्वय थाय छे. एनी वे छंदमां व्हेंचणी जो इष्ट होय, तो ए चार पंक्ति उपरनी टीकाकारे अंते युगलकम् एवो सांकेतिक बोल जोईए; पण ते छे नहि. अर्थात् टीकाकार वे नहि पण एक ज छंद लेखवे छे. ज्यां ज्यां एक करतां वंधारे छंदनो एकठो अन्वय थतो होय छे, त्यां त्यां युगलकम्, विशेषकम्, चकलकम्, कुलकम् अने महाकुलकम् बोल अनुक्रमे, वे, त्रण, चार, पांच अने ते उपरांतनी संख्याना वाचक तरीके मूकवा टीकाकार चूकतो नथी. छंदनूं नाम नथी आप्यूं. तथापि प्रस्तुत चारे पंक्तिनो एक ज छंद वने छे, ते तो टीका उपरथी स्पष्ट जणाई आवे छे. चरणनूं माप लगभग जळ्यायूं छे, पण अंत्य यमकनो नियम पळायो नथी; तेथी कदाचित् टीकाकारे छंदने गलितक तरीके ओळख्यो नहि होय. मारी समज प्रमाणे ते पचीस- मात्रानो 'सम' गलितक छंद छे^{१५८}. हूं नीचे मुजब पाठ गोठवीने एना अंत्य यमकनो उद्वार साधूं छूं.

हरिचलणणहृप्पहाएँ पढमयं अ विच्छोलियं
पायएहिं हरससिणो वीइयं अ संवेहियं ।
तइयं हिमदिणो चिय तुहिणच्छायाकलिलयं
कारणपरिसुद्धं व णमह गङ्गाएँ सलिलयं ॥^{१५८}

[हरिचरणनखप्रभया प्रथमं च प्रशालितं
पादैर्हरशशिनो द्वितीयं च संवेष्टितम् ।

१५८ जुओ छदोनुशासन अध्याय ४, गलितकप्रकरण । चः पी चो त्रिः
एमात् ।

१५९ मुद्रित पाठ नीचे प्रमाणेः—

हरिचलणणहृप्पहाएँ विच्छोलियं व पढमयं ।
हरससिणो पायएहिं संवलियं व वीइयं ॥६०॥
गहियहिमच्छायथ व तुहिणहिमावणणए
कारणपरिसुद्धयं व गङ्गाएँ णमह सलिलयं ॥६१॥

૧) તૃતીયં હિમાદ્રેશ્ચ તુહિનૈન્ચાયાકલિલં

કારણપરિશુદ્ધમિવ નમત ગજાયાઃ સલિલમ્ ॥]

ત્રીસ અને છેતાઢીસ માત્રાના ગલ્તિત્કનો સેતુ કાવ્યમાં પરિચય થયા પછી સમગલિત્કમાં નોંધવા જેવી નવોનતા કહે છે નહિ.

૪૯ પદ્યરચનાના વિકાસના નિરૂપણમાં નવમા શતકની કપ્પૂરમઝરી (સં. કપ્પૂરમઝરી)નું ગરુડવહોના જેવું જ ગૌણત્વ છે. એ પ્રાકૃત પ્રયોગવંધને સાહિત્યશાસ્ત્રકારો સદૃશ કહે છે. સંસ્કૃત સાદ્ ૧૦, અભયપદીનો અર્થ 'પ્રત્યક્ષ કરી વતાવવું' થાય છે. તે ઉપરથી પ્રાકૃત સદૃશ ચોલ થયો છે. સંસ્કૃત ન્હાનું નાટક તે નાટિકા અને પ્રાકૃત ન્હાનું નાટક તે સદૃશ (સં. ૧૧૦ સાદક). નાટિકાની સંસ્કૃત સાહિત્યમાં પરિગણના થાય છે; કેમકે તેનો પ્રધાન માપા સંસ્કૃત હોય છે. સદૃશ પ્રાકૃત સાહિત્યમાં સ્થાન છે છે; કેમકે તે પ્રાકૃતમાં જ રચાય છે. નાટિકામાં વિષ્કંભક અને પ્રવેશકનો ઉપયોગ થઈ શકે કે. સદૃશમાં વિષ્કંભકે નથી હોતો અને પ્રવેશકે નથી હોતો. નાટિકાના સ્વંડને અંક કહે છે. સદૃશના સ્વંડની જવણિઆ (સ. યવનિકા, જવનિકા) સંજ્ઞા છે. પ્રાકૃતમાં નવા ઘડાયલા સદૃશ અને જવણિઆ બોલ સૂચવે છે કે સદૃશ પ્રાકૃતની પેદાશ છે. જો તેની રચના સંસ્કૃતમાંથી ઊતરી આવી હોત, તો નાટિકા અને અદ્ધ એ પારિભાષિક શબ્દ પણ ઊતરી આવત, સંસ્કૃત માપા પણ ઊતરી આવત, અને વિષ્કંભક તથા પ્રવેશક પણ ઊતરી આવત. રાજશેખરની વિદ્યશાલભટ્ટિકા નાટિકા ચાર અંકમાં છે, ત્યારે કપ્પૂરમઝરી સદૃશ ચાર જવણિકામાં છે. કપ્પૂરમઝરીમાં ત્રણ જ પદ્યવંધ નવતર છે, મકરકશીર્ષી^{૧૬૧} ઉપગીતિ^{૧૬૨} અને મહાનુભાવા^{૧૬૩}. પહેલો સમચતુષ્પદ રૂપવંધ છે. એનું ચરણ દહાકાર

૧૬૦ સાહિત્યદર્પણમાં સદૃશ શબ્દનો પ્રયોગ છે, તેનો વિશ્વાસપાત્ર આધાર વહ મળતો નથી.

૧૬૧ જુઓ કપ્પૂરમઝરી । ૩ । ૨૯ ।

૧૬૨ જુઓ કપ્પૂરમઝરી । ૪ । ૧૮ ।

૧૬૩ જુઓ કપ્પૂરમઝરી । ૩ । ૩૦ ।

चार लघु पछी वक्राकार वे गुरुनुं वनेळं होवाथी एने मकरकशीर्पा नाम आपवामां आव्युं छे; कारणके मगरनुं माथूं आगळथी दंडाकार अने पाछळथी घटाकार होय छे. ससलानूं म्हो पण आगला भागमां पातळूं अने पाछला भागमां गट्टा जेवूं होवाथी प्रस्तुत रूपबंधने शशवदना पण कहेता हशे. नामनो संकेत भूलाई जतां सार्थक शशवदनाने बदले निरर्थक शशिवदना नाम पाछळथी अस्तित्वमां आव्युं जणाय छे. छंदोनुशासनमां आ विकृत संज्ञानो प्रयोग छे. कप्पूरमञ्जरीनो बीजो नवो छंद उपगीति छे. आर्यां किंवा गाथामांथी गीति अने उपगीति मात्राबंध आगळ पाछळ प्रकटे छे. आर्यांनुं एटले के पय्या आर्यांनुं पूर्वार्ध १२+१८ मात्रांनुं अने उत्तरार्ध १२+१५ मात्रांनुं होय छे. पहेलवहेलो ए अणसरखां दलनो मात्राबंध उत्पन्न थयो. पघ होवाथी ए केटलाक फाळ सूधी सामान्य गाथा (=कविता) अने गेयतावाळो होवाथी गीति (=गेय कविता) ए उभय नामथी निर्दिष्ट थया कयों. ते पछी कोइने सरखां दल रुचिकर लाग्याथी १२+१८ मात्रानां वे समान दलनो छंद तेणे रच्यो. ते वखते अणसरखां दलना छंदनुं सामान्य नाम गाथा कायम रहूं; अने सरखां दलना विशिष्ट गेयतावाळा छंदनुं गीति नाम ठर्युं. अणसरखां दलना प्रकृतिभूत छंद प्रत्ये आदर धरावता जाणकार वर्गे जूनी गाथा किंवा गीतिनो नवी गीतिथी विवेक करवा तेने आर्यां नाम आप्युं^{२१४}. छतां सामान्य जनतामां तो प्रकृतिभूत छंदनां गाथा अने गीति नाम चालू रह्यां जणाय छे. शार्थी जे, पाछळथी बीजा कोइए वळी १२+१५ मात्रानां वे समान दलनो जे छंद रच्यो, ते उपगीति कहेवायो. ए संज्ञा सार्थक क्यारे गणाय के ज्यारे, प्रकृति जे आर्यां, तेनी असल गीति संज्ञा साये एनो यौगिक संबंध जोडी शकाय ल्यारे. उत्पत्तिकालमां गीति नाम धरावती आर्यां किंवा गाथामांथी प्रकटी, ते उपगीति. आ ज आर्यांनां औत्पत्तिक गीति नाम साये उद्गीति छंदनी पारिभाषिक संज्ञानो आर्थिक संबंध छे;

અન્ધથા-ઉદ્ગીતિ સંજ્ઞાનું ઓચિત્ય સાધ્યું અશક્ય છે. પ્રકૃતિમૂલ ગીતિ ઇટલે
 ૧ ગાથા કિંવા, આર્યાનાં સંતાન અનુક્રમસર ત્રણ, ગીતિ, ઉપગીતિ અને
 ૨ ઉદ્ગીતિ. પૂર્વ દલ વેવડાવ્યાથી ગાતિ, ઉત્તર દલ વેવડાવ્યાથી ઉપગીતિ, અને
 પૂર્વોત્તર-દલ ઝલ્લાવ્યાથી ઉદ્ગીતિ નીપજી છે. વિકૃતિમૂલ ગીતિની
 પ્રજા વે, આર્યાગીતિ અને, લલિતાગીતિ^{૧૬૫}. ૧ ત્રીસ માત્રાની
 ગીતિના પ્રત્યેક દલને અંતે એક ગુરુ વધારવાથી આર્યાગીતિ નીપજે છે;
 અને પૂર્વ દલ ત્રીસ માત્રાની ગીતિનું તથા ઉત્તર દલ ત્રીસ માત્રાની આર્યા-
 ગીતિનું છેવાથી લલિતાગીતિ વને છે. અહીં આર્યાપ્રકરણની ચર્ચા પડતી
 મૂકી કપ્પૂરમઝરી તરફ પાછા વઢિયે. એમાં ત્રીજો નવો છંદ મહાનુભાવા
 છે. એ ચાર માત્રાના ચરણવાળો સમચતુષ્પદ માત્રાવંધ છે. મકરકશીર્ષા
 તથા મહાનુભાવા અને એકાદ વીજા છંદમાં કવિએ અંત્ય ચમકનો પ્રયોગ
 કર્યો છે. કપ્પૂરમઝરીની પદ્યરચના યાસ પ્રગતિ કરતી જણાતી નથી. રાજ-
 શેખરે રૂપવંધ સંસ્કૃતમાંથી ઉતાર્યા છે અને માત્રાવંધ પ્રાકૃતમાં પ્રચાર પામેલા
 વાપર્યા છે.

૫૦ રૂપવંધ તેમ જ માત્રાવંધની વિવિધતા પદમચરિયમાં સારી છે. એનો
 કર્તા વિમલસૂરિ જૈન હતો; શ્રીયુત નાથૂરામ પ્રેમીજીના અભિપ્રાય પ્રમાણે-એ
 દિગંવર જૈન હતો^{૧૬૬}. પદમચરિયમાં ૧૧૮ પર્વ કિંવા ઉદ્દેશ છે. પ્રત્યેક પર્વના
 સમાપ્તિ શ્લોકમાં કર્તાએ વિમલ મુદ્રા મૂકી છે. એમાં મુદ્રયતઃ જૈન આગમ અનુસાર
 રામચંદ્રનું ચરિત્ર વર્ણવ્યું છે. ઇ. સ. ૭૭૭ માં ઉચોત્તનસૂરિએ કુવલયમાલા
 કથા રચી છે, તેમાં કથાકારે વિમલસૂરિનો અને તેણે રચેલા પદમચરિયનો
 ઉલ્લેખ કર્યો છે. વઢી એમાં હરિવંસચરિયનો પણ વિમલાદ્ય પદથી નિર્દેશ
 છે. આથી સંભવ છે કે હરિવંસચરિય પણ વિમલસૂરિની કૃતિ હશે. પદમ-

૧૬૫ આર્ય ઇટલે પ્રજાસ્ત અને જલિત ઇટલે મુદ્ર. એ વિશેષણ ઉપરથી
 આર્યાગીતિ અને લલિતાગીતિ રહેા પડી છે.

चरियना निर्माणनो उत्तर अवधि अत्रोक्त कुवलयमालाए आंक्यो छे. पूर्व अवधि शोधी काढवा एनी पद्यरचना तपासिये. पञ्चमचरिय कर्ताना शब्दमां गाहाणिवद्ध छे. आर्या किंवा गाथा एना व्यापक छंद छे. एकदेशी तरीके एमां सोळ रूपबंधनो अने छ मात्राबंधनो उपयोग करवामां आव्यो छे. रूपबंध संस्कृत साहित्यमांथी अने मात्राबंध प्राकृत साहित्यमांथी लीया छे. प्रथम कोटिमांनो दोधक अने शार्दूलविक्रीडितनो प्रयोग सातमा शतकथी जूनो नथी. ते माघकाव्यमां एक एक वार बपराया छे, ज्यारे पञ्चमचरियमां ते अनुक्रमे सात वार अने चार वार मळी आवे छे. मात्रात्मक एकदेशीनी कोटिमां गलितकवर्गना अने आर्यावर्गना छंद तेमां योजेला छे, ते पैकी ललितगीति अने चन्द्रकागीति नवीन छे. तेमनां उत्तर दल १२+२० मात्रानां होई सरखां छे; पण पूर्व दल भिन्न मापनां छे. पहिला छंदनूं पूर्व दल १२+१८ मात्रानूं अने बीजानूं १२+१५नूं नीपजे छे; अर्थात् आर्यानां पूर्व अने उत्तर दल उक्त वे मात्राबंधनां अनुक्रमे पूर्व अने उत्तर दल बने छे. एमनां लक्षण रणपिंगळमां आप्यां छे^{११७}. सद्गत रणछोडभाइ बीजा छंदनूं चन्द्रिकागीति नाम आपे छे. ते अर्थरहित होवाथी अर्थवाचक चन्द्रिकागीति संज्ञा में योजी छे^{११८}. उक्त चार एकदेशी उपरांत चौद लघु पछी एक गुरुना मापनो शशिकला नामे समचतुष्पद रूपबंध पण पञ्चमचरियमां एक वार वापर्यो छे^{११९}. ए छंद वृहत्संहितामां छे नहि. आ विशिष्ट प्रयोगना आधारे हूं विमलसूरिने घराहमिहिर अने माघना पछी सातमा शतकना अंतमां मूळूं छूं^{१२०}. पांचमा शतक पछी प्राकृत पद्यात्मक

११७ जुओ रणपिंगळ, भाग १, पृ १२३ अने १२५.

११८ आह्लादकारक स. चन्द्र धातु उपरथी नीपजता चन्द्रक विशेषण-नो, आह्लादकारक वस्तुहय, एयो अर्थ थाय छे; सरखाओ ललितगीति संज्ञा.

११९ पंदर तिथिनी चदनी पंदर फर्याने अनुलक्षिने पंदर रूपना प्रस्तुत छंदने शशिकला नाम अपायूं जणाय छे.

१२० भावनगरनी जैनधर्मग्रंथारक समाए पञ्चमचरिय छपायूं छे; तेनां

साहित्य आर्याप्रकरणमां तथा गलितकप्रकरणमां अने, समञ्चतुप्पद् रूप-
ग्रंथमां जे ऊमेरो करे छे, ते संख्यामां स्वल्प अने कल्पमां वास्तविक प्रगति
रहित छे.

५१ त्रैभाषिक काव्यनी त्रीजी भाषा, ते अपञ्चरा. भामह ए भाषामां
कथासाहित्य बहोळ् होवानुं नोवे छे^{१७१}. ए आलकारिकने वाणभट्ट पछी
सूकवासां आवे छे^{१७२}. परंतु सारी गणत्री प्रमाणे क्रम तेनाथी ऊलटो छे.
ध्वन्याचार्य लेखे छे के 'पूर्वे जोयेलां वृक्ष जेम वसंतमां रसना परिग्रहना
कारणथी नवा जेवां जणाय छे, तेम पूर्वपरिचित सर्वे अर्थ काव्यमां रसना
परिग्रहना कारणथी नवा जेवा भासे छे', ए कारिका उपरनी वृत्तिमा आ-
नंदवर्धन हर्षचरितादानुं 'धरणीधारणायाद्युना त्व शेष ।' ए वचन दृष्टात
तरीके आमे छे, अने जणावे छे के

‘शेषो हिमगिरिस्त्वं च महान्तो गुरवः स्थिराः ।

यदलङ्घितमयांदाश्चलन्तीं विभ्रते भुवम् ॥

ए श्लोकथी प्रतीत थतो अर्थ पूर्वपरिचित छे, तथापि शब्दशक्तिमूलक वि-
क्षितान्यपरवाच्य ध्वनिना उदयथी ते वचनमां उक्त पूर्वपरिचित अर्थथी
नवीनता छे.' वृत्तिकारे जेनो अर्थ अत्रे पूर्वपरिचित कहां छे, ते श्लोक भा-

उपोद्घातमां ए प्राकृत काव्यनो रचनाधाय वीरनिर्वाणसवर ५३०, अर्थात्
वि.सं ६० (ई. स ४) आप्यां छे ए निर्देश 'पञ्चैव य वासवस्य हुसमाए
तीसवरिससजुता । वीरे सिद्धिनुवगाए तभो निवद्ध इमं चरियं ॥ प. च । ११८ ।
१३० ।' ए गाथा उपरथी थयो होय एम लागे छे. परंतु प्रस्तुत गाथामां जे
पठमचरियनी रचनान् वर्षे नोप्यं छे, ते अन्य जन कविए पूरे कालमां रचेई
प्राकृत पठमचरिय एम्मेवे छे, नहि के उत्तर कालमां विमत्सुरिए रतेलू
पठमचरिय पञ्चरत्नानी ऐम ज भाषानी कलोटीए चरवावता विमत्सुर कृति
इसवी संनना आरमे अस्तित्वमा आवी धारती नथी

१७१ सुओ भामह हृत काव्यालपार । १ । २८ । न यथापरापराप्रभा-
युषा नोच्युवावत्वपि । x x x x x x यथापरापराप्रभा तथा ॥

१७२ सुओ S.K. De's Sanskrit Poetics, Vol. 1, p 49.

महना काव्यालंकारनो छे^{१७३}. तेनी अपेक्षाए हर्षचरितनू वचनेन उत्तरकालीन छे. अर्थात् सातमा शतकना वाणभट्टधी भामह जूनो छे. हू एने छट्ठा शतकना अंतमां मूकूं छूं. एणे अपभ्रंशमां जे विपुल कथासाहित्यनो उल्लेख कर्यो छे तेना विकास माटे सोसवासो अने ते पहेलां लोकभाषा तरीके अपभ्रंश प्रचारमां आव्याने पचासपौणोसो बरस करपी हूं, ए भाषानो उदय चोथा शतकना आरंभमां थयो हशे, एधी अटकळ बांधूं छूं. वररुचिए माकृतप्रकाश रच्यो त्यारे सो बसा अपभ्रंश व्यवहारनी ज भाषा हशे. ते काळे एमां साहित्य उत्पन्न थयूं नहि होय, तेथी ए भाषाने प्रकाशकारे प्राकृत व्याकरणमा स्थान आप्यूं नहि होय. सद्गत प्रो. पांडुरंग दामोदर गुणे अपभ्रंश साहित्यनो आविर्भाव एधी जूनो, एटले अपभ्रंश भाषानो एनाथी पण वधारे जूनो मानता होय एम जणाय छे^{१७४}. भरतनाट्यशास्त्रना वत्रीसमा अध्यायनां पाचेक वृत्तना दृष्टांतमां एमने अपभ्रंशनो भास थाय छे. ते दृष्टांत विचारवा जेवा होवाथो नीचे आपूं छूं.

(१) मोरुल्लउ णचन्तउ ।

म[न]हागसे संभन्तउ ॥३२।६६॥

(२) मेह उर्दंतुं णेई जोणहउं ।

णिच्चणिप्पहे एस(ह्) चन्दउ ॥ ३२। ७४ ॥

१७३ जुओ ध्वन्यालोकना चोथा उद्घोतनी चोधी करिका अने ते उपरनी वृत्ति—दृष्टपूर्वा अपि क्षर्याः काव्ये रसपरिग्रहात् । सर्वे नंधा इवाभान्ति मञ्जुमास इय द्रुमा. ॥ तथा विवक्षितान्यपरवाच्यस्यैव शब्दशक्त्युद्भवानुरणनरूपव्यङ्ग्यप्रवर्णितमाश्रयेण नवत्वम् । यथा—‘परणीधारणायानुना ल शेषः’ इत्यादौ ‘शेषो हिमगिरिस्य च महान्तो गुरव स्थिर । यदलङ्घितमर्थादाबलन्ती विघ्नते भुवम् ॥’ इत्यादिषु सत्त्वपि तस्यैवार्थनाक्त्युद्भवानुरणनरूपव्यङ्ग्यसमाश्रयेण नवत्वम् ॥’

(૩) एसा हंसवधु [ह] हित्था [इच्छा] काणणउ ।

गन्तुं जु[उ]स्सुइया कन्तं संगइआ[या] ॥ ३२।९९॥

(૪) पिय वाइ वायर्तु[उ] सुवसन्तकाल×[उ] ।

पियकासुको[कउ] पियमदणं जणन्तउ ॥ ३२। ૧૦૮ ॥

(૫) वायदि वादो एह पवाहो रुसिद इव ॥ ૩२। ૧૬૯ ॥

આ દૃષ્ટાન્તોમાં અંત્ય યમક કિંવા પ્રાસ છે નહિ. જો એ અપભ્રંશના સમચતુષ્પદ પદબંધ હોય, તો અંત્ય યમક એમાં જોઈએ; શાથી જે અપભ્રંશ ચતુષ્પદમાં અંત્ય યમક વહુધા હોય છે. એ અંત્ય યમકના અભાવને લીધે ઉપરના દૃષ્ટાત અપભ્રંશમાં હોવાનો સંભવ ઓછો છે. વીજૂં, જૂની હાથપ્રતોમાં ઓકાર ઉકારને માથે ટૂંકી ઊમી લોટી કરીને પણ દર્શાવાય છે. તેને લહિ-યો ક્વચિત્ ઉ અને ક્વચિત્ તુ સમજે છે. આથી ગૌરસમજથી પ્રસ્તુત દૃષ્ટાન્તોમાં ઓકાર વદલ ઉકારવાલા અને તુકારવાલા ભ્રષ્ટ પાઠ ઉત્પન્ન થયા છે. ત્રીજૂં, અપભ્રંશકાલમા લહિયાથી જાણતાંઅજાણતાં પ્રાકૃત રૂપ વદલ તેના ઉપરથી ઊતરી આવેલા અપભ્રંશ રૂપ લક્ષી જવાય છે. પાંચમા દૃષ્ટાન્તમાં અપભ્રંશ એહ પાઠ મળી આવે છે, તે આ રીતે પ્રાકૃત એસ (સં. એપ.) વદલ લખાયો છે. વાક્યરચના પુંઢિજ્ઞરૂપનો પ્રયોગ માગે છે અને પ્રાકૃત એસ પુંઢિજ્ઞપ્રયોગ છે, જ્યારે તેને વદલે લખાયલો અપભ્રંશ એહ શબ્દ લી-લિલનો હોવાથી વ્યાકરણદોષ નીપજાવે છે. ત્રીજા દૃષ્ટાતમાં અસલ પ્રાકૃત પુંઢિજ્ઞરૂપ એસ જલ્લવાઈ રહ્યું છે. તે વદલ પ્રો. ગુણે એહ રૂપની કમ્પના કરે છે, તે અસ્થાને છે. ચોથું, ઉસ્સુઈયા અને સંગઈઆ એ અનુક્રમે સંસ્કૃત ઉસ્સુકા અને સંગતાના સ્વાર્થપ્રત્યયસિદ્ધ અપભ્રંશ પદ નથી. હું તો સંસ્કૃત ઉસ્સુક વિશેષણ ઉપરથી થયેલા નામધાતુના કર્મણિમૂલપૃદતનું લીલિંગો પ્રાકૃત રૂપ તે ઉસ્સુઈઆ માનું છું, અને સંગમિઆ વદલ સંગઈઆ મૂલથી લખાયદ સમજું છું. ભરતનાટ્યશાસ્ત્રના વત્રોતમા અધ્યાયનાં ઉદાહરણ કેવાં ભ્રષ્ટ અને સંહિત છે, તે એ અધ્યાય ઉપર સ્હેજે દષ્ટિ ફેરવી જવાથી જણાઈ

આવે છે. માટે વધારે વિગતમાં ન ઉત્તરતાં મારી સમજ પ્રમાણે ઉપરના પાંચે અશુદ્ધ દૃષ્ટાંતની શુદ્ધ પ્રાકૃત વાચના, સંસ્કૃત છાયા અને ગૂજરાતી અનુવાદ અમેત, નીચે આપું છું.

(૧) મોરુહ્ણઓ ણચન્તઓ ।

મેહાગમે સંભન્તઓ ॥૩૨।૬૬॥

છાયા—મયૂરો નૃત્યન્ મેવાગમે સંભ્રાન્તઃ ।

અનુવાદ—વાદલ ચઢી આવતાં નાચતો મોર ખૂબ આનંદમાં છે.

(૨) ડગ્ગઓ ઘણો^{૧૭૫} ણેહ જોણહઆ ।

ણિચ્ચણિપ્પહો ઇસ ચન્દઓ ॥૩૨।૭૪॥

છાયા—ડગ્ગતો ઘનઃ । નેહ જ્યોત્સ્ના । નિત્યનિષ્પ્રમ ઇપ ચન્દ્રઃ ।

અનુવાદ—વાદલ ચઢી આવ્યું છે. આ આકારામાં ચાંદની નથી પ્રકાશતી.

(હવે) આ ચંદ્ર હમેશ નિસ્તેજ રહેવાનો.

(૩) ઇસા હંસવહુ હિત્યા કાળણા ।

રન્તુ^{૧૭૬} ડસ્સુહઆ કન્તં સંગમિઆ ॥૩૨।૯૧॥

છાયા—ઇસા હંસવહૂર્લજ્જાહુઃ કાળને રન્તુસ્તુસ્તુકા કાન્તં સંગમિતા ।

અનુવાદ—વનમાં આ ક્રીડા કરવાને ડસ્તુક પળ લજ્જાઝવી હંસી વ્હાલા

(હંસ)નો સમાગમ પામી.

(૪) મિડ^{૧૭૭} વાહ વાઅઓ સુવસન્તકાલણ ।

પિઅકામુગો પિઓ મદણં જળન્તઓ ॥૩૨।૧૦૮॥

૧૭૫ મુદ્રિત પાઠ મેહ ડગ્ગઓ છે પ્રાહૃતમાં પુલ્લિગ પ્રચમાના ઇવચનન્ રૂપ મેહો છે. તે મૂકતાં હદોમદ્ધ ધાય છે. આથી પદનો ક્રમ વદલી ઘણો પર્યાય મેં મૂક્યો છે.

૧૭૬ મુદ્રિત પાઠ ગન્તુ વદલ રન્તુ પાઠ કલ્પિત છે.

૧૭૭ મુદ્રિત પાઠ પિય વદલ મિડ પાઠ કલ્પિત છે; તેવી જ રીતે અહિં વદલx વદલ ક્ષણ અને તે પછી પિય મદણ વદલ પિઓ મદણં પણ કલ્પિત છે.

॥ ઢાયા—મૃદુર્વાતિ વાતઃ સુસન્તકાલે । કામુરુપ્રિયઃ પિક્તો મદનં જનયન્ ।
અનુવાદ—સુધસંતકના પર્વે વાયુ મંદ, મંદ વાય છે; અને કામોદીપન કરતો
કોકિલ કામીજનને વ્હાલો લાગે છે.

(૫) વાયદિ વાદો એસ^{૧૭૮} પ્રવાસી રુદદિ વિઅ ।૨૨।૬૧॥

ઢાયા—વાતિ વાત । એપ^૧ પ્રવાસી રુદતીવ ।

અનુવાદ—(વસતનો વાયુ વાય છે, (અને) આ મુસાફર જાણે રહે છે !
(અર્થાત્) પ્રવાસીનું મ્હેાં 'હવણા જાણે એ રહી પહરશે' એવો
ભાસ ડપજારે છે).

આ દૃશ્યન્તો^{૧૧} ભરતનાટ્યશાસ્ત્રના કર્તાણ પોતે રચેલા હોય અથવા તો
સમકાલીન સાહિત્યમાથી લીધેલા હોય. એ અપભ્રંશ ભાષાના છે એમ માની
લેઈયે, તો અપભ્રંશ સાહિત્ય ત્રીજા શતકમા ઉત્પન્ન થઈ ધૂક્યૂં હતું અને તે
પહેલા પોગોસોએક વર્ષથી અપભ્રંશ ભાષા પ્રચારમા હતી એ પળ માનવું
અર્થાપન્ન છે. પરતુ એ માન્યુ જાય એમ છે નહિ. અપભ્રંશ ભાષાને એટલી જૂની
માનવામા એનુ વધારણ ઓઢું આવે છે. પ્રાકૃતના અને અપભ્રંશના વ્યાકરણમા
એટલું ભાર અંતર છે કે અપભ્રંશનો ઉદય એટલો વ્હેલો માની શકાતો નથી
એથી કરીને પ્રસ્તુત વિવાદાસ્પદ દૃષ્ટાત અપભ્રંશ ભાષાના હોવા સંભવતા
નથી તેના લગતી ચર્ચા આટલેથી સંકેલી અવિવાદિત પદ્યાર્થેક અપભ્રંશ
સાહિત્યની સમીક્ષા હાય ધરિયે.

૫૨ અપભ્રંશ સાહિત્ય જે મુદ્રિત થયું છે, તે પદ્યરચનાની સમીક્ષા
માટે વહોલું પળ નથી; તેમ ગ્રાંચીન પળ નથી! વિવેચનની સામગ્રી જે કંઈ
ભવિસયત્તકહામા મઢી આવે છે, તેનાથી જ સંતોષ માનવો પડે છે. પ્રસ્તુત
કાવ્ય ધનપાલ નામે જૈન કવિની કૃતિ છે. એ કથા જર્મનીમા પ્રો. જેકોરીએ
રોમીય લિપિમા અને ભરતસહમા પ્રો. ગુણેએ નાગરી લિપિમા સંશોધન કરી
છપાવી છે. ધનપાલ એ નામના જૈન કવિ વે થયા છે. એક સ્વેતાનર જૈન

हतो. तेणे धारा नगरीना भोज राजाना रंजनार्थं तिलकमञ्जरी नामे कथा संस्कृतमां रची हती. रिसहपञ्चासिआ (सं. ऋषभपञ्चाशिका) नामे स्तवन अने पाइअलच्छी (सं. भाकृतलक्ष्मीः) नामे प्राकृत कोश पण तेणे रचेलं कहेवाय छे. बीजो धनपाल दिगंबर जैन हतो. तेणे मात्र भविसयत्तकहा (सं. भविष्यदत्तकथा) रचेली जाणवामांछे. एना देशकाल विषे पाको निर्णय बंधायो नथी. वारमा शतकना हेमाचार्यनाथी ते वेएक शतक व्हेलो थयो हसे, एम प्रो. गुणेनुं कहेवूं छे^{१७८}.

५३ दिगंबर धनपालना पद्यबंध मोटे भागे मात्रात्मक छे. पञ्जडिआ अने अलिछा, ए भविसयत्तकहाना प्रधान छंद छे. ए बंधे समचतुष्पद मात्राबंध छे. गूजरातीमां अने हिंदीमां पद्धरा किंवा पद्धडी संज्ञाथी जे छंद जाणीतो छे. ते पञ्जडिआ. एनी गतिमां ऊठळता पाणीना व्हेळाना वेगनो अनुभव थाय छे. तेथी एनुं पञ्जडिआ नाम पाडवूं छे, ते योग्य ज छे. मोटेथी बोलता के मनमां वाचता होइये ते वेळाए छाती जाणे ऊठळी ऊठळी त्राळ आपती होय एवो भास ए छंदना ऊठावथी थाय छे. बीजो प्रधान छंद जे अलिछा, तेने दलपतर्पिगळमा अलक कद्यो छे. वेठा पाणीना व्हेण सरखी एनी गति शांत अने समरस छे. अलिछा अने अलक बोल 'सं. अत् शणमारवूं' ए धातु उपरथी ऊतरी आख्या छे. पञ्जडिआमा अने अलिछामां दरेक चरण सोळ मात्रानूं रचाय छे. समान मात्राना चरणवाळो बीजो एक मात्राबंध पण धनपाले वापर्यो छे तेनुं नाम सिंहविलोकित छे. अलिछामां १,५,९, अने १३ ए मात्रा उपर भार पडे छे. पण सिंहविलोकितमां वे मात्रा छोडी देईने चार चार मात्राना अंतर भार आवे छे. आरंभनी वे मात्रानो झोक भारना नरा क्रम तरफ वळतो होवार्थी छंदनुं सिंहविलोकित नाम राखेछं होय एम लागे छे. मात्राना क्रममां ते पळी

પ્લવંગમ છંદ આવે છે. આરંભથી સોઝમી માત્રા સૂધીની એકધારી ગતિ છેલ્લી પાંચ માત્રામાં એકાએક વદલાય છે. તેથી કરીને લાંબા ઢાઝ ઉપર પગલાં ભરતો વાનર ઢાઝના છેઢા તરફ પ્હોચતાં મહુપ લેઈને ગતિ વદલી અંગ સંકોરી વીજે ઢાઝે કૂદકો મારે છે, તેના જેવો કંઢૂક ચાલપલટો થાય છે; તેના કારણથી કદાચિત્ છંદને પ્લવંગમ નામ આપ્યું હશે. ધનપાલના પ્લવંગમને છેઢે ઋણ હ્રસ્વ વર્ણ આવે છે. એ દશમા શતકની માત્રાવંધ મધ્ય યતિ રહિત છે. વીજી રીતે વંધારણમાં તે દલપર્તાપગઢના પ્લવંગમને મઢતો છે. એ પછી આવનારા છંદ ચોવીસ માત્રાના ચરણવાઝા કલહંસ અને કાવ્ય એ વે છે. પ્રો. ગુણે પહેલામાં દસમી માત્રા પછી યતિ લખે છે. વીજામાં ધનપાલ મધ્યાન્ત્ય યમકની યોજના દ્વારા સોઝમી માત્રા પછી યતિનું મ્હાન કરાવે છે. દલપતપિંગલે કાવ્ય કિંના રોલા છંદમાં અગિયારમી માત્રા પછી યતિ આપી છે. વઢી ધનપાલના કલહંસ અને કાવ્યના ચરણના છેઢા વે વર્ણ હ્રસ્વ છે. આ તફાવત વાજુ ઉપર રાખતાં કલહંસ, કાવ્ય અને રોલા છંદની ચાલ સરખી છે. ઉપર ગણાવેલા પાંચ સમચતુષ્પદ માત્રાવંધ ઉપરાંત વાવીસથી માંઢીને એકત્રીસ માત્રા સૂધીના દલવાઝા અગિયાર દ્વિદલ માત્રાવંધ પ્રસ્તુત કથામાં મઢી આવે છે^{૧૮૦}. તે પૈકી મન્મથતિલક, અમિસારિકા અને મર્કટી એ ઋણ છંદ વાવીસ માત્રાના દલવાઝા છે. તેમાં અનુક્રમે, ૮, ૯, ૧૧ માત્રા પછી મધ્યયતિ છે. તે પછી કુસુમનિરન્તર, વિષ્ણુમવિક્સિતવદન, નવપુષ્પંધય અને કિંનરમિથુનવિલાસમાં અનુક્રમે ત્રેવીસથી પચીસ માત્રા દલદીઠ આવે છે. એ ચાર છંદ પૈકી પહેલામાં નવમી માત્રા પછી અને વીજા ઋણમાં અગિયારમી પછી મધ્ય યતિ છે. આ છેઢી ત્રિપુટીમા મધ્ય યતિ પછીની વે માત્રા મ્હાનમુક્ત છે; તે લક્ષમાં રાસવા જેવું છે. એના પછીના અઢાવીસ માત્રાના દલવાઝા સહ્યાલામાં ષણ જારંભની વે માત્રા મ્હાનમુક્ત છે.

૧૮૦ જુઓ મધિલ્લયત્તકઢાના દ્વિદલ માત્રાવંધનું પરિશિષ્ટ ચાલ ધ્યાનવાનને અઢે આપ્યું છે વે.

૧. દ્વિકલ સંધિ પછી ^{૧૮}દુહાના વિપમ ચરણની ઘટનાનો સ્વંદ આવે છે; તેના પછી મવ્ય યતિ છે; અને તે પછી પાછો દુહાના વિપમ ચરણની ઘટનાનો સ્વંદ ગોઠવાય છે; ૧ રીને ઝલ્લાલાનું દલ વંચાય છે. દ્વિપદી (પ્રા. દુવડ) ઇંદ પળ અટ્ટાવીસ માત્રાનો નીપજે છે. તેના દલના વે સ્વંદ પહે છે, ૧૬ સોઝ માત્રાનો અને વાંજો વારનો પૂર્વ સ્વંદ પછી યતિ છે; અને ઉત્તર સ્વંદમાં છેડે હવા આવે છે. તેના પછીનો ઇંદ જે મરહટ્ટા, તે અધ્યાપિ ૧ જ નામે પ્રસિદ્ધ છે. પરંતુ પૂર્વે તે દ્વિદલ હતો અને હાલ ચતુષ્પદ વન્યો છે. ૧ના દલના ૧૦,૮ અને ૧૧ માત્રાના ત્રણ સ્વંદ પહે છે. તેમાના પહેલા સ્વંદની આરંભની વે માત્રા ભારમુક્ત છે. સ્વંદે સ્વંદે યતિ છે; અને પ્રત્યેક દલનો પહેલો સ્વંદ વીજા સ્વંદ સાથે અંત્ય યમકથી જોડાવો ઘટે છે. ત્રીજા સ્વંદમાં અંતે ઘાહ અપેક્ષિત છે. પ્રો. ગુણે પ્રાકૃતપિંગલથી દોરાઈ ધનપાલના મરહટ્ટાને ચતુષ્પદ લેસવે છે. પરંતુ ભવિસયત્તવાહાના ત્રીજા સંધિના ચોવીસમા કડવકમાં કુલ અઢાર પંક્તિ છે; તેને ચતુષ્પદના ઘાટમાં મૂકવા જતાં ચાર ઇંદ પૂરા આવે છે, અને ૧૬ અધુરો રહે છે, જ્યારે ઉક્ત પંક્તિઓને દ્વિદલના સ્વરૂપમાં ગોઠવતા અસ્વંદિત નવ ઇંદ નીપજે છે. તે ઉપરથી સમજાય છે કે ધનપાલનો મરહટ્ટા ઇંદ વે દલનો છે, ચાર ચરણનો નથી. દ્વિદલ મરહટ્ટાની પ્રસૂતિ ઘટ્ટા છે, તે ઇંદ મરહટ્ટાના દલને અંતે વા ઝમેરવાથી વને છે. આ વે ઇંદના ગાઝામાં પ્રો. ગુણે ક્રીસ માત્રાના દલવાળો ૧૬ ઇંદ કલ્પે છે. તે મરહટ્ટાના દલને અંતે હના વધારવાથી નીપજે છે, ૧૬ ૧ વિદ્વાન લેવે છે. તેના દૃષ્ટાંત તરીકે ૧૬નો તેરમા સંધિના આઠમા કડવકની પંક્તિ ૩-૬ તરફ અંગુલિનિર્દેશ કરે છે. પરંતુ જો તે પછીની પંક્તિ ૭-૧૦ તરફ ૧૬નું ધ્યાન દોરાયું હોત, તો ૧૬ને ઉક્ત કલ્પના કરવાનું કારણ ન રહેત. તેમણે જોયું હોત કે પંક્તિ

૧૮૧ દુહાની ઉત્પત્તિ વિચારતા તે દ્વિદલ ઇંદ છે તેના પ્રત્યેક દલના વે સ્વંદ પહે છે, પહેલો તેર માત્રાનો અને વીજો અગિયારનો. પરંતુ ચંદ્રાવલી ક્વિવા અદ્રાપલા, કુડલિયા આદિ ઇંદના લક્ષણ વાધવા સરઝ પહે, ૧ કારણથી પ્રસ્તુત ઇંદનો ચરણ તરીકે વ્યવહાર સ્વ ધયેલ છે.

७-१० घत्ता छंदमां छे अने तेना पहेलांनी पंक्ति ३-६ पण ए जछंदमां छे. चरण अने दलने अंते लघु ते गुरु गणी शकाय छे, अने ह्रस्व ते बृहत् छेई शकाय छे. ते घोरणे पंक्ति ३-६ मां एकत्रीस मात्रानो आंक पूरो मळी रहे छे. अर्थात् उक्त आठ पंक्तिना चार घत्ता छंद बने छे. एमांती पहेली चार पंक्तिने माटे त्रीस मात्राना दलवाळा नवा छंदनी करूपना करवानी जरूर नथी.

५४ उपर नेधिला सोळ मात्राबंध सिवाय पांच रूपबंध पण धनपाले वापर्यां छे, छ रूपना मन्दर तथा सोमराजी, बार रूपना भुजंगप्रयात तथा लक्ष्मीधर (स्रग्विणी) अने पंदर रूपनो चामर. ए पांच जाणीता रूढ छंद छे; एटले एमनी रचनानी विगतमां ऊतरवानी जरूर नथी. परंतु सुत्तकाल विशेषा व्याख्यानमां विक्रियाना प्रचार विशेषे जे कहेवाई गयूं छे, तेनूं स्मरण कराववूं अहीं उचित छे. इसवी सन पूर्वे पांचमा शतकथी जैन अने बौद्ध पद्यत्मक साहित्यमां एक गुरु बदल वे लघु अने एक बृहत् बदल वे ह्रस्व मूकवानो वहीवट शरू थयो हतो. धनपालना रूपबंध उक्त विक्रियावाळा छे, शुद्ध नथी. भविसयत्तकहानी भाषा जेम तेना रचनाकाळनी जीवंत लोकभाषा छे, तेम तेना पद्यबंध पण ए काळना लोकरूढ पद्यबंध छे. दसमा अगियारमा शतकमां कलाना अंगे मात्राबंधमां जे प्रगति थई चूकी हती, तेनूं स्वरूप धनपालना समचतुष्पद अने समद्विदल मात्राबंधना आधारे उपर प्रमाणे अंकाय छे. सर्वप्राही दृष्टिप् तेनूं यथार्थ चित्र आपवा माटे अपभ्रंश पद्यात्मक साहित्यना बहोळा प्रकाशननी अने ऊंडा अवगाहननी अपेक्षा रहे छे. जाण पुरुषो कहे छे के ए साहित्य बहु विशाळ छे. आ शरीरमां एने प्हेाची वळवा जेटली विशाळ शक्ति रही होत, तो एकलो ए खंड नहि पण हिंदी, मराठी अने बंगाली साथे गूजराती साहित्यना खंडनो पण प्रवास आदरी पृथ्वीप्रदक्षिणानूं कौतुक पूरूं करत. परंतु उत्तर वयमां नवसें नव्याणु तीर्थनी यात्राए नीकळेओ प्रवासी गंगोतरी अने जमनोतरीनां बरफर्थां डंकायलां शिखरोनां दर्शन करी रमणरेतीमां लोटी

ત્રિવેળીમાં એક જ વાર અવગાહન કરવા સમર્થ થાય છે. જગન્નાથ અને રામેશ્વર થઈ જગદંત પ્હોચવાનું પુણ્ય તેને લમ્ય નથી. ઇટલે એને ' અઠે દ્વારિકા ' કરવાનું પ્રાપ્ત થાય છે. -

૫૫ અનેક નદનદી દેશદેશથી આવીને જેમ મહાસમુદ્રમાં મળે છે, તેમ કાવ્યકાલમાં આર્ચિક આલ્યાનિક અવે સૌત કાલની તે તે પદ્યરચનાનું મઢવું થાય છે. ઋક્સાહિત્યમાં વર્ણરચના પ્રગટે છે. તેના પદ્યબંધ જોકે ઉત્તર કાલમાં વપરાતા વંધ પડી ગયેલા દેસાય છે, તથાપિ વાસ્તવિક રીતે તે મરી જતા નથી, માત્ર શરીર વદલે છે. વૈદિક ધ્રિષ્ટુભૂ અને જગતી મહાલ્યાનોમાં વર્ણશરીરના સાટે સુંદરતર રૂપશરીર ધારણ કરે છે. એ નવા શરીરમાં તે ત્રૈષ્ટુમી ઉપજાતિ, ઉપેન્દ્રવજ્રા, વંશસ્થ, આદિ નામથી ઓઢાયા છે. આર્ચિક અનુષ્ટુભૂ હંદ શરીર વદલતો નથી, પણ વર્ણરચનાના અપર ભાગમાં રૂપરચનાને સ્થાન આપી આલ્યાનિક અનુષ્ટુભૂ વને છે; અને નવું જીવન સમર્પી મૃત્યુવશ વર્ણરચનાને ડગારી લે છે ઇટલું જ નહિ, પણ અમર વનાવે છે. મહાલ્યાનોના પૌરાણ સંસ્કૃતમાં આ હંદો ઉદય પામ્યા પછી, અંતઃપાતી સંસ્કૃત અને અગ્રિમ પ્રાકૃત, એવો ભાષાભેદ ડમો થાય છે. પહેલી ભાષામાં જગિયારથી ઓગણીસ રૂપના નવાનવા સમચતુષ્પદ રૂપવંધ સરજાય છે; અને આલ્યાનિક અનુષ્ટુભૂના વર્ણરૂપાત્મક ચરણને જવાબ આપતા રૂપમાત્રાત્મક ચરણનો વૈતાલીય જન્મ પામે છે. વીજી ભાષા જે અગ્રિમ પ્રાકૃત, તેમાં આલ્યાનકાલના રૂપવંધનો વપરાટ ચાહુ રહે છે, તે સાથે અંતઃપાતી સંસ્કૃતનો ધીળાના રણકારવાઢો વૈતાલીય.પણ વપરાય છે. આ રૂપમાત્રાત્મક ચરણના અર્ધસમચતુષ્પદ હંદ પછી કેવલ માત્રાવદ્ધ સમચતુષ્પદ કોકાલિય પ્રગટે છે અને માત્રાત્મક પદ્યરચનાનો નવો પ્રવાહ ચાલતો કરે છે. કાવ્યકાલમાં આ ત્રણે પ્રવાહ વહેતા રહે છે અને, લ્યામક પદ્યરચનાનો જે ચોથો પ્રવાહ, તે પણ વર્ણલય અને રૂપલયની ધારાના આકારે વહેવા માંડે છે. આ રીતે એક એક કાલમાં એક એક પદ્યરચના જનમે છે; અને નવા નવા

પદ્યવંધ રચાય છે. પરચરનાના ચારે પ્રવાહ કાવ્યકાલમાં સહજીવી બને છે, અને નિરનિરાઝા વહે છે. પરંતુ આ સર્વે નિવદ્ધ પદ્યના પ્રવાહો છે. તેમાંનો વર્ણપ્રવાહ લગભગ સૂકાઈ ગયા જેવો જ છે; અને આવૃત્ત સંધિના મનહર, પયાર આદિ વર્ણવંધ તો નિગોદજીવની પેઠે હજુ ભાવીની ગોદમાં અંતર્હિત રહ્યા છે. રૂપપ્રવાહનો આવૃત્ત સંધિવાઙ્ગો ફાંટો પણ સાંકડા બ્લેઠમાં વઘ્યા કરે છે. લયપ્રવાહના તો માત્ર શીગા ઝરા જ ફૂટ્યા છે. વચ્છી દેશીના સહસ્ર-મુખ ધોધનો નાદ તો કાનને સ્પર્શવા એ પામ્યો નથી. તો પછી જેને અવદ્ધ પદ્ય કહિયે છિયે તેના અવતારની તો કાવ્યકાલમાં વાત જ ક્યાં ? છતાં મારા મર્યાદિત જ્ઞાન પ્રમાણે હું જળાવું છું કે આટલા નિરનિરાઝા પદ્યપ્રવાહો મૂત્તલ ઉપરના કોઈ અન્ય સાહિત્યમાં વહેતા એ નથી અને શાસ્ત્રપ્રશાસ્ત્રાણ ઉપચય પામી અને ધારાઉપધારામાં ફાંટાઈ સાહિત્યમૂર્ખિને સીંચતા એ જોવા-જાળવામાં નથી. અત્રોક્ત ચાર પ્રવાહ પૈકી પહેલો ઓઝલાય નહિ એટલે દરજે ક્ષીણ થઈ ગયેલો અને છેલ્લો લક્ષ સ્વેંચે નહિ એવા સૂક્ષ્મ ઝરણે નવો ફૂટતો હોઈ એ વે વિશે વિગતમાં ક્તરવાનું રહેતું નથી. વચ્છી વે પદ્યરચનામાંથી રૂપરચનાની આવૃત્ત સંધિની શાસ્ત્ર ફાલ્ગવી વાકી હોવાથી તે વિષે પણ હું કંઈ કહેવા માગતો નથી. એની અનાવૃત્ત સંધિની શાસ્ત્ર લગભગ પૂરેપૂરી ફાલીફૂલી છે. તેની ત્રણ પ્રશાસ્ત્રા છે, સમચતુષ્પદની, અર્ધસમચતુષ્પદની, અને વિષમચતુષ્પદની. તે પૈકી સમચતુષ્પદ પ્રશાસ્ત્રાના વિકાસનાં અંગો શાસ્ત્ર વર્ણવવા જેવાં છે. આ પ્રશાસ્ત્રાના પદ્યવંધના ચરણનું માપ સાતથી માંડીને છઠ્ઠીસ અક્ષર સૂધી સોમરાજીથી આરંભીને શુભંગવિજૃમ્ભિત પર્યંતનો શ્રેણીમાં લંબાતું ને લંબાતું જ જાય છે. તે પદ્યવંધ પૈકી ટૂંકા અગિ-આર, ચાર અને તેર અક્ષરના મધ્ય યતિ વગરના હંદ જ કાવ્યકાલના પૂર્વ ભાગમાં વ્યાપક તરીકે વપરાય છે. પછી તેમનો અનેકાનેક સર્ગમાં પ્રયોગ ઘટી જઈ લાંબા રૂપવંધ તેમનું સ્થાન લે છે. તે મોટે ભાગે મધ્યયતિ-વાઙ્ગા હોય છે. ચરણને અંતે યતિ આવડ્યક છે. એ અન્ય યતિ ઉપરાંત લાંબા ચરણની અંદર એક અને ક્વચિત્ વે મધ્ય યતિ આવે છે. મધ્ય યતિના લીધે

ચરણના જે સ્વંડ પડે છે, તેમાં આદ્ય અને અંત્ય સ્વંડમાં ત્રણથી માંડીને વધારેમાં વધારે વાર અક્ષર હોય છે. દાસલા તરીકે પ્રહર્ષિણીમાં પહેલો સ્વંડ ત્રણ અક્ષરનો અને શાંદલવિક્રીડિતમાં વાર અક્ષરનો છે. વચલો સ્વંડ ન્હાનામાં ન્હાનો ચારનો અને મોટામાં મોટો અગિયારનો મઠી આવે છે. દ્વરિણીમાં એ સ્વંડ ચાર અક્ષરનો છે અને ભુજંગવિજૃમ્બિતમાં અગિયારનો છે. મધ્ય યતિ વગરના લાંબા રૂપવંધ વિરલ છે. સર્જનકાલે જેમાં મધ્ય યતિ ન હોવા છતાં વલત જતાં તે પ્રવેશ પામે છે, એનું ઉદાહરણ સત્તર અક્ષરનો પૃથ્વી હંદ્ર છે. તે મૂલે મધ્ય યતિ વિનાનો છે, તેમાં પાછલથી આઠમા અક્ષર પછી મધ્ય યતિ વપરાવા માંડે છે. અર્ધસમચતુષ્પદ અને વિપમચતુષ્પદ રૂપવંધમાં મધ્ય યતિ છે નહિ, એટલે એમના ચરણના સ્વંડ પડતા નથી. ઘટકાવયવ તરીકે વપરાતા સંધિ અને સ્વંડની સંખ્યા પરિમિત છે. તેમની સરસાઈમાં આવતી ઘટનાથી અનેક અનાવૃત્ત રૂપવંધ વને છે. સમચતુષ્પદમાં ચારે ચરણોની ઉચ્ચારણા કિંવા ચાલ સમાન છે; અર્ધસમ ચતુષ્પદમાં પહેલા તથા ત્રીજા ચરણની અને બીજા તથા ચોથા ચરણની ચાલ સરસી છે; જ્યારે વિપમચતુષ્પદમાં ચરણોની ચાલ અણસરસી છે. સમચતુષ્પદના ચરણના અણસરસા સ્વંડ યતિની વ્યવસ્થાથી સરસાઈમાં આવે છે, તે જ પ્રકારનો સરસાઈ વિપમચતુષ્પદનાં અણસરસાં ચરણમાં સધાય છે. અક્ષરસંખ્યાને અનુસરી એકથી છઠ્ઠીસ અક્ષરના સમચતુષ્પદ રૂપવંધના છઠ્ઠીસ વર્ગ પાડવામાં આવે છે, તેમાંના ઉક્તા, અલ્યુક્તા, મધ્યા, પ્રતિષ્ઠા તથા સુપ્રતિષ્ઠા એ પહેલા પાંચ, અને આકૃતિ, વિકૃતિ, સંસ્કૃતિ, અતિકૃતિ તથા ઉલ્કૃતિ એ છેલ્લા પાંચ વર્ગ કાવ્યકાલમાં ઉત્પન્ન થયા જણાય છે. ગાયત્ર વર્ગના પૂર્વેનો અને પ્રકૃતિ તથા દંડક વર્ગના વચ્ચેનો ગાલો પૂરવાને એ વર્ગો કલ્પેલા છે. તે ગાયત્ર વર્ગની અને દંડક વર્ગની ઉત્પત્તિ પછીના છે. અત્રોક્ત અનાવૃત્ત સંધિના રૂપવંધ પૈકી કેટલાકનો પરિચય સંસ્કૃત નાટકોના સમશ્લોકી અનુનાદમાં થાય છે. જે અજાણ્યા રહ્યા છે, તે પ્રયોગમાં મૂકવા જોગ છે. માત્રાત્મક પદ્યરચનામાં ગાથાપ્રકરણ આજકાલ ઠીક ઠીક જાણીતું છે;

પણ ગલિતકપ્રકરણ ગૂજરાતીમાં છેક જ અજ્ઞાત છે, અને સંસ્કૃતમાં પણ અપરિચિત છે. એની અનાવર્તી ઘટના અર્પૂર્વ અને મનોરંજક છે. નવા અનાવૃત્ત સંધિના માત્રાબંધ રચાય તેની દિશા વતાવવાને જૂનું ગલિતકપ્રકરણ આપણા સાહિત્યમાં ઋતારવું ઘટે છે. ધૃતશ્રી, અતિશાયિની, નર્દટક, ઉદ્ગતા, ગલિતક, દ્વિપદી, ઘચ્ચા આદિ પદ્યબંધનો નિધિ આપણો જ છે, જો આપણો કરી ઢેહ્યે તો.

૫૬ પદ્યરચનાનો વિકાસ ચારે દિશામાં થયો છે અને બહોઝો પણ થયો છે. એવો ચતુર્મુખ વિપુલ વિકાસ અન્ય ભૂમિમાં થવા પામ્યો નથી. છતાં કેટલાક પદ્યબંધનું અસ્તિત્વ આપણને અજ્ઞાત છે; કેટલાક જાણીતા છતાં ઢાટી મૂકેલા ધનની પેઠે વપરાયા વગર રહ્યા છે; કેટલાક સુસ્વસાધ્ય છતાં આઢસ કે અનુચોગને લીધે સિદ્ધ કરાયા નથી, તેથી આપણા પદ્યમંડારનો ંક કહુસલો સ્વાલી પડ્યો રહ્યો છે. અજ્ઞાત ધન પાતાઢ સ્વોદી મેઢવો; વપરાયા વગર પડી રહેલી મૂઢી ફરતી કરો; ઉદ્યોગથી નવી આવક ડમી કરો, અને ં રીતે સર્વ પ્રકારનાં સમૃદ્ધિના ઉપચયથી આપણાં જગજૂની પદ્યરચનાનો અધિકાધિક સર્વતોમુસ ઉદય થાયો !

૧૮૨ પરિશિષ્ટ ?

મસ્તાવ ૧૪-૧૬.

ગુપ્તવંચી સમુદ્રગુપ્ત પરાક્રમાદિત્ય, રામગુપ્ત તથા દ્વિતીય ચંદ્રગુપ્ત વિક્રમાદિત્ય; અને વાકાટકવંશો દ્વિતીય પ્રવરસેન.

દ. સ.	૩૧૫	સમુદ્રગુપ્તનો જન્મ.
	૩૩૫	રાજ્યારોહણ.
	૩૪૦	દત્તદેવી સાયે વિવાહ.
	૩૪૧	રામગુપ્તનો જન્મ.
	૩૪૩	વીજા કુંવરનો જન્મ.

૧૮૨ પરિશિષ્ટ ૧-૨ ધનાવોનો મમ વતાવવાના ઉદ્દેશથી આપ્યા છે. ધનાવોની સાલ અચોવસ હોઈ અઢસાઢે મોટવી છે.

- ३४५-५४ पार्श्ववर्ती राजाओने रणमां रोळी राज्य खालसा कर्यां. प्रत्यंत राज्यो उपर सत्ता वेसारी.
- ३५५ चंद्रगुप्तनो जन्म.
- ३५६-७८ पथिम महाराज्यनूं पाटनगर विदिशा अने तेना अनिर्दिष्ट शासक.
- ३६१ रामगुप्तनो ध्रुवदेवी साथे विवाह.
- ३६२-७४ दक्षिणापथ उपर सवारी. पाटलिपुत्रमां युवराज रामगुप्त प्रतिनिधि.
- ३७५ चंद्रगुप्तनो ध्रुवस्वामिनी किंवा ध्रुवदेवी अने कुवेरनागा साथे विवाह. ज्येष्ठा ध्रुवस्वामिनी, कनिष्ठा कुवेरनागा.
- ३७६ कनिष्ठ पत्नीथी प्रभावतीगुप्तानो जन्म.
- ३७६-८० सीमापार वायव्य दिशाए वंक्षु (Oxus) नदी पर्यंत आधिपत्यनो विस्तार.
- ३७८-८८ विदिशा पाटनगरमां कुमार चंद्रगुप्तनो राज्याधिकार.
- ३८० समुद्रगुप्ते अश्रमेघ कर्यो. पांड्यराजानी मूल्यवान भेट. सिंहलद्वीप अने चीन साथे मैत्री.
-
- ३८८ समुद्रगुप्तनूं मृत्यु. रामगुप्त गादीए. सौराष्ट्रनो महाक्षत्रप तृतीय रुद्रसिंह स्वतंत्र थवो. तेना उपर रामगुप्तनी चढाई. चंद्रगुप्ते विदिशाथी चढाईमां जोडावूं. गिरनारनी घांटीमां रामगुप्त अंतरात्रो. महाराणी ध्रुवदेवीनी दुःस्मने करेली मागणी. चंद्रगुप्ते महाराणीना वेपमां जई रुद्रसिंहनो जीव लेवो. रामगुप्ते मुगट पोताना माथेथी ऊतारी चंद्रगुप्तने माथे मूकवो. पाटलीपुत्रमां चचट भाइए राजचिह्न धारण

- करवां. वंगो तेनी मददमां. विग्रहमां वचट मायों
जवो. वंगदेश पर चडाई अने विजय.
- ३८९ वाहिकोए ऊठावेछं वंड टावी देधूं. वाकाटकवंशी
फीतुरी द्वितीय रुद्रसेन प्रत्ये मेघकार कालिदासने दूत
तरिके मोकलवो. समजूताना संदेशा निष्फळ जवा.
विदर्भ-कुंतल उपर चंद्रगुप्ते चडाई करवी. रुद्रसेननी
हार. हारेला कुंतलेश्वर साथे संधि करी राजकुमारी
प्रभावतीगुप्ता तेने परणाववी.
- ३९० प्रभावतीगुप्ताने पेटे दिवाकरसेननो जन्म.
- ३९२ तेने पेटे प्रवरसेन किंवा दामोदरसेननो जन्म.
- ३९४ वे कुंवरना पिता द्वितीय रुद्रसेननूं मृत्यु. विदर्भ-कुंत-
लमां दिधवा राणी प्रभावतीगुप्तानो राज्यकारभार.
- ४१० दिवाकरसेन गादीए. तेनूं अकाळमृत्यु. प्रवरसेन गादीए.
- ४११ चंद्रगुप्त तरफथी कालिदास प्रवरसेनना समाचार
लेवाने जवो.
- ४१३ प्रवरसेने सेतु काव्य आरंभवूं. चंद्रगुप्तनूं मृत्यु.
- ४१४ सेतु काव्यनी समाप्ति.

परिशिष्ट २

प्रस्ताव १४-१६
मेघकार कालिदास.

- इ. स. ३५० उज्जयिनीमां जन्म.
३८० मेघदूतनी रचना.
३८१ उज्जयिनीना काव्यपाठ केग्लो सकार.
३८२ विदिशानी राजसभामां प्रवेश. चंद्रगुप्तनी प्रीति
थवी.

- ३८८ द्वितीय चंद्रगुप्त विक्रमादित्यना साथे पाटलिपुत्र प्रति प्रयाण.
- ३८९ विदर्भ-कुंतलना फितुरी वाक्राटकावंशी द्वितीय रुद्रसेन प्रत्ये दूत तरीके कालिदासनी नीगणूक.
- ४०७—८ मोसाळे आवेला कुमार प्रवरसेननो अने कालिदास-नो परस्पर परिचय.
- ४११ राज्यारूढ प्रवरसेननी मुलाकाते कालिदास.
- ४१३ प्रवरसेने सेतु काव्य आरंभयूं. द्वितीयचंद्रगुप्त विक्र-मादित्यनूं मृत्यु.
- ४१४ कालिदासना सहकारथी सेतु काव्यनी समाप्ति.

परिशिष्ट ३

प्रस्ताव ३९, टिप्पणी १३८

सेतु काव्यना गलितक.

नाम	प्रकार	मात्रा	पदात	प्रयोग	कुल
न्दरगलितक	सम	१३	गागा	९।४३,४४,४७,५०।	४
गलितक	"	२१	लगा	२।२४,२७,३१,३३।; ६।६२।;७।४१,४३।; ९।१८,४०,४२,४६, ४९,७२।.	१३
विलम्बित- गलितक	"	२२	"	६।४८,५३,५६,६८।; ७।४५,४७,४९,५१, ६०,६२।,८।६१,६३, ६५।;९।८२,८८।.	१६
ललितगलितक	"	२४	"	३।४५,४६,४७,४८।.	४

नाम	प्रकार	मात्रा	पदांत	प्रयोग	कुल
उग्रगलितक	"	३०	गा	६।६५।	१
मालागलितक	"	४६	लगा	७।५९,६१।	२
मुखगलितक	अर्धसम	७(विपम) २५ (सम)	"	२।२३,२६,२९,३०।	४
सर्वाळो					४४

उपरना पत्रकमां बीजा तथा नवमा आथासना जे गलितक छंद छे, ते कुलकान्तर्गत छे.

परिशिष्ट ४

मस्ताव ५२, टिपणी १७०

भविसयत्तकहाना द्विदल मात्राबंध.

- १ मन्मथतिलक. विमल महामइ थिउ तुष्टि करेविणु पक्खइ ।
वासवणन्दणु पहु पुरउ समारिधि अक्खइ ॥
भ.क.।१७।८।
- २ अभिसारिका. सिङ्गारहि सोह मइलहि माणु समञ्जरहौ ।
लइ पणिउं देहि परिहव दुक्ख परंपरहौ ॥
भ.क.।९।१५।
- ३ मर्कटी. तं जिणभवणु थिएवि घवल्लुत्तुशु विसालु ।
वियसियवयणरविंदु मणि परिओसिउ बालु ॥
भ.क.।४।११
- ४ कुमुदनिरंतर. कालेण वदयि पइविरहमहाडुहरोविय ।
धीय मुक्केसहि उन्वाडुलु करइ तिनेइय ॥
भ.क.।१७।४।।

५ विभ्रमविकसितवदन. अहिसिद्धिवि जगनाहु रणु अच्छइ नरवइ जाम ।
मुणिवरचारण विणिण संपाइय जिणहरि ताम ॥

भ.क.११६।४।

६ नवपुष्पंधय. धम्मक्खाणु सुणेवि महएविहिं मणु आमोइउ ।
धणवइअङ्गरहेण करसंपुडु सिरि संजोइउ ॥

भ.क.११६।१२॥

७ किंनरमिथुनविलास. मणु पसरन्तु धरेइ परिहरइ विरद्वउ जणवयहो ।
वज्जन्तहो धरवासु वउ एउ चउत्थउ सावयहो ॥

भ.क.११५।९।

८ उल्लाला. सो णत्थि विसूरिउ जेण णवि तं पिकखेविणु दुच्चरिउ ।
धणवइ वि णिरोहायामुगउ इत्थु विच्चि विव्भमभरिउ ॥

भ.क.१३।२६।

९ द्विपदी. ण सुवमि पइमि जाहँ जइ तुद्धुवि मणि संकेउ एहओ ।
जाणमि हउँ मि दुसहु को सक्कइ सहिवि सत्तिवेहओ ॥

भ.क.११२।५। ७

१० सरहट्टा. तं णिसुणेवि तेण बहुमच्छेण चावरिउ अइरउदु ।
अवलोइउ खरेण कडुअक्खरेण तज्जिवि णिययविंदु ॥

भ.क.३।२४।१०।

११ घत्ता. सा धीय नरिदह्हा सज्जणविंदहो मग्गि सुवेसालंकरिय ।
जयमङ्गलघोसिं सुहिपरिओसिं भविसयत्ति करयलि धरिय ॥

भ.क.११५।१।

दीवान बहादुर केशवलाल हर्षदराय ध्रुवे रचेलं पुस्तक.



नाटक

मेळनी मुद्रिका	आ ६	मूल्य रु. १-८-०
पराक्रमनी प्रसादी	" ६	१-०-०
विन्ध्य वननी कन्यका	" ३	० १५-०
स्वप्ननी सुन्दरी	" २	०-१५-०
ग्रधाननी प्रतिज्ञा	" २	०-१२-०
मध्यम	" २	०-८-०
प्रतिमा	" १	१-४-०

काव्य

अमरशतक	" ५	१-८-०
गीतगोविंद	" ५	२-०-०
लघु गीतगोविंद	" १	१-१२-०

प्रकीर्ण

भालणक्त फादंबरी भाग १,	१	४-०-०
पद्यपाठ	" १	०-६-०
पद्मसा सैकानां प्राचीन सुर्जर काव्य	" १	१-०-०
रत्नदासयत हरिधराख्यान	" १	०-८-०
मुद्राराक्षस [संम्लत इंग्रजी]	" ३	४-०-०
अज्ञात अनुभवविदु	" १	०-५-०

